प्रतापनारायण श्रीवास्तव
जीवन और साहित्य

बुन्देलखण्ड विश्व विद्यालय की

पी-एच० डी० उपाधि हेतु

शोध प्रबन्ध

निदेशक :

कृष्ण जी

एम०ए० (अंग्रेजी, हिन्दी), पी-एच०डी०

वरिष्ठ प्रवक्ता हिन्दी

दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय

उरई

अनुसंधित्सु :

अली मुहम्मद

एम०ए० (हिन्दी), बी०एड०

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि "प्रतापनारायण श्रीवास्तव :जीवन और साहित्य" विषय पर (जो बुन्देलखण्ड वि०वि० द्वारा पी०एच०डी० उपाधि के लिए पत्र संख्या बी०यू०/ रिसर्च/ 85/12784/85 / दिनांक ..07.6.1984......... के द्वारा स्वीकृत हुआ था) प्रस्तुत शोध प्रबन्ध श्री अली मुहम्मद का मौलिक प्रयास है। मेरे निर्देशन के अनुकूल विषय का प्रस्तुतीकरण, वर्गीकरण यथा स्थान संकेतित संबोधन आदि के संदर्भ में अपेक्षित सम्पूर्ण शोध प्रक्रिया बड़ी तत्परता, लगन व परिश्रम से की गई है ।

उपाधि-सापेक्ष्य शोध कार्य का अभीष्ट अनुसंधित्सु को शोध दृष्टि एवं प्रवृत्ति प्राप्त करा देना होता है, तथा यह अभीष्ट भी पूरा हुआ है ।

अनुसंधित्सु श्री अली मुहम्मद ने 200 दिनों से अधिक की उपस्थिति देकर अपना शोध कार्य मेरे निर्देशन में किया है ।

मैं इनके शोध प्रबन्ध से पूर्ण रूपेण सन्तुष्ट हूँ ।

उरई

दिनांक 26|.6|.. 1986

शोध निदेशक

(डा० कृष्ण जी)

एम०ए०, पी-एच·डी·

दयानंद वैदिक स्ना· महाविद्यालय

उरई

:- आत्म निवेदन -:

प्रतापनारायण श्रीवास्तव का स्थान प्रेमचन्द युगीन कथाकारों में अप्रतिम है। बहुमुखी प्रतिभा संपन्न व्यक्तित्व होने के कारणइनकी लेखनी से उपन्यास, कहानी, एकाँकी, निबन्ध, हास्य-व्यंग्य एवं वार्तायें आदि अनुस्यूत हुई हैं ।

शोधार्थियों की दृष्टि मूलरूप से इनके उपन्यासकार रूप पर ही सीमित रही जबकि इनका संपूर्ण साहित्य शोधापेक्षी है। इसी दृष्टि को ध्यान में रखते हुये मैने "प्रतापनारायण श्रीवास्तव जीवन और साहित्य" विषय को शोध का विषय बनाया है, और इस कार्य को पूरा करने के लिये मुझे डा० कृष्ण जी का निर्देशन प्राप्त हुआ है।

इस शोध प्रबंध के अन्तर्गत प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यास -कार, कहानीकार, एकाँकीकार, कवि एवं निबन्धकार रूप पर विशद रूप से विवेचन एवं विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए उनकी उपलब्धियों पर विचार किया गया है। उनका अन्य रूप जैसे वार्ताकार, अनुवादक, हास्य-व्यंग्यकार पर विचार करने में असमर्थ रहा हूँ क्योंकि प्रकाशित एवं अप्रकाशित सामग्री उपलब्ध न हो सकी यहाँ तक कि उनके समकालीन साहित्यकारों ने भी उनकी इस सामग्री को उपलब्ध कराने में अपनी असमर्थता प्रकट की ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध "प्रतापनारायण श्रीवास्तव : जीवन और साहित्य" सात अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

प्रथम अध्याय में प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी का प्रामाणिक जीवन वृत एवं उनके व्यक्तित्व का निरूपण करते हुये उनके विविध विषयों से सम्बन्धित उनकी विचार धारा का अंकन किया गया है। नवीन सामग्री के साथ-साथ उपलब्ध समस्त सामग्री को एक स्थान पर एकत्र करके उनकी प्रमाणिक तालिका प्रस्तुत की गई है ।

द्वितीय अध्याय में प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासकार रूप का वर्णन किया गया है। हिन्दी उपन्यास स्वरूप, उद्भव-विकास तत्व आदि का वैज्ञानिक आधार पर विवेचन प्रस्तुत किया गया है। तथा श्रीवा - स्तव जी के समकालीन उपन्यास-कारों में उनका महत्व प्रतिपादित किया गया है ।

तृतीय अध्याय में उपन्यास कला के निकष पर इनके उपन्यासों का साहित्यिक मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है, तथा हिन्दी उपन्यास को इनकी क्या देन रही है, इस पर मौलिक रूप से विचार किया गया है ।

चतुर्थ अध्याय में हिन्दी कहानी स्वरूप, उद्भव-विकास एवं कहानी तत्वों पर विचार करते हुये इनकेकहानीकार के रूप पर विशद रूप से प्रकाश डालते हुये इनके समकालीन कहानीकारों में इनका स्थान निर्धारित किया गया है। कहानी के माध्यम से इन्होंने समाज को जो चेतना प्रदान की है उस पर भी मौलिक रूप से विचार किया है।

पंचम अध्याय में हिन्दी एकाँकी नाटक स्वरूप, उद्भव-विकास पर विचार करते हुये प्रतापनारायण श्रीवास्तव की एकाँकी कला पर विवेचन किया गया है। एकाँकी नाटक कारों में इनका स्थान निर्धारित किया गया है ।

षष्ट अध्याय में प्रतापनारायण श्रीवास्तव रचित स्फुट रचनाओं का वर्णन किया गया है। प्रथम खण्ड में प्रतापनारायण श्रीवास्तव के कवि रूप का वर्णन किया है। जिसमें उनके द्वारा रचित कविताओं का संक्षिप्त परिचय एवं उनका शिल्पगत सौन्दर्य प्रस्तुत किया गया है, और द्वितीय खण्ड में प्रतापनारायण श्रीवास्तव के निबन्धकार के रूप का वर्णन किया गया है। जिसमें उनके द्वारा प्रणीत निबन्ध का संक्षिप्त परिचय एवं निबन्ध के आधार तत्वों पर अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय के अन्तर्गत उपसंहार प्रस्तुत किया गया है । जिसमें प्रतापनारायण श्रीवास्तव की साहित्यिक उपलब्धि पर विचार किया गया है तथा उनके साहित्य को लेकर क्या-क्या शोधकार्य हो सकते हैं इन पर विचार किया जा सकता है, विचार किया गया है।

श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को समझने की दिशा में मुझ अल्पज्ञ का यह अकिंचन प्रयास मात्र है, जिसमें तथ्यों की प्रमाणिकता का पूरा ध्यान रखा गया है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध "प्रताप नारायण श्रीवास्तव " के साहित्यकार को सही रूप में यदि किंचित भी सफल हो सका तो यह मेरा अहो भाग्य और मेरे श्रम की सार्थकता होगी ।

यह मेरा परम सौभाग्य है कि मुझे परम श्रद्धेय गुरूवर डा० कृष्ण जी के कृपापूर्ण निर्देशन में शोध कार्य करने का अवसर मिला । जिन्होंने

अकथ स्नेह एवं पुत्रवत्सल्य प्रेम ही नहीं दिया बल्कि समूल्य समय/निधि देकर शोध-कार्य को पूर्ण कराया । आपकी उदार प्रवृति एवं प्रतिभाशाली व्यक्तित्व का ही सुपरिणाम है कि यह मेरा शोध प्रबन्ध लगभग तीन वर्षों में सम्पन्न हो रहा है ।

इसके साथ में अपने अग्रज प्रोफेसर श्री एस.अली, {विभागाध्यक्ष रसायन, गढ़वाल विश्व विद्यालय टिहरी, गढ़वाल {तथा प्रोफेसर डा० आई. एम. बेग {वरिष्ठ प्रवक्ता रसायन विभाग, डी० वी० कालेज, उरई{बुन्देलखण्ड वि०वि०झाँसी{ का जो इस सम्पूर्ण शोध-कार्य के मध्य निरन्तर मेरी जड़ता को दूर करके मुझे "चेतना" का अमृत पिलाते रहे हैं, उनके कृतित्व को, उनकी प्रेरणा के संबल को, उनके अनन्य अनुरागमय स्नेह को क्या जीवन के किसी भी क्षण में, मैं विस्मृत कर पाऊँगा ।

इसके अतिरिक्त मैं उन सभी लेखकों एवं आलोचकों का भी हृदय से आभारी हूँ, जिनकी साहित्यिक कृतियों की सहायता ली है । साथ ही साथ उन पुस्तकालयों एवं पुस्तकालय अध्यक्षों का ऋणी हूँ, जिन्होंने समय-समय पर पाठ्य सामग्री प्रदान करके शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में सहयोग दिया। उनमें मौलाना आजाद लाइब्रेरी ए.एम.यू. अलीगढ़ मारवाड़ी पुस्तकालय एवं वाचनालय बिरहाना रोड कानपुर लाइब्रेरी कानपुर, सेन्ट्रल लाइब्रेरी भोपाल, चारबाग लाइब्रेरी लखनऊ, ऐसमददोला लाइब्रेरी लखनऊ, मारवाड़ी पुस्तकालय दिल्ली, आदि ।

इस प्रबन्ध के लेखन में जिन लेखकों, विद्वानों, आचार्यों, श्रीमानों और मित्रों ने व्यक्तिगत भेंट-वार्ता द्वारा और कभी पत्र व्यवहार द्वारा उचित दशा प्रदान की उन सबका हृदय से कृतज्ञ हूँ । टंकण की अशुद्धियों के लिये क्षमा प्रार्थी हूँ।

26 जुलाई 1986

विनयावनत
अली मुहम्मद
(अली मुहम्मद)

विषयानुक्रमणिका

आत्म निवेदन　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　पृष्ठ

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

पृष्ठ

पृष्ठ

पृष्ठ

पृष्ठ

पंचम अध्याय

पृष्ठ

षष्ठ अध्याय

पृष्ठ

सप्तम अध्याय

परिशिष्ट

0------------------------------0

प्रथम अध्याय

प्रतापनारायण श्रीवास्तव : जीवन रेखायें और व्यक्तित्व

1.0 प्रताप नारायण श्रीवास्तव :- जीवन रेखायें एवं व्यक्तित्व

1.1 प्रताप नारायण श्रीवास्तव ऐसे समय की देन हैं जब भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का सूर्य अपने पूर्ण यौवन पर था और देश भक्ति की बातें करना देश द्रोह समझा जाता था, फिर भी माँ भारती के सपूत स्वतत्रंता के लिये तन, मन, से लगे हुये थे, उन्हीं में एक थे प्रताप नारायण श्रीवास्तव के परदादा राजा हनुमान सिंह जिनको नवाब शाहादत अली खाँ दिल्ली से अपने साथ लखनऊ लाकर 52 गांवों की जागीर का जागीरदार बना दियाथा। राजा हनुमान सिंह राजा बहादुर शाह आदि स्वतत्रंता सग्राम सेनानियों के साथ प्रथम स्वतत्रंता सग्राम में शामिल हुये, वहीं से आप ला पता हो गए, अग्रेजों ने आपको गिरफ्तार करवाने का बहुत प्रयास किया, उन्हें जिन्दा या मुर्दा पकड़ने वाले को पुरूस्कृत करने की भी घोषणा की किन्तु वे किसी के भी हाथ न लग सके।

अग्रेजों ने श्रीवास्तव जी की परदादी को निराश्रित कर दिया, मजबूर होकर उन्होने दिल्ली का परित्याग कर दिया और अपने एक वर्ष के बालक और सिर्फ एक जोड़ी कपड़े जो पहिने थीं को साथ लेकर घर से निकल पड़ी। अग्रेंजी शासन में किसी ने भी उन्हें सहयोग देने का साहस नहीं किया। लाचार होकर दरन्दर की ठोकर खाती रायबरेली जिले के एक छोटे से गांव में आकर रहने लगी थी। वही कष्टों को सहन करती हुई बालक को अट्ठारह (18) वर्ष की अवस्था में छोड़कर स्वर्ग सिधार गई।[1]

प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी के पितामह गांव (जहां-परदादी रहती थी) से आकर कानपुर में रहने लगे। यहां उन्हे नौकरी भी मिल गई बाद में विवाह करके पारिवारिक जीवन व्यतीत करने लगें। इनके तीन पुत्र उत्पन्न हुये किन्तु जीवित सिर्फ एक ही पुत्र श्री रत्न-नारायण जी रहे। श्री रत्न नारायण जी की ही एक मात्र सन्तान प्रताप नारायण श्री वास्तव जी है।

1:- प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का समाज शास्त्रीय अध्ययन- - डा0 उर्मिल गम्भीर — पृष्ठ-21

1.1.1. प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी का जन्म 20सितम्बर सन् 1904 ईसवीं में हरवंश मुहाल महानगर कानपुर में हुआ था । आप अपने माता पिता की एक मात्र सन्तान थे । आपके पिता कपड़े का व्यापार किया करते थे । माता मन्नी देवी थी जो आपको पन्द्रह वर्ष की अवस्था में छोड़कर स्वर्गवासी हो गई । जब आप चौबीस वर्ष की अवस्था में पदार्पण कर रहे थे, तो आप के पिता श्री रत्न नारायण श्रीवास्तव जी चल बसे ।¹

माता पिता की मृत्यु ने इनके हृदय में संसार के प्रति उदासीनता उत्पन्न कर दी । इनकी दृष्टि के सामने सदैव अकेलापन, संसार अस्थिरता, नश्वरता और क्षण भंगुरता नृत्य करने लगी । अब आपका जीवन नीरस हो गया । अतः उनका मन जीवन के निराशापूर्ण क्षणों को मृत्यु के चरणों में चढ़ाने को चंचल हो उठता । किन्तु यौवन की दहली पर प्रवेश करते ही उनकी कल्पना ने सुख सपनों का ऐसा संसार रचना आरम्भ किया कि उन्हे - जीवन की क्षण जीवी अनुभूतियाँ बड़ी सरस और मधुर प्रतीत होने लगी । श्रीवास्तव जी के पास न बाहुबल था न धनबल, न संस्था न सभा बल था - तो केवल धैर्य एंव बुद्धि बल ।

1.1.1.2 प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने 1922 में मैट्रिक और 1925 में क्राइस्ट चर्च कालेज, कानपुर से बी०ए० प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया । लखनऊ से सन् 1927 ई० एल-एल०बी० की उपाधि प्राप्त की । इसके बाद एम०-ए० {अंग्रेजी} प्रथम वर्ष कि परीक्षा उत्तीर्ण की, इसके बादअपरिहार्य परिस्थितियों के कारण अध्ययन सुचारू रूप से न चल सका । इसी बीच जुलाई सन् 1924 में श्री मती अन्नपूर्णा देवी के साथ पाणिग्रहण संस्कार सम्पन्न हुआ। आपका वैवाहिक जीवन अत्यन्त सुखमय रहा आपकी धर्मपत्नी अपने अमूल्य परामर्शों और अथक परिश्रम एवं धैर्य द्वारा आपके विभिन्न कार्यों में सहयोग दिया करती थीं ।

1.1.1.3 सन् 1926 ई० में आपको एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई, किन्तु कालरूपी दानव ने उसे शीघ्र ही इस पृथ्वी से उठा लिया । अन्नपूर्णा देवी रोगिणी हो गई ।

1:- व्यालीस {भूमिका} — प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ-11,12

पत्नी के जीवन को संकट में डालने की अपेक्षा आप ने निःसंतान रहना ही स्वीकार किया । आपकी पत्नी एवं अन्य साथी चाहते थे कि आप दूसरी शादी कर लें । लेकिन आप अपनी धर्म पत्नी की आत्मा को कष्ट नहीं पहुँचाना चाहते थे । धर्म पत्नी अन्नपूर्णा के अनुरोध पर ही आपने एक मात्र पितृ विहीन अबोध बालिका को गोद ले लिया उसका पालन पोषण सन्तान वत ही किया ।

1.1.1.4 सन् 1928 ई0 में ही आपने जोधपुर राज्य में न्याय विभाग में पद ग्रहण किया । बीस वर्षों तक न्यायधीश के पद पर कार्य करने के पश्चात् सन् 1948 ई0 में स्वेच्छा से अवकाश ग्रहण किया और फिर स्थायी रूप से कानपुर में रहने लगे ।

हिन्दी के प्रति सेवा भाव से प्रेरित होकर तथा मित्रों के आग्रह पर आपने सन् 1949 ई0 से लेकर 1952 ई0 तक " कानपुर विकास बोर्ड" में हिन्दी अधिकारी के रूप में कार्य किया । इसके पश्चात् से आप पूर्ण रूप से साहित्य साधना में रत रहें । इसी के परिणाम स्वरूप आपने हिन्दी को अक्षय साहित्य दिया जिसके लिये हिन्दी साहित्य तथा हिन्दी प्रेमी ऋणी रहेगें ।

1.1.1.5 प्रताप नारायण श्रीवास्तव बाल्यकाल से ही बड़े संवेदन-शील गम्भीर और जिज्ञासु व्यक्ति के रूप में प्रसिद्ध थे । जीवन के प्रति अपनी मौलिक एवं संवेदनशील दृष्टि के कारण उनकी कविताओं में तत्त-कालीन परिस्थितयों एवं रीतिकालीन काव्य परम्परा का प्रभाव देखा - जाता है । किन्तु बाद में प्रेमचन्द , विश्वम्भर नाथ शर्मा, सियाराम शरण गुप्त , भगवती प्रसाद बाजपेयी , भगवती चरण वर्मा आदि के सम्पर्क में आने पर एवं गणेश शंकर "विद्यार्थी " जी की प्रेरणा से वे गद्य क्षेत्र में उतरे । और गद्य में आपकी प्रथम कृति कहानी "बलिदान" सन् 1920 ई0 में हिन्दी मनोरंजन " पत्रिका में प्रकाशित हुई तथा इनका पहला कहानी संग्रह "- निकुंज" में सन् 1922 ई0 में प्रकाशित हुआ ।

1.1.1.5.1 प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी के अध्ययन और अनुभव का

1:- वरदान का विवेचनात्मक अध्ययन --डा0 जगदीश त्रिपाठी - पृ0-9

क्षेत्र अत्यन्त व्यापक रहा है, आपने हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी और - बंगला के साहित्य का विशेष अध्ययन किया । उर्दू एवं संस्कृत साहित्य से भी आपको रूचि थी । इतिहास अध्यात्म, दर्शन, विज्ञान, ललित साहित्य और समसामयिक , राजनीति आपके प्रिय विषय थे ।

न्यायाधीश पद पर कार्य करते समय आपको विविध प्रकार के व्यक्तिओं, परिवारों एवं सामाजिक और जटिलतम पक्षों का सूक्ष्म रूप से अध्ययन करने का विशेष अवसर प्राप्त हुआ ।

प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी ने अपने जीवन काल में अनेक पत्र पत्रिकाओं को साहित्यिक जीवन प्रदान किया । जीवन के अन्तिम क्षणों में प्रताप नारायण श्रीवास्तव शारीरिक एवं आर्थिक कष्टों से दब गये थे । उन्हे मृत्यु से 8-10 वर्ष पूर्व पक्षाघात एवं अन्य बीमारियों ने निष्क्रिय कर दिया था । प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी बीमारी से पूर्व आत्म कथात्मक उपन्यास लिख रहे थे जो अपूर्ण ही रह गया ।

प्रताप नारायण श्रीवास्तव स्वभाव से स्वाभिमानी, आत्म-निर्भर और साहित्य- साधना में निरत रहने वाले व्यक्ति थे । अपनी साहित्य साधना को उन्होंने जीवन की साधना बना लिया । इसीलिए उनको जीवन और साहित्य में जो समता, सामंजस्य और समन्वय की चेष्टा दिखलाई देती है । वह उनके व्यक्तित्व की एक अप्रतिम विशेषता है । इसी के कारण वे सदैव आत्मश्लाघा से दूर रहे और आत्म प्रकाशन की विकृति से चेष्टा ने कभी उन्हें विचलित नहीं किया । और जीवन के अन्तिम समय की अस्वास्थता और लाचारी के दिनों में भी वे सृजन से विमुख नहीं रहे किन्तु काल बड़ा निष्ठुर होता है । उसकी दुर्निवारगति के चक्र में पड़ कर हिन्दी साहित्य की इस महान विभूति का जीवन दीप 18 फरवरी 1978 ई0 को सदैव के लिए बुझ गया ।

1.2.0. :- व्यक्तित्व -:
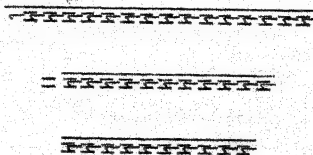
1.2.1. "व्यक्तित्व" संस्कृत का संज्ञावाची पुलिंग शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ व्यक्ति का गुण या भाव है, अर्थात वे विशिष्ट गुण या भाव जिनके द्वारा किसी व्यक्ति की स्पष्ट और स्वतंत्र सत्ता सिद्ध होती है ।

किसी कलाकार के कृतित्व को समझने के लिये उसके व्यक्तित्व की अभिज्ञता अत्यावश्यक है। आत्माभिव्यक्ति की इच्छा मनुष्य में स्वाभाविक ही है, क्योंकि मनुष्य भी एक सामाजिक प्राणी है। कृतित्व का समुचित अध्ययन करने से ही कलाकार के व्यक्तित्व का पता लग जाता है। श्रीवास्तव जी का व्यक्तित्व तो उभर कर उनके साहित्य में बोलने सा लगा है। "मिडिल्टन मरे" का मत है कि कलाकार कृति से इतना तादात्म स्थापित कर लेता है कि कलाकार का व्यक्तित्व न रह कर स्वयं कृति का व्यक्तित्व बन जाता है। कलाकार के विचारों और भावों के साथ ही उसका विकास होता है एवं कलाकार के व्यक्तित्व के साथ संसार की गतिविधि की छाप रहती है।

प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी के व्यक्तित्व को निम्न रूपों में पाते हैं :-

1.2.1.1 1- अन्तरंग के रूप में -

1.2.1.2. 2- वहिरंग के रूप में -

1.2.1.1. अन्तरंग के रूप में:- अंतरंग व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति दिनचर्या एवं व्यक्तिगत भेंट से हो जाती है।

1.2.1.1.1. श्रीवास्तव जी के व्यक्तित्व की प्रथम परख का प्रथम सोपान उनकी शरीराकृति है। जो साधारण होते हुए भी असाधारण लगता था। उनके मझोले कद, श्यामवर्ण, विशाल नेत्र, सुडौल नासिका, मुख पर विखरी रेखायें एवं दृढ़ता का परिचय देने वाले अधरों परहंसी की अमिट स्मित आभा एवं उदार हृदय उनके व्यक्तित्व को गरिमा प्रदान करता था ।

1.2.1.1.2. प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी भारतीय वेशभूषा के समर्थक थे। वे अधिकतर धोती, कुर्ता ही पहनते थे किन्तु यौवनावस्था में आपने भी खूब तड़क, भड़क वाले कपड़े पहने और न्यायाधीश पद पर कार्य करने के समय कोट, पैन्ट और टाई ही धारण करते थे। यौवनावस्था के बाद प्रौढ़वस्था में पहुँचते-पहुँचते आपकी मानसिक प्रवृत्तियों में परिवर्तन आया और आपकी बाह्य सज्जा ने भी एक नया मोड़ लिया। प्रौढ़ावस्था में आपने सिर्फ कुर्ता धोती एवं कभी-कभी गाँधी टोपी ही धारण करते थे, जो स्वदेशी खद्दर से निर्मित होते थे। श्रीवास्तव जी शेरवानी, चूड़ीदार पजामा, एवं साफा जब तब पहिन लिया करतेथे । उनके परिधान में भारतीयता परिलक्षित होती थी ।

1.2.1.1.3. प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी सादा जीवन उच्च विचार के समर्थक थे । उनका खान पान सीधा सादा था । वे सुबह दूध दोपहर को भोजन सायंकाल चाय के साथ फल नमकीन आदि लिया करते थे । रात्रि में भोजन किया करते थे । उनके सात्विक भोजन ने ही उन्हें मृत्यु पर्यन्त स्वस्थ रखा। वे पान अधिक मात्रा में लिया करते थे ।

1.2.1.1.4. प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी की नियमित दिनचर्या साधारण थी। गर्मी, सर्दी, बरसात हर मौसम में 4-5 बजे के लगभग उठना फिर शौचादि से निवृत होकर घूमने जाया करते थे । घूमकर आकर आप दूध आदि ग्रहण करते फिर समाचार पत्र पत्रिकाओं को देखते तत्पश्चात स्नान आदि करते थे इसके बाद विश्राम करते थे। विश्राम करने के बाद आप साहित्य साधना में रत हो जाते कभी लिखते और कभी दूसरे विद्वानों की कृतियों का अध्ययन करते । भोजन ग्रहण करने के बाद फिर अध्ययन करने लगते। सायंकाल हल्का नाश्ता लेते फिर दोस्त-यारों के साथ घूमने जाते। घूमकर आप 8 बजे के करीब आते फिर भोजन ग्रहण करते थे। भोजन ग्रहण करने के बाद पारिवारिक लोगों के साथ बातें किया करते थे ।

1.2.1.1.5. प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी चरित्र को मानव जीवन का बहुमूल्य रत्न मानते थे। चरित्र का ही दूसरा नाम आचरण है, इसे ही व्यवहार कहते हैं।अच्छे चाल-चलन वाला व्यक्ति ही वास्तव में सभ्य है। जिस तरह प्रेम की भाषा शब्द रहित होती है, ठीक उसी तरह सभ्याचरण की भाषा मौन होती है। सभ्याचरण व्यक्ति के प्रभाव से दूसरे व्यक्ति पर भी उसके कर्मों एवं व्यवहार का प्रभाव पड़ता है। इस पर बड़े-बड़े व्याख्यान देना, वेद या पुराणों की कथायें गाकर उपदेश देना आदि व्यर्थ है।मानव का आचरण शीघ्र

नहीं बदलता, उसके लिये अनवरत साधना एवं कठोर परिश्रम की आवश्यकता पड़ती हैं। किताबें तो बस किताबें ही हैं सार्थकता उनके पढ़ने एवं पढ़कर उनकी बातों को जीवन में उतारने में है न की खरीदने में। पुस्तकीय ज्ञान तो दिखावा मात्र है। कबीर ने ठीक ही कहा है:-

"पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ पंडित भया न कोय ।
ढाईअक्षर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय ।।"

सभ्याचरण यही "ढाई अक्षर प्रेम का" है। इसके लिये चाहे जितने व्याख्यान दे दिये जाय, चाहे जितनी पुस्तकें पढ़ ली जाय, चाहे जितनी धर्म चर्चायें कर ली जाय, चाहे जितने प्रवचन सुन लिये जायें लेकिन कोई असर नहीं होता। बल्कि और नई-नई उलझने पैदा हो जाती है, सन्देह और भ्रम पैदा हो जाता है, क्योंकि जितने ही ग्रन्थ उतने ही मत ।

पहली बात यह है, कि सभ्याचरण का सम्बन्ध वाणी से नहीं हृदय से होता है। यदि हृदय में प्रेम नहीं है, तो सभ्याचरण का क्या प्रभाव होगा कुछ भी नहीं । प्रेम को पैदा करने के लिये मनुष्य को बहुत परिश्रम करना पड़ता है । जिस प्रकार कमल को प्राप्त करने के लिये कीचड़, फूल को प्राप्त करने के लिये कांटेएवं हीरे को प्राप्त करने के लिये पत्थरों का सामना करना पड़ता है। लेकिन प्रेम को प्राप्त करने के लिये कीचड़,कांटे एवं पत्थर तीनों का सामना करना पड़ता है ।

जीवन का उद्देश्य आचरण का विकास करना है । जब तक हम जीवन को सुधारते नहीं सब व्यर्थ है, और यह आचरण के अच्छे बनने पर ही हो सकता है । दूसरे के प्रति अच्छा व्यवहार करना, दया, ममता तथा सहानुभूति से दूसरे के सामनेपेश आना तथा नम्रता पूर्वक बोलना, किसी का बुरा न चाहना इन गुणों के विकसित होने पर ही सम्भव है । इसके लिये नियमों का गठन करना भी असम्भव है । हॉ यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति और परिस्थिति सापेक्ष है । वस्तुत: आचरण की प्राप्ति ही एकता की प्राप्ति है । सभ्याचरण होने पर ही व्यक्ति सब को समान दृष्टि से देखता है, समान अधिकार देता है तथा सबका भला सोचता है । श्रीवास्तव जी के व्यक्तित्व में ये सारी विशेषतायें थी ।

थोथा ज्ञान असार है। ज्ञान तभी सार्थक है जब उसे समझने की क्षमता हो- सिर्फ हां में हां मिलाकर गर्दन हिला देना और "त्वदीय वस्तु भो भगवन तुभ्यमेव समर्पय" की तरह जो कहा सुना वहीं छोड़ दिया । ज्ञानी की

होने की निशानी नहीं है । प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने मानव नियति के बारे में लिखा है:-

"मनुष्य ज्ञानी होने का कितना दम्भ करता है, किन्तु कितना अज्ञानी है । कुछ नहीं जान पाया । दीर्घ कालीन चिन्तन- मनन और वैज्ञानिक अविष्कार सब व्यर्थ है। सम्पूर्ण मानव प्रयास जन्म प्रगति समय के एक संकेत पर व्यर्थ प्रतीत होती है । समय कितना निर्मम है । उसकी निर्ममता ही उसे भगवान से भी महान बनाती है, क्योंकि भक्ति आदि साधनों से परमात्मा को तोबुलाया जा सकता है, किन्तु कोटि उपाय करने पर भी बीते हुये समय को बुलाया नहीं जा सकता "[1] ।

1.2.1.1.6 महार्षि विवेकानन्द से जब किसी ने आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा की थी तो उन्होंने ओजस्वी स्वर में कहा था - "जाओ पहले सामने वाले मैदान में दो घण्टे फुटबाल खेलो ।" उनके इन शब्दों का आशय यह था कि स्वस्थ्य शरीर और स्वस्थ्य मस्तिष्क में ही ज्ञान का वास सम्भव है । श्रीवास्तव जी सुबह और शाम घूमने जाया करते थे । इसीलिये वह हमेशा स्वस्थ्य रहे ।

यह सच है कि मनुष्य का प्रत्यक्ष ज्ञान सीमित होता है ।स्मृति, अनुमान या परिस्थितियों द्वारा प्राप्त जानकारी ज्ञान को बढ़ाती है । ऐसे समय में मनोवृति के दमन का उपदेश दिया करते हैं, परन्तु श्रीवास्तव जी इसके समर्थक नहीं थे । मानसिक व्यापारों और चेष्टाओं का दमन सम्भव नहीं है । वस्तुत: वे ही मानव की प्रेरक शक्तियां हुआ करती हैं और यदि किसी स्वाभाविक मनोभाव से काम न लिया जाय, तो वे प्राय: लुप्त हो जाते हैं ।

हाँ इतना अवश्य किया जा सकता है कि आवश्यकता, नियम , और न्याय इन तीनों के कारण मनोवेग को रोका जा सकता है ।जैसे किसी अशक्त सेवक को हृदय में उसके प्रति करूणा रहते हुये भी अपना काम रूकता देखकर हटाना ही पड़ता है। इस प्रकार आवश्यकता के कारण करूणा का स्पृहनीय भाव उपक्षेति हो जाता है ।

नियम के कारर्ण भी मनुष्य मनोवेगों के अनुसार काम नहीं कर सकता, किसी से करूणा होते हुये भी उससे सम्बन्ध स्थापित करना पड़ता है । जैसे राजा हरिश्चन्द्र ने अपनी पतिव्रता रानी शैव्या को पहचान कर भी

1- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव --- पृष्ठ - 112

उसके मृत सुत के अमर का कफन आधा फड़वा लिया था । वास्तव में नियम के कारण होने वाली कठोरता का महत्व तभी होता है जब वह अपने प्रिय व्यक्तियों पर की जाती है । दूसरों पर तो कोई भी कर सकता है।

1.2.1.1.7 प्रतापनारायणं श्रीवास्तव जी न्यायधीश पद पर भी रहे लेकिन न्याय उचित ही किए । वैसे न्याय का दायित्व अपने मनोवेगों को दबाकर कार्य करने को बाध्य करता है । जैसे किसी ऐसे अपराधी को जो दण्ड के कारण अपने परिवार को दयनीय स्थिति में पहुँचाने वाला है, उसे कोई भी न्यायधीश सहानुभूति होते हुए भी आरोपमुक्त नहीं कर सकता । व्यक्तिगत रूप से उसके परिवार को भले ही सहायता दे दें ।

1.2.1.1.8 मनोवेगों या भावों के द्वारा प्रेरित होकर ही मनुष्य जीवन में प्रवृत्त होता है। जो लोग भावों के दमन का उपदेश देते हैं श्रीवास्तव जी उन्हें मानव मूल की अनुभूतियों से परे मानते है।क्योंकि मानव एक सामाजिक प्राणी और सामाजिक प्राणी होने के कारणं मनुष्य दूसरों के सुख से सुखी एवं दूसरों के दुख से दुखी होता है, हाँ एक बात यह महत्व की है कि दूसरों के दुःख से दुःखी होना अधिक व्यापक है जबकि दूसरों के सुख से सुखी होने का क्षेत्र सीमित है । पर दुख कातरता का भाव उत्पन्न करने के कारण ही जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म में इसे बहुत महत्व दिया गया है । गोस्वामी तुलसी दास जी ने इसको धर्म का मूल माना है ।

सर्व विदित है, कि मनुष्य विधाता की सर्वश्रेष्ठ कृति है। मनुष्य के अमरत्व की भावना दार्शनिक आधार पर मानव को प्रेरणा प्रदान करती है । मनुष्य की अन्तिम एवं चिर इच्छा हुआ करती है कि अपने व्यक्तित्व को स्थायी बनाया जाय इसके लिये अमृत प्रतिपल उसके बाल पकड़कर अपनी ओर खींचती रहती है। और अन्त की कल्पना करके वह बैचेन हो जाता है। इसलिये नहीं कि मृत्यु से भयभीत है वरन् इसलिये कि उसके जाने के बाद उसका नामोनिशान ही मिट जायेगा । इसलिये वह जाने से पहले अपना नाम, स्मृतियाँ, स्मृति चिन्हों, पुस्तकों, कीर्ति स्तम्भों, विजय द्वारों, पिरामिड़ों आदि के रूप में छोड़ जाता है। जबकि उसे पता है कि उसके साथ चलने वाला दुश्मन काल उसे नष्ट करने की होड़ लगाये बैठा है । लेकिन फिर भी काल उन्हें विस्मृति नहीं कर पाता । बहुत से मनुष्यों ने ऐसी कृतियों का निर्माण किया जिनका काल के थपेड़े भी बाल बाँका न कर सके। इसके लिये साहित्यकारों ने अपनी अपनी स्मृति स्वरूप अमर ग्रन्थों की रचना की जो आज भी अमर है और उनका नाम अमर है

कैसे बहुत सी ऐसी इमारतें भी बनी है जिनका रूप काल थपेड़ों को झेलता हुआ अभी अनोखी छटा से सबको लुभा रहा है ।

1.2.1.1.9 श्रीवास्तव जी का व्यक्तित्व वह गम्भीर सागर था जो अपने आकुल तरंगों में लहरा कर धूप में भी मुस्कराता रहता था । या वह विस्तृत आकाश था जो झंझावात और चपला के घनघोर गर्जन और साधतिक आघातक को हृदय पर झेलकर भी शीतल ज्योत्सना के मधुमय जीवन में मुस्कराता रहता था

1.2.1.1.10 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी भाग्यवादी थे । लेकिन वह यह भी मानते थे । कि कोरा भाग्य का सहारा कायरता है । पुरूषार्थ और बुद्धि बल के सामने भाग्य हार जाता है । जो आगे नहीं बढ़ सकता, वही भाग्य का सहारा लेता है । और वह मृतक समान है[2]।

"कायर मन कर एक अधारा । देव देव आलसी पुकारा" ।

पुरूषार्थ और भाग्य का सम्बन्ध क्या है, और दुनिया के सारे वैभव कैसे मिले हैं । उनका विवेचन दिनकर जी ने स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार किया है:-

---

1- परहित सरिस धर्म नहीं भाई,
पर पीड़ा सम नहि, अधिमाई, {राम चरित मानस, उ0 का0 तुलसीदास}

2- "भाग्य बिगड़ने पर सगे भी पराये हो जाते हैं । अन्धकार में अपनी छाया भी साथ छोड़ देती है।" "वरदान" प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-38

"पुरूषार्थ भाग्य सवाँरता है, बिगड़े भाग्य की टेढ़ी लकीरों को सीधा बनाता है और अन्नत ऐश्वर्य शक्ति एवं सफलता प्रदान करता है। वस्तुतः पुरूषार्थ की चोरी का नाम सफलता है।"

"वरदान"- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 41

"मनुष्य यावज्जीवन कर्म करता है, क्योंकि इस लोक में कर्म ही प्रधान है। उसका समस्त भविष्य कर्म पर आधारित है कुछ कर्म ऐसे होते हैं, जिनकी प्रक्रिया तुरन्त होती है, कुछ की देर में और कुछ जीवनोपरान्त फल देते हैं ।"

"विश्वास की वेदी पर"- प्रतापनारायण श्रीवास्तव- पृ0- - 136

ब्रह्मा ने कुछ लिखा भाग्य में,
मनुष्य नहीं लाया है ।
जो कुछ भी उसने पाया है,
श्रम बल से पाया है[1] ।

सिकन्दर भी इन्हीं तथ्यों में विश्वास करता था ।[2] प्रताप नारायण श्री- वास्तव यह मानते थे कि कर्मशील व्यक्ति ही जीवन में सफलता प्राप्त करता है । जो कर्म से मुहँ छिपाते हैं वह लोग और लोगों की दृष्टि से गिर जाते हैं ।[3] कर्मशील व्यक्ति ही समाज में सम्मान, श्रद्धा एंव स्नेह प्राप्त करते है । कर्म से विमुख होकर सुख और सन्तुष्ट की प्राप्ति असम्भव है । सुख और दुःख कर्मों के अनुसार मिलते है । अतः भगवत गीता में ठीक कहा गया है:- कि मनुष्य का कर्तव्य है कार्य करना, न कि फल प्राप्ति की इच्छा करना फल तो परमात्मा के हाथ में है ।[4] ---

1.2.1.1.12 सन् 1925 ई0 का वर्ष प्रताप नारायण श्री वास्तव के लिये अत्यधिक कष्टप्रद एवं दुःखपूर्ण रहा । इसी वर्ष आपकी पत्नी बीमार रही, पुत्र बहिन एंव पिता जी कालकवलित हो गये । इसी वर्ष बी0 ए0 फाइनल की परीक्षा देनी थी । परीक्षा से 3 दिन पूर्व पिता जी के स्वर्ग सिधार जाने पर लोगों ने एवं सगे सम्बन्धियों ने इन्हें क्रिया कर्म से रोका एंव पढ़ाई की और ध्यान देने को कहा । लेकिन प्रताप नारायण - श्रीवास्तव ने उनके इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया, और क्रिया कर्म भी किया और परीक्षा दी । आपने उत्तर दिया था कि जो भाग्य में लिखा है वही होगा । बी0 ए0 आपने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया । प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी भाग्यवादी ही नहीं थे वरन् पुर्नजन्म में भी आस्था रखते थे । इसीलिए आपने उपन्यासों में कई पात्रों के द्वारा - पुर्नजन्म को दिखाया है ।

1:- "कुरूक्षेत्र"----------रामधारीसिंह दिनकर -- पृष्ठ 72
2:-"आग पानी"-------रघुवीरशरण "मित्र" -- पृष्ठ- 28
3:-"कर्तव्य और सत्यता" (निबन्ध)------ बाबू श्यामसुन्दर दास--पृष्ठ- 5
4:-"कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।"
भगवद् गीता — पृष्ठ--247

1.2.1.1.13 प्रताप नारायण श्रीवास्तव न केवल भाग्य वादी है वरन् ईश्वरवादी भी हैं, किन्तु जीवन में कर्म की महत्ता को अस्वीकार नहीं करते। आदर्श यथार्थ की भाँति ही वह भाग्य और कर्म को परस्पर पोषक एवं पूरक मानते हैं।

" माँ मेरी दृष्टि में, धरातल पर दैवी शक्ति का वह अवतार है जो अपने अक्षय ममत्व, निष्कपट स्नेह, अतुलनीय उत्सर्ग, निस्वार्थ सेवा और असमान्य सहिष्णु भाव से सन्तानों को पालित - पोषित ही नहीं करती है, वरन् उन सम्बन्धों की सृष्टि भी करती है। जो हमारे वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और मानवीय सम्बन्धों की आधार शिलायें है।"[1]

प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने माँ को मानव के लिये पृथ्वी पर दैवी वरदान माना है। माता - पिता के प्रति अगाध प्रेम, सम्मान, श्रद्धा की भावना। उनके व्यक्तित्व की विशिष्टता थी। उनका कथन था कि " मैं आज जो कुछ भी हूँ अपनी माता के आशीर्वाद से ही हूँ। मेरे व्यक्तित्व का, मेरे संस्कारों का निर्माण उन्हीं के द्वारा हुआ है।[2] लिखने की शक्ति प्रताप नारायण श्रीवास्तव को माँ के वियोग से मिली। प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने अपने उपन्यासों में माँ के चरित्र को जितना स्वच्छ, निर्मल एवं सर्व कल्याण कारक दिखाया है उतना किसी और को नहीं। और न ही किसी पात्र द्वारा माँ के चरित्र को ठेस ही पहुंचायी है।

1.2.1.1.14 प्रताप नारायण श्रीवास्तव के पिता जी धार्मिक प्रवृत्ति के थे। आप बाल्यकाल से ही पिता से डरते थे। जब कभी भी आपके पिता आपको उपन्यास पढ़ते, उपन्यास तिमरखते या कहानी लिखते देखते तो डांटा करते थे। आहिस्ता- आहिस्ता जब उन्होंने श्रीवास्तव जी की मनोवृत्ति को एवं अन्य पत्र पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ पढ़ी तो उन्होंने आपत्ति नहीं की, बल्कि इतना ही कहा-- "बेटा अब तुम शौक से लिखना मैं कभी बाधक नहीं बनूगा।"[3] पिता के आशीर्वाद और माता के वात्सल्य ने प्रताप नारायण श्रीवास्तव को उनकी साहित्यिक साधना में सफल बनाया। श्रीवास्तव जी का कथन है--

---

1:-"वरदान" (भूमिका) --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव--पृष्ठ-7

2:-प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का समाज शास्त्रीय अध्ययन-- डा0-उर्मिल गम्भीर --पृष्ठ --10

3:-प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का समाज शास्त्रीय अध्ययन- डा0 उर्मिल गम्भीर --पृष्ठ-10

" यदि माता ने मुझे अपना वात्सल्य दिया तो पिता ने चरित्र निर्माण किया ।"[1]

वैचारिक दृष्टि से प्रताप नारायण श्रीवास्तव को किसी संकुचित सीमा में नहीं बांधा जा सकता और अगर संग्रथित ही करना चाहे तो उन्हे मानवतावादी ही कहा जा सकता है । जीवन दर्शन के रूप में गांधी दर्शन के शाश्वत और सार्वभौमिक जीवन मूल्यों से विशेष प्रभावित है । फलत: विराट राष्ट्रीयता का स्वर उनकी समस्त रचनाओं में मुखरित रहा है ।

1.2.1.1.15 प्रेमचन्द युगीन कथाकारों में सम्भवत: केवल श्रीवास्तव ही ऐसे कलाकार हैं जो वादों के सहारे नहीं कला के सहारे अपने लक्ष्य की ओर गतिशील हुये हैं ।

1.2.1.2 वर्हिरंग रूप में
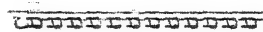
1.2.1.2.1 साहित्य पर लेखक के जीवन का प्रभाव प्रत्यक्ष न होकर, परोक्ष होता है । एक को नापने से दूसरा नप जाता है, और दूसरे को नापने से पहला नप जाता है । महान् साहित्यकार समय की उपज नहीं होता वरन् वह स्वयं परिस्थितियों का निर्माण करता है ।

देश, जाति और सीमाओं से ऊपर उठकर जो विश्वहित मानव ही नहीं , समस्त प्राणियों के हित के लिये सर्वकालिक , सर्वदेशीय एवं सार्वभौमिक साहित्य का सृजन व चित्रण करता है । वह ही वर्तमान एवं अतीत से प्रेरणा प्राप्त कर अपनी व्यापक दृष्टि से भविष्य के लिये लिखता है । उसका साहित्य सामयिक स्थायी होता है । प्रताप नारायण - श्रीवास्तव जी ऐसे ही साहित्यकार थे । जिनका न केवल साहित्य वरन् व्यक्तित्व भी "सर्वभूत हितेरत:" की उद्घोषणा करतारहता है । ज्ञान , कर्म, इच्छा का पूर्ण समवन्य उनके साहित्य में देखने को मिलता है ।

1.2.1.2.2 प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी भारतीय संस्कृति के अन्यतम उपासक थे । जब भी अवसर आता वे अपनी संस्कृति के विकृति रूप को देखकर अपने क्षोभ को न रोक पाते थे ।

1:- प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का समाज शास्त्रीय अध्ययन - डा0-उर्मिल गम्भीर-- पृष्ठ--10

प्रताप नारायण श्रीवास्तव के चतुर्मुखी पाण्डित्य असीम , संस्कृति प्रेम और सफल उपन्यासकार के रूप का परिचायक है ।

किसी बात को एक छोटा सा आलम्बन लेकर शुरू करना और उसके माध्यम से साहित्य और संस्कृति के गम्भीरतम पक्षों का सफलता पूर्वक प्रस्तुत कर देना श्रीवास्तव जी जैसे अप्रतिम विद्वान में ही सम्भव है ।

1.2.1.2.3 प्रताप नारायण श्री वास्तव के अध्ययन और अनुभव का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक रहा है । आपने हिन्दी के अतिरिक्त अँग्रेजी और बगंला के साहित्य का अध्ययन किया । उर्दू एवं संस्कृत के साहित्य से भी आप-को विशेषरूचि थी । न्यायाधीश के रूप में आपको विविध प्रकार के व्यक्तियों ,परिवारों एवं सामाजिक समूहों के असाधारण और जटिलतम पक्षों का सूक्ष्म अध्ययन करने का मौका प्राप्त हुआ । इतिहास, दर्शन, अध्यात्म , विज्ञान , ललित साहित्य एवं समसामयिक , राजनीति आपके विशेष प्रिय विषय रहे है ।

1.2.1.2.4 आपके उपन्यासों में एक विशेषता स्पष्ट झलकती है वह है, उपन्यासों के शीर्षकों का प्रथम वर्ण "व" का होना। आपको वर्ण"व" से कुछ आत्मीयता सी रही है । लेकिन आपने इसे कहीं स्पष्ट नहीं किया । श्री वास्तव जी ने कहा है :--" मेरे सभी उपन्यासों के कथानक उस मध्यम वर्गीय जीवन से सम्बन्धित है जिनको मैंने निकट से देखा और भोगा है और सदा अनुभव भी किया है कि मुझे ही नहीं पाठकों को भी केवल उन्हीं चरित्रों ने प्रभावित किया है जो मेरी वास्तिवक अनुभूति और अभिव्यक्ति के परिणाम है[1] "।

अत: प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी की स्वीकारोक्ति उचित ही है कि मैंने अपनी समस्त औपन्यासिक रचनाओं में मुख्य दो बातों का ध्यान रखा है और वे है, अनुभूति और अभिव्यक्ति की वास्त-विकता ।

1.2.1.2.5 एक समय था जब बाबू प्रताप नारायण श्रीवास्तव के नाम की धूम थी । उनका कृतित्व समाज पर छाया हुआ था । हिन्दी में आधु-निकशैली के प्रथम उपन्यासकार के रूप में आपका नाम श्रद्धा और सम्मान के साथ लिया जाता है ।

1:-बेकसी का मजार {निवेदन} --प्रताप नारायण श्रीवास्तव--पृष्ठ-3,4

प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी आरम्भ में कवितायें लिखा करते थे। धीमे-2 आप विश्वम्भर शर्मा (कौशिक) व प्रेमचन्द जी के पास आये और गणेश शंकर "विद्यार्थी" की प्रेरणा से गद्य साहित्य में उतरे। आपकी पहली कहानी "बलिदान" 1920 ई0 में मनोरंजनपत्रिका में प्रकाशित हुई एंव पहला कहानी संग्रह "निकुंज" 1922 ई0 में प्रकाशित हुआ। श्रीवास्तव जी का प्रथम उपन्यास "विदा" जो आपने 23 वर्ष की अवस्था में लिखा था वह 1927 ई0 में प्रकाशित हुआ।" विदा" ने उन्हीं दिनों बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय के एम0ए0 के पाठ्यक्रम में स्वीकृत प्राप्त की उस समय श्रीवास्तव जी 27 वर्ष के थे। विदा को कई प्रान्तीय सरकारों ने पुरूस्कृत भी किया। तभी तो उसकी 50000 से भी अधिक प्रतियां बिकी जो श्रीवास्तव जी के व्यक्तित्व की प्रथम सफलता थी। जिससे वह साहित्य सृजन की ओर उन्मुख हुये और वृद्धावस्था में भी साहित्य सृजना उनकी सच्ची सहचरी रही। आपको साहित्य से अगाध स्नेह था।

1.2.1.2.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के व्यक्तित्व की एक विशेषता यह भी थी कि जब भी कोई पत्रकार, लेखक या शोध छात्र आपसे मिलने के लिये आते थे, तो आप बेहद खुश होते थे, और देर तक बैठने का आग्रह बार-बार करते रहते। जीवन के अन्तिम आठ-दस वर्षों में पक्षाघात एवं अन्य बीमारियों के कारण आपको साहित्य रचना करने में कठिनाई होने लगी थी। लेकिन आप बराबर प्रयत्नशील रहे। आपने लगभग 20000 पृष्टों की साहित्य सृजना की है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के वैयतिक जीवन और साहित्य में भेद नहीं रहा है। जिस प्रकार वह निजी जीवन में सुसंकृत, सच्चारित, कर्मनिष्ट उदात, संवेदनशील, सहृदय एवं संतुलित व्यक्ति है। आपके वैयक्तिक जीवन की इन मान्यताओं, आदर्शों और मूल्यों से आप का सम्पूर्ण साहित्य समृक्त है। मानव मूल्यों एवं आत्म सत्यों के प्रति असीम आस्था थी और पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति तीव्र आक्रोश। पूँजीवादी व्यवस्था में दर्शन की अकाल मृत्यु हो जाती है, धर्म का स्वरूप विकृत होकर शोषण को प्रश्रय देने लगता है, और नैतिकता का ह्रास हो जाता है। इस व्यवस्था में राजनैतिक, धार्मिक, वैचारिक एवं नैतिक समस्त प्रकार के मूल्य और सत्यभूमिस्थ हो जाते है, अँधेरे में छिप जाते है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने हमेशा इस व्यवस्था को बदलने के लिये उन जीवन मूल्यों आत्म सत्यों को उदभासित किया है। जिससे इस व्यवस्था के विरूद्ध एक व्यापक जन क्रान्ति को जन्म देगी। आपके लिखित एकांकी

की नाटक, कहानी और उपन्यास इसके प्रमाण हैं ।

1.2.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे । इनकी लेखनी से उपन्यास, कहानी, एकांकी, अनुवाद, निबन्ध कवितायें, वार्तायें, हास्य-व्यंग्यआदि अनुस्यूत हुये हैं । इनके कृतित्व की प्रमाणिक तालिका निम्न रूप में प्रस्तुत है[1] ।

1.2.3.1 उपन्यास

विदा (1927), विजय (1936), विकास (1938), बयालीस (1947), विसर्जन [2] (1949), बेकसी का मजार (1956), विषमुखी (1958), वेदना (1958), विश्वास की वेदी पर (1959), बन्दना (1961), वचंना (1962), विनाश के बादल (1963), विपथगा (1964), बन्धन विहीना (1964), व्यावर्तन (1964), वन्दिता, वरदान[3] (1971), विहान (1971), विरागिनी (1973), माया देश का रहस्य (बाल उपन्यास), निस्प्रभ देश का रहस्य (बाल उपन्यास), अथ से इति, आपके प्रसिद्ध उपन्यास हैं ।

1.2.3.2 कहानियाँ

कहानीकार के रूप में आपने अप्रतिम ख्याति प्राप्त की आपके द्वारा रचित कहानिओं को अनेक पत्र पत्रिकाओं में देखा जा सकता है उनमें बलिदान, कलंक स्वदेशिनी, पूर्वजन्म, का प्रेम आदि प्रमुख हैं । प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी के पाँच कहानी संग्रह प्रकाशित हुये हैं । जो निम्न हैं ।-निकुंज (1922), आशीर्वाद (1934), दो साथी (1950), नवयुग (1953), विधाता का विधान (1961)

1.2.3.4 एकांकी नाटक

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने एकांकी नाटकों को भी जीवन दिया । आपके एकांकी नाटक दो संग्रहों में प्रकाशित हुये जो निम्न हैं :- विवाह-विभ्राट (1948), विजय का व्यामोह (1965)

1- विरागिनी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 9-10-11

2- विसर्जन बाद में विसर्ग के नाम से प्रकाशित हुआ ।

3- वरदान बाद में विनीता नाम से प्रकाशित हुआ ।

1.2.3.9 हास्य एवं व्यंग्य

प्रतापनारायण श्रीवास्तव स्वभाव से ही हंसमुख प्रकृति के साहित्यकार थे । और यह शतांश सत्य है कि आपके जीवन के अधिकाँश पहलु साहित्य में चित्रित है । उन्हीं में से एक हास्य व्यंग्य भी है । "घोंघा छब्बे" उपनाम से लिखे गये हास्य व्यंग्य बहुत महात्त्वपूर्ण हैं ।

1.2.4 मुख्य रूप से प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उपन्यास, कहानी तथा एकाँकी क्षेत्र में अप्रतिम सफलता प्राप्त की । अन्य रूप जैसे निबंध, हास्य एवं व्यंग्य, वार्ता एवं कवि रूप इनका गौण ही रहा है । प्रस्तुत शोध प्रबंध में इनके तीन रूपों – उपन्यासकार, कहानीकार एवं एकाँकीकार पर ही विचार किया गया है। इनमें इतर उनके साहित्य की खोज की गई पर आज अनुपलब्ध है ।

1.2.4.1 निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्रेम चन्द के बाद प्रेम चन्द की परम्परा को अमर बनाने का श्रेय इस अमर कथा शिल्पी प्रतापनारायण श्रीवास्तव को ही है। हिंदी जगत इनके इस योगदान का चिर-ऋणी रहेगा ।

===============

================

==========

द्वितीय अध्याय

हिन्दी उपन्यास और प्रताप नारायण श्रीवास्तव

2.0 हिन्दी उपन्यास:- स्वरूप, उद्‌भव विकास

2.1 उपन्यास शब्द "उप" और "नि" इन दो उपसर्गों "अस" धातु और "घञ् " प्रत्यय के संयोग से व्युत्पन्न हुआ है । शाब्दिक दृष्टि से उपन्यास में उप + न्यास दो शब्दों का योग हुआ है । जिसका अर्थ सामने रखना है । अर्थात "उप"= समीप और "न्यास"=रखना, उपस्थित करना या रखना होता है । "इसका अर्थ निकट रखी हुई वस्तु अर्थात वह वस्तु या कृति जिसको पढ़कर ऐसा लगे कि वह हमारी ही है, इसमें हमारे ही जीवन का प्रतिबिम्ब है, इसमें हमारी ही कथा हमारी ही भाषा में कही गई है । आधुनिक युग में जिस साहित्य विशेष के लिये इस शब्द का प्रयोग किया जाता है, उसकी प्रकृति को स्पष्ट करने में यह शब्द सर्वथा समर्थ है। xxxxxxxxxxxxxxx भरत मुनि ने नाट्य शास्त्र में इसे "उपपत्ति कृतोह्यार्थ" तथा"प्रसादनम्" कहा है अर्थात किसी अर्थ को युक्तिपूर्ण ढंग से उपस्थित करने वाला तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाला कहा गया है ।"[1]

2.1.1 "उपन्यास" शब्द अंग्रेजी के "नावेल" शब्द का पर्यायवाची है । अंग्रेजी में इस शब्द का प्रयोग उपन्यास के अर्थ में ही होता है । भारत की अनेक प्रान्तीय भाषाओं में इस शब्द को भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयोग किया जाता है । मराठी में "कादम्बरी" गुजराती में "नवलकथा" एवं हिन्दी में "वक्तृता", उपन्यास आदि शब्द प्रचलित है । डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपन्यास शब्द के सार्थक प्रयोग को इंगित करते हुये लिखा है :-

"उपन्यास वस्तुतः ही नवल नया और ताजा साहित्यांग है परन्तु फिर भी जिस मेधावी ने कथा में आख्यायिका आदि शब्दों को छोड़कर अंग्रेजी नावेल का ही प्रतिशब्द उपन्यास माना था उसकी सूझ की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जा सकता ।"[2]

1- हिन्दी साहित्य कोष - पृष्ठ - 139

2- साहित्य के मर्म - हजारी प्रसाद द्विवेदी - पृष्ठ 5 71

2.1.2 उपन्यास को किसी निश्चित सीमा के अंतर्गत परिभाषा बद्ध करना अत्यन्त दुष्कर है । फिर भी भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने इस सम्बन्ध में स्वमतों की स्थापना की है ।

2.1.2.1 भारतीय विद्वानों के मतानुसार

2.1.2.1.1 डा० श्यामसुन्दर दास के शब्दों में :-

"मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा ही उपन्यास है ।" [1]

2.1.2.1.2 उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द ने उपन्यास की परिभाषा इस प्रकार की है :-

"मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ । मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्य को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है ।" [2]

2.1.2.1.3 बाबू गुलाब राय के शब्दों में :-

"उपन्यास कार्यकारण श्रृंखला में बंधा हुआ वह गद्य कथानक है जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेंचीदगी के साथ वास्तविक जीवन के साथ प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से सम्बन्धित वास्तविक, काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सत्य का रसात्मक रूप से उद्घाटन किया जाता है ।" [3]

2.1.2.1.4 सुधी समीक्षक आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने उपन्यास की परिभाषा इस प्रकार की है :-

"उपन्यास से आजकल गद्यात्मक कृति का अर्थ लिया जाता है । पद्य बद्ध उपन्यास नहीं हुआ करते ।" [4]

1- साहित्यालोचन - श्याम सुन्दर दास - पृष्ठ - 180

2- प्रेमचन्द - कुछ विचार - पृष्ठ - 38

3- उद्धृत -हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास- डा० प्रतापनारायण टंडन - पृष्ठ 5- 176-177

4- आधुनिक साहित्य -आचार्यनन्द दुलारे वाजपेयी - पृष्ठ -122

2.1.2.1.5-6 डा० भगवत शरण उपाध्याय उपन्यास को जीवन का दर्पण मानते हैं उनके अनुसार इसमें कहानी का विस्तार प्रवहमान जीवन को प्रकट करता है। डा० देवराज उपाध्याय के मतानुसार :-

"उपन्यास गद्य साहित्य का अन्यतम रूप है जिसका आधार कथा है चाहे वह सीधे मनुष्यों की हो या मनुष्येतर जीव और निर्जीव प्रकृति की चाहे वह सच्ची हो या कल्पित ।"[1]

2.1.2.1.7 डा० भागीरथ मिश्र ने उपन्यास की परिभाषा इस प्रकार की है :-

"युग की गतिशील पृष्टभूमि पर सहज शैली में स्वाभाविक जीवन की एक पूर्ण व्यापक झांकी प्रस्तुत करने वाला गद्य काव्य उपन्यास कहलाता है ।"[2]

2.1.2.1.8 डा० त्रिभुवन सिंह जी ने उपन्यास की व्याख्या इस प्रकार की है :-

"साहित्यक क्षेत्र में उपन्यास ही एक ऐसा उपकरण है कि जिसके द्वारा सामूहिक मानव जीवन अपनी समस्त भावनाओं और चिन्ताओं के साथ सम्पूर्ण रूप में अभिव्यक्त हो सकता है। मानव जीवन के विविध चित्रों को चित्रित करने का जितना अधिक अवकास उपन्यासों में मिलता है, उतना उतना अन्य साहित्यक विधाओं में नहीं ।"[3]

2.1.2.1.9 डा० नलिन विलोचन शर्मा लिखते हैं :-

"हिन्दी उपन्यास का इतिहास किसी भी देश के उपन्यास के इतिहास की तरह, हिन्दी भाषा क्षेत्र की सभ्यता और संस्कृति के नवीन रूप के विकास का साहित्यिक प्रतिफलन है ।"[4]

1- साहित्यिक निबन्ध - डा० अश्वघोष - पृष्ठ - 121
2- काव्य शास्त्र - डा० भागीरथ मिश्र - पृष्ठ - 79
3- हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद - (विषय-प्रवेश) -पृष्ठ -1
4- उद्धृत - साहित्यालोचन -डा० भारत भूषण सरोज - पृष्ठ - 166

2.1.2.1.10 NEW ENGLISH DICTIONARY में उपन्यास की परिभाषा इस प्रकार दी गई है :-

"एक लम्बे आकार की काल्पनिक कथा या प्रकथन है, जिसके द्वारा एक कार्य-कारण श्रृंखला में बंधें हुये कथानक में वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रों और कार्यों का चित्रण किया गया है।"[1]

2.1.2.2 पाश्चात्य विद्वानों ने भी उपन्यास की परिभाषा विविध ढंग से की है। प्रसिद्ध समालोचक राल्फ फाक्स के शब्दों में :-

"The novel is not merely fictional prose, it is the prose of man's life, the first art to attempt to take the whole man and give him expression."[2]

2.1.2.2.2 प्रसिद्ध आंग्ल साहित्यकार एन० जी० वेल्स ने उपन्यास को खाली समय में खाली दिमाग को[3] मनोरंजन प्रदान करने वाला हानि रहित उत्तेजक साधन माना है :-

"Harmless exite for vacant mind and vacant hours."[3]

2.1.2.2.3 ई० एम० फार्स्टर ने उपन्यास के आकार की सीमा बाधते हुये कहा है कि :-

"उपन्यास पचास हजार शब्दों से कमआकार वाला नहीं होना चाहिये।"[4]

1- "A fiction, prose, tale or narrative of considerable length, in which characters and actions professing to represent those of real life are portrayed in a plot." — The Quest for Literature, by: G.M. Shipley, Page 354.

2- Novel and the People — Ralph Fox (1954) Page 5

3- उद्धृत - साहित्यालोचन- प्रो० भारत भूषण सरोज, डा० कृष्णदेव शर्मा - पृष्ठ -166

4- उद्धृत - हिन्दी उपन्यास - शिवनारायण श्रीवास्तव -(सं. 2002) पृ०-193

2.1.2.2.4 बेकर के मतानुसार :-

"उपन्यास को हम गद्यमय कल्पित आख्यान के माध्यम से की गई जीवन की व्याख्या कह सकते हैं ।"[1]

2.1.2.2.5 वैवस्टर ने उपन्यास की परिभाषा बद्ध करते हुये कहा है:-

"उपन्यास एक ऐसा कल्पित विशालकाय गद्यमय आख्यान है जिसमें एक ही कथानक के अन्तर्गत यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रों और उनके क्रिया कलापों का चित्रण रहता है ।"[2]

2.1.2.2.6 राबर्ट लिडैल के अनुसार :-

"The novel as literary form, has still a flavour of newness."[3]

2.1.2.2.7 जे0 बी0 प्रीस्टले उपन्यास की परिभाषा इस प्रकार देते हैं :-

"उपन्यास गद्य कथा है, जिसमें मुख्यत: काल्पनिक पात्र और घटनाएँ रहती हैं। उपन्यास को जीवन का एक बड़ा दर्पण कहा जा सकता है। इसमें साहित्य की अन्य विधाओं के अपेक्षाअधिक विस्तार वाली दृष्टि रहती है । उपन्यास को हम अनेक रूपों में वर्णित कर सकते हैं। उसे सादा और सरल वर्णन, सामाजिकता का चित्रण, चरित्र प्रदर्शन तथा जीवन दर्शन आदि कह सकते हैं। और इन सारी विशेषताओं को छोड़कर उसे केवल उपन्यासकार के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति कहें तो भी अनुचित न होगा ।"[4]

2.1.3 उपरलिखत परिभाषाओं में से कोई एक भी उपन्यास के स्वरूप को पूर्णतया अभिव्यक्त करने में समर्थ नहीं है। ये सभी परिभाषायें उपन्यास के किसी एक पक्ष विशेष का ही उदघाटन करती हैं। आज के उपन्यास कला के विकास को देखकर ये परिभाषायें एकांगी एवं अधूरी सी प्रतीत होती हैं

1- उद्धृत - साहित्यिक निबन्ध - सम्पादक डा0 अश्व घोष -पृष्ठ - 120

2- उद्धृत - साहित्यिक निबन्ध - सम्पादक डा0 अश्व घोष -पृष्ठ - 120

3- "A Treatise on the Novel" - Robert Liddell (1953) Page 13.

4- उद्धृत - वरदान एक विवेचन - सुशीला शर्मा -पृष्ठ -9

सच तो यह है । कि उपन्यास मानव जीवन का कल्पनापरक यथार्त चित्रण होता है। उपन्यास गद्य साहित्य की वह समर्थ विधा है जिसमें प्रबन्ध काव्य का,सा सुसंगठित वस्तु महाकाव्य की सी व्यापकता, गीतों की सी मर्मिकता, नाटकों का सा प्रभाव ने ही उसे बहुत रोचक एवं लोक प्रिय बना दिया है। इसका कारण यह है कि उपन्यासकार किसी साहित्य सीमा में सत्य से बधा नहीं रहता जैसा जीवनीकार । वह तो केवल अपने आदर्शों की सम्पूर्तितथा कथा को अधिक रोचक और प्रभावशाली बनाने के लिये सत्य का आदर करता हुआ कल्पना का सहारा लेता है। कोई भी उपन्यास, चाहे वह ऐतिहासिक हो या सामाजिक , कल्पना द्वारा विविध मानवीय संवेदनाओं का विस्तार करके भावनाओं और विचारों के मध्य एक नवीन सामंजस्य को खोज निकालनेको प्रयास करता है तथा अपने सीमित रूप में जीवन के सत्य को अधिक से अधिक अभिव्यक्त करने का लक्ष्य रहता है ।

2.1.3.1 उपरिलिखित परिभाषाओं के आधार पर यह माना जा सकता है कि उपन्यास मानव जीवन का कल्पनापरक यथार्त चित्रण है। यद्यपि यह मनुष्येतर पदार्थों का भी वर्णन करता है।यह वर्णन भी मनुष्य से सम्बन्ध ही होता है। इसीलिये इसे मानव जीवन का महाकाव्य कहते हैं। उपन्यास मनुष्य से सम्बद्ध होता है। यह यर्थात रूप में घटनाओं को वास्तविक रूप में ग्रहण न करके उनको कल्पना की सहायता से ही नवीन रूप में परणित कर लेता है, परन्तु यह कल्पनापरक रूप भी होता है, वास्तविक भी । ऐसी वास्तविकता जो यथार्त तथा स्वाभाविक लगे ।

2.1.3.2 उपन्यासकार प्रकारन्तर से समाज को नवीन दिशा का बोध कराने वाला होता है । उसके लिये यह भी आवश्यक होता है। कि वह तटस्थ दृष्टिकोण अपनाये और अनेकों वाद - विवाद मत -भेदों से दूर रहकर अपने निष्पक्ष, स्वच्छ विचार समाज के सामने प्रस्तुत करें । उपन्यासकार जब मानव जीवन की सफलता और असफलता, अन्तर्वेगों, सुख-दुख आदि का वर्णन करता हैक तो स्वाभाविक है कि वह भी उन्हीं विचारों में लिप्त हो जाता है और ऐसा न होना अस्वाभाविक है । यही कारण है कि वह वर्तमान समस्याओं के प्रति भी प्रत्यक्षता अथवा परोक्षतः अपना व्यक्त करता है।

2.1.3.3 जीवन की व्याख्या उपन्यासकार दो तरह से करता है एक व्यक्तिगत टिप्पणियों द्वारा अर्थात प्रत्यक्षतः और दूसरा कथोपकथन द्वारा अर्थात परोक्ष । इनमें द्वितीय को ही अधिक महत्वपूर्ण व सुन्दर माना जाता है।

2.1.3.4 उपन्यास में वर्णित जीवन दर्शन की व्याख्या उपन्यासकार दो आधारों पर करता है :-

1- वह सत्य के कितना समीप है ।

2- नीति तत्व किस सीमा तक विद्यमान है ।

उपन्यास का सत्य तथ्यों पर आधारित होया ना हो पर सार्वभौमिक मानवता पर अवश्य आधृत होता है। उपन्यासकार का कर्तत्व बड़ा उत्तरदायित्व पूर्ण होता है । कि वह जीवन और उनकी समस्याओं के विषय में सोचे तथा उनके औचित्यपूर्ण समाधान दे । तभी उपन्यासकार सफल हो सकता है ।

2.1.4 उपन्यास - उद्भव - विकास

हिन्दी उपन्यास के उद्भव और विकास के बारे में विद्वान एकमत नहीं है। लेकिन मतमतान्तर होते हुये भी ज्यादातर विद्वान इस पक्ष में है कि हिन्दी उपन्यासों का उद्भव भारतेन्दु युग में हुआ। हिन्दी उपन्यास ने अपनी अनति-दीर्घ यात्रा की एक शताब्दी भी पार नहीं की है फिर भी इस अल्प वय में उसने जो अपना बहुविध विकास किया है। वह विस्मय की वस्तु है। उसकी उप--लब्धियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

हिन्दी उपन्यास की अद्यतन जो प्रगति हुई है, उसको हम कई तरह से प्रदर्शित कर सकते हैं लेकिन सरलता को ध्यान में रखते हुये हमने इसे 4 भागों में विभा-जित किया है।

2.1.4.1 प्रथम उत्थान युग - (1850-1900)

2.1.4.2 द्वितीय उत्थान युग- (1900-1915)

2.1.4.3 तृतीय उत्थान युग -(1915-1936)

2.1.4.4 चतुर्थ उत्थान युग - (1936 से आज तक)

2.1.4.1 प्रथम उत्थान युग - (सन् 1850 से 1900)

हिन्दी उपन्यास के विभाजन की इस पहली अवस्था को हम हिन्दी उपन्यास की "जन्मावस्था" मानते हैं।

वैसे तो हिन्दी उपन्यास का मूल हिन्दी के पूर्ववर्ती सं-स्कृत कथा साहित्य में खोजा जा सकता है। कुछ आलोचक संस्कृत के "कादम्बरी" दशकुमार चरित,आदि कथा ग्रन्थों को उपन्यास मानते है और उपन्यास की प-रम्परा भी उन्हीं से जोड़ देते हैं। और कुछ विद्वान सूफी कवियों के प्रेमाख्यान काव्य ग्रन्थों से मानते है। लेकिन ध्यान पूर्वक इन ग्रन्थों का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि यह उपन्यास नहीं सिर्फ कथा ग्रन्थ हैं। यहाँ यह बात ध्यान रखने योग्य की सभी लम्बे कथा ग्रन्थों को उपन्यास नहीं मान सकते हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार कथावस्तु और वर्णन प्रणाली की दृष्टि से लाला श्रीनिवास द्वारा लिखित "परीक्षा गुरू" हिन्दी का सर्व प्रथम उपन्यास है। कुछ आलोचक इंशा अल्ला खां रचित रानी केतकी कहानी को सर्व प्रथम उपन्यास मानते हैं। यद्यपि कला की दृष्टि से इस छोटी सी कथा पुस्तक का कोई मूल्य नहीं है, लेकिन सर्व प्रथम कृति होने से ऐतिहासिक मूल अव-श्य है। "परीक्षा गुरू" ही सर्व सम्मत से मान्य है। आधुनिक उपन्यासों में सर्व

प्रथम सामाजिक जीवन को चित्रित करने का सिर्फ एक प्रेरणा श्रोत था । हालांकि "परीक्षा गुरू" से पूर्व भारतेन्दु ने भी हम्मीर हठ, नामक उपन्यास लिखना आरम्भ किया था दुर्भाग्य वस पूर्ण न हो सका । "परीक्षा गुरू" से 5 वर्ष पहले सन् 1877 ई0 में पण्डित श्रद्धाराम फिल्लौरी द्वारा रचित "भाग्यवती" प्रकाशित हुआ था । इसकी कथा सुगठित, सोदेश्य, स्वाभाविक, गतिशील, रोचक एवं शिक्षा प्रद भी है। फिर भी न मालूम क्यों शुक्ल जी ने इसे हिन्दी का सर्व प्रथम उपन्यास क्यों नहीं माना ।"भाग्यवती" को ही हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास मानना चाहिये न कि 5 वर्ष वाद प्रकाशित होने वाले "परीक्षा गुरू" को । आचार्य शुक्ल लाला जी के परवर्ती उपन्यासकार श्रीकिशोरीलाल गोस्वामी को प्रथम उपन्यासकार स्वीकार करते हैं।

इस काल के अन्य मौलिक उपन्यासों में पं0 बालकृष्ण भट्ट का "नूतन ब्रहमचारी"-और "सौ अजान एक सुजान" राधा कृष्ण प्रसाद का "निः सहाय हिन्दू" और पं0 अम्बिका दत्त व्यास का "आश्चर्य" वृतान्त" विशेषतया प्रसिद्ध है।

इस काल में बंगला और अंग्रेजी उपन्यासों के कई अनुवाद भी प्रकाशित हुये। इसका प्राथमिक श्रेय बाबू हरिश्चन्द के "पूर्ण प्रकाश" और "चन्द्र प्रभा" को है। गजाधर सिंह के "बंग विजेता" और "दुर्गेशनंदिनी" तथा राधा कृष्ण प्रसाद के "मरता क्या न करता" आदि उपन्यास भी अनूदित उपन्यास हैं। इन अनुवादों से हिन्दी उपन्यास साहित्य की कलेवर वृद्धि हुई और इस ओर लोगों की रूचि जागृत हुई ।अनुवाद के इस लम्बे युग को अगर हम अनुवाद युग कहें तो अतिशयोक्ति न होगी । अंग्रेजी और उर्दू से हिन्दी में अनुवाद करने वालों में श्री रामकृष्ण वर्मा का नाम विशेष उल्लेखनीय है । इनके अनुवादित उपन्यासों में "ठग वृतान्त" (सन् 1946), पुलिश वृतान्तमाला (1947), अकबर (1948), अमला वृतान्त माला (1951), आदि प्रमुख हैं । वर्मा जी के बंगला से अनुवादित "चितौर चातकी" नामक उपन्यास को लेकर एक आंदोलन ही खड़ा हो गया था ।

इस अनुवाद युग में गोपालराय गहमरी का नाम अग्रगण्डय है ।उन्होंने बंगला के कई श्रेष्ठ सामाजिक उपन्यासों का हिन्दी में अनुवाद किया जैसे "दोबहिन", "तीन पतोहू", "देवरानी- जिठानी" तथा बड़ा भाई आदि मुख्य हैं। गोपाल गहमरी की भाषा सरल सजीव तथा आकर्षक थी अनुवाद के लिये जैसी प्रवाहपूर्ण भाषा की आवश्यकता होती है वैसी ही भाषा गहमरी ने

लिखी ।

बाबूरामचन्द्र वर्मा ने मराठी के "छत्रसाल" नामक उपन्यास का सुन्दर अनुवाद हिन्दी में किया । तथा "टामकाका की कुटिया" तथा "लन्दन रहस्य" प्रमुख हैं।

हिन्दी अनुवाद युग से यह बात पूर्ण रूपेण स्पष्ट है। हिन्दी साहित्य के पास अपना कुछ भी साहित्य नहीं था उसके पास तो सिर्फ अनुवादित साहित्य था । हिन्दी साहित्य जगत के लिये भले ही यह गौरव की बात न हो लेकिन यह मानना पड़ेगा कि लोगों को उपन्यासों की ओर आकृष्ट इन्ही उपन्यासों ने किया । हिन्दी उपन्यास साहित्य की प्रगति में इन अनुवादित उपन्यासों का आभार मानना पड़ेगा । हिन्दी का उपन्यास साहित्य आज जिस उन्नत शिखर पर भ्रमण कर रहा है। हिन्दी में आज उपन्यास पाठकों की संख्या हिन्दी साहित्य की अन्य विधाओं से अधिक है । उसका बहुत कुछ श्रेय इन अनुवादित उपन्यासों को देना न्याय संगत ही है ।

2.1.4.2 द्वितीय उत्थान काल (सन् 1900 – 1915)

हिन्दी उपन्यास इस चरण में विकास के पथ का राही था । विकास के इस युग में अनुवाद भी हुये और मौलिक उपन्यास भी खूब लिखे गये । प्रथम युग के अन्तिम चरण के अनुवादों का क्रम इस युग में पर्याप्त हुआ । विकास की इस अवस्था का श्रीगणेश रामकृष्ण वर्मा, कार्तिक प्रसाद खत्री एवं गोपाल राय गहमरी के अनुवादों से आरम्भ होता है।

इस काल में विशेषकर 4 प्रकार के उपन्यासों की रचना मिलती है – तिलस्मी, साहसिक, जासूसी एवं रोमानी । तिलस्मी, और "ऐय्यारी" उपन्यास लिखने वालों में देवकी नन्दन खत्री का नाम चिरस्मरणीय रहेगा । इनके "चन्द्रकांता संतति" और "भूतनाथ" आदि उपन्यासों को पढ़ने के लिये अनेक लोगों ने हिन्दी सीखी । आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने भी देवकी-नन्दन खत्री के बारे में लिखा है :-

"पहले मौलिक उपन्यास लेखक, जिनके उपन्यासों की सर्व साधारण में धूम हुई, काशी के बाबू देवकी नन्दन खत्री थे ।" प्रेम चन्द्र खत्री जी के उक्त उपन्यासों तथा उसी प्रकार के अन्य ऐय्यारी और तिलस्मी धटना से परिपूर्ण उपन्यासों का बीजांकुर फारसी पुस्तक "तिलिस्मे-होशरूबा" से मानते हैं। इन उपन्यासों का उद्देश्य मात्र पाठकों का मनोरंजन करना है।

खत्री जी इस उद्देश्य को स्वीकार करते हुये लिखते हैं - "चन्द्रकांता में जो बातें लिखी गयी हैं, वे इस लिये नहीं कि लोग उनकी सच्चाई, झुठाई, की परीक्षा करें, प्रत्युत् इसलिये कि पाठक का कौतुहल वर्द्धन हो।"[1]

अपने इस उद्देश्य में वे उपन्यास पूर्णतः सफल हुये हैं। लेकिन यह मानना न्याय संगत नहीं क्योंकि का उद्देश्य केवल मनोरंजन ही नहीं है। इसके अलावा चरित्र चित्रण भी उच्चकोटि का नहीं है।

खत्री जी की इस परम्परा को बाबू हरिकृष्ण जौहर, व गोपालराय गहमरी के नाम विशेष उल्लेखनीय है। गहमरी जी ने लगभग 50-60 उपन्यास लिखे ।

इस कड़ी में दूसरा नाम पं० किशोरी लाल गोस्वामी का आता है इन्होंने "अंगूठी का नगीना" लखनऊ कब्र, "चपला", "तारा" आदि 60 से भी ज्यादा उपन्यास लिखे । इन उपन्यासों में कौतुहलता के साथ-साथ मनुष्य की सहज रूचि को जागृत करने वाली विलासिता और प्रेम का पक्ष अधिक चित्रित होता है।

श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय " हरिऔध" के"ठेठ" हिन्दी का ठाठ "अधखिला फूल" इसी काल में प्रकाशित उपन्यास हैं। पं० लज्जाराम मेहता के " हिन्दू ग्रहस्थ","आदर्श दम्पति" बिगड़े का सुधार, और धूर्त रसिक लाल, और बृजनन्दन सहाय के "सौंदर्यो पासक" और "राधाकान्त" आदि उपन्यास प्रकाश में आये। इस युग के अनुवादकों में -रूपनारायण पाण्डेय, गोपाल राय गहमरी और ईश्वरी प्रसाद वर्मा आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं । खत्री जी और गहमरी के अलावा तिलस्मी और जासूसी उपन्यास लिखने वालों में देवी प्रसाद शर्मा, मनमोहन पाठक, विश्वेश्वर प्रसाद वर्मा, राम लाल वर्मा जयराम दास गुप्त, चन्द्र शेखर पाठक आदि का नाम आता है। इस काल में अधिकांशतः बंगला उपन्यासों के अनुवाद प्रकाशित हुये ।

2.1.4.3 तृतीय उत्थान काल (सन् 1915 -1936)

इस काल में आकर हिन्दी-उपन्यास-साहित्य का अभूतपूर्व विकास हुआ था इसके बारे में नलिन विलोचन शर्मा का यह कथन कि - " समृद्धि और ऐश्वर्य की सभ्यता महाकाव्य में अभिव्यंजना पाती है, जटिलता वैषम्य और संघर्ष की सभ्यता

1- उद्धृत - हिन्दी उपन्यास -उद्भव और विकास - डा० सुरेश सिन्हा - पृष्ठ - 243-244

उपन्यास में ।"।

प्रेम चन्द इस युग के सर्वाधिक ख्यातिलब्ध उपन्यासकार हैं। प्रेम चन्द हिन्दी के कथा साहित्य में देशभक्ति की भावना साधारण जन-समाज की हित-कामना, शोषण विरोध और जन वादी मानव मूल्यों की वकालत को लेकर उपन्यास क्षेत्र में उतरे और आपके आते ही आते सब की प्रशंसा और सम्मान के पात्र बनते गये आपका घटना वैचित्र से समाज सापेक्षिता की ओर आना निश्चित ही महत्वपूर्ण था ।प्रेम चन्द की समाज चेतना का अन्तिम साध्य गांधीवाद नहीं है वह एक साधन ~~स्वित-स~~मात्र था । उनका साध्य था - समता, एकता और न्याय के व्यावहारिक सिद्धान्तों पर रचित समाज, ऐसा समाज जहां न कोई बड़ा हो, न छोटा "न कोई अस्पर्श हो न त्याज्य" न जहां धर्मगत शोषण हो, न अर्थगत, न जहां सामंत हो, न रंक और न जहां भूखे नंगे हों और न बेकार । इसके विपरीत उनका साध्य एक ऐसे समाज की रचना करना था जहां हरेक को विकास का समान अवसर उपलब्ध होता हो । आपने लिखा था- "हमें एक ऐसे नये संगठन को सर्वांगपूर्ण बनाना है, जहां समानता केवल नैतिक बंधनों पर आश्रित न रहकर अधिक ठोस रूप प्राप्त कर ले [2] ।"

इनके उपन्यासों में शहर-गांव, नौकर-मालिक, शिक्षित अशिक्षित तथा मजदूर और किसान सब का ही बड़ा सुन्दर चित्रण मिलता है। इन्होंने केवल मात्र समस्याओं का चित्रण नहीं किया, अपितु जीवन की गहराइयों में घुसकर उनका निदान भी ढूंढ निकाला । " सेवा सदन", निर्मला", प्रेमाश्रम", वरदान", "कर्मभूमि", "रंगभूमि", "गोदान" तथा गबन"उपन्यासकार के रूप में जनता के सामने आते हैं। उपन्यासों के क्षेत्र में प्रेमचन्द भाषा, भाव, एवं चरित्र-चित्रण में एकदम सफल कहे जाते हैं। जयशंकर प्रसाद, विश्वम्भर नाथ शर्मा, वृन्दावन लाल वर्मा, प्रतापनारायण श्रीवास्तव और चतुरसेन शास्त्री आदि का नाम भी इस क्षेत्र में उल्लेखनीय है ।इस युग के प्रमुख प्रसिद्ध उपन्यासों में जयशंकर प्रसाद कृत कंकाल, इरावती, और तितली, वृन्दावन लाल वर्मा कृत गढ़कुंडार, विराटा की पद्मिनी", झाँसी की रानी", कचनार", मृगनयनी", प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत विदा", "विजय", विकास", बयालीस", बेकसी का मजार, आदि , चतुरसेन शास्त्री कृत वैशाली की नगर वधू", गोली,और

1- उद्धृत-साहित्यक निबन्ध-राजनाथ शर्मा - पृष्ठ - 583

2- प्रेम चन्द - साहित्य का उद्देश्य - पृष्ठ - 26

सोमनाथ और वयं रक्षाम: आदि तथा पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र कृत चन्दहसीनों के खतूत, बुधुवा की बेटी , दिल्ली का दलाल, सरकार तुम्हारी आँखें आदि हिन्दी साहित्य के लिये गर्व की रचनायें हैं । प्रेमचन्द जी के जीवन भर के अनुभव चिन्तन और उनकी साहित्यिक साधना का सुपरिणाम ही है- "गोदान"।जीवन की विविधता के दर्शन जितने प्रेमचन्द जी के उपन्यास-साहित्य में होते हैं, उतने अन्यत्र नहीं ।सार्थक घटनाएँ, सुन्दर सशक्त भाषा, युग जीवन की मार्मिक अभि-व्यक्ति प्रेमचन्द जी के उपन्यासों में देखकर हिन्दी-भाषा-भाषी-लोग कृतकृत्य हो गये ।

2.1.4.4 चतुर्थ उत्थान काल (1936 से आज तक)

प्रेमचन्द ने जिस धारा को प्रवाह और विकास दिया, वह उत्तरोत्तर गहरी और विस्तृत ही होती गयी । इस काल में विभिन्न विचार धारायें लेकर अनेक लेखक उपन्यास साहित्य की अभिवृद्धि में सलंग्न हुये । इनमें मुख्यत: मार्क्सवादी (प्रगतिवादी) विचारधारा और मनोविश्लेषणात्मक विचार धारा का प्रधान्य रहा ।

मार्क्सवाद से प्रभावित उपन्यासकारों में यशपाल, राहुल सांकृत्यायन, उपेन्द्रनाथ "अश्क", नागार्जुन, अमृत लाल नागर, गंगा प्रसाद मिश्र आदि । यशपाल कृत "दादा कामरेड", "देशद्रोही", और सांकृत्यायन कृत "जययौधेय","सिंह सेनापति" आदि प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकारों में जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द जोशी, भगवती प्रसाद वाजपेयी का नाम उल्लेखनीय है। इनके उपन्यासों समाज या वर्ग विशेष की अपेक्षा व्यक्ति को विशेष महत्व दिया गया है। क्योंकि मानसिक वृतियों का विश्लेषण व्यक्ति के माध्यम से ही सम्भव है ।

इलाचन्द जोशी ने "जहाज का पंछी", "सन्यासी", "प्रेत और छाया", और "पर्दे की रानी" आदि उपन्यासों में मनोविश्लेषण के सहारे सामाजिक जीवन में प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। आप फ्रायड के मनोविश्लेषण संबधी सिद्धान्तों से सर्वाधिक प्रभावित हैं।

पं० भगवती प्रसाद वाजपेयी के उपन्यासों में भी यह प्रभा--व दिखाई देता है। इनके उपन्यासों में नारी और प्रेम की कथा मूल है। इनके उपन्यास'प्रेम पथ पिपासा,' सूनी राह,' दो बहनें,' 'निमन्त्रण,' पतिता की साध-ना, यार्थर्थ से आगे आदि हैं। फिर भी उनमें कर्तव्य और वासना का संघर्ष चि-

-श्रित रहता है ।

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायायन 'अज्ञेय' एक ऐसे उपन्यासकार हैं जिन्होंने आदर्श की पिटी-पिटाई लीक से इतर होकर एक नई "टेकनीक" लेकर हिन्दी साहित्य में अवतरित हुये । इनके उपन्यासों में दार्शनिक तथ्यों का विवेचन तथा जीवन सम्बन्धी गहन विचारों का प्रतिपादन एक समाधान बड़ी सरलता से हुआ मिलता है। आत्म कथात्मक शैली में लिखित-"शेखर-एकजीवनी" -(भाग-2) एक अभूतपूर्व रचना है। वैसे "नदी के दीप", अपने-अपने, अजनबी आदि उपन्यास लिखे हैं।

नये उपन्यासकारों में मुख्य हैं:- राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, अन्नत गोपाल शेवड़े, अमृतराय, उदयशंकर भट्ट, ऊषा देवी मिश्रा, फणीश्वरनाथ रेणु, डा0 देवराज, नरेश मेहता, प्रभाकर माचवे, भैरव प्रसाद गुप्त, गुरूदत्त आदि प्रमुख हैं।

उपन्यासों के इस चरम विकास के युग की तरह हिन्दी उपन्यास अपनी तीव्र और सन्तुलित गति के साथ आगे बढ़ता रहा तो विश्व साहित्य तें अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाने में समर्थ होगा । उपन्यासों का भविष्य निसन्देह उज्जवल और आशाप्रद है।

2.2 हिन्दी उपन्यासों का वर्गीकरण

स्वरूप एवं विषय की दृष्टि से उपन्यासों को अनेक वर्गों, उपवर्गों एवं संवर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रत्येक उपन्यासकार अपना एक विशिष्ट दृष्टि-कोण रखता है, जिसके सहारे वह व्यक्ति, जीवन और समाज की समस्याओं का निरीक्षण करते हुये उसे सार्थक अभिव्यक्ति देता है। अतएव विभिन्न प्रवृत्तियों के आधार पर हम उपन्यासों का वर्गीकरण निम्न आधार पर कर सकते हैं :-

2.2.1 विषय वस्तु के आधार पर

2.2.1.1 ऐतिहासिक उपन्यास

2.2.1.2 सामाजिक उपन्यास

- 2.2.1.2.1 समस्या प्रधान उपन्यास
- 2.2.1.2.2 भाव प्रधानउपन्यास
- 2.2.1.2.3 आदर्शवादी उपन्यास
- 2.2.1.2.4 नीति प्रधान उपन्यास
- 2.2.1.2.5 धर्म प्रधान उपन्यास

2.2.1.3 सांस्कृतिक उपन्यास

2.2.1.4 मनोरंजनात्मक उपन्यास

2.2.1.5 राजनैतिक उपन्यास

2.2.1.6 वैज्ञानिक उपन्यास

2.2.1.7 लोक कथात्मक उपन्यास

2.2.1.8 आंचलिक उपन्यास

2.2.1.9 हास्य रस के उपन्यास

2.2.2 तत्वों की दृष्टि से उपन्यासों का वर्गीकरण

उपन्यास के छः तत्वों में से किसी की प्रधानता हो सकती है लेकिन इन तीन की बहुत विशिष्टता है।

- 2.2.2.1 घटना प्रधान उपन्यास
- 2.2.2.2 चरित्र प्रधान उपन्यास
- 2.2.2.3 वातावरण प्रधान उपन्यास

2.2.3 रचना शैली की दृष्टि से उपन्यासों का वर्गीकरण

- 2.2.3.1 वर्णनात्मक शैली के उपन्यास
- 2.2.3.2 आत्मकथात्मक शैली के उपन्यास

2.2.3.3 डायरी शैली के उपन्यास

2.2.3.4 पत्रात्मक शैली के उपन्यास

2.2.4 सैद्धान्तिक दृष्टि से उपन्यासों का वर्गीकरण

2.2.4.1 मनोवैज्ञानिक उपन्यास

2.2.4.2 यथार्थवादी उपन्यास

2.2.4.2.1 आदर्शोन्मुख यथार्थवादी उप-
- न्यास

2.2.4.2.2 सामाजिक यथार्थवादी उपन्यास

2.2.4.2.3 अतियथार्थवादी उपन्यास

2.2.4.3 प्रगतिवादी उपन्यास

2.2.4.4 प्राकृतवादी उपन्यास

2.2.1 विषय-वस्तु के आधार पर उपन्यासों का वर्गीकरण

2.2.1.1 ऐतिहासिक वर्गीकरण

हिन्दी साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यासों की परम्परा आधुनिक काल के प्रथम चरण से आरम्भ हुई। ऐतिहासिक उपन्यासों का मूल उद्देश्य युग के सत्य की अभिव्यक्ति होता है। ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहास के तथ्य को कल्पित या असत्य रूप में उपस्थित नहीं कर सकता।इसीलिये चरित्रों के सम्बन्ध में यथा-र्थता और कल्पनात्मकता का प्रश्न विचारणीय रहता है। वर्णित चरित्र अपने युग का दर्पण होता है। वह जीवन्त रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होता है। वस्तुतः ऐतिहासिक पृष्टि भूमि प्रभावशाली ऐतिहासिक वातावरण तथा गम्भीर उद्देश्य का होना अत्यन्त आवश्यक है।

इस दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य श्रीवृन्दावनलाल वर्मा ने किया। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में "कचनार", "गढ़ कुण्डार", विराटा की पद्मिनी", मृगनयनी, "झांसी की रानी", "महारानी दुर्गावती", अहिल्यावाई "माधव जी सिंधिया", आदि हैं।

2.2.1.2 सामाजिक उपन्यास

अधिकांश भारतीय उपन्यासकारों ने उपन्यास को समाज एवं उसमें व्याप्त अनेका-नेक समस्याओं को उभारने का सशक्त साधन माना है[1]।

समाज में व्याप्त दहेज प्रथा, विधवा समस्या, बाल विवाह, धर्म के नाम पर स्वार्थ सिद्धि करना, रिश्वत खोरी जैसी भीषण समस्याओं की हिन्दी उपन्यासों मेंएक दीर्घकालीन पंक्ति है। हिन्दी में इन उपन्यासों में बाहुल्य है। इन उपन्यासों को निम्न उपवर्गों में बांटा जा सकता है- समस्या प्रधान, भाव प्रधान, आदर्शवादी, नीति प्रधान ।

2.2.1.3 सांस्कृतिक उपन्यास

इन उपन्यासों में विविध इतिहास युगों की सांस्कृतिक परिस्थितियों पर विशेष बल दिया जाता है। भागवती चरण वर्मा कृत (चित्रलेखा)एवं चतुर सेन कृत "वैशाली की नगर वधु" और राहुल सांकृत्यायन कृत "सिंह सेनापति"जय यौधेय" मधुर स्वप्न" यशपाल कृत "दिव्या" एवं अमिता सुप्रसिद्ध सांस्कृतिक उपन्यास हैं।

2.2.1.4 मनोरंजन प्रधान उपन्यास

मनोरंजन प्रधान उपन्यास हिन्दी रचना काल के आरम्भ में लिखे गये हैं। तिलिस्मी ऐय्यारी के उपन्यास, जासूसी उपन्यास और आरम्भिक प्रेमाख्यान उपन्यास, इसी वर्ग के उपन्यासहै। आजकल एक वर्ग विशेष में इस प्रकार के उपन्यासों की बड़ीधूम है।

बाबू देवकी नन्दन खत्री कृत"चंद्रकांता" व "चंद्रकांता संतति" महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। निहालचन्द्र वर्मा कृत "जादू का महल" और दुर्गा प्रसाद खत्री का "लाल पंचा" व "प्रतिशोध" "जादुई" और जासूसी उपन्यास हैं।

2.2.1.5 राजनैतिक उपन्यास

इस कोटि के उपन्यासों में राजनीतिक तत्वों की प्रमुखता रहती है। इनमें देश की स्वतन्त्रता को राष्ट्र प्रेम की समस्या से सम्बद्ध करके प्रस्तुत किया गया है। इन उपन्यासों में प्राय: साम्यवादी दृष्टिकोण का समर्थन परिलक्षित होता है। यशपाल रांगेय राघव, नागार्जुन, अमृतराय और प्रतापनारायण श्रीवास्तव के अधिकांश नाटक इसी प्रकार के हैं।

1- "मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।"
"प्रेमचन्द" कुछ विचार - पृष्ठ - 38

--- " मैं उपन्यास को मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा मानता हूँ ।

डा० श्याम सुन्दर दास- साहित्यालोचन
पृष्ठ - 180

2.2.1.6 वैज्ञानिक उपन्यास

==================

इन उपन्यासों में उपन्यासकार विज्ञान के क्षेत्र में होने वाले नव्यतम अविस्कारों को कल्पना के सहारे रोचक शैली में प्रस्तुत करता है। आचार्य चतुरसेन का "खग्रा--स" इस कोटि का प्रसिद्ध उपन्यास है।

2.2.1.7 लोक कथात्मक उपन्यास

========================

इन उपन्यासों का सृजन किसी लोक कथा को आधार बनाकर किया जाता है। "सूरज का सातवाँ घोड़ा", "काठ काउल्लू", कबूतर व बाबा बटेश्वर नाथ आदि प्रसिद्ध लोक कथात्मक उपन्यास हैं।

2.2.1.8 आंचलिक उपन्यास

===================

इन उपन्यासों में किसी अंचल विशेष का समग्र चित्रण होता है। अथार्थ किसी वि--शेष को ही कथानक का आधार बनाया जाता है। इस श्रेणी के उपन्यासकारों में फणीश्वर नाथ रेणु, अमृतलाल नागर, नागार्जुन, उदयशंकर भट्ट, आदि के ना--म विशेष उल्लेखनीय हैं। रेणु कृत "मैला आंचल", व परती"परिकथा"सर्वश्रेष्ठ ... आंचलिक उपन्यास हैं।

2.2.1.9 हास्य रस के उपन्यास

===================

इन उपन्यासों में हास्य के साथ व्यंग्य और कटाक्ष की मात्रा भी बहुत होती है। इन उपन्यासों ने अपने उपन्यासकारों के लिये पर्याप्त यश अर्जित किया है।

2.2.2 तत्वों की दृष्टि से उपन्यासों का वर्गीकरण

=====================================

अधिकांश भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने कथावस्तु पात्र, संवाद, वातावरण, भाषा शैली और उद्देश्य को उपन्यास के तत्व माने हैं। उपन्यास में इनमें से कि--सी एक के होने पर उपन्यास का वर्गीकरण उसी नाम से किया जाता है। जैसे अगर उपन्यास में कथा की प्रधानता है तो कथा प्रधान और अगर किसी पात्र या चरित्र की प्रधानता है तो पात्र या चरित्र प्रधान और अगर किसी में संवाद की प्रधानता है तो उसे सम्वाद प्रधान उपन्यास कहते हैं। वैसे निम्न तीन का बाहुल्य अधिकतर देखने को मिलता है:-

2.2.2.1 घटना प्रधान

2.2.2.2 चरित्र प्रधान

2.2.2.3 वातावरण प्रधान

2.2.2.1 घटना प्रधान उपन्यास

घटना प्रधान उपन्यासों की कथावस्तु में उत्सुकता एवं विस्मयता पूर्ण घटनाओं का आधिक्य होता है। उपन्यासकार कथावस्तु में इन घटनाओं का संयोजन श्रृंखलाबद्ध एवं सम्बन्धित औचित्य पूर्ण ढ़ग से करता है। लेकिन उपन्यास में जब इन घटनाओं का अनावश्यक आधिक्य या विस्तार हो जाता है तो कथावस्तु में शिथिलता आ जाती है। जो उपन्यासकी सफलता में बाधक होती है। ऐयारी, तिलिस्मी व जासूसी आदि उपन्यासों की कथावस्तु इसी प्रवृत्ति प्रधान होती है। देवकी नंद-न खत्री कृत "चंद्र कान्ता", "भूतनाथ", और प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत "वेकसी" का मजार", एवं "बन्दना" आदि की कथावस्तु इसी प्रवृत्ति विशेष से परिचालि-त होती है।

2.2.2.2 चरित्र प्रधान उपन्यास

चरित्र प्रधान उपन्यासों की कथा का महल पात्र के चरित्र-चित्रण को आधार ब-नाकर खड़ा किया जाता है। उपन्यासकार पात्र का चरित्र-चित्रण करने के लिये पूर्ण स्वतन्त्र होता है। वह उसे अपने मूल से अधिक सशक्त, सबल और पूर्ण दिखा सकता है। प्रेमचन्द जी के अधिकांश उपन्यास इस प्रकार के हैं। "रंगभूमि"के प्रभा-वशाली व्यक्तित्व "सूरदास" का मूल रूप तो प्रेमचन्द जी के गांव का एक अंधा भिखारी है। इसबात को लेखक ने स्वयं प्रकट किया है[1] ।

कभी-कभी लेखक का अपना व्यक्तित्व भी औपन्यासिक चरित्र या चरित्रों का मूल रूप हो सकता है[2] ।

1- प्रेमचन्द - " कुछ विचार" - पृष्ठ - 43

2- जालादि विश्वमित्र - "उपन्यास कला एक विवेचना" - पृष्ठ - 34

प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत "विदा" एवं "वरदान" चरित्र प्रधान उपन्यास हैं। "विदा" में निर्मलचन्द्र सिन्हा का विवाह, जौइंट मैजिस्ट्रेट, रायबहादुर, माधवचन्द्र की अबोध एवं स्वाभिमानिनी पुत्रीकुमुदिनी के साथ होता है। कुमुदिनी पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति की पोषक है। अतः वह अपने को सिन्हा के भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति समर्थक परिवार में एडजेस्ट नहीं कर पाती है। इस उपन्यास का सृजन निर्मलचन्द्र सिन्हा के चरित्र पर किया गया है।"वरदान उपन्यास में विनीता कुल परम्परा की संरक्षिका, त्याग का प्रतिमूर्ति, भारतीयता की प्रतिनिधि, प्रेम और स्नेह का आगार, सेवा की साकार मूर्ति विनीता का चरित्र अत्यन्त उज्जवल एवं अनुपम चित्रित हुआ है[1] ।

2.2.2.3 वातावरण प्रधान उपन्यास

इन उपन्यासों में उपन्यासकार का आग्रह वातावरण की ओर विशिष्ट रहता है वातावरण की प्रधानता को मूल आधार मानकर लिखे गये उपन्यास वातावरण प्रधान उपन्यास कहे जाते हैं। इन उपन्यासों में उपन्यासकार किसी स्थान या स्थान की विशेषताओं का चित्रण करता है। उपन्यासकार जिस स्थान या परि-स्थिति या समय के बारे में पूर्ण जानकारी एवं लगाव होता है।2

2.2.3 रचना शैली की दृष्टि से उपन्यासों का वर्गीकरण

रचना शैली की दृष्टि से उपन्यास को अधोलिखित निम्न रूपों में विभाजित कर सकते हैं :-

2.2.3.1 ऐतिहासिक (शैली) या अन्य पुरुष वाचक शैली

2.2.3.2 आत्म चरितात्मक या प्रथम पुरुष वाचक

2.2.3.3 डायरी शैली के उपन्यास

2.2.3.4 पात्रात्मक शैली के उपन्यास

2.2.3.1 ऐतिहासिक (शैली) या अन्य पुरुष वाचक शैली

इस प्रकार के उपन्यासों में उपन्यासकार तटस्थ होकर इतिहासकार की भांति स्वयं कथा का वर्णन करता है। प्रेमचन्द ने अधिकांश उपन्यासों में इसी पद्धति

1- "वरदान"- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -17, 27, 32, 112, 113, 194

को अपनाया है।

2.2.3.2 आत्म चरितात्मक या प्रथम पुरुष वाचक

इस प्रकार के उपन्यासों में नायक या कोई अन्य पात्र या कुछ पात्र मिलकर अपनी -अपनी कथा कहते हैं। इसप्रकार के उपन्यासों में शेखर, एक जीवनी, (अज्ञेय) त्याग-पत्र और अन्तिम आकांक्षा इसी शैली के हैं। प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत "अथ से इति" भी आत्मकथा शैली में लिखा उपन्यास है।

2.2.3.3 डायरी शैली के उपन्यास

इसप्रकार के उपन्यासों में पात्र या पात्रों की डायरियों से कथावस्तु निर्मित होती है और उन्हीं डायरियों के माध्यम से कथावस्तु को गति मिलती है। तुर्गनेव कृत "फास्ट" इसी शैली का उपन्यास है। इस शैली का प्रयोग बहुत कम लोग करते हैं। इसीलिये इस प्रकार के उपन्यासों की संख्या कम है।

2.2.3.4 पत्रात्मक शैली के उपन्यास

इस प्रकार के उपन्यासों की कथावस्तु का सृजन पत्रों के द्वारा होता है। इसमें उपन्यासकार अपनी तरफ से घटाबढ़ी नहीं कर पाता है। अनूपलाल मंडल कृत " समाज की वेदी पर" एवं उग्र जी कृत "चन्द हसीनों के खतूत" इसी शैली बद्ध उपन्यास हैं।

2.2.4 सैद्धान्तिक दृष्टि से उपन्यासों का वर्गीकरण

2.2.4.1 मनोवैज्ञानिक उपन्यास

सामाजिक उपन्यासों में इस धारा का विकास हुआ है। हिन्दी उपन्यासों में मनोविज्ञान का आधार है। "फ्रायड एडलर" और जुंग का वासनात्मक एवं अभाववाद इन वादोंमें काम और वासना की प्रतिष्ठा की गई है। जिसका हिन्दी उपन्यासकारों पर विशेषत: प्रभाव पड़ा है। हिन्दी उपन्यासों की प्रगतिवादी धारा में फ्राइड पर आधारित मनोविज्ञान का पर्याप्त विकास हुआ है। इस प्रवृत्ति के अन्तर्गत अश्लील उपन्यासों का भी सृजन हुआ है, और हो रहा है। आजकल हिन्दी में मार्क्सवादी मनोविज्ञान की प्रतिष्ठा हो रही है। क्योंकि यह मनोविज्ञान मानवीय अभाव के कारणों का विश्लेषण करता है। इसकी प्रतिष्ठा राजनैतिक उपन्यासों में अत्याधिक है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में पात्रों के परि-

-वर्तन का मूलाधार है कोई न कोई मनोवैज्ञानिक कारण होता है। जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द जोशी एवं अज्ञेय आदि इसी श्रेणी के उपन्यासकार हैं।

2.2.4.2 यथार्थवादी उपन्यास

====================

इन उपन्यासों में जीवन के साधारण और वास्तविक जीवन के चित्रण पर विशेष बल दिया जाता है। कटु, बर्बर और घृणित पक्ष को भी निःसंकोच ग्रहण किया जाता है। प्रेमचन्द, राहुलसांकृत्यायन एवं अमृतराय और यशपाल के उपन्यास इस प्रवृत्ति के हैं।

2.2.4.2.1 आदर्शोन्मुख यथार्थवादी उपन्यास

===========================

जैसा कि नाम से ही विदित हो जाता है कि वे उपन्यास जो आदर्श और यथार्थ दोनों के परस्पर मिश्रित रूप में होते हैं, उन्हें आदर्शोन्मुख यथार्थवादी उपन्यास कहते हैं। इस प्रवृत्ति के उपन्यासकारों में पं० भगवती प्रसाद बाजपेयी अग्रणी हैं।

2.2.4.2.2 सामाजिक यथार्थवादी उपन्यास

=============================

इस श्रेणी के उपन्यासों में उपन्यासकार समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुप्रथाओं, एवं सामाजिक, वाह्य आडम्बरों का भण्डा फोड़ करता है। प्रसाद, यशपाल एवं रांगेय राधव के कुछेक उपन्यास इसी प्रवृत्ति के हैं।

2.2.4.2.3 प्रगतिवादी उपन्यास

==========================

प्रगतिवादी विचार धारा से प्रभावित इन उपन्यासों में सिद्धान्तों का विश्लेषण एवं सामाजिक संघर्ष का चित्रण इन उपन्यासों में होता है। यशपाल एवं नागार्जुन इसी प्रवृत्ति के उपन्यासकार हैं।

2.2.4.2.4 अतियथार्थवादी उपन्यास

======================

अतियथार्थवादी उपन्यासों में उपन्यासकार यथार्थ से भी अधिक स्पष्ट समाज के विमृत एवं कुण्ठित रूप का खुलकर वर्णन करता है "घेरे के बाहर" "उपन्यास में अश्लीलता चरम सीमा पर चित्रित है।

2.2.4.2.5 प्रकृतवादी उपन्यास

====================

इन उपन्यासों में उपन्यासकार सांसारिक बन्धन से मुक्त होकर स्वतन्त्र एवं स्वच्छन्द रूप से कुंण्ठाजन्य नैराश्य का स्पष्ट प्रदर्शन करता है। "अमर अभिलाषा" और "वारांगना रहस्य" प्रकृतवादी उपन्यास हैं।

====================

2.3 हिन्दी उपन्यास के तत्वों का विवेचन

उपन्यास के आधुनिक रूप का विकास सर्वप्रथम पाश्चात्य देशों में हुआ था । अतएव उसके तत्वों पर भी पाश्चात्य विचारकों ने ही कुछ अधिक शास्त्रीय और स्पष्ट रूप में विचार विमर्श किया है । अंग्रेज आलोचक हेनरी हडसन का मत है कि:- "सभी प्रकार की कलात्मक रचना के प्रमुख तत्व कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देशकाल, शैली और जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति है [1] । हेनरी हडसन कायह मत प्राय: अधिकांश पाश्चात्य और भारतीय आचार्यों को मान्य रहा है। अत: उपन्यास के प्रमुख तत्व निम्न है:-

2.3.1 कथावस्तु

2.3.2 पात्र और चरित्र-चित्रण

2.3.3 कथोपकथन या संवाद

2.3.4 देशकाल और वातावरण

2.3.5 भाषा-शैली

2.3,6 उद्देश्य

2.3.1 कथावस्तु

किसी उपन्यास की मूल कहानी (कथा) को ही कथावस्तु कहा जाता है। कथा-वस्तु उपन्यास का मूल तत्व है जिसके बगैर उपन्यास का भवन खड़ा करना सम्भ-व नहीं है। इसके अन्तर्गत वे सभी घटनाएँ एवं सूत्र समाहित होते हैं, जिनसे उप-न्यास की रचना होती है। "उपन्यास कथानक घटनाओं का संकलन मात्र नहींहै उनकाकार्य कारण श्रृंखला में बंधे हुये रूप में उपस्थित करना होता है। जिससेकोई बुद्धिमान पुरूष उन घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्ध अध्ययन कर सके । यही श्रृं-खला बद्धता कथावस्तु के अंग्रेजी नाम "प्लाट" (PLOT) को सार्थकता प्रदान करता है" [2] ।

1- उधृत - भारतीय और पाश्चात्य काव्य शास्त्र -डा0 कृष्ण देव शर्मा पृ0- - 242

2- काव्य के रूप - बाबू गुलाब राय -- पृष्ठ -- 77

यद्यपि आजकल कथानक का महत्व दिनानुदिन घटता जा रहा है। तथापि यही तत्व भिति है जिस पर कलाकार चित्र अंकित कर सकता है। एक कथानक में जिन गुणों का होना अपरिहार्य है वे वस्तुतः निम्न हैं :-

(अ) - मौलिकता
(ब) - निर्माण कौशल
(स) - सम्भवता
(द) - संगठितता
(य) - रोचकता
(र) - स्वाभाविकता

2.3.1.1 मौलिकता
=============

कथानक का मौलिक होना उपन्यास एवं उपन्यासकार की सफलता की कुन्जी है। लेकिन यह कार्य अब कठिन हो गया है। क्योंकि आजकल उपन्यासों के कथानक कुछ ही समस्याओं में जकड़कर रह गये हैं। लेकिन उनमें अभिव्यक्ति वैचित्र अवश्य देखने को मिलता है। अब तो यही भिन्नता ही उपन्यासकार की मौलिकता है। आज जैसे-जैसे जीवन में व्यस्तता, जटिलता का समावेश होता जा रहा है, वैसे ही नव्यत्य समस्याओं का प्रादुर्भाव होता जा रहा है। इसलिये मौलिकता के लिये पर्याप्त अवकाश है।

2.3.1.2 निर्माण - कौशल
=================

निर्माण कौशल से अभिप्राय कथावस्तु में सम्बन्ध निर्वाह, उसकी जटिलतम समस्याओं का चतुरतापूर्ण समाधान प्रस्तुत करने से है । निर्माण-कौशल की आवश्यकता उलझे हुये कथानकों में ही पड़ती है। उपन्यासकार अपनी सुविधानुसार कला निपुणता से घटनाओं का नियोजन इस प्रकार करता है कि वह पाठक को रूचिकर लगे । इसीलिये वह अनेक पद्धतियों को अपनाने के लिये स्वतन्त्र होता है ।

2.3.1.3 संम्भवता
===========

कथानक में संम्भवता का होना आवश्यक है, क्योंकि यह सत्य की कसौटी है । इसके निर्वाह के लिये उपन्यासकार को लोक और शास्त्र का ज्ञान होना आवश्यक है। संम्भवता के साथ-साथ उचित-और अनुचित का ज्ञान रखना भी जरूरी है। तभी वह पाठक को जीव की सत्यानुभूति और सत्य का अर्थ समझने की दृष्टि दे सकता है।

2.3.1.4 संगठितता

संगठितता से तात्पर्य उपन्यास में वर्णित घटनाओं, क्रिया-कलापों आदि का श्रृंखला बद्ध क्रमागत रूप में प्रस्तुत करने से होता है। साथ ही इस बात का भी ध्यान ~~रखना~~ रखा जाता है कि कोई आवश्यक बात छूटने न पाये और अनावश्यक बात प्रवेश न कर सके। कथानक की विश्रृंखलता ही उपन्यासकार की असफलता का प्रतीक होती है।

2.3.1.5 रोचकता

रोचकता कथानक का महत्वपूर्ण गुण है। रोचकता के सतत् प्रवाह के लिये कथानक में न तो अधिक विवरण ही अपेक्षित होता है और न ही उसकी उपेक्षा की जा सकती है। रोचक होना इसलिये भी आवश्यक है कि आज उपन्यास मनोरंजन का प्रधान साधन है।

2.3.1.6 स्वाभाविकता

स्वाभाविकता भी उपन्यास का उतना ही महत्वपूर्ण गुण है जितना रोचकता, मौलिकता, निर्माण, कौशल एवं सत्यता होता है। उपन्यास में वर्णित घटनायें पात्र एवं देशकाल और वातावरण में समानुकूलता, सजीवता एवं स्वाभाविकता होना आवश्यक है। पाठक को यह आभास हो कि लेखक किसी स्वाभाविक घटना का वर्णन कर रहा है। काल्पनिक कथा का नहीं। यही लेखक की सफलता है। उपन्यास की कथावस्तु में कई प्रकार की भिन्नता देखने को मिलती है। कहीं विषय वस्तु की दृष्टि से, कहीं शैली की दृष्टि से तो कहीं तत्वों की दृष्टि से उपन्यासकार किसी भी तरह की कथावस्तु का चयन कर सकता है। इसलिये उस पर नियम विशेष का आरोपण नहीं किया जा सकता।

2.3.2 पात्र और चरित्र-चित्रण

पात्रों का चयन करते समय उपन्यासकार को चाहिये कि वह पात्रों का चयन जीवन के निकट से करे। क्योंकि पात्रों में जितनी निकटता होगी उपन्यास उतना ही सफल होगा। लेखक की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि उसके प्रत्येक पात्र को पाठक जानता हो। पाठक कभी-कभी चौंक उठता है कि लेखक मेरा ही वर्णन कर रहा है। यही लेखक की सफलता है प्रेमचन्द जी के पात्र इतने ही सजीव और इसी पृथ्वी के होते हैं। एक बात का ध्यान रखना अत्यावश्यक है कि पात्रों की अधिकता उपन्यास की रोचकता को ले डूबती है। अनावश्यक पात्रों का प्रवेश उपन्यास में नहीं होना चाहिये।

2.3.2.1
पात्र दो प्रकार के होते हैं:- प्रधान पात्र और गौण पात्र । प्रधानपात्र के अन्त-गंत नायक-नायिका, खलनायक-खलनायिका आते हैं। कथानक की बागडोर इन्हीं के कन्धों पर होती है। फल प्राप्ति नायक-नायिका को मिलती है। गौण पात्र कथानक को गति और प्रधान पात्रों को चारित्रिक उत्कर्ष प्रदान करते हैं। एक उपन्यासकार की बहुत कुछ सफलता उसके पात्रों पर निर्भर करती है।

2.3.2.2 चरित्र-चित्रण भी उपन्यास का महात्त्वपूर्ण तत्व है। चरि-त्र चित्रण दो प्रकार का होता है:- साक्षात(प्रत्यक्ष) और परोक्ष (अप्रत्यक्ष) पहले प्रकार के चरित्र का लेखक स्वयं विश्लेषण करता है। दूसरे प्रकार के चरित्र-चित्रण में उपन्यासकार पात्रों के संलाप द्वारा चरित्र-चित्रण करता है।

2.3.3 कथोपकथन या संवाद

पात्रों का वार्तालाप कथोपकथन कहलाता है। उपन्यास में कथोपकथन का बहुत महत्व है। उपन्यास में कथोपकथन के अधोलिखित उद्देश्य माने जा सकते हैं :-

2.3.3.1 कथानक को विकसित करना

2.3.3.2 पात्रों के चरित्र-चित्रण में सहायता करना

2.3.3.3 लेखक के निजी मन्तव्य को स्पष्ठ करना

2.3.3.4 वातावरण का सृजन करने में

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये कथोपकथन में उपयुक्तता, अनुकूलता, स्वाभाविकता, संक्षिप्तता, सोद्देश्यता, मार्मिकता एवं हास्य-विनोद का समावेश होना अत्यावश्यक है। कथोपकथन छोटे-छोटे, चुस्त, व्यंजक और सांकेतक, आकर्षक, चमत्कारपूर्ण, भावानुरूप, पात्रानुकूल और परिस्थिति के अनुरूप हों।

2.3.4 देशकाल और वातावरण

उपन्यासों में स्वाभाविकता और सजीवता का आभास देने के साधनों में देश-काल और वातावरण मुख्य है। देश-काल तथा वातावरण का सम्बन्ध आचार-विचार, रीति-रिवाज, रहन-सहन और सामाजिक तथा राजनैतिक परिस्थि-तियों से है।

2.3.4.1 उपन्यासकार जिस काल अथवा जिस देश का वृतान्त अपने उपन्यास में कर रहा है। वह उसके अनुकूल ही होना चाहिये। उदाहरणार्थ यदि हम मुगलकाल पर उपन्यास लिख रहे हैं तो हमें तत्कालीन, राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक जीवन का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये ।अगर हम यह कार्य नहीं कर पाये तो प्रकारान्तर से हम असफल हो जायेंगे । वेशभषा, भाषा, रह-

न – सहन, खान-पान, सब देशकाल व वातावरणानुकूल हो । तभी हम सफल उपन्यासकार हो सकते हैं ।

2.3.5 भाषा – शैली

उपन्यासकार जिस ढ़ग से अपने विचारों और भावों को अभिव्यक्त करता है, उसे शैली कहते हैं। और जिस माध्यम से इसे व्यक्त करता है, उसे भाषा कहते हैं । भाषा वही सफल होती है, जो पात्रानुकूल, कथानुरूप एवं समयानुकूल हों। साधारणत: उपन्यासों में सरस, सरल, प्रवाहमयी एवं मुहावरेदार भाषा का प्रयोग किया जाता है। शैली में सरलता, रोचकता एवं प्रवाहपूर्णता आदि गुणों का होना आवश्यक है। शैली के निम्न रूप देखने को मिलते हैं।

2.3.5.1 वर्णात्मक शैली

2.3.5.2 आत्म कथात्मक शैली

2.3.5.3 पात्रात्मक शैली

2.3.5.4 डायरी शैली

2.3.5.5 मिश्रित शैली

शैली तत्व ही उपन्यास को संवारता और आकर्षक बनाता है। धीरे-धीरे नव्यतम् शैलियों का भी विकास हो रहा है।

2.3.6 उद्देश्य

प्रत्येक साहित्यक कृति का कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। वैसे ही उपन्या–सकार का भी उद्देश्य होता है। उसी उद्देश्य की पूर्तिहेतु वह उपन्यास का सृजन करता है। इस उद्देश्य में ही लेखक का रूप स्पष्ट होता है कि वह किस दृष्टिकोण का है। लिखने से पूर्व लेखक का भी कुछ न कुछ उद्देश्य होता है। उपन्यासकार अपने उद्देश्य में तभी सफल कहा जायेगा, जब वह पाठकों को सहज ही प्रभावित कर ले ।

कुछ आलोचकों का कहना है। कि रस और भाव भी उपन्यास के महत्वपूर्ण तत्व है इनके मतानुसार उपन्यास मानव जीवन का महा–काव्य है। इसीलिये वह उपन्यास में श्रृंगार, करूण, हास्य और वीर रस में से किसी एक का समावेश होना आवश्यक मानते हैं। विचार प्राय: भावों को प्रेरित करते हैं क्योंकि विचारों के मूल्य में ही भाव रहते है। भावों से विचारों की उत्पत्ति होती है। अत: उपन्यास में भाव और रस होना भी एक प्रमुख तत्व है।

2.4 प्रेमचन्द युगीन उपन्यासकार और प्रतापनारायण श्रीव

हिन्दी उपन्यास साहित्य के इतिहास का जब हम दृष्टिपात करते हैं त
होता है कि वह अपने तीसरे चरण (1915 से 1936) में अभूतपूर्व रूप में
था । इस युग में प्रेमचन्द जी ने पुरानी परिपाटी को त्यागकर उपन्या
एक नया मोड़ दिया । अभी तक उपन्यास को सिर्फ मनोरंजन का साधन
माना जाता था लेकिन प्रेमचन्द जी ने इसका सम्बन्ध जीवन से जोड़ा ।
-स जीवन की कहानी है और इस प्रकार वह प्रत्यक्षत: अथवा परोक्षत: ज
निकट आ जाता है। जीवनी में उपन्यास की भाँति ही व्यक्ति का सम्पू
क्तित्व आ जाता है। साहित्य की कोई भी विधा हो उपन्यास हो या
कहानी हो या नाटकया काव्य सभी का सम्बन्ध किसी न किसी रूप में
और उसका जीवन ही होता है।प्रेमचन्द इस नई चेतना के अग्रदूत के रूप में
-र्ण हुये । इसीलिये कहा भी गया है कि:-

" गोदान के रचयिता प्रेमचन्द हिन्दी के वर्तमान
भविष्य के निर्देशक हैं। प्रेमचन्द उस शिखर के समान हैं। जिसे दोनों ओर
दो भागों के उतार-चढ़ाव हैं ।" उनके उपन्यास मनोरंजन के साधन होने व
सत्य के वाहक भी हैं। प्रेमचन्द से पूर्व उपन्यास साहित्य की एक भी कृति
जिसपर उपन्यास साहित्य गर्व कर सकता । लेकिन यहीं से उपन्यास साहि
ऐसी-ऐसी समस्याओं अपने में संजोया कि दिन प्रति दिन उसकी प्रवाहित
वेगवती ही होती गयी । प्रेमचन्द ने जीवन के हर पहलू को उपन्यास का
बनाया चाहे वह सामाजिक हो या धार्मिक या राजनैतिक या आर्थिक सबको
शरण दी ।

प्रेमचन्द को तो हिन्दी उपन्यास में उस नपते के समान
है जिससे आज के उपन्यासकारों की तुलना करते हैं।इनकी इस महान सिद्धि से
ही उपन्यास का यह युग ही "प्रेमचन्द युग" कहलाया ।वस्तुत: यह आधुनिक
उपन्यास के जनक है। और उपन्यास सम्राट भी हैं। प्रेमचन्द ने "सेवासदन", "प्रे-
माश्रम", "रंगभूमि", "कर्मभूमि", "गबन", "गोदान" आदि मौलिक सामाजिक उ-
पन्यास लिखकर उपन्यास साहित्य को शक्तिशाली बनाया ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव व उनके समकालीन उपन्यासका-
-रों के संदर्भ में एक तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत है :-

2.4.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और प्रेमचन्द

2.4.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और प्रेमचन्द

जहाँ प्रेमचन्द ने अपने भारतीयता की, एकता की, अखण्डता की, सभ्यता और संस्कृति की आत्मविश्वास की, अपने पराये की, शान्ति और मिलन की तथा समस्याओं के समाधान की, मध्यम वर्ग की और निम्न वर्ग की, सामाजिक कुरीतियों की, आदर्श और यथार्थ की कथा को ही अपने उपन्यासों की विषय वस्तु बनाया वहाँ श्रीवास्तव जी की कृतियों में उच्चमध्यवर्ग एवं उच्चवर्ग के बुद्धिजीवियों की समस्यायें और उनके मानसिक चिन्तन को ही अपनी कलाकृतियों की विषय वस्तु बनाया है। हालांकि श्रीवास्तव जी प्रेमचन्द के ही अनुगामी हैं।

"साहित्य समाज का दर्पण होता है।" दर्पण में जैसी वस्तु होगी उसका वैसा ही प्रतिबिम्ब दिखाई देगा । प्रेमचन्द जी ने मूक भारत की जनता का, उसकी समस्याओं को वाणी देने के लिये वह अवतरित हुये थे । उनकी इन्हीं अपेक्षाओं की पूर्ति श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने अन्धाधुन्ध अपने उपन्यासों में की ।

2.4.1.1 उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द ने भारत की अधिकांशतः जनता जो गांवों में रहती है उनकी समस्याओं को और ऊँच-नीच की भावना को "गोदान" जैसे महाकाव्य में वर्णित किया । प्रेमचन्द जी को यह करना भी जरूरी था क्योंकि कहा भी जाता है कि भारत गाँवों का देश है। वहीं अमरकथा शिल्पी श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उच्च मध्यमवर्ग और उच्च वर्ग को नगर में रहने वाले नागरिकों की समस्याओं को कटाक्ष दृष्टि से देखा ।

2.4.1.2 प्रेमचन्द ने देश की विभिन्न समस्याओं को चित्रित करने के साथ ही उन्होंने मन की सूक्ष्मतम भावनाओं, संघर्षों तथा अन्तर्द्वन्दों को बड़ी सूक्ष्मता के साथप्रस्तुत किया है। सामाजिक, राजनीतिक तथा साम्प्रदायिक पहलुओं पर जितनी सूक्ष्मता से प्रेमचन्द ने विचार किया अन्य कोई हिन्दी लेखक नहीं कर पाया। जीवन के प्रत्येक पहलु को नवीन और मौलिक रूप से प्रकट करना इन्हीं की विशेषता थी। एकबार फिर वही दोहराता हूँ कि इन्होंने शहर -गाँव, नौकर-मालिक, शिक्षित-अशिक्षित, मजदूर-किसान, ऊँच-नीच, अमीर -गरीब सबका ही बड़ा सुन्दर चित्रण किया है। कोई ये कहे कि उन्होंने सिर्फ समस्यायें खड़ी की हैं, उनका समाधान नहीं किया यह सरासर गलत है उन्होंने तो जीवन की गहराइयों में घुसकर उनका निदान भी ढूंढ़ा है। सेवा सदन, निर्मला, प्रेमाश्रय, वरदान, कर्मभूमि, रंगभूमि, गोदान एवं गबन में जीवन का पूर्ण चित्र उपस्थित करनेमेंवह सफल उपन्यासकार के रूप में हमारे आपके सामने आये। श्रीवास्तव जी ने भी कुछ समस्यायें उठायी और उनका समाधान भी ढूँढ निकाला। लेकिन इनकी दृष्टि इतनी पैनी नहीं थी जितनी मुंशी प्रेमचन्द की।

प्रत्येक कथा-काव्य में आदर्श और यथार्थ में से किसी एक की अभिव्यक्ति होना अनिवार्य है। वस्तुतः ये दोनों कथाकाव्य के दो पक्ष हैं। इनमें से एक का अभाव साहित्य को पंगु बना देता है। जीवन और जगत में जो कुछ होना चाहिये की अभिव्यक्ति आदर्शवाद कही जाती है। और जीवन में जो कुछ हो रहा है अथवा युगों से होता आया है का चित्रण यथार्थवाद के अन्दर आता है।

2.4.1.3 यथार्थवाद का बीजारोपण ही सर्वप्रथम पाश्चात विद्वान वोचेकियो और डी० केमरा ने किया था। वोचेकियों ने सर्वप्रथम समाज की यथार्थ समस्याओं का अपने उपन्यासों में अंकन किया था। यथार्थवादियों का लक्ष्य जीवन के कुत्सित, अनैतिक पक्षों का उद्घाटन मात्र रह गया है।

भारतीय साहित्यकारों की दृष्टि सदा से ही आदर्शवादी रही है। हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में पाश्चात्य प्रभाव के कारण यद्यपि यथार्थवादी प्रवृत्तियों का ही बोल बाला रहाहै, तो भी भारतीय साहित्यक विधा होने के कारण इसमें आदर्शवाद की भी अभिव्यक्ति हुई है।और यह अभिव्यक्ति निम्न रूपों में हो सकती है:-

1- उपदेशक के रूप में

2- दयनीय अवस्थाओं का चित्रण करके जन मानस को सुधार की ओर प्रवृत्त करने के प्रयत्न रूप में

3- समस्याओं को सामने रखकर उनके समाधान प्रस्तुत करने के रूप में ।

4- जीवन के आदर्श चित्रों को सामने रखकर आदर्शवाद की प्रतिष्ठा करने के रूप में ।

उपन्यास जीवन की सर्वांगीण एवं सजीव झांकी प्रस्तुत करता है। यह सभी पूरा हो सकता है जब उसमें आदर्श और यथार्थ का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया जाय केवल एक पक्ष (आदर्श या यथार्थ) का अंकन करने वाले उपन्यास जीवन की संजीव झांकी प्रस्तुत करने में सफल नहीं होते। इसलिये उपन्यास ही यथार्थ और आदर्श का उचित एवं सुन्दर समन्वय हो, इस समस्या को सुलझा सकता है। आधुनिक आलोचकों को इसबात का परितोष है कि हिन्दी के उच्चकोटि के उपन्यासकार इस सत्य को स्वीकार करते हुये अपने उपन्यासों में दोनों के समन्वय को प्रस्तुत कर रहे हैं।

2.4.1.4 प्रेमचन्द तो आदर्श और यथार्थ के अन्धाधुन्ध समर्थक थे । कहीं-कहीं तो वह कुप्रवृत्तियों वाले पात्रों को अपनी भूलों और अपराध का एहसास करा देते हैं। और वह पश्चाताप भी करने लगता है। साथ ही सद्प्रवृत्तियों वाले पात्रों के माध्यम से आदर्श की स्थापना कराते है। उनका यह आदर्श समस्याओं के समाधान में ही नहीं वल्कि पात्रों के स्वरूप और कथानक की गति से भी सम्बन्धित है। प्रेमचन्द सामाजिक यथार्थवाद के पोषक थे । सैद्धान्तिक स्तर पर सामाजिक, यथार्थ प्रतिनिधित्व अपने पूर्ण अर्थों में सर्व प्रथम "गोदान" में ही हुआ था ।

श्रीवास्तव जी ने भी समाज में व्याप्त अनेकों समस्यायेंा का यथार्थ एवं वास्तविक चित्रण किया है और अन्ततः उसका सम्बन्ध आदर्श से जोड़ दिया । आपने "विदा", "विकास", "वेदना", "विपथगा", "बन्धन", "विहीना", अर्थात समस्त उपन्यासों में आदर्श की स्थापना की । अन्ततः दोनों ही विद्वान लेखक आदर्शवादी हैं और दोनो ही भारतीय सभ्यता और संस्कृति से प्रेम करते हैं। प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने आदर्श और यथार्थ का जितना सुन्दर समायोजन संगुम्फन "वरदान" जैसी महत्वपूर्ण कृति में हुआ है। वैसा अन्यत्र

सम्भव तो नहीं लेकिन दुलर्भ अवश्य है। वरदान की यह यथार्थ और आदर्श की दुर्लभता वर्तमान पीढ़ी के लिये वरदान है और भावी पीढ़ी इस वरदान के फलस्वरूप जो अकल्पनीय शोषयपूर्ण जीवन को भोगेगा वह स्पृहणीय ही होगा।

2.4.1.5 "विधवा" की समस्या को दोनों ही उपन्यासकारों ने उठाया है। लेकिन इस समस्या के चित्रण में बड़ा अन्तर है। प्राचीन भारत की जनता ने बाल विवाह, कन्याबलि, गोद प्रथा आदि को बहुत महत्व दिया करती थी । बच्चों का विवाह इस अवस्था में कर दिया जाता था कि वे दोनों साथ-साथ नंगे खेला करते थे यानी वह पति-पत्नी के बन्धन को नहीं जानते थे ।

2.4.1.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने उपन्यास "विजय" में कुसुमलता का विवाह बचपन में ही सम्पन्न हुआ था किन्तु दुर्भाग्य वश उसके पति का अल्पायु में ही स्वर्गवास हो जाता है जबकि कुसुमलता पति शब्द को जानती ही नहीं थी । यौवनावस्था पर पहुँचने पर उसकी सखी मनोरमा को पति के सुख और आनन्द का भोग करते हुये देखकर उसके दिल में इस कुप्रथा के प्रति आक्रोश और प्रतिशोध की भावना पैदा होती है और वह शादी करने के लिये तैयार हो जाती है। वह सोचती है:-

"विधवा-विवाह संसार में होता है। एक इसी अभागे देश में नहीं होता । दूसरे देश इस मूर्ख, अपढ़, निश्चेष्ट देश से कितना आगे हैं। दूसरे देश में स्त्री के समानाधिकार हैं किन्तु इस देश में पराधीन हैं। सब लकीर के फकीर बने हैं। ऐसे कजिद्दी पातकी दूसरे देश में नहीं हैं। आज कितने ही धर्म ध्वजी, समाज के नेता, मेरा स्त्रीत्व भंग करने के लिये तैयार हैं। छिपा-छिपा कर पाप करने को तैयार हैं। किन्तु अगर मैं आज विवाह कर लूं, तो हिन्दू समाज नाम मुँह सिकोड़ेगा, म्लेच्छी कहेगा[1]"।

आदमी को यह नहीं देखना चाहिये कि समाज क्या कहेगा, कहने दो उस दानव की तरफ न ही देखना है, न सुनना है, न ही देखकर कुछ करना है बल्कि हमें तो वही करना है जो विश्वास से, विवेक से, आत्मबल, से हम कर रहे हैं।

1- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 59

उसने पक्का इरादा कर लिया कि वह विवाह करेगी— "इन समाज के बन्धनों में बधकर नहीं रहूँगी । इनसे लड़ूगी, भाग्य से लड़ूगी और लड़ूगी अपने वैधव्य से ।" इतना ही नहीं बल्कि अपनी इच्छा से वर भी चुनने की प्रतिज्ञा करती है–

"मै विवाह करूंगी । अपना वर चुनूँगी । जो मेरी शर्तों के अनुसार मुझसे विवाह करने के लिये तैयार होगा । मैं उसके साथ विवाह करूँगी" अन्त में वह डा० आनन्दी प्रसाद से विवाह कर लेती है। इस प्रकार श्रीवास्तव ने समाज की कई बुराइयों को साहित्य का विषय बनाया है। कुसुमलता के मुँह से समाज फैली नेता गीरी की आड़ में होनेवाले कुकृत्यों, बड़े-बड़े धर्मालम्बी जो धर्म की आड़ में शिकार किया करते हैं। उनको समाज कुछ सजा नहीं देती । लेकिन अपने स्त्रीत्व की रक्षा के लिये किया गया पुनः विवाह को यह लोग बुरा समझते हैं। इस ओर प्रेमचन्द जी ने भी काफी कड़ा कदम उठाया था । "गोदान" इसका ज्वलन्त उदाहरण है । इसके अलावा उन्होंने प्रतिज्ञा, वरदान, प्रेमाश्रम, गबन, निर्मला में विधवाओं के जीवन पर सूक्ष्मता से प्रकाश डाला है।

इस समस्या का निराकरण सिर्फ विधवा विवाह ही है। श्रीवास्तव जी और प्रेमचन्द जी दोनों इस विकराल समस्या को समाज के सामने एक घृणित परम्परा के समान रख भारतीय जनता को एक नये मार्ग का दर्शन कराया । और वह नया मार्ग था विधवा विवाह ।

2.4.1.7 श्री प्रेमचन्द जी की लेखनी से जारज सन्तान की समस्या सर्वथा अछूती रही लेकिन अमर कथा शिल्पी श्रीवास्तव जी ने इस समस्या को उठाया और उसका समाधान भी " वेदना" उपन्यास में प्रस्तुत किया । यह सम्भव भी नहीं है कि हर लेखक हर बात को कहे कुछ न कुछ तो अधूरा रह ही जाता है। क्योंकि साहित्य रूपी सागर अपार और अगाध है इसकी थाह लेना सम्भव नहीं है। प्रेमचन्द जी ने जहां पर अछूत समस्या कृषक वर्ग की समस्यायें का चित्रण बड़ी गम्भीरता से किया है वहां श्रीवास्तव जी ने दृष्टिपात ही नहीं किया ।

2.4.1.8 प्रेमचन्द जी ने समाज के निम्न वर्ग की कथा कही है वहाँ पर श्रीवास्तव जी ने उच्च मध्यम वर्ग से ही कथानकों का चयन किया है। समाज के शोषित, दलितमजदूर और अन्य अक्षम व्यक्तियों को ही अपने उपन्यासों का आधार स्तम्भ बनाया है। लेकिन श्रीवास्तव जी ने सम्पन्न उच्चवर्गीय रायसाहब

---

15 विजय – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – पृष्ठ – 61

व्यापारी, राजा, महाराजा, मन्त्री, वकील को अपने उपन्यासों में स्थान दिया है ।

2.4.1.9 दोनों उपन्यासकार गान्धीवादी विचारधारा के समर्थक हैं। वे सत्य और अहिंसा के पुजारी हैं। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के उपासक हैं, उसके रक्षक है और पथ प्रदर्शक भी हैं। श्रीवास्तव जी ने ब्यालीस में लिखा है:-

" वे पृथ्वी की भाँति अचल हैं, वायु की भाँति शक्ति - शाली हैं, अग्नि के समान तेजोमय हैं, जल की तरह शीतल हैं और आकाश जैसे व्याप्त होकर हमको निर्भय करने वाले हैं।" [1] और एक जगह वरदान में लिखते हैं-

-"नर निर्दयी हो सकता है, किन्तु नर हृदय में सदा दयालुता ही निवास करती है।"[2]

आप सत्य के उपासक थे :-- "विचार का चिराग बुझने पर आचार अन्धा हो जाता है।" [3] और देखिये ---

"माँ मानव के लिये पृथ्वी पर दैवी वरदान है।"

आपने समाज में मानवीय नियमों पर जोर दिया है :- " नियम विहीन समाज पशुओं का होसकता है, मनुष्यों का नहीं"। मानव का मानव के प्रति प्रेम, दया, वन्धुत्व की भावना, आदि ऐसी चीजें है जिनसे नीचे गिरकर मनुष्य पशुओं की पंक्ति में खड़ा हो जाता है। प्रेमचन्द जी ने भी ऐसी कटु आलोचना अपने उपन्यासों में की है। उन्होंने लिखा है:-

" लोमियाँ तुम्हारा मानापमान, तुम्हारा अक्रोध, तुम्हारा इन्द्रिय निग्रह क्षमता अनुकरणीय है तुम धन्य हो, तुम्हें धिक्कार हो ।"[4]

1- ब्यालीस - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 228
2- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 107
3- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 108
4- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 109

प्रेमचन्द ने समस्याओं का यथार्थ और वास्तविक चित्रण करते हुये उनका समाधान आदर्शमय किया है। जबकि श्रीवास्तव जी का दृष्टिको-
- ण आरम्भ से ही आदर्शवादी रहा है।

विभिन्न अनेकताओं के बावजूद भी यह मानना ही होगा कि श्रीवास्तव जी प्रेमचन्द द्वारा प्रवर्तित परम्परा के अनुगामी थे । अन्त में हम यह स्वीकार करेंगे कि प्रेमचन्द जी के समान व्यापक एवं पैनी दृष्टि से समस्याओं का अवलोकन नहीं किया लेकिन कोई समस्या उनसे अछूती भी नहीं रही । श्री प्रेमचन्द जी का उपन्यास साहित्य में न केवल हिन्दी बल्कि अन्य भारतीय भा-
षाओं में भी कोई समानाधिकार नहीं रखता ।उनके उपन्यास उपन्यासकारों के लि-
-ये पथ-प्रदर्शन का कार्य करते हैं रहेंगे । श्रीवास्तव के उपन्यास इस परम्परा को विकसित और पल्लवित करने में अपना महत्व रखते हैं।

2.4.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और विश्वम्भर नाथ शर्मा "कौशिक"

2.4.2.1 श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव और विश्वम्भर नाथ शर्मा " कौशिक" दोनों ही प्रेमचन्द युगीन साहित्यकारों की प्रथम पंक्ति में आते हैं। दोनों ने एक ही समय में और एक ही परम्परा को लेकर लिखना आरम्भ किया था । उपन्यास लेखन कला में दोनों प्रेमचन्द के निकट हैं। लेकिन अन्तर इतना है कि एक ओर तो श्रीवास्तव जी विदा, विजय, विकास, बयालीस, विसर्जन, वेकसी का मजार, विषमुखी, वेदना, विश्वास की वेदी, बन्दना, वंचना, विनास के बादल, विपथगा, बन्धन, विहीना, व्यावर्तन और विहान आदि जैसे उत्कृष्ट उपन्यास लिखकर हिन्दी उपन्यास साहित्य की अक्षय वृद्धि की वहीं दूसरी ओर कौशिक जी के सिर्फ कुछ ही उपन्यास प्रकाशित हो सके हैं। उनमें " माँ, भिखारणी" आदि प्रसिद्ध हैं ।

2.4.2.2 अगर यहाँ सिर्फ अन्तर का ही वर्णन किया जाय तो हम देखेंगे कि समानता कम और विभिन्नता अधिक है । ऐसा होना भी स्वाभाविक होता है। लेखक कितना भी किसी का अनुसरण करें फिर भी उसमें कुछ भिन्नता आ ही जाती है । चाहे वह शैली की दृष्टि से, हो या कथावस्तु की दृष्टि से, या पात्रों के चरित्र चित्रण की, या आदर्श और यथार्थ की, या समस्याओं के समाधान की ।

2.4.2.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और विश्वम्भर नाथ शर्मा "कौशिक दोनों लेखको ने आदर्श और यथार्थ का सुन्दर समन्वय किया है । यथार्थ का चित्रण करते हुये उसका सम्बन्ध आदर्श से स्थापित करने का लक्ष्य रहा है ।

कौशिक जी ने अपने उपन्यासों में यथार्थ का चित्रण किया है, लेकिन बहुत कम वह इसका निर्वाह कर पाये हैं क्योंकि वह तो आदर्श की प्रतिष्ठा को बनाये रखना चाहते थे । प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी भी कम आदर्शवादी नहीं कहे जा सकते हैं आप कहीं - कहीं तो इतने आदर्शवादी हो गये हैं कि वह यथार्थ को भूल ही गये हैं।[1] वेदना में भैरवदत्त अपनी पुत्री किरण के अवैध प्रेम से गर्भवती होने पर किरण से कहता है -

1- विपथगा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 317

" इस तरह कोई व्याकुल नहीं होता । अभी हम दोनों तुम्हारी रक्षा के लिये हैं । यदि यह भेद हमें पहले मालूम हो जाता, तब तो किसी दिक्कत का सामना ही न करना पड़ता । किन्तु अब भी कुछ नहीं बिगड़ा, सब ठीक हो जायेगा । भला इस छोटी सी बात के लिये तुम्हें फाँसी लगाने की क्या जरूरत थी ? मैं इन बातों को कोई अहमियत नहीं देता । न मैं यह स्वीकार करने के लिये तैयार हूँ कि तुमसे कोई अपराध या पाप हुआ है । तुमको शर्माने या मुँह छिपाने की कोई जरूरत नहीं हैं । एक दो हफ्तों में तुम्हारी हालत पहले जैसी हो जायेगी ।"[1]

श्रीवास्तव जी ने यहाँ भैरवदत्त को देवत्व से भी ऊपर उठा दिया है । भला यह कभी नहीं हुआ है न होगा जब कि किसी बाप की पुत्री के कौमार्यावस्था में गर्भ आ जाये और बाप कहे कोई बात नहीं । दूसरी बात श्रीवास्तव जी ने यह भी उठायी है कि उस वक्त अवैध सम्बन्ध से रहे गर्भों का गर्भपात करा दिया जाता था। लेकिन एक बाप इसतरह कभी नहीं कह सकता जैसा कि भैरवदत्त ने कहा ।

2.4.2.4 कौशिक जी स्वयं का मन्तव्य रहा है कि :- "जो बात संसार में अधिक है, जिसे हम नित्य देखते सुनते है, उसके चित्रित करने में कोई कला भी तो नहीं है । कला तो ऐसी बात दिखाने में है । जो संसार के लिये नवीन है, निराली है, अनोखी है । × × × × × × × × संसार में यह होता है, यह बुरा है, यह नहीं होना चाहिये । केवल इतना कह देने से काम नहीं चलता । कि संसार में यह नहीं होता, इसकी कमी है, कला इसी का नाम है।"[2]

कौशिक जी ने एक समस्या उठायी है कि जो पात्र सुपथगामी होते हैं वह संसार में सुख और शान से अपना जीवन निर्वाह करते हैं ।[3] सभी लोग उनके अपने और वे सबके होते हैं । जो कुपथगामी होते हैं ।

1- वेदना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -- 12-13

2- हिन्दी उपन्यास - उद्‌भव विकास - डा० सुरेश सिन्हा - पृष्ठ -326

3- माँ- विश्वम्भर नाथ शर्मा "कौशिक" - पृष्ठ -11, 17, 67, 102

- भिखारिणी - विश्वम्भर नाथ शर्मा "कौशिक" - पृष्ठ -34, 62-63 117, 123, 143, 303, 307 - आदि ।

वह संसार में बेइज्जती से तथा उनका जीवन कष्टमय बीतता है। कौशिक जी के माँ और भिखारिणी [illegible] इसके ज्वलन्त उदाहरण है। श्रीवास्तव जी भी इसके समर्थक हैं। श्रीवास्तव जी ने माँ की ममता का वर्णन वरदान में किया है -

"माँ मानव के लिये पृथ्वी पर दैवी वरदान है।"[1]

"धरती पर माँ ही मनुष्य के लिये शक्ति है, शिव है।"[2]

माँ का हृदय इतना कोमल होता है कि कभी भी अपनी सन्तान को दुखी नहीं देख सकती है। बल्कि माँ अपना सर्वस्व खोकर भी अपनी संतान के लिये सुख का अनुभव करती है। माँ की ममता की तुलना इस संसार में ही क्या सम्पूर्ण भूमण्डल पर कोई दूसरा नहीं जान सकता। माँ पृथ्वी पर माँ है और माँ ही रहेगी कुमाता नहीं बन सकती :-

"पुत्र कुपुत्रो जायते, माता कुमाता न भवति ।"[3]

माँ पृथ्वी पर बच्चे की सबसे पहली पाठशाला होती है। जो उसके मस्तिष्क रूपी स्लेट पर जो चाहे बना दे। वह चाहे तो बच्चे को मानव बना सकती है और वह चाहे तो शैतान बना दे। लेकिन माँ से ऐसी आशा करना असम्भव है।"[4]

इसी तरह कौशिक ने माँ उपन्यास में यह अंकित किया है। कि मानव जीवन की सफलता किस प्रकार माँ के ऊपर निर्भर करती है। सुलोचना आदर्श माँ और शम्भूनाथ आदर्श पुत्र हैं। "माँ" शब्द देखने और सुनने में छोटा लगता है लेकिन इसकी व्याख्या इतनी विषद है कि उसका सम्पूर्ण विवरण करना असम्भव है।

1- "वरदान" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 156

2- "वरदान" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 190

3- "दुर्गा सप्तशती" - - पृष्ठ - 17

4- "विजय" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 3, 4, 19, 36 आदि

"विदा" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-47, 156, 242, 303 - 304

भारतीय संस्कृति में मां के सहज गुणों में क्षमा को अत्याधि-
-क महत्व दिया गया है। विदा में शान्ता एक ऐसी आदर्श मां है ।
उसका पुत्र निर्मल चन्द मां के समक्ष पत्नी की भी अवहेलना कर देता है:-

"जो बात कभी नहीं होने की वही तुम कह रही हो । तु-
म माफ कर दो, लेकिन मैं नहीं कर सकता । उसने मेरा अपमान नहीं
किया मेरी मां का किया है। मां के अपमानकारी को मैं कभी नहीं क्षमा
कर सकता ।"[1]

अपने अक्षय वात्सल्य के कारण मां कठोर से कठोर कष्ट अ-
त्याचार और अपमान सह करभी सन्तान हित में लगी रहती है। शान्ता
अपने पुत्र-स्नेह से अभिभूत होकर तथा उसके दाम्पत्य जीवन को सुखी ब-
नाने के लिये पुत्रवधु कुमुदनी की ताड़ना और अवज्ञा को शिव के गरल
पान की भांति ग्रहण करती है वह आदर्श मां है जो मां नाम की महत्ता
समझती है।

"मां शब्द के अर्थ हैं दया क्षमा और ममता । स्नेह और वा-
त्सल्य का अन्तिम रूप है मां ।"[2]

"विजय" में भी लेखक ने माता के आदर्श रूप को अंकित कि-
या है। राजेश्वरी का मनोरमा के प्रति अगाध स्नेह है। यद्यपि वह सौते-
ली मां है तथापि मनोरमा और दामाद राजेन्द्र प्रसाद को वह अपने ब-
च्चे से ज्यादा प्रेम करती है।

"जिस दिन मेरी आंखों के सामने से दूर चली जाओगी, उस
दिन तुम्हारी मां भी यह संसार छोड़ देगी। मेरा अवलम्ब तुम्हीं तो हो"।[3]

मनोरमा भी अपनी मां की वात्सल्यता के विषय में कहती
है कि :-

"पापा से आप चाहे भले कह दीजियेगा लेकिन अम्मा से कि-
-सी बात का जिक्र न कीजियेगा । वह मेरी बीमारी सुनकर सारा धी-
रज खो देंगी और बेहाल हो जायेगी। उनका खाना पीना हराम हो
जायेगा ।"[4]

1-विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ 12
2-विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 13
3- विजय- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-28 - 29
4- विजय- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -430

2.4.2.5 पुराण, वेद, संस्कृति साहित्य, आंग्ल साहित्य सभी ने इसकी विवेचना, आलोचना, समालोचना की है । प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने विदा में एक आदर्श मां चित्रित किया है । निर्मलचन्द अपनी माँ के समक्ष अपनी पत्नी की भी अवहेलना कर देता है ।

" जो बात कभी नहीं होने की वह तुम कह रही हो तुम माफ कर दो लेकिन मैं नहीं कर सकता । उसने मेरा अपमान नहीं किया मेरी मां का किया है । मां के अपमानकारी को मैं कभी नहीं क्षमा कर सकता"[1]।

और"विदा" में ही देखिये :- " मां शब्द के अर्थ हैं दया, क्षमा और ममता, स्नेह और वात्सल्य का अन्तिम रूप है मां ।"[2]

" विजय" में भी श्रीवास्तव जी ने मां के आदर्श रूप का वर्णन किया है :-

" जिस दिन मेरी आंखों के सामने से दूर चली जाओगी उसदिन तुम्हारी मां भी यह संसार छोड़ देगी । मेरा अवलम्ब तुम्ही तो हो"[3]

यह वक्तव्य एक सौतेली मां का है । इसके अलावा वात्सल्य का महत्व का वर्णन करते हुये श्रीवास्तव जी ने लिखा है :-

" मां का प्रेम भगवान का वात्सल्य है ।"[4]

बंदना, वंचना, व्यालीस, विसर्जन आदि में माँ की महत्ता का वर्णन किया है । महादेवी वर्मा ने लिखा है कि :-

" स्त्री के विकास की चरमसीमा उसके मातृत्व में ही हो सकती है ।"

सन्तान चाहे भले ही अयोग्य हो, चाहे समाज की आंखों से तिरस्कृत और पतित हो मां का वात्सल्य से परिपूर्ण अंचल सदैव उस पर छाया रहता है । यहां पर मां की व्याखया नहीं करनी है यहां तो सिर्फ कौशिक जी के महत्व को दिखाना था कि उन्होंने कितने पावन और पवित्र "माँ " शब्द को अपने उपन्यास का शीर्षक बनाया । वास्तव में यही शब्द ऐसा है जिसे गरिमा और सम्मान मिलना ही चाहिये ।

1- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 12
2 - विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 16, 17
3- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ - 28, 29
4- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 30

श्रीवास्तव जी ने जीवन के विविध पक्षों जैसे:- इतिहास, मनोविज्ञान, समाज, राजनीति आदि का चित्रण किया है । इनका कार्यक्षेत्र व्यापक, विस्तृत और बहुमुखी है लेकिन कौशिक जी यह सब न कर सके एक तो यह कि उनका कार्यक्षेत्र सीमित है ।

श्रीवास्तव जी ने युगानुरूप अपने उपन्यासों में जीवन के विविध रूपों को लिया । श्रीवास्तव जी कौशिक जी की अपेक्षा अधिक ख्याति प्राप्त कर चुके हैं ।

2.4.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और चतुरसेन शास्त्री

2.4.3.1 सम्पूर्ण प्रेमचन्द युग को अगर उपन्यास युग कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी क्योंकि इस काल उपन्यासों और उपन्यासकारों की भरमार रही और उत्तरोत्तर बढ़ती ही गयी ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव और चतुरसेन शास्त्री भी उन्हीं महालेखकों में अपना अलग ही स्थान रखते हैं । इन्होंने समाज में फैली हुई समस्याओं को साहित्य में चित्रित किया । स्त्री पुरूष सम्बन्ध नारी स्वतन्त्रता, नारी शिक्षा, पति पत्नी को समान अधिकार, देश भक्त, देश प्रेम, मानव जीवन का उद्देश्य, सत्य की महत्ता आदि को अपने उपन्यासों में स्थान दिया है ।

2.4.3.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने लगभग 24 -25 उपन्यासों की रचना की है जबकि चतुरसेन शास्त्री ने लगभग 122 उपन्यास लिखे हैं जिनमें कुछ अप्रकाशित भी हैं । शास्त्री जी ने अनेक ऐतिहासिक उपन्यास भी लिखें हैं जिनमें :- सोमनाथ, वैशाली की नगर वधू, सोना और खून ॥भाग 1, 2, 3, 4,॥ देवांगना, खवास का ब्याह, आलम गीर, रक्त की प्यास, वयं रक्षाम: प्रमुख हैं ।

श्रीवास्तव जी ने भी ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं उनमें वन्दिता जिसमें प्रथम नेपाल युद्ध का वर्णन है । और बेकसी का मजार, जिसमें प्रथम स्वतन्त्रता का चित्रण किया गया है । ब्यालीस में ॥1942॥ का वर्णन किया है ।

स्थिति के अनुसार ही साहित्य लिखा जाता है। राष्ट्रीयता की भावना से केवल राष्ट्र का ही कल्याण नहीं होता, अपितु राष्ट्रीय भावनाओं से पूर्ण व्यक्ति भी अनेक प्रकार से सामान्यवित होते हैं । मनुष्य ऐसे साहित्य को पढ़कर अपने संकुचित "स्व" की सीमाओं को छोड़ कर आगे बढ़ता है । उसके हृदय में " आत्मवत सर्व भूतेषु " और " बसुधैव कुटम्बक" जैसे महान पवित्र आदर्शों का उदय होता है । इस प्रकार वह नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति की ओर अग्रसर होता है एक कर्तव्य शील विवेकी पुरूष बन जाता है । फिर वह अपने हितो की अपेक्षा देश के हितों को ही महान समझता है ।

2.4.3.3 देश की सर्वांगीण उन्नति के लिये देश भक्त होना परम आवश्यक है जिस देश के निवासी अपने देश के कल्याण में अपना कल्याण, अपने देश के अभ्युदय में अपना अभ्युदय, अपने देश के कष्टों में अपना कष्ट और अपने देश कीसमृद्धि में अपनी सुख समृद्धि समझते है। वह देश उत्तरोत्तर उन्नति के शिखर की ओर गतिशील होता जाता है। अन्य देशों के सामने अपना मस्तिष्क ऊँचा कर सकता है। देश की सामाजिक और आर्थिक उन्नति के लिये देश वासियों का देश भक्त होना नितान्त आवश्यक है। जब तक देश के युवक, वृद्ध, स्त्रियां, व्यस्क अपने राष्ट्र की बल वेदी पर अपने स्वार्थो को चढ़ा कर तन, मन, धन न्योछावर न कर दें देश उन्नति नहीं कर सकता। यह तभी सम्भव है जब उनका साहित्य देश भक्ति से ओतप्रोत हो।

2.4.3.4 श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "बेकसी का मजार" और आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने "सोना और खून" दोनों ही उपन्यास की पृष्टि भूमि 1857 का स्वतन्त्रता संग्राम हैं। लेकिन दृष्टिकोण दोनों के अलग-अलग हैं। श्रीवास्तव जी ने क्रान्ति को राष्ट्रीय रूप प्रदान किया है जबकि शास्त्री जी ने इसको राष्ट्रीय भावना से रहित माना है।

शास्त्री जी ने लिखा है :- " " सत्तावन काविद्रोह देश-भक्तों ने किया, मैं यह नहीं मानता, कारण उस समय भारत एक राष्ट्र और एक देश नहीं था अत: राष्ट्रीयता और देश प्रेम का प्रश्न हीनहीं उठता और साथ ही, मैं यह भी नहीं मानता कि भारत के वर्तमान स्वतन्त्रता संग्राम में सन् सत्तावन की कोई प्रक्रिया थी, कारण जब उस समय राष्ट्रीय परम्परा ही न थी, तो उसकी प्रतिक्रिया का प्रश्न ही कहाँ उठता है।"[1]

2.4.3.5 चतुरसेन शास्त्री और श्रीवास्तव जी दोनों ने ही पति-पत्नी सम्बन्धों तथा उनके आपसी सहयोग, अधिकारों आदि का वर्णन किया है। स्त्री को महत्ता प्रतिपादित की है।[2]

1-"धर्मयुग" - 9 अगस्त 1959 - आचार्य चतुरसेन शास्त्री व्यक्तित्व और विचार
- शुभकर नाथ कपूर

2- "विदा", विजय, वरदान, विकास - प्रतापनारायण श्रीवास्तव
-- अपराजिता, देवांगना, वैशाली की नगरवधू - चतुरसेन शास्त्री

किसी विद्वान ने कहा है :- "गृहिणी गृह मित्याहु न गृहं गृहमुच्येत " अर्थात गृहिणी से ही घर है, बिना गृहिणी के घर को घर नहीं कहा जा सकता । गृह की यह परिभाषा अपने में नितान्त पूर्ण है। विना गृहिणी के न घर है और यदि घर भी हो तो अन्दर घुसने का मन नहीं होता गृहिणी गृहस्थ जीवन रूपी नौका की पतवार है, वह अपने बुद्धिवल से, विवेक से, अपने त्यागमय जीवन से इस नौका को थपेड़ो और भवरों से बचाती हुई किनारेतक पहुँचाने का सफल प्रयास करती है । यदि वह चाहे तो गृहस्थ जीवन को स्वर्ग बना दे और यदि वह चाहे तो घोर नरक का रूप भी प्रदान कर सकती है । आदर्श गृहिणी से केवल घर का ही उद्धार नहीं होता अपितु समूचे समाज और समूचे राष्ट्र का हित होता है ।

2.4.3.6 भारतीय साहित्य व भारत इस पर गौरव करता है कि यहां अनेकों वीर मातायें पैदा हुई हैं । जब राम वनवास को चल पड़े तो सीता भी उनके पीछे-पीछे होली और कहने लगी - "जैसे नदी विनु वारी, तैसहि नाथ पुरूष विन नारी" ।

नारी की महत्ता का प्रतिपादित करते हुये कहा गया है :- "यत्रनार्यस्त पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता"इससे मतलब उनकी मान मार्यादा और अधिकारों की रक्षा से है ।

2.4.3.7 संसार परिवर्तनशील है । उसकी प्रत्येक गति-विधि में प्रत्येक क्षण परिवर्तन होता रहता है। देश की परतन्त्रता के साथ-साथ । स्त्रियों की भी स्वतन्त्रता का अपहरण हुआ । "स्त्रियों का प्रेम, वलिदान और सर्वस्व समर्पण की भावना कालान्तर में उन्हीं के लिये विष वन गयी । समाज की घृणित परम्परा ने उन्हें पुरूषों की बराबरी के पद से हटा दिया। उनका स्थान समाज में गौढ़ हो गया । और तो और तुलसी दास जी जैसे महाकवि भी उनसे कहने लगे :-"जिमि स्वतन्त्र होहि बिगरहिं नारी " ।आज भी उनकी स्थिति वैसी ही है चाहे सैद्धान्तिक रूप में हमकुछ भी कह लें कुछ भी लिखे । आज भी अन्धविश्वास, अशिक्षा, अस्वच्छता आदि सामाजिक दोष उनके जीवन में फैले हैं ।

लेकिन यह सब गलत है सूर्यकान्त त्रिपाठी ने अपना मत इसतरह व्यक्त किया है :- "मुक्त करो नारी को मानव , चिर वन्दिनी नारी को" ।मैथिली शरण गुप्त ने भी कहा है :-

"अवला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,
आंचल में है दूध और आंखों में पानी ।"

2.4.3.7.1 शिक्षा, नारी की स्वतन्त्रता, समानाधिकारों की प्राप्ति आदि को श्रीवास्तव जी और शास्त्री जी ने भी समर्थन किया है। स्त्री पुरुष के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में शास्त्री जी ने अपने विचार इस तरह से रखे हैं:-

"स्त्री पति की अर्धांगिनी और जीवन संगनी है। वह भी उसी की भांति उस घर की स्वामिनी है जैसे उसका पति दोनों परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं। न बच्चा पैदा करने की मशीन या पुरुषों के भोगने की वस्तु है न आज्ञाकारिणी दासी, ऐसा मेरा मन्तव्य है।"[1]

2.4.3.7.2 पुरुषों ने पत्नी को सिर्फ बच्चा पैदा करने की मशीन और काम वासना की तृप्ति की जगह एवं नौकरानी मानी है। लेकिन यह स्त्री जाति पर अन्याय होगा प्रेम नहीं। पुरुष चाहे जैसे कुकृत्य करता रहे तो कोई बात नहीं लेकिन अगर उसकी पत्नी उसे कुकृत्यों से रोके तो वह गलत है। "पत्थर युग के दो वुत में माया अपने पति से कहती है:-

"मुझे सन्तोष सिर्फ इतना ही है, कि वेवफाई की पहल तुमने की। बहुत दिन से मैं जानती थी कि तुम्हारे सम्बन्ध अनेक लड़कियों से रहते हैं। मैंने मन को बहुत समझाया कि आखिर तुम मर्द हो, मैं औरत हूँ। मर्द ऐसा प्रायः करते ही हैं, पर अन्त में मेरा आत्म सम्मान और निष्ठा जाग उठी। और मैंने तुमसे मांग की है कि तुम्हें मेरे प्रति वफादार रहना होगा पर तुमने उसे हंसी में टाल दिया। तुम्हारा ख्याल था कि पत्नी यदि पति से वफादारी की मांग करे तो यह बहुत हल्की सी, वल्कि सब प्रकार से हास्यास्पद सी बात है। पर मैं ऐसा नही मानती। मैं तो चाहती हूँ जैसे पत्नी पति के प्रति वफादार है वैसे ही पति भी पत्नी के प्रति वफादार हो[2]।"

1- अपराजिता - चतुरसेन शास्त्री - पृष्ठ - 64

2- पत्थर के दो वुत - चतुरसेन शास्त्री - पृष्ठ - 66, 67

2.4.3.8 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी भी नारी स्वतन्त्रता एवं समानता के पक्षपाती हैं :-

"मुझे ताल्लुकेदारों का मशीनी जिन्दगी पसंद नहीं है।xxxxxxxxxx हर पति को अपने परिवार की परम्परा के प्रतिकूल पत्नी की प्रत्येक बात और प्रत्येक आचरण अविश्वसनीय प्रतीत होता है और प्रतिकूलता सदा असह्य और वेदनामयी होती है। xxxxxxxxxxxमैं कैदी की हैसियत से इस घर में रहती आई किन्तु अब हरगिज नहीं रह सकती । xx xxxxxxx मैं ऐसा बंधनयुक्त जीवन जीने की कतई आदी नहीं।"[1]

2.4.3.8.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव की नारी स्वतन्त्रता की समर्थिका के साथ-साथ स्वाभिमानिनी, साहसी, आधुनिका, एवं नैतिकता की उपासिका भी है:-

" शराब जब मनुष्य के अन्दर प्रवेश करती है तब बुद्धि बाहर निकल आती है । यह तो हर दर्जे की बेवकूफी और नालायकी है कि आप अपना रूपया खर्च करें और बदले में हाथ लगे बेहोशी और बदहवासी । xxxxxxxxxxxxxxxxxयुद्ध दुर्भिक्ष और महामारी ने मिलकर मानवजाति का इतना अहित नहीं किया है जितना अकेली मदिरा ने, सागर की अपेक्षा मदिरा ने अधिक मनुष्यों को डुबोया है।"[2]

2.4.3.8.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी नारी को पुरूष की एक दासी नहीं उसका सहयोगी मानते हैं जो सम्पूर्ण जीवन पुरूष का सहयोग करती है। उन्होंने उसे प्रत्येक कार्य करने में पुरूष के समान माना है :-

---

1- "वरदान" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 17

2- "वरदान" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 55-56

"स्त्री के इन अनुचरी स्वरूप पर पुरुषवर्ग अनादि काल से न जाने कितने निःनृशंस अत्याचार करता आया है और नारी भी सहन शक्ति की सजीव प्रतिमा बन समस्त मानवीय-अमानवीय कष्टों और यंत्रणाओं को मूक पशु की भाँति सहती आई है, किन्तु पुरुषयुग समाप्त हो चुका है। पुरुष स्वर अब जयघोष न बन पायेगा। नारी अब भूख की योग्य वस्तु मात्र न रह कर वर्तमान की प्रलयघटा बनचुकी है और यदि वह भाविष्य को भी अपने हाथ में ले ले तो विद्युत की तड़प को भी प्रताड़ित कर सकती है।"[1]

2.4.3.9 इसके अलावा ये उपन्यासकार गान्धीवादी विचार-धारा के हैं और वह कला, कला के लिये नहीं और न ही कला साहित्य के लिये अपितु कला जीवन के लिये मानते हैं।

गान्धी का कहना है :- "कला से जीवन का महत्त्व है जीवन में वास्तविक, पूर्णतः प्राप्त करना ही कला है। यदि कलाजीवन को सुमार्ग पर न ला सके तो वह कला क्या हुई।"

रोमा रोलां का कथन भी बड़े महत्त्व का है :-

"कलाकार स्रष्टा है। वह सृष्टि के बीज बिखेरता चलता है। उसका काम सिर्फ बोना है। फल का विचार करना या विचार का बीज उगाना न तो उसके लिये सम्भव है और न उसका काम ही।"

टाल्स्टाय भी एक ऐसे महानुभाव है जो कला को जीवन के लिये मानते हैं वह लिखते हैं :- "Art is the means of Union among men, joining them in the same feeling."

अर्थात कला समभाव के प्रचार द्वारा विश्व को एक करने का साधन है।

2.4.3.10 चतुरसेन शास्त्री कला को जीवन के लिये मानते हैं उन्होंने लिखा है :-

---

1- "वरदान" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 46

"सत्य में सौन्दर्य का मेल होने से उसका मंगल रूप बनता है, यह मंगल रूप ही हमारे जीवन का ऐश्वर्य है। xxxxxxxxxxजीवन जब ऐश्वर्य से परिपूर्ण हो जाता है और साहित्यकार बृहमाण्ड के प्रत्येक कण को "आन्नद रूपममृतं" के रूप में चित्रित करता है इसी को वह कहता है - सत्यं शिवं सुन्दरं ।" [1]

2.4.3.11 श्रीवास्तव जी धर्मानुयायी हैं वह धैर्य में आस्था और विश्वास रखते हैं लेकिन उनके धर्मानुयायी होने में कोई बन्धन विशेष नहीं । वह सत्य के पुजारी हैं। सत्य की ही विजय होती है यदि हम जीवन पथ में आगे बढ़ना चाहते हैं तो हमारा यह कर्तव्य है कि हम अपने माता-पिता से, मित्रों से, गुरुजनों से, सम्बन्धियोंसे, सहपाठियों से कहने का मतलब यह है कि जिसके भी सम्पर्क में आये कभी झूठ न बोले, "सत्यम् वदेत् धर्म चरेत्" का सिद्धान्त हमारे सामने होना चाहिये ।

श्रीवास्तव जी की मान्यता है :- "ईश्वर एक परम शक्ति है, सत्ता है जो कि सम्पूर्ण सृष्टि के कण-कण में व्याप्त होकर इसजगत को संचालित करती है। धर्म के वाह्य पक्ष मूर्ति पूजा, तीर्थ यात्रा आदि आ-डम्बरों का विरोध किया । उनका धर्म किसी सीमा में बंध न होकर उनमुक्त है और अन्ततः मानवता मेंपरिवर्तित हो गया है। मानवहित ही उनका उद्देश्य है। सत्य और अहिंसा के पथ पर चलकर मानव कल्याण के निमित्त प्रयत्न कर-ना ही प्राणी का जीवन लक्ष्य होना चाहिये ।" [2]

शास्त्री जी का धर्म भी मानवतः का धर्म है। उनका विचार है धर्म वह कार्य है, जिसके करने से लोकहित से और किसी प्राणी भी को कष्ट न हो । इन दोनों लेखकों की एक प्रमुख विशेषता अपने युग में रही है। वह है उपन्यासों को साहित्य रूप प्रदान करना । इनसे पहले उपन्यास तिलस्मी और ऐयारी के क्षेत्र में लिखे जाते थे ।

1- वयं रक्षामः - चतुरसेन शास्त्री - पृष्ठ - 3-4

2- विषमुखी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 76

2.4.3.12 शास्त्री जी का दृष्टिकोण यथार्थवाद में उग्र रूप की ओर था । कहीं-कहीं तो अस्वाभाविकता और अश्लीलता भी समाविष्ट हो गयी है, "पत्थर के युग, वयं रक्षाम: ।" दोनों ही लेखकों ने समस्याओं का विश्लेषण यथार्थवादी दृष्टिकोण से लिया लेकिन उनका समाधान आदर्शवादी दृष्टिकोण से ढूढ़ने का प्रयत्न किया ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव और आचार्य चतुरसेन शास्त्री को अक्षम साहित्य प्रदान किया जिससे उपन्यास जगत हमेशा - हमेशा उन्हें श्रद्धा और सम्मान की दृष्टि से देखेगा । निष्कर्णत: श्रीवास्तव जी ने साहित्य रचना शास्त्री जी की अपेक्षा कम की लेकिन तुलनात्मक दृष्टि से दोनों एक दूसरे के समकक्ष हैं ।

2.4.4 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और जयशंकर प्रसाद

2.4.4.1 प्रेमचन्द युग 1917 से 1936 तक माना जाता है । प्रेमचन्द ने हिन्दी कथा साहित्य को एक नया मोड़ प्रदान किया उनकी कृतियों में अपने समकालीन अन्य साहित्यकारों को प्रेरणा दी । प्रेमचन्द के लिखते समय देश में राष्ट्रीय आन्दोलन आरम्भ हो गये थे । तत्कालीन उपन्यासकारों पर सामाजिक , राजनैतिक परिस्थित्तियों का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। जयशंकर भी उन्हीं में से एक हैं। जिनके उपन्यासों में सु-धार का मूल मन्त्र विदित है।

श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने समाज के हर पहलु को बहुत पास से देखा है और उसमें व्याप्त गलत धारणाओं को साहित्य में परिलक्षित किया। प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने लगभग (17) उपन्यासों की रचना की जबकि श्री जयशंकर प्रसाद जी ने तीन उपन्यासों की । जिनमें कंकाल और तितली प्रकाशित हो सके और इरावती "अप्रकाशित "ही रहा ।

2.4.4.2 काव्य के क्षेत्र में श्रीवास्तव जी ही क्या बड़े-बड़े कवि तक उनसे घबराया करते थे । उनका जीवन उपन्यासकार के रूप में कम और कवि के रूप में ज्यादा है। जबकि श्रीवास्तव जी ने सिर्फ उपन्यास क्षेत्र में ही ख्याति प्राप्त की है। कंकाल प्रसाद जी की सर्वश्रेष्ठ रचना है। जयशंकर प्रसाद जी हिन्दी साहित्य जगत में अपना व्यक्तत्व अलग ही रखते हैं। वह हिन्दी साहित्य के महान पंडित है। लेकिन उपन्यासों में उनकी भाषा सरल, सुबोध और मृदुभाषिदा है उसमें कहीं भी पंडिताउपन के दर्शन नहीं होते हैं और न ही उनकी भाषा दुरूह और न दार्शनिकता से युक्त है ।

2.4.4.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी की भी भाषा पाठक गण बड़ी सरलता से समझ लेते है उसमें उलझाउपन नहीं है। उपन्यास, नाटक, कहानी में इनकी भाषा सरल और स्वाभाविक है लेकिन प्रेमचन्द जैसी नहीं है।

प्रसाद जी हमेशा कृषक वर्ग, मजदूर वर्ग, निम्न वर्ग को प्रोत्साहित करते रहे हैं वे समाज में सुधार लाना चाहते थे । श्रीवास्तव जी ने नारी पात्रों का चित्रण उनके हर पहलु को लेकर किया और नारी सम-स्याओं और उनके समाधान भी ढूढ़ने की कोशिश की । प्रसाद जी के नारी पात्र आदर्शवादी हैं।प्रसाद जी ने भले ही ढाई उपन्यास लिखे हैं। लेकिन उन्हें

भुलाया नहीं जा सकता एकाव्य और नाटक के आदर्शवादी प्रसाद ने, "कंकाल" और "तितली" यथार्थवादी उपन्यास हैं ।

2.4.4.4 आदर्श और यथार्थ आ सम्बन्ध ठीक वैसा होता है जैसे साहित्य और समाज का अविच्छिन्न सम्बन्ध होता है। ये परस्पर अन्योन्याश्रित है । साहित्य यदि शरीर है तो समाज उसकी आत्मा । साहित्य मानव मस्तिष्क की देन है। मानव सामाजिक प्राणी है, उसका संचालन पालन पोषण, शिक्षा-दीक्षा सब कुछ समाज में ही होता है। वह परावलम्वी और स्वावलम्वी ज्ञान के आधार पर अपना ज्ञानार्जन करता है । फिर उसके हृदय में एक नैसर्गिक लालसा उत्पन्न होती है कि वह भी अपनी भावना और विचारों को समाज में अभिव्यक्त करे । साहित्यकार समाज का प्राण होता है।

2.4.4.5 साहित्य हमारी कौतुहल और जिज्ञासा वृति को शान्त करता है, ज्ञान की पिपासा को तृप्त करता है और मस्तिष्क की क्षुधा पूर्ति करता है, और अपने राष्ट्रीय इतिहास से अपने देश की गौरव गरिमा से, अपनी संस्कृति और सभ्यता से अपने पूर्वजों के अनुभूत विचारों एवं अनुसन्धानों से, अपने प्राचीन रीति रिवाज , रहन-सहन और परम्पराओं से परिचय प्राप्त करते हैं ।ठीक ऐसे ही ये दोनों उपन्यासकार हैं। हिन्दी उपन्यास साहित्य में श्रीवास्तव जी का स्थान महत्वपूर्ण हैं। प्रेमचन्द जी आधुनिक उपन्यास के जन्मदाता थे, जयशंकर प्रसाद जी ने उनका सत्कार किया। प्रसाद जी ने साहित्य के जिस अंग पर भी लिखा अधिकार पूर्वक लिखा ।

श्रीवास्तव जी हिन्दी उपन्यास साहित्य में प्रसाद जीसे आगे हैं हिन्दी उपन्यास साहित्य उनका हमेशा ऋणी रहेगा ।

2.4.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और वृन्दावन लाल वर्मा

हिन्दी उपन्यास साहित्य में प्रतापनारायण श्रीवास्तव और वृन्दावन लाल वर्मा समकालीन लेखक हैं। इन्होंने प्रेमचन्द की परम्परा को विकसित और प्रोत्साहित करके उसके रूप को नये ढंग से सवांरा और सजोया । दोनों ही लेखकों में मूलभूत अन्तर है और यह अन्तर है कथानकों के चयन का । कथानकों के चयन में श्रीवृन्दावन लाल वर्मा ने भारतीय इतिहास को अधिक महत्व दिया

हिन्दी साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यासों की परम्परा आधुनिक काल के प्रथम चरणसे आरम्भ हो गयी थी । इसका प्रवर्तन किशोरी लाल गोस्वामी के "तारा" नामक उपन्यास से किया जाता है । लेकिन यह मानना पड़ेगा कि शुरू-शुरू में इस परम्परा की क्या स्थिति थी क्या नहीं । इस दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य श्री वृन्दावन लाल वर्मा ने किया है। उनके प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास हैं :- "कंचनार","गढ़ कुण्डार", "मृग नयनी","विराटा की पद्मनी","झाँसी की रानी", "महा रानी दुर्गावती", "अहिल्या बाई", माधव जी सिन्धिया आदि । ये उपन्यास अत्यन्त सफल हैं। इनकी मुख्य विशेषता है तत्कालीन युग एवं समाज का सफल चित्रण । इन्होंने अधिकतर बुन्देलखण्ड और उसमें आम पात्र की संस्कृति को अपने उपन्यासों का विषय बनाया है।

2.4.5.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने भी "वन्दिता", "बेकसी का मजार","ब्यालीस",ऐतिहासिक पृष्टि भूमि पर लिखे लेकिन उनका महत्व उतना नहीं है जितना श्री वृन्दावन लाल जी के ऐतिहासिक उपन्यासों । ऐतिहासिक उपन्यासों के क्षेत्र में श्री वृन्दावन लाल वर्मा का निराला व्यक्तित्व है । श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने उपन्यासों के कथानक भारतीय जनता की विभिन्न समस्याओं को लेकर लिखे हैं और उनका समाधान भी ढूढ़ निकाला है। ये समस्यायें बाल विवाह, विधवा, स्त्री शिक्षा, स्त्री स्वतन्त्रता, पति पत्नी, समान अधिकार, जारज समस्या, वर्ग मर्द, वर्ण द्रोह, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब अर्थात समाज में व्याप्त समस्यायों को अपने उपन्यासों की विषय वस्तु बनाकर उनको चित्रित किया है ।

इन्हीं समस्याओं को वर्मा ने अपने "गढ कुण्डार "में स्त्री पुरूष के सम्बन्धों का वर्णन किया है । देखिये :-

"वर्णाश्रम धर्म देहों के संयोग का निषेध कर सकता है परन्तु आत्माओं के संयोग का नहीं ।" [1]

दिवाकर और तारा का आपस में प्रेम हो जाता है और दिवाकर ताराभ्रम हो जाता है:-

" प्रकाशावृत बढ़ा, और बढ़ा । ज्योतिर्मयी तारा और अन्धकाराच्छादित दिवाकर । परन्तु प्रकाश मण्डल और बढ़ा।अन्धकार कम हुआ, उसका अन्त हुआ । ताराकी ज्योति में दिवाकर ताराराम हो गया । जैसे भास्कर और ऊषा, रवि और रश्मि, दोनों एक। एक आत्मा का इतने में समावेश । आत्मा का रूपकार । अविच्छिन्न, अभिन्न, अखण्ड । इतना प्रकाश इतनी दीप्ति दिवाकर ने देखा प्रकाश ताप मय है, प्रकाश के साथताप बढ़ा । बढ़ता चला गया। शीतल तारा और उत्तप्त प्रकाश । प्रचण्ड प्रकाश और प्रचण्ड ताप ।" [2]

2.4.5.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जीने भी स्वच्छन्द और शुद्ध प्रेम को ही महत्व प्रदान किया है । श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में दाम्पत्य प्रेम और स्वच्छन्द प्रेमको मर्यादित पूर्वक वर्णन किया है ।"विकास में आप कहते हैं :-

"हम हिन्दू हैं और हिन्दू समाज में विवाह के बाद प्रेम नहीं होता है अविवाहित हिन्दू कुमारी को विवाह के पहले प्रेम करना निषिद्ध है। विवाह होगा तब प्रेम भी होगा ।" [3]

यहां पर श्रीवास्तव जी ने समाज में फैली यह कुप्रथा कि लड़के लड़की शादी होने से पहले एक दूसरे से प्रेम करने लगते हैं हालांकि यह उन्हें शादी के बन्धन में बंध जाने के बाद करना चाहिये । श्रीवास्तव जी इसके विरोधी हैं और वहइन्हें अनैतिक मानते हैं । वृन्दावन लाल वर्मा ने इस समस्या की ओर दृष्टिपात ही नहीं किया ।

1-"गढ कुण्डार" - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 442

2- "गढ कुण्डार" - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 432

3- "विकास" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 146

2.4.5.3 दहेज प्रथा की समस्या जो आज समाज के लिये एक अभिशाप बनी हुई है जिसकी बल वेदी पर सैकड़ों बहिनों ने अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया। लेकिन यह दहेज रूपी दैत्य आज समाज के सामने मुँह फैलाये हुये खड़ा है। सैकड़ों बहिनें अपने यौवनावस्था को पार कर गयी मगर इस दैत्य ने उन्हें वैवाहिक जीवन का सुख देखने नहीं दिया। दहेज प्रथा से समाज में धन व वैभव का असमान वितरण होता है। कुछ धनी व्यक्ति और अधिक धनी और कुछ निर्धन व्यक्ति और अधिक निर्धन हो जाते हैं। दहेज समाज का कैन्सर है। यह एक ऐसा रोग है जो अनेक रोगों को जन्म देता है। दहेजप्रथा की समाप्ति में सबसे बड़ी बाधा रूढ़िवादिता, अंधविश्वास और अज्ञान की है। दहेज की इन्हीं समस्याओं का चित्रण वृन्दावन लाल जी ने "लगन" और "संगम" में ~~दहेज प्रथा के दुष्परिणामों का वर्णन है।~~ श्रीवास्तव जी ने इस समस्या की ओर ध्यान नहीं दिया है।

श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों - विदा, विजय, विकास, विषमुखी, विसर्जन, बन्धन, विपथगा, आदि सभी में जीवन और समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है लेकिन आदर्श को भी गिरने नहीं दिया बल्कि मैं तो यह कहता हूँ कि प्रतापनारायण श्रीवास्तव आदर्श प्राधान्य उपन्यासकार थे। आदर्श के वश में वशीभूत होकर वह कहीं - कहीं यथार्थ को धूमिल कर बैठे। प्रेमचन्द युग के सभी लेखकों ने आदर्शपूर्ण रचनाएँ की और समाज के यथार्थ रूप को आदर्श के माध्यम से अपने - अपने साहित्य में प्रतिपादन किया।

2.4.5.4 उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा की अपेक्षा प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में विषय की दृष्टि से, समस्याओं की दृष्टि से, शैली की दृष्टि से और आदर्श की दृष्टि से विभिन्नता अधिक दिखाई देती है। जहाँ श्रीवास्तव जी यथार्थ का आदर्श से सीधा सम्बन्ध जोड़ देते हैं वहाँ भी श्रीवृन्दावन लाल वर्मा जी आदर्श को गौड़ रूप प्रदान करते हैं। उन्होंने लिखा है :-

"उपन्यास का लक्ष्य , ऊपर से पूर्ण मनोरंजन और भीतर से सत्यं, शिवं, सुन्दरं की साधना होनी चाहिये । अपनी संस्कृति के इस सूत्र का मैं कायल हूँ और यही मेरा आदर्श है। xxxxxxxxxxप्रत्यक्ष उपदेश के मैं बिल्कुल विरुद्ध हूँ । उसकी कोई एसथैटिक वैल्यू नहीं, चाहे उ-पन्यास का क्षेत्र आर्थिक हो, सामाजिक, राजनीतिक या नैतिक ।" [1]

"महारानी लक्ष्मीबाई" उपन्यास में लेखक का अधिक आदर्शवादी रूप देखने को मिला है। क्योंकि रानी लक्ष्मीबाई द्वारा किये गये सारे के सारे काम जनता के हित में, देश के हित में थे इसलिये वे सब आदर्शवादी थे ।

"अपने आदर्श को कभी न भूलना प्रयत्न की पहली और पक्की सीढ़ी है।" [2]

आदर्श को भले ही उन्होंने अपना उद्देश्य समझा हो लेकिन यथार्थ को भी परिलक्षित करने में भी कोई कमी नहीं की उदाहरणार्थ:-

"नहीं फूलों से नाता बनाये रखो परन्तु मिट्टी से सम्बन्ध तोड़कर नहीं ।"[3]

2.4.5.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव नियम, संयम, मानमर्यादा को बहुत महत्व देते थे । वह स्वयं संयमी व्यक्ति थे और धर्मनिष्ठ थे और वे दूसरों को भी इसकी शिक्षा दिया करते थे । वर्मा जी ने इस समस्या को अपने उपन्यास "मृग नयनी" में अंकित किया है । मृग नयनी अपने पति मान सिंह से कहती है :-

"नियम संयम के साथ रहिये और मुझको रहने दीजिये मैं चाहती हूँ कि उन गुणों के साथ मेरी देह में भी वही बल बना रहे जिसको राई से लेकर आई हूँ ।"[4]

1- उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा - डा० शशि भूषण सिंहल -पृष्ठ -280

2- झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 117

3- झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 68

4- मृग नयनी - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 248

और मानसिंह को समझाते हुये कहती है देखा :-

"संयम के आधार वाला प्रेम ही आगे भी टिके रहने की सार्थकता रखता है।" [1]

" मृगनयनी यथार्थता की ओर संकेत करती हुई मानसिंह से कहती है कि नारीजीवन और उसकी सार्थकता प्रेम में है। प्रेम मनुष्य को पागल बना देता है। प्रेम में लेन देन नहीं होता लेन देन तो सौदा हुआ जहाँ सौदा वहाँ प्रेम नहीं व्यापार होता है। लेन देन का मतलव स्वार्थ सिद्धि अर्थात स्वार्थ सिद्ध हो जाने पर प्रेम भी समाप्त हो जाता है। लेकिन वास्तविक प्रेम नहीं ।" [2]

वर्मा जी और श्रीवास्तव जी दोनों ही स्वार्थ रहित प्रेम को ही महत्त्व प्रदान करते हैं। श्रीवास्तव जी शुद्ध दाम्पत्य प्रेम, मर्यादा, संयमित, जीवन के पक्षपाती है । बन्दना और विसर्जन के कलेवर इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं । वर्मा जी ने लिखा है :-

" क्या वे "नारियाँ" वांछा और कामना का श्रृंगार मात्र हैं ? xxxxxxxxxxxxx x xx x x x x x x x x x नहीं जीवन की प्रेरणा, प्रातःकाल की ऊषा जैसी सजग करने वाली हैं ।" [3]

मृग नयनी स्त्री का गौरव, सौन्दर्य, महत्त्व , स्थिरता में है , जैसे उस नदी का पानी जो बरसात के मटमैले तेज प्रवाह के बाद शरद् में नीले जल वाली , मन्थरगति गामिनी हो जाती है - दूरसे विल्कुल स्थिर और शान्त बहुत निकट से प्रगति वादी ।" [4]

वृन्दावन लाल वर्मा व श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव के कथानक, कथावस्तु , पात्र, चरित्र, भाष शैली , देशकाल और वातावरण, और उद्देश्य अर्थात उपन्यासों के तत्वों पर खरे उतरते है ।

1- मृग नयनी - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 387

2- मृग नयनी - वृन्दावन लाल वर्मा -पृष्ठ - 273

3- मृग नयनी - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 345

4- मृग नयनी - वृन्दावन लाल वर्मा - पृष्ठ - 417

प्रतापनारायण श्रीवास्तव और वृन्दावन लाल वर्मा ने अपने - अपने क्षेत्रों में पर्याप्त रूप से ख्याति प्राप्त की है । श्रीवास्तव जी ने सामाजिक उपन्यासों के रूप में तो श्री वृन्दावन लाल वर्मा ने ऐतिहासिक उपन्यासों के रूप में ख्याति तो दोनों को अलग - अलग मिली है । लेकिन विकास उपन्यास साहित्य का दोनों के मिलने से ही हुआ । दोनों ही लेखक हिन्दी उपन्यास साहित्य में अविस्मरणीय हैं ।

2.4.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और सियाराम शरण गुप्त

===

इस परिवर्तन शील जगत में देखा गया है कि कुछ व्यक्ति अनुकूल सहायता, अनुकूल प्रेरणा और अनुकूल वातावरण अर्थात अनुकूलता में रहते हुये भी उनमें भिन्नता होती है। यह भिन्नता कभी उनकी अभिव्यक्ति के रूप में, कहीं रहन सहन और कहीं लेखन शैली के माध्यम से अभिव्यक्त होती है । इतिहास इस बात का साक्षी है कि चाहे हिटलर और मुसोलनी हों, चाहे तुलसी और सूर , चाहे शेक्सपियर और मिल्टन सब में भिन्नता रही है ।

2.4.6.1 प्रेमचन्द की परिपाटी को विकसित और सुदृढ़ रूप प्रदान करने वाले सियाराम शरण गुप्त और श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव में भी समानताओं के होते हुये भी अनेको विषमतायें थी, प्रतापनारायण श्रीवास्तव की रचनाओं का मूलस्वर मानवता वादी है। मानव की हर समस्या को अपने उपन्यासों में चित्रित करके समाज में फैली हुई कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया । इन समस्याओं का समाधान भी उन्होंने उचित ढूंढने का प्रयत्न किया है ।

मनुष्य को अपना जीवन निर्वाह करने के लिये कुछ न कुछ जरूर करना पड़ता है अगर वह ईमानदारीसे भी श्रम से मेहनत करके अपना जीवन यापन करता है तो समाज उसे इज्जत, नेक और ईमानदार की दृष्टि से देखती है । उसे इज्जत देती है, उसका सम्मान करती है और कहीं वह डकैती डालकर, लोगों की मजबूरियों का फायदा उठाकर, मानवता का गला घोटकर अपना पेट भर भी लेता है तो समाज उसे हेय दृष्टि से देखती है । समाज का हेय दृष्टि से देखना ही मानव की मृत्यु बन जाती है । ऐसे ही उपन्यासकार थे श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव जिन्होंने समाज को उसे जीने का रास्ता बताया, उसकी भूलों और गलतियों का एहसास कराया। मानव धर्म क्या है। मानव को मानव के प्रति पशुवत व्यवहार करना चाहिये । या मानव होने के नाते मानवता का पाठ पढ़ाना चाहिये।

2.4.6.2 हर आदमी आदमी हो सकता, मानव मानव हो सकता लेकिन इन्सान इन्सान नहीं जबतक उसके अन्दर इन्सानियत का जज्बा न आये । मानवता से रहित मानव को दानव कह सकते हैं लेकिन मानव नहीं

मानव वही होगा जिसके अन्दर मानवीय गुण हो मानव मात्र से प्रेम हो, दया हो, गुप्त जी और श्रीवास्तव जी दोनों ने मानव को ही अपने उपन्यासों का मूलमाना है। गुप्त जी ने "अन्तिम आकांक्षा" में राम लाल द्वारा और "गोद" में शोभाराम द्वारा मानव धर्म को अंकित किया है । इन्होंने मानवता का कहीं भी हास्य नहीं होने दिया है । "अन्तिम आकांक्षा"में रामलाल एक आदर्श पात्र हैं वह अपनी जान की बाजी लगाकर ग्रामवासियों की डाकुओं से रक्षा करता है लेकिन लोग उसी पर हत्या का आरोप लगा देते हैं । उसे उसे तरह - तरह से नीचा दिखाने की कोशिश करते है । मगर वह मानवता की भावना को जीवित रखता है । सेठ वंशीधर का पुत्र जब कुयें में गिर जाता है तो वह अपने प्राणों को हथली पर लेकर कुयें में कूद जाता है, और लड़के को मौत के मुँह से निकाल लेता है । इस पर वंशीधर उसे एक रू० देते हैं जिससे उसे गुस्सा आता है और वह रूपया फेंक देता है । कहता है सेठ:-

"मैंने रूपये के लोभ से अपने को कुये में नहीं ढकेला था । रज्जू जीता जागता कुये में से निकल आया इससे अधिक मैं और कुछ नहीं चाहता । किसी को कुछ देना ही है तो उसहरया चमार को दो जिसे उसही बीस रूपये के मूल में ब्याज पर ब्याज जोड़कर परसों ही तुमने घरवार से वेदखल कर दिया और जिसके पास अब विष खाने को पैसा नहीं है । इस रूपये से उसके घरभर के खाने को अफीम आ जायेगी । मैं जाता हूँ, लेन देन की बात को लेकर अब मुझे कभी मत बुलाना ।"[1]

2.4.6.3 गुप्त जी ने वहाँ पर यथार्थ का चित्रण किया है । धनवान लोग अक्सर ऐसा ही किया करते हैं वह मानवता को अपने पैसे से खरीदना चाहते हैं लेकिन यह सौदा सम्भव नहीं । समाज में गरीवी के कारण पूँजीपति लोग ब्याज पर ब्याज लिया करते है लेकिन वह उनकी इन समस्याओं का समाधान मानवता के स्तर पर नहीं, उनका घर और जायदाद को खरीदने में ढूढ़ लेते हैं । श्रीवास्तव जी भी इसके विरोधी है ।

---

1 - "अन्तिम आकांक्षा" - सिया राम शरण गुप्त - पृष्ठ - 147

2.4.6.4 श्रीवास्तव जी मानते है कि संसार परिवर्तन शील है और इसके कण -कण में प्रत्यके क्षण परिवर्तन स्थूल होते है और जिन्हें हम देख लेते हैं। लेकिन कुछ परिवर्तन सूक्ष्म होते है उन्हें हम देख नहीं पाते। परिवर्तन का दूसरा नाम संसार है। यदि संसार में एक ही रास्ता हो तो मानव ऊब उठे। लेकिन मानव जीवन पर चलने के लिये सिर्फ एक ही रास्ता है वह है "मानवता"। इस रास्ते पर मनुष्य सैकड़ों सालों तक चलता रहे लेकिन कभी नहीं ऊब सकता उसे हमेशा ऐसा ही लगेगा जैसे वह किसी नये रास्ते पर चल रहा है।

गुप्त जी ने "गोद" में शोभाराम के हृदय में मानवता की भावनायें कूट - कूट कर भरी हैं वह अपने भैया और भाभी को माँ, बाप के समान मानता है। वह हर काम उनकी इच्छानुसार करता है। बड़े भैया उसकी शादी दूसरी जगह तय कर देते हैं जिसका विरोध वह अन्दर ही अन्दर करता लेकिन कुछ कह नहीं पाता। बाद में जब उसे सोना के द्वारा पता चलता है कि किशोरी और उसकी निस्सहाय माँ की परिस्थितियों का आभास होने से उसका आत्मविश्वास जाग उठता है और वह किशोरी से शादी कर लेता है। शोभाराम के इस कार्य का आधार गान्धीवाद है जिसमें मानवता का पुट है।

यह निश्चय है कि मानवता की स्थापना भी बगैर प्रेम और अहिंसा से नहीं हो सकता। शान्ति के अभाव में मानव जाति का विकास सम्भव नहीं प्रत्येक राष्ट्र का स्वर्णिम युग वही कहा जा सकता है जबकि वहाँ पूर्ण शान्ति और सुख रहा हो। शान्ति काल में ही उत्कृष्ट कला कौशल और श्रेष्ठ साहित्य का सृजन होता है। यदि हम विश्व का कल्याण चाहते हैं तो हमें युद्ध का बहिष्कार करना ही होगा, अहिंसा और प्रेम की भावना से विश्व में शान्ति स्थापना करनी होगी तभी विश्व में एक सुखमय एवं शान्तिमय राज्य की स्थापना होगी औरवह राज्य होगा - "मानवता का"।

2.4.6.5 श्रीवास्तव जी ने " वेदना" में भीम सिंह व करामत अली द्वारा और " बयालीस" में पंडित और मौलवी द्वारा इसी मानवता की बात कही है।"*

प्रतापनारायण श्रीवास्तव और गुप्त जी दोनों ही भारतीय सभ्यता और संस्कृति के समर्थक और पोषक हैं । अपने उपन्यासों में पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का विरोध किया । पाश्चात्य सभ्यता पर व्यंग्य करते हुये श्री रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है :-

" पाश्चात्य आदर्शों ने जितना हमें ज्ञान दिया है उतना ही व्यस्त रहना सिखा दिया है।"

खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार अर्थात जीवन के सभी क्षेत्रों में हमने पाश्चात्य आदर्शों को मान लिया है । स्वयं जान बूझकर अपने को सामाजिक परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ दिया । परिणाम यह हुआ कि भारतीय धमनियों में अंग्रेजियत का खून दौड़ने लगा ।

" Englishman made in India."

" भारत में निर्मित अंग्रेज बन गये ।"

भारतीय मानव पर पाश्चात्य आदर्शों का प्रभाव अपनी सीमा को लांघ गया। इसीलिये भारतीय जनता विपन्न है ।

"Eat, drink and be merry."

के भोगवादी सिद्धान्त ने आज उसे विनाश के गर्त में डाल दिया । कहां गये गोस्वामी तुलसी के वे वाक्य :-

"एहि तन कर फल विषय न भाई, सब छल छोड़ि भजिय रघुराई ।"

2.4.6.6 आज का भारतीय विद्वान जब तक उच्चकोटि की श्रेणी में नहीं आता जबतक उसके पास कोई विदेशी डिग्री न हो । एक समय था जब भारत "सोने की चिड़िया" के नाम से पुकारा जाता था । "सभ्यता और संस्कृति" का पथ प्रदर्शक था । लेकिन इन सब का कारण सिर्फ एक है कि भारतीय अपने को भूल गया है । गुप्त जी ने प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों तरह से विदेशी सभ्यता का विरोध किया ।

1- बयालीस - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 210 - 211

दोनों ही उपन्यासकारपरिश्रम को महत्व प्रदान करते हैं। जीवन की सफलता के लिये परिश्रम की नितान्त आवश्यकता है आलसी, अनुद्योगी और अकर्मण्य व्यक्ति जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफल नहीं होता। शूकर, कूकर के समान जैसे आता है वैसे ही चला जाता है। मनुष्य वही है और उसका ही जीवन सार्थक है, जिसने अपना, अपनी जाति का, अपने देश का, अपने परिश्रम से अभ्युदय किया हो :-

" स जातः येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम् ।"

गति का दूसरा नाम जीवन है जिस मनुष्य के जीवन में गति नहीं वह आगे नहीं बढ़ सकता। वह उस पेड़ जैसा है जो जहाँ पैदा है वहीं सूखकर पृथ्वी पर गिर पड़ता है। कहा भी है :-

"उद्यमेन हि सिद्धयन्ति कार्याणि न मनोरथैः,
नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगः ।"

एक अंग्रेजी कहावत भी है:-

God helps those who help themselves.

परिश्रम के महत्व को स्वीकार किया है। नारियों की स्वतन्त्रता, समानाधिकार शोषण नहीं बल्कि सम्मान दो। गुप्त जी ने नारी में हल्ली द्वारा:-

"माँ अब तुम यह घर छोड़ दो। हम लोग अजित काका के घर यहाँ से भी अच्छी तरह होंगे। इस घर में रंज के मारे तुम बच न सकोगी। अब मैं बप्पा कोबप्पा न कहूँगा।"

2.4.6.7 अनेकों समानताओं के साथ-साथ विषमतायें भी हैं। पहले ही मैं कईबार लिख चुका कि श्रीवास्तव जी के उपन्यासों में उच्च मध्यम वर्गीय सुख सुविधा से सम्पन्न आधुनिकता से परिपूर्ण कथानकों के कलेवर हैं; जबकि गुप्त जी ने निम्न वर्ग के साधारण लोगों को ही कथानक का आधार बनाया है। गुप्त जी के उपन्यासों में श्रीवास्तव जी के उपन्यासों जैसी-नवीनता, विविधता और आकर्षण नहीं है। गुप्त जी के गोद, अन्तिम आकांक्षा, नारी 3 ही प्रसिद्ध उपन्यास हैं जबकि श्रीवास्तव जी ने 20-25 उपन्यास लिखे हैं। सियाराम शरण गुप्त जी उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में प्रतापनारायण श्रीवास्तव की समता न कर सके।

2.4.7 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और भगवती प्रसाद वाजपेयी

श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी का जन्म कानपुर जिले की डेरापुर तहसील के अन्तर्गत मंगलपुर ग्राम में बुधवार 11 अक्टूबर 1899 ई० को हुआ था । और श्रीवास्तव जी का जन्म 20 सितम्बर1904 को हरवंश मोहाल कानपुर में हुआ । अर्थात जन्म से ही वाजपेयी जी और श्रीवास्तव जी का निकट का सम्बन्ध है। यही निकटता उनके उपन्यासों में भी देखने को मिलती है। परिस्थितियां और समस्यायें भी करीब -करीब एक ही हैं ।

2.4.7.1 भगवती प्रसाद वाजपेयी ने लगभग 40 उपन्यासों की रचना की । उनके उपन्यासों में सामाजिक प्रवृत्तियों का अंकन बड़ी सफलता से हुआ है । उन्होंने वास्तविक जगत से अपनी कथावस्तु की सामग्री एकत्र की है । जीवन में जहां दुःख है, प्रेम है, छटपटाहट है, तड़पन है, वहीं से वह अपनी सामग्री एकत्रित करते हैं । उन्होंने जो कुछ देखा, सुना है उसी का यथार्थ चित्रण अपने साहित्य में किया है । वह मानवतावादी भी हैं और व्यक्तिवादी भी । आपका कथन है :-

"मैं सत्य के सौन्दर्य का पुजारी हूँ । मधु का नहीं, कटु सत्य का भी नहीं । सत्य का ही दर्शन, चिन्तन और मन्थन, मैं साहित्य में करना और देखना चाहता हूँ ।"

आप आज भी सांसारिक प्रलोभनो से सर्वथा अलिप्त रहकर साहित्य साधना में संलग्न हैं। आप अत्यन्त मृदु भाषी हैं। कटुता उनसे कोसों दूर है । भावुकता भी उनमें कूट-कूट कर भरी है ।

2.4.7.2 श्रीवास्तव जी ने लगभग 20-25 उपन्यासों की रचना की है जो प्रसिद्ध हैं । आपने भी अपने साहित्य में सामाजिक समस्याओं का अंकन किया है । श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों की कथावस्तु समाज के शिक्षित, सर्वगुण सम्पन्न उच्च मध्यम वर्ग से ली है । करुण, वेदना और उनसे प्रसूत सहानुभूति- यही उनकी कला का अमर संदेश है। साहित्य सर्जना ही इनकी जीविका का आधार था । साहित्य सम्बन्धी उनकी मान्यतायें सवर्था मौलिक और नवीन है।

नारी स्वतन्त्रता और समानता के समर्थक भगवती शरण वाजपेयी कहते हैं :-

"मैं स्वयं नारी की स्वतन्त्रता का पक्षपाती हूँ। परन्तु ऐसी स्वतन्त्रता का नहीं, जो मनुष्य के सामाजिक स्वस्थ रूप को ही विकारग्रस्त बना दे।"[1]

भगवती प्रसाद वाजपेयी जी पुनर्विवाह का भी समर्थन करते हैं :-

"पुनर्विवाह का प्रचलन पहले भी था। आज के समाज में तो विधवाविवाह में कोई बुराई ही नहीं समझी जाती। बीच में कुछ लोगों ने धर्म का आडम्बर रचकर अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए इसे बन्द कर दिया होता तो सैकड़ों स्त्रियाँ वेश्या न बनती। न जाने कितनी लड़कियाँ अपने वंश पर कालिमा पोत कर भाग गयीं, न जाने कितनी डूब मरीं।"[2]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने विधवा विवाह की समस्या को विजय उपन्यास में नई पृष्ठ भूमि में अंकित किया है। सर रामप्रसाद अपनी रुग्ण पत्नी की आत्मतुष्टि के निमित्त कुसुमलता का विवाह बाल्यकाल में कर देते हैं जबकि कुसुम को पति, पत्नी, विवाह और वैधव्य का अर्थ ज्ञात नहीं था। धीरे-धीरे जब वह यौवनावस्था की दहलीज पर पैर रखती है तो वह अपने को दाम्पत्य सुख से वंचित पाती है। वह देश और समाज को कोसती हुई कहती है :-

"विधवा-विवाह संसार में होता है, एक इसी अभागे गुलाम देश में नहीं होता। दूसरे देश इस मूर्ख, अपढ़, निश्चेष्ट देश से कितना आगे हैं। दूसरे देशों में स्त्री के समानाधिकार हैं, किंतु इस देश में वह पराधीन है। तभी पुरुष भी, देश भी, पराधीन है। सब पुरानी लकीर के फकीर बने हैं। ऐसे जिद्दी, दुष्ट, पातकी पुरुष दूसरे देश में नहीं हैं। आज कितने ही धर्मध्वजी-

---

1- कर्मपथ - भगवती प्रसाद वाजपेयी - पृष्ठ -119

2- कर्मपथ - भगवती प्रसाद वाजपेयी - पृष्ठ -76

समाज के नेता मेरा स्त्रीत्व भंग करने के लिये तैयार हैं, छिपा-छिपाकर पाप करने के लिये तैयार हैं। किंतु अगर मैं आज विवाह कर लूँ, तो हिन्दू-समाज नाक मुँह सिकोड़ेगा, मुझे म्लेच्छी कहेगा। मेरे लिये इस देश में, इस समाज में, स्थान नहीं रहेगा। हाय रे अभागे देश, अभी तुझे कई शताब्दियों तक गुलामी करना है। तेरी उन्नति की आशा नहीं। तू सदैव इसी भाँति दूसरों की सेवा करता रहेगा, उनके ही फेंके हुए टुकड़ों से अपनी भूख शांत करेगा।"[1]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव व भगवती प्रसाद वाजपेयी ने तत्कालीन भारत की राजनैतिक हलचल, विचारधाराओं, जनता की मनोवृत्तियों, नैतिक दुर्बलताओं, विभिन्न वर्गों और संस्थाओं की विकृतियों, पारस्परिक मत-भेदों, देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, चोर बजारी, लूट - खसोट, रिश्वत खोरी, राजनीतिक बहुरूपियों का चित्रण, उद्योग पतियों के अनैतिक और गैरकानूनी ढंग, स्वार्थ और भोग विलास के लिये मानवीय मूल्यों का परित्याग, विदेशी शक्तियों के कुचक्र, काम-विकार ग्रस्त इन्द्रिय आनन्द के भूखे निर्लज्ज और उच्छ्रंखल सेक्स की प्रचण्डता आदि का वर्णन किया है :-

"प्रत्येक चित्र के दो पहलू होते हैं। यह तो देखने वाले की दृष्टि पर निर्भर करता है कि वह किस पहलू से हमें देखता है। चन्दन का टीका लगाकर गेरूआ वस्त्र पहन लेने मात्र से तो मनुष्य संत नहीं बन जाता। त्याग की अपनी निजी महिमा और महत्ता है।"[2]

"वासना में लिप्त समाज के ठेकेदारों को सर्वत्र वासना-ही-वासना दिखाई देती है। उनके मस्तिष्क का प्रत्येक कण वासनामय होता है। वास्तव में इसी अधिकार की भावना ने, आज प्रत्येक परिवार में, अशांति और गृह-कलह का बीजारोपण कर दिया है। पत्नी पति पर अपना अधिकार चाहती है और माँ अपने बेटे पर। दोनों भूल जाती हैं कि पति किसी का पुत्र भी है, या पुत्र किसी का पति भी।"[3]

1- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 58-59

2- कर्मपथ - भगवती प्रसाद वाजपेयी - पृष्ठ - 184

3- कर्मपथ - भगवती प्रसाद वाजपेयी - पृष्ठ - 196

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के समकालीन उपन्यासकारों में भगवती प्रसाद वाजपेयी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है । डा० जगदीश नारायण त्रिपाठी :-

"बाजपेयी जी हिन्दी के उच्चतम उपन्यासकारों में से हैं ।"

2.4.7.3 उनकी कृतियों में हमें थैकरे (Thackeray) का हास्य तथा व्यंग्य इलियट (Eliot) की दार्शनिकता और डिकन्स (Dickens) के मानव प्रेम के एक साथ दर्शन होते हैं। बाजपेयी जी हमारे समाज के मध्यम वर्ग के चित्रकार हैं । इस संकुचित क्षेत्र के भीतर विश्व को समानता का पाठ पढ़ाना उनका उद्देश्य है।"[1] और आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी :-

"बाजपेयी जी की रचनाओं की भूमि एकान्तिक है। कला के विकास के लिये यह भूमि बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई। एक अवस्था विशेष, एक घटना विशेष किसी मनुष्य विशेष अथवा उसकी मानसिक प्रवृत्ति विशेष उसके आस पास की चौहद्दी से अलग निकालकर और फिर उस टुकड़े को असाधारण योग्यता के साथ सजाकर दर्शक या पाठक के सामने प्रस्तुत कर देना बाजपेयी जी की सिद्ध हस्त कला का नमूना है।" *

डा० देवीशंकर अवस्थी ने लिखा है :-

"बाजपेयी जी ने सामाजिक उद्देश्यों की अपेक्षा मध्यम वर्गीय मन विविध ऊहापोह उपस्थित किए हैं। वे हमारे प्रारम्भिक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकारों मेंसे हैं। इस सम्बन्ध में यह भी ध्यान देने योग्य है कि उनका मनोविश्लेषण अकादमिक कम व्यावहारिक अधिक है । इस युग में नारी कुछ शिक्षित हो कर स्वतंत्र हो चली थी । ऐसी स्थिति में प्रेम, विवाह एवं यौन नैतिकता के अनेक प्रश्न समाज को क्षुब्ध करने लगे थे । मध्य-वर्ग की इन आकांक्षाओं एवं कुण्ठाओं के चित्रण में वाजपेयी जी अत्यधिक तटस्थ रह सके हैं, यह उनकी कला-गत शक्ति का प्रमाण है, परन्तु इस चित्रण का जो परिप्रेक्ष्य है, वह शरत चन्द्रीय आदर्शवाद है इसी कारण निराश प्रेम की वेदना को वे अत्यधिक स्फीत करके उपस्थित कर सके हैं ।"[2]

1- पं० भगवती प्रसाद वाजपेयी - "अभिनन्दन ग्रन्थ" - पृष्ठ -161 (जगदीश नारायण त्रिपाठी)

2- हिन्दी साहित्य कोश, भाग -2 --पृष्ठ - 376

3- (डा० देवीशंकर अवस्थी)

* उद्धृत - कर्मपथ एकअध्ययन - परिशिष्ट अभिमत -डा० जगदीशनारायण त्रिपाठी पृष्ठ -220

महेन्द्र चतुर्वेदी लिखते हैं :- "श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी एक प्रकार से प्रेमचन्द और प्रेमचन्दोत्तर युग के बीच की कड़ी हैं। xxxxxxउनमें उन्हीं एक ओर व्यापक सामाजिक-राजनीतिक जीवन के चित्रण की अपेक्षा मध्य-वर्गीय जीवन की वैयक्तिक समस्याओं के निरूपण का आग्रह मिलता है xxxजैसा कि हम प्रेमचन्दोत्तर युग के प्रमुख उपन्यासकारों में पाते हैं। xxxxxxxx वस्तुतः विषय"-वस्तु के धरातल पर व्यक्तिवादिता की ओर आकृष्ट होते हुए भी उनकी कला प्रतिभा में प्रेमचन्द्रीय तत्वों की प्रचुरता होने के कारण वे मनोवैज्ञानिक और शैली परक दृष्टि से प्रेमचन्द-वृत्त में ही आबद्ध होकर रह गए हैं। प्रेमचन्दोत्तर युगीन वस्तु तथा प्रेमचन्दीय कला-तत्वों के संश्लेषण के कारण ही उनके उपन्यास साहित्य को मैंने दोनों युगों के बीच की कड़ी कहा है।"[1]

भगवती प्रसाद वाजपेयी ने किसी का अनुकरण नहीं किया स्वच्छन्द, स्वतन्त्र साहित्य का सृजन किया है :-

"वाजपेयी जी प्रेमचन्द और प्रसाद के समकालीन हैं, पर उन्होंने न तो प्रेमचन्द का अनुकरण किया है और न प्रसाद का । इन महान कलाकारों की विचारधारा के समन्वय से जो एक तीसरे प्रकार की धारा बनती है। उसी का प्रतिनिधित्व वाजपेयी जी ने अपनी रचनाओं में किया है। इसप्रकार वह अपने युग के हिन्दी कलाकारों से अंशतः प्रभावित हैं । बंगला के ऊँचे कलाकार शरत्चन्द्र का भी उन पर प्रभाव पड़ा है। यदि ध्यान से देखा जाय तो ज्ञात होगा कि वस्तु-संगठन उनका अपना है। शैली तथा उद्देश्य पर प्रेमचन्द्र व प्रसाद का प्रभाव है और पात्रों पर शरत्चन्द्र की कला का पुट है। इस प्रकार वाजपेयी जी अपने कथानकों के चयन, संगठन एवं सम्पादन में सर्वथा मौलिक हैं ।"[2]

2.4.7.4 श्रीवास्तव जी ने प्रेमचन्द जी की धारा को ही अपने साहित्य में अंकन किया लेकिन धीमे-धीमे वह भी मानवतावाद की ओर उन्मुख होते गये । यह सही है कि उन्होंने नारी की स्वतन्त्रता पर बल दिया उसकी समानता का अधिकार देने के लिये समाज से संघर्ष करने के लिये बुद्धि, विवेक,

---

1- हिन्दी उपन्यास-एक सर्वेक्षण - महेन्द्र चतुर्वेदी - पृष्ठ - 161

2- हमारे लेखक - राजेन्द्र सिंह गौड़ - पृष्ठ -388

बल प्रदान किया है। उनकी नारी शिक्षित, पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित और आधुनिकता को लिये हुये है।-

"विजय" में कुमुदनी आधुनिकता से पूर्णता प्रभावित है वह अपनी देवीय तुल्य सास का बराबर अपमान करती है और ज्यादा से ज्यादा समय हीरा को खिलाने और उपन्यास पढ़ने में काट देती है। कुमुदनी कहती है:-

"अगर इसका बदला न लूं तो रायबहादुर की लड़की नहीं । आज ही बाबू जी को चिट्ठी लिखती हूँ । अब की जाकर इस घर में थूकने न आऊँगी । मुझे ऐसे वैसे घर का समझ रखा है जरा कहने भर की देर है मारे पैतों के खाल निकलवा लूँगी हरामजादी की । xxxxx क्या बताऊँ मेरे घर में न हुई नहीं तो इसी वक्त जमीन में गड़वाकर कुत्तों से नुचवा डालती ।"[1]

और आगे कुमुदनी कहती है:- "ग्रेजुएट नहीं हूँ तो क्या, अंडर ग्रेजुएट तो हूँ । उनसे किस बात में कम हूँ । दो ही चार दर्जो का अन्तर है । फिर किसी से दब कर क्यों रहूँ ।" [2]

2.4.7.5 श्रीवास्तव जी नारी-शिक्षा के पक्षपाती थे और इसीलिये उनके नारी पात्र अधिकांशतः शिक्षित हैं। "विजय" में शांता जैसी देवी तुल्य मां की ममता, दया, स्नेह और वात्सल्यतापूर्ण हृदय का अनुभव बहुत पास से किया शांता में वे सभी गुण सम्पन्न हैं जो एक मां में होने चाहिये । शांता कहती है:-

" क्यों जी उन्हें जन्म देता है । जिन पेड़ों पर कांटे निकलते हैं। वे पेड़ उन कांटों को गिरा नही देते हैं ? जब वे गिरते हैं, तभी कांटे भी गिरते हैं। मां को सब लड़के प्यारे होते हैं। अगर लड़का खराब भी निकल जाये, तो क्या मां उसे त्याग देती है ।"[3]

1- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -19

2- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव = पृष्ठ -20

3- विदा -प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ 10

यह सच है कि एकबार पुत्र कुपुत्र हो सकता है लेकिन माँ कुमाता नहीं हो सकती है। वह हर हाल में अपनी संतान का हित ही करने की सोचती है अगर यह कार्य करने में अपना तन, मन, धन न्यौछावर कर देती है लेकिन यह गवारा नहीं कर सकती कि उसकी सन्तान को जरा भी कष्ट हो।

शांता कहती है :- "माँ जब संतान को अपने आँचल में छिपा लेती है, तब उसका कोई अनिष्ट नहीं कर सकता।" [1]

2.4.7.6 अधिक क्या लिखूँ नारी पात्रों का चित्रण करने में प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी को पूर्ण सफलता मिली है। उनके नारी पात्र भारतीय और पाश्चात्य विचारधारा का समुच्च समन्वय स्थापित करने में पूर्णता परिपक्व हैं।

बाजपेयी जी भी नारी स्वतन्त्रता, शिक्षा तथा समानाधिकार के पक्षपाती है वह चाहते हैं कि जीवन के हर पहलू में नारी को पुरूष के बराबर अधिकार मिलें। उसे सिर्फ घर की चारदीवारी में कैद कर नहीं रखा जाय। वरन जीवन के हर पहलू में स्वच्छन्द विचरण करने का मौका दिया जाय।

डा० रामगोपाल सिंह चौहान :-

"बाजपेयी जी पुराने खेवे के आदर्शवादी उपन्यासकार हैं। आपके उपन्यासों का प्रधान विषय नारी -पुरूष का प्रेम है- नैतिक और आदर्श प्रेम जो प्रेमियों में व्यक्तिगत जीवन को ऊँचा और आदर्श बनाने की प्रेरणा देता है। प्रेम में उत्पन्न ईर्ष्या, द्वेष, कटुता, गलतफहमी, वियोग आदि के झटके - झकोरों से कथा अपने इर्द-गिर्द की अन्य सामाजिक गतिविधियों का भी स्पर्श करती हुई समतल गति से आगे बढ़ती है। बाजपेयी जी ने दुःख और कष्ट सहन के आदर्श पर ही अपने पात्रों का चरित्र विकसित किया है।" [2]

2.4.7.7 बाजपेयी जी आदर्शवादी उपन्यासकार थे। यथार्थ की ओर उन्मुख होने वाले आदर्श को "यथार्थमिश्रित आदर्शवादी" या आदर्शोन्मुख यथार्थवाद कह सकते हैं। इसलिये बाजपेयी जी व श्रीवास्तव जी की रचनाओं में चित्रित जीवन एक ओर यथार्थवादी होता है और उसमें जीवन गुण, दोष दोनों के

1- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 63

2- आधुनिक हिन्दी साहित्य - रामगोपाल सिंह चौहान - पृष्ठ - 196-97

साथ अंकित होता है । लेकिन :-

"चूँकि संसार में बुरे चरित्रों की प्रधानता है - यहाँ तक कि उज्जवल चरित्र में भी कुछ न कुछ दाग धब्बे रहते है ।" [1]

इसलिये लेखक इन बुराइयों का चित्रण करते हुये उपन्यास के अन्त तक जाते-जाते आदर्श जीवन की स्थापना करता है । यथार्थ की व्याख्या करते हुये ऐंगिल्स ने लिखा था :-

"मेरे विचार में यथार्थवाद तथ्यों के विवरण के साथ प्रतिनिधि चरित्रों का प्रतिनिधि परिस्थितियों के बीच सच्चा चित्रण करता है।" [2]

यह प्रवृत्ति सभी सामाजिक यथार्थवादी लेखकों में पायी जाती है।- "युद्ध और शान्ति" के प्रधान पात्रों को देखने से लगता है कि:-

"टालस्टाय का यथार्थ सीमान्त अवस्थाओं, चरम मनो विकारों और अतिशय दैवयोगों की अभिव्यक्ति में है वह चाहे अन्ना हो, चाहे पोरी हो या चाहे नटाशा हो ।" [3]

वाजपेयी जी और श्रीवास्तव जी दोनों ने ही वर्तमान यथार्थ का आभास और ऐतिहासिकता, जिसे एक प्रकार से ऐतिहासिक यथार्थ कहा जा सकता है, का आभास उनके साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। साहित्य का ऐतिहासिक यथार्थ का मतलब भी यही होता है कि प्रत्येक युग में वास्तविकता को ढूढना, समाज के सम्बन्धों को ठीक तरह से देखना निष्पक्ष रहना और अतीत को वास्तविकता के परिवेश में प्रस्तुत करना ।

2.4.7.8 श्रीवास्तव जी की यह विशेषता रही है कि यद्यपि उनके कथोपकथन कहीं-कहीं पर लम्बे होते गये हैं लेकिन उनमें नीरसता नहीं आने पायी है। आपने अपने सम्वादों में उर्दू शब्दों, मुहावरों और लोकोक्तियों का खूब प्रयोग किया है। तथा भाषा भी बोल चाल की तथा ग्रामीण है। आपके पाठक भी कभी भाषा की अलंकारिकता के उहापोह में अपने को नहीं समझते । श्रीवास्तव जी ने पात्रानुकूल भाषा को रखा है।

1- प्रेमचन्द -"कुछ विचार" - पृष्ठ -39-40

2- उद्धृत - "उपन्यास कला एक विवेचन"- जालादि विश्वमित्र -पृ0 97

3- उद्धृत - "उपन्यास कला एक विवेचन" -जालादि विश्वमित्र -पृ0 97

डा० आनंदी प्रसाद ने अपना सिगार पीते हुये कहा:- " होसकता है परन्तु मैं मानता हूँ -

परिवर्तन जीवन की आत्मा है, उसका सार तत्त्व है ।"

राजा प्रकाशेन्द्र ने संतोषमय स्वर में कहा :- "बेशक, टेनीसन जैसे महान कवि की उक्ति है, और कितनी सत्य -

{ प्राचीन रूढ़ि परिवर्तित होकर नवीन पद्धति का स्थान निर्दिष्ट करती है इसलिये कि कहीं एक अच्छी रूढ़ि या प्रथा संसार को कलुषित न कर दे } ।"

डा० आनंदी प्रसाद ने अनुमोदन करते हुये कहा:- "हाँ {संघर्ष ही जीवन है }"।

और देखिये विजय में ही राजेन्द्र प्रसाद ने एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा :-

"यह तो आपकी मेहरवानी है, नवाजिश है ।"

वाजपेयी जी की भाषा सर्वत्र पात्रानुकूल है, पात्रानुकूल वह अपना रूप बदलती चलती है। कहीं-कहीं स्वाभाविक और सरस भाषा का प्रयोग भी मिलता है -- यथा

"शर्म नहीं आती तुझे । कहीं मजदूरी ही करता, अधिक न सही डेढ दो रूपये तो कमा लाता । पर तुझे क्या ! दोनों समय पकी पकाई मिल जाती है, तभी तो माँग काढ़कर साहब बना ठाट से घूमता है।"[2]

आवेश के क्षणों की भाषा में श्रीवास्तव जी की भाषा जैसी उग्रता लक्षित होती है यथा -- "

"अरे यह तुझे क्या मारेगा ! अभी इसके लिये मैं अकेला ही काफी हूँ ।"[3]

1- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 134 - 135

2- कर्मपथ - भगवती प्रसाद वाजपेयी - पृष्ठ -93

3- कर्मपथ - भगवती प्रसाद वाजपेयी - पृष्ठ -94

वाजपेयी जी की भाषा में ग्रामीणता, सरलता और स्वाभाविकता का रूप भी देखने को मिलता है :- "पांच कोस पड़ी", "चार रुपिया पड़ी बाबू", "बुद्धव हैं बड़े चतुर", "यही तो ढ़ाई", कोई जुर्म किया हो तो रपट लिखा दो, गांव में नौकरी कहाँ धरी है भैया आदि शब्दों में जन साधारण और स्वाभाविक भाषा का प्रयोग मिलता है। इंस्पेक्शन, खबरदार, काफी, खास आदि अंग्रेजी, उर्दू के शब्द भी मिलते हैं ।

दोनों ही लेखकों की साहित्य सृजना से हिन्दी उपन्यास साहित्य को नयी चेतना, नये प्राण व नयी स्फूर्ति, नये शब्द विधान व नयी शैली मिली । हिन्दी साहित्य जगत व हिन्दी प्रेमी हमेशा - हमेशा उनके चिर ऋणी रहेंगे ।

2.4.8 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और भगवती चरण वर्मा

2.4.8.1 मानव मन अनुभूतियों का अक्षय भंण्डार है। इन अनुभूतियों को शब्द चित्र का स्वरूप देना साहित्यकार की अन्यतम अभिलाषा होती है। श्रीवास्तव जी उपन्यासों में कथावस्तु का संयोजन अनुभूतियों की पीठिका पर अवलम्बित है, घटनाओं का संयोजन सुसंगठित है। कथावस्तु में कुतूहल और जिज्ञासा का भाव सर्वत्र पाया जाता है। इसके अभाव में उपन्यासकार सफलता प्राप्त करने से वंचित रह जायेगा। श्रीवास्तव ने आरम्भ जो प्रेमचन्द की परिपाटी को लेकर किया था, किन्तु उत्तरोत्तर वह मानवता वाद की तरफ उन्मुख होते गये। और अन्तत: वह पूर्ण मानवतावादी हो गये।

2.4.8.2 श्रीवास्तव जी की भाँति वर्मा जी ने भी समाज के उच्च मध्यम वर्ग का चित्रण ही अपने उपन्यासों में किया है। उन्होंने समाज की विभिन्न समस्याओं को उठाया है और उन सबका आदर्शवादी समाधान भी ढूढ निकाला है। समाज की यथार्थता का नग्न रूप सामने रखा। पुराने यथार्थ वादियों के चित्रण की उस कृत्रिमता का विरोध किया जो वास्तविक नहीं होता वास्तविकता का भ्रम पैदा करता है। वह इस पक्ष में हैं कि जिस किसी वस्तु घटना या जीवन का वर्णन किया जाय उसे उसके मूल रूप में प्रस्तुत करे जैसा कि वह दिखता है। चाहे उसमें भलाई हो, बुराई हो या वह घृणित ही क्यों न हो

ऐमिल जोला ने लिखा है :-

"प्रयोगवादी प्रकृति की जांच करने वाले मजिस्ट्रेट की तरह से है और हम उपन्यासकार मनुष्य और उसके भावीदंगों की जांच करने वाले मजिस्ट्रेट के समान हैं।"[1]

इसी तथ्य परक दृष्टिकोण के कारण जोला एवं उसके अनुयायियों का कथन थाकि:-

1- दि एक्सपेरिमेन्टल नावेल - एमिलि जोला

"विकृत हूयगों जैसा कल्पनावादी लेखक मिट्टी की भित्त पर मूल्यवान कयत्र बनाने का सा मूढ़ प्रयत्न कर रहा है। चित्र कितने ही सुन्दर हों किन्तु तव मिट्टी ही कमजोर और अस्थाई है, तब उन चित्रों का मूल्य ही क्या ।"[1]

वास्तव में चतुर कलाकार वही होता है जो अपनी कल्पना को मूर्ति रूप देकर ऐसा प्रस्तुत कर देता है मानों वह वास्तविक चित्रण किया हो। श्रीवास्तव जी की प्रमुख विशेषता ही यह थी कि उन्होंने उच्चवर्ग को नजदीक से देखा और उसका वर्णन भी उतनी ही गहराई से किया जितना वास्तविक था । उनमें व्यापकता तो थी ही साथ-साथ सूक्ष्मता व गम्भीरता भी है । जबकि वर्मा जी समाज के वाह्य रूप का ही चित्रण कर सके उसकी अन्तः कृतियों तक वह न पहुँच सके यही उनकी सबसे बड़ी असफलता रही ।

2.4.8.3 दूसरी बात ये कि उनके सम्वाद बहुत लम्बे लम्बे हैं । जिनसे पाठक नीरसता को प्राप्त होता है तथा उसे उपन्यास से रूचि नहीं रहती वर्मा जी श्रीवास्तव जी की तरह आदर्शवादी नहीं हैं वह तो यथार्थवादी है । उन्होंने स्वयं कहा है :-

"मैं यथार्थवादी हूँ और मैं जानता हूँ कि प्रत्येक गुलाम है उतना ही बड़ा जितना कोई पशु ।"

और आदर्शवाद के बारे में आपने लिखा है कि :-

"आदर्शवाद पर मुझे श्रद्धा है पर उसका अनुयायी नहीं हूँ वास्तविका के क्षेत्र में विचरण करता हूँ और उसके शुष्क रूप को प्रदर्शित करना ही मेरा ध्येय है ।"

1- नन्द दुलारे वाजपेयी -"नया साहित्य नये प्रश्न" - पृष्ठ -1

अगर हम यह कहें कि वर्मा जी का यथार्थवाद एक ऐसा रंग चढ़ा था जिसपर कोई दूसरा रंग नहीं चढ़ सकता।

उन्हीं के शब्दों में :-

" मैं यथार्थवाद को वह आदर्शवाद समझता हूँ जो काल और परिस्थिति से अनुशासित है। साहित्य और कला का भाग होने के कारण आदर्शवाद और यथार्थवाद दोनों में ही कुरूपता का कोई स्थान नहीं । असद् और अकल्याण से दोनों ही परे हैं। वस्तुतः प्रत्येक यथार्थवाद में मानव की उदात्ता भावना का समावेश होना चाहिए, क्योंकि इसी उदात्त भावना में सद् और कल्याण है और प्रत्येक आदर्शवाद में सहनशीलता होनी चाहिए । शाश्वत सत्य और मान्यताओं पर ही उसकी स्थापना होनी चाहिए ।" [1]

2.4.8.4 श्री भगवती चरण वर्मा प्रेमचन्द युग के उन मौलिक उपन्यासकारों में से हैं जिन्होंने हमें आदर्शवाद से छुटकारा दिला कर स्वतन्त्रता का पाठ पढ़ाया । इन्होंने करीब 14 - 15 उपन्यासों का सृजन किया है । दोनों ही उपन्यासकार भाग्यवादी हैं लेकिन कोरे-कोरे भाग्य के भरोसे रहने वालों में से नहीं है कि जो होगा वह भाग्य में लिखा होगा वही होगा । गीता में कहा गया है कि - मनुष्य को भाग्य के भरोसे नहीं रहना चाहिये हम जैसा काम करेंगे वैसे ही फल की प्राप्ति होगी ।

श्री भगवती चरण वर्मा ने लिखा है :-

"हमारे प्रत्येक कार्य में अदृश्य का हाथ हैं। उसकी दुआ हीसब कुछ है ।" [1]

"मनुष्य परतन्त्र है, परिस्थितियों का दास है, लक्ष्यहीन है। एक अज्ञात शक्ति प्रत्येक व्यक्ति को चलाती है। मनुष्य की कोई इच्छा का कोई मूल्य ही नहीं है। मनुष्य स्वावलम्बी नहीं है, वह कर्ता भी नहीं है, साधन मात्र है ।" [2]

1- चित्रलेखा - भगवती चरण वर्मा - पृष्ठ - 99

2- चित्रलेखा - भगवती चरण वर्मा - पृष्ठ - 144

मतलब यह है कि मनुष्य के हाथ में सिर्फ कार्य करना मात्र है उसके परिणाम का देना मनुष्य के हाथ में नहीं है ।

2.4.8.5 श्रीवास्तव जी भी भाग्यवादी हैं और यह सिद्धान्त उनके उपन्यासों में दृष्टि गोचर होते हैं :-

"यह संसार मिथ्या है, इस संसार में जो सत्-चित् - आनन्द है, उसका स्पष्टीकरण उसने किया है, आत्मा - परमात्मा, आत्मा रूप में जो ब्रह्माण्ड के कण-कण में व्याप्त है उसका ज्ञान कराने वाला दर्शन शास्त्र है ।"[1]

2.4.8.6 भगवती चरण वर्मा तो भगवान और मनुष्य में भेद ही नहीं मानते हैं :-

ईश्वर और मनुष्य में कोई भेद नहीं । भेद केवल बाह्य- है - सांसारिक है । माया और ब्रह्म के संयोग को ही ममत्व कहते हैं और माया वास्तव में ब्रह्म का अंश होते हुए भी बाह्य दृष्टि से उससे पृथक् हैं । ब्रह्म जब तक माया में लिप्त रहता है, तब तक वह संसार के जाल में फँसा रहता है, माया को छोड़ देने के बाद वह स्वयं हो जाता है ।"[2]

2.4.8.7 प्रेम और विवाह दोनों के ही बारे में श्रीवास्तव जी और वर्मा जी ने लिखा है। वर्मा जी लिखते हैं कि :-

"प्रेम, प्रेम है वह वासना, स्वार्थ, लिप्सा, ईर्ष्या, लेन-देन से परे होता है। क्योंकि अगर प्रेम में लेन-देन (स्वार्थ) हुआ तो वह शुद्ध प्रेम न होकर एक सौदा हुआ ।"

कुछ लोगों ने प्रेम को :-

Love is God,
और Love is blind
और Love is sweet poison.

सच तो यह कि आदमी प्रेम में वशीभूत होकर अपने और पराये, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब, अफसर और नौकर की सीमा को लाँघकर एक हो जाते है। प्रेम करने वाले शरीर से जरूर अलग होते हैं लेकिन आत्मा उनकी एक होती है। प्रेम ही सब कुछ है। वासना रहित प्रेम मानव को भगवान बना देता है ।

1- विर्सजन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 32
2- चित्रलेखा - भगवती चरण वर्मा - पृष्ठ -31

ये लेखक भी शुद्ध प्रेम के समर्थक हैं। प्रेम कभी एक तरफा नहीं होता और अगर प्रेम एकतरफा हुआ तो वह प्रेम सफल नहीं होता वह रास्ते में ही विलीन हो जाता है।

प्रेम के उच्च स्वरूप का वर्णन करते हुये वर्मा जी ने लिखा है :-

"प्रेम का सम्बन्ध आत्मा से है, प्रकृति से नहीं। जिस वस्तु का प्रकृति से सम्बन्ध है, वह वासना है, क्योंकि वासना का सम्बन्ध बाह्य से है। वासना का लक्ष्य यह शरीर है, जिस पर प्रकृति ने कृपा करके उसको सुन्दर बनाया है। प्रेम आत्मा से होता है, शरीर से नहीं।"[1]

"प्रेम ईश्वरीय है, दो आत्माओं का बन्धन है। प्रेम में ही संसार स्थित है, प्रेम अनादि है, प्रेम अनन्त है, प्रेम ही मनुष्य का प्राण है।"[2]

वर्मा जी ने एक जगह लिखा है कि :-

"प्रेम करने वाला अपने में और अपने प्रेमी में कोई भेदभाव नहीं देखता। प्रेम जीवन का कर्तव्य है, आत्मा का संगीत है।"[3]

प्रेम ही जीवन है नहीं वल्कि जीवन का सार है अगर जीवन में प्रेम है तो हमें यहीं स्वर्ग के दर्शन होने लगते हैं नहीं तो यहीं नरक भोगने को मिलने लगता है। प्रेम मानव जीवन की अमूल्य निधि है जिसे मानव मात्र को अपने पास बड़ी सतर्कता से रखना चाहिये।

2.4.8.8 यद्यपि प्रतापनारायण श्रीवास्तव और वर्मा जी ने साथ साथ लिखना आरम्भ किया था और प्रेमचन्द की परम्परा को बढ़ावा दिया था लेकिन बाद में दोनों के रास्ते अलग-अलग हो गये। एक उच्च आदर्शवाद की ओर और दूसरे शुद्ध यथार्थवाद की ओर झुकते चले गये।

1- चित्रलेखा - भगवती चरण वर्मा - पृष्ठ - 66

2- तीन वर्ष - भगवती चरण वर्मा -पृष्ठ - 51

3- तीन वर्ष - भगवती चरण वर्मा - पृष्ठ - 83

वर्माजी ने अपने उपन्यासों -"आखिरीदाव", टेढ़े मेढ़े रास्ते", "सीधी सच्ची बातें," "सबहिं नचावत राम गोसाईं", "तीन वर्ष", सामर्थ्य और सीमा, चित्रलेखा में संसार के घृणित जीवन , वासना मय प्रेम, जमींदारी, पाश्चात्य सभ्यता, हिंसा, अहिंसा, क्रान्तिकारी आन्दोलन आदि की समस्याओं का चित्रण किया है । यही समस्यायें विर्सजन, बयालीस, बन्दना विश्वास की वेदी आदि प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में देखने को मिलती हैं ।

2.4.8.9 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने करीब 20-25 उपन्यास लिखे हैं लेकिन 17-18 ही प्रकाशित हुये हैं बाकी अप्राप्य हैं। वर्मा जी ने करीब 14-15 उपन्यासों का सृजन किया है । अगर प्रतापनारायण श्रीवास्तव सामाजि--क चित्रण के चतुर चितेरे हैं तो भगवती चरण वर्मा राष्ट्रीयता के प्रणेतक अधि-कार करीब-करीब समान हैं और उपन्यास साहित्य में अपनी अमिट छाप रखते हैं ।

"टेढ़े-मेढ़े रास्ते" में सन् 1930 के आसपास के जीवन का यथार्थ चित्रण है। जमींदारों काकिसानों के प्रति शोषण का भाव देश में निरन्तर बढ़ती हुई राजनीतिक चेतना, कांग्रेस आंदोलन, क्रान्तिकारियों की गतिविधि-याँ साम्यवादी देशों की भारत में घटित घटना चक्रों में अभिरूचि पारिवारिक विघटन, बदलते जीवन, मूल नागरिक जीवन की अभाव भरी व्यस्ततायें, आर्थिक वैषम्य आदि तत्कालीन और सामयिक जीवन के यथार्थ की झांकी प्रस्तुत करते हैं । कुल मिलाकर उसमें युवकों की भावनाओं आकांक्षाओं और संघर्षों का यथार्थ चित्रण मिलता है ।

2.4.8.10 वर्मा जी के उपन्यास के कथानक पूर्णतया सुगठित, आरोह अवरोह से परिपूर्ण रोचक यथार्थ एवं उद्देश्य से परिपूर्ण है। रहा मौलिकता का सवाल हां पूर्ण मौलिक तो नहीं कह सकते परन्तु ये भी नहीं कह सकते हैं कि

मौलिकता का पूर्णता अभाव है। पूर्ण मौलिकता का दावा तो कोई भी नहीं कर सकता । क्योंकि साहित्य सागर अथाह और असीम है। एक ही विषय को विभिन्न साहित्यकारों ने अपनी - अपनी प्रतिभा और रूचि के अनुसार उसे अलग-अलग रूप में प्रस्तुत किया है। वर्मा जी ने स्वतन्त्रता पूर्ण देश की स्थिति को जिस ढंग से "टेढ़े मेढ़े रास्ते" में प्रस्तुत किया वह उनकी मौलिक देन है। परिवर्तित होते हुये जीवन मूल्य, नयी और पुरानी पीढ़ी की विचार धाराओं का अन्तर और उनके बीच में टकराहट व्यक्ति की अहमन्यता तथा भावनाओं का संघर्ष उनके उपन्यासों की मौलिक विशेषतायें हैं ।

2.4.8.11 श्रीवास्तव जी के उत्तरोत्तर उपन्यासों में मौलिकता, नयी, पुरानी पीढ़ी का संघर्ष वर्ग भेद, ऊँच, नीच, अमीर-गरीब, शिक्षित - अशिक्षित सभी को चित्रण का विषय बनाया है। इसीलिये वह वर्मा जी से ज्यादा उपन्यास क्षेत्र में प्रसिद्ध हैं ।

2.4.9 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह

2.4.9.1 राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह प्रेमचन्द से शुरू होने वाली श्रृंखला की महत्वपूर्ण कड़ी है। इन्होंने इस श्रृंखला को मजबूत और विकसित करने में कुछ छोड़ न रखा था। राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह ने समाज की विभिन्न समस्यों का अपने साहित्य में अंकित किया। कहा भी गया कि :- "साहित्य समाज का दर्पण होता है।" जैसे दर्पण में जो चीज देखते हैं उसका प्रति-विम्ब भी ज्यों का त्यों परिलक्षित होता है। ठीक वैसा ही साहित्य में होता है। वह समाज का ज्यों का त्यों रूप चित्रित करता है। साहित्यकार की कुशलता भी इसी चीज पर निर्भर करती है। साहित्य जीवन का अनुसरण करता है लेकिन इस दृष्टि से नहीं जिस दृष्टि से इतिहास या अर्थशास्त्र जीवन का अनुसरण करता है। अगर साहित्य में अतीत की प्रेरणा और भविष्य की चेतना नहीं तो वह साहित्य नहीं हो सकता और चाहे कुछ हो, और हो क्यों न, क्योंकि साहित्य का सत्य भी तो यही है कि जो अतीत और भविष्य का सम्बन्ध स्थापित करे। श्रीवास्तव जी में ये सभी बातें थी। वह एक सजग, कुशल, सफल उपन्यासकार थे जिन्होंने उपन्यासों की दुनियां में मुक्त होकर स्वच्छन्द घूमना पसन्द किया था। परतन्त्रता उनको छू कर नहीं गयी थी। उन्होंने समाज के हर पहलू को बहुत नजदीक से देखा था। लेकिन आपने चित्रण समाज के उच्च मध्यम वर्ग का ही किया।

2.4.9.2 श्रीवास्तव जी और राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह एक ही पथ के राही थे लेकिन उनमें पर्याप्त अन्तर है। राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह और श्रीवास्तव जी ने सामाजिक समस्याओं और कुप्रथाओं एवं बाह्य आडम्बरों का यथार्थ रूप अंकित करते हुये उनका आदर्शात्मक समाधान ढूढ़ निकाला है।

राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह का वर्ण्य विषय सीमित है उन्होंने या तो आप बीती या अपने साथी संगतियों से सुनी हुई जीवन की मूल घटनाओं का ही चित्रण किया है। उन्होंने लिखा है :-

"यह है आपबीती, कहानी नहीं है ।" [1]

"राम और रहीम" उपन्यास के दो शब्द में लिखा है ।"

"प्लाट तो मुझे ढूँढना न पड़ा – एक मित्र के घर बात के सिलसिले में बात की बात में मिल गया, कल्पना के कंगूरों पर हफ्तों चक्कर काटने की जरूरत न पड़ी ।" [2]

राधा रमण प्रसाद सिंह ने कल्पना को महत्त्व नहीं दिया श्रीवास्तव जी का वर्ण्य विषय व्यापक है । उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक विषयों को लेकर ही साहित्य सृजन किया जबकि राधा रमण प्रसाद सिंह वास्तविक घटनाओं का ही चित्रण कर सके । "राम – रहीम", "संस्कार", "पुरुष"और नारी", "सूरदास", "टूटा तारा", "चुम्बन और चाँटा", "गांधी-टोपी", इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। श्रीवास्तव जी ने 20-25 उपन्यासों की रचना की है ।

2.4.9.3 दोनों ही उपन्यासकार भारतीय सभ्यता संस्कृति के समर्थक, पोषक एवं रक्षक भी हैं। साथ ही पाश्चात्य संस्कृति के कट्टर विरोधी भी हैं। पाश्चात्य संस्कृति पर तीक्ष्ण कटाक्ष व्यंग्य किये हैं। दोनों ही कथाकारों की हिन्दू धर्म में अटूट आस्था एवं विश्वास है, लेकिन उसमें फैले हुये बाह्य आडम्बरों के विरोधी भी हैं।

(विजय) में कुसुमलता मनोरमा से कहती है :-

"तुम हर एक बात में ईश्वर और ब्रह्म को घसीटकर केवल अपने कथन का खोखलापन जाहिर करती हो ईश्वर और कर्म केवल निश्चेष्ट आलसियों का अस्त्र है। ईश्वर की कल्पना ने हमें निर्वीर्य बना दिया है। ईश्वर केवल कपोल कल्पना है। हम जब तक ईश्वर में विश्वास करेंगे तब तक कभी उन्नति नहीं कर सकेंगे ।" [3]

1- "संस्कार" – राधिका रमण प्रसाद सिंह – दो शब्द – पृष्ठ – 2

2- "राम-रहीम" – राधिका रमण प्रसाद सिंह – दोशब्द – पृष्ठ – 2

3- "विजय" – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – पृष्ठ –180

और देखिए :-

"ईश्वर को तो मैं बहुत दिनों से अपने विचारों से दूर कर चुकी हूँ । तुम्हें मालूम न होगा, मैं ईश्वर और कर्म दोनों को तिलांजलि देकर अपने जीवन से विसर्जन कर चुकी हूँ । अगर तुम ईश्वर पर विश्वास करोगी तो कर्म को मानना पड़ेगा और जब कर्म मानोगी तो भाग्य भी मानना पड़ेगा इसलिये कर्म, ईश्वर, भाग्य तीनों को मैं समुद्रतल में डुबो देना चाहती हूँ । जिससे वे प्रकट होकर मनुष्य जाति का अकल्याण न करें ।"[1]

दोनों ही उपन्यासकारों की हिन्दू धर्म में आस्था थी। लेकिन किसी दूसरे धर्म का तिरस्कार या निन्दा नहीं की । इस्लाम धर्म और हिन्दू धर्म को समानता का द्योतक बताया । राधिका रमण प्रसाद सिंह जी ने बिजली वेला से "राम-रहीम" में कहती है :-

"यहाँ नाता तोड़ने का सवाल कहां है, पगली । और फिर राम और रहीम दो हैं ! वह तो एक है, और, सबका एक है। तुम मन्दिरों की राह गई या मस्जिद की, मंजिल तो एक ही है, बल्कि मंजिल ही एक नहीं, दोनों रास्ते भी एक ही तर्क के हैं, जो सिलसिला मंदिर के साये में चलता है वही मस्जिद के साये में भी जाता है ।"[2]

यही भावना श्रीवास्तव जी ने भी बयालीस में जाहिर की :-

"हिन्दू और मुसलमान एकही जिस्म के दो अंग हैं, एक ही मां के बेटे हैं। मुझे तो दोनों में कोई अन्तर नहीं दिखाई पड़ता । हिन्दू अगर सूर्य को मानते हैं, तो मुसलमान चांद को लेकिन चांद सूरज खुदा के दोनों नूर हैं ।"[3]

1- "विजय" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 180

2- राम-रहीम - राधिका रमण प्रसाद सिंह - पृष्ठ-972-973

3- बयालीस - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 217

2.4.9.4 साहित्यकार की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि उसे स्वच्छन्द, समान और स्वतन्त्र साहित्य का सृजन करना चाहिये और अगर वह किसी सीमित दायरे को लेकर साहित्य सृजन करता है तो उसका विषय सीमितएवं संकुचित नहीं होगा वरन वह असफल हो जायेगा । यह सम्भव हो सकता है कि इतिहास किसी परिस्थितियों का यथार्थ अंकन न कर सके लेकिन एक कुशल साहित्यकार देश की राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, प्राकृतिक परिस्थितियों के लिये दर्पण का कार्य करता है। साहित्य अभिव्यक्ति है जो साहित्य - कार को भूत और वर्तमान से प्राप्त होता है। इन उपन्यासकारों ने भी समाज में फैली हुयी कुप्रथाओं को खूब उठाया । स्त्री स्वतन्त्रता के दोनों ही पक्षपाती हैं । चपला कहती है :-

"मैं हर स्त्री के पास संदेश पहुँचाऊँगी -हर स्त्री को अपना मान, अपनी संभ्रान्ति, अपना गौरव, और धर्म बचाने के लिये उत्साहित करूँगी -यही संसार में मेरा काम होगा ।" [1]

इसके अलावा और देखिये :-

"नहीं, सच्ची स्त्री स्वतन्त्रता वहीं, जहाँ स्त्री पर अत्याचार न हो । स्त्री पुरूष दोनों एक होकर रहें । दोनों में मतभेद न होने पाय । x x x x x x x x x x x x x स्त्रियां इतनी स्वतन्त्र हो कि वे हर एक से मिल सकें, अपनी रक्षा कर सकें, ऊँची शिक्षा प्राप्त कर सकें । समय पड़े तो जीविका का प्रबन्ध कर सकें । "[2]

श्रीवास्तव जी ने जहाँ पर बहुत सी समस्यायें खड़ी की हैं उनमें एक अनमेल विवाह की भी है जहाँ पति पत्नी का जीवन एक अशान्ति और कलह को जन्म देता है । चपला कहती है :-

"प्रतिकार के लिये यह जरूरी है कि हम उसकी जड़ नाश करें न कि दवा देकर उस रोग को शांत करने का उपाय करें । इस अशान्ति की जड़ है, "अनमेल विवाह" ।

1- "विजय" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 163

2- "विजय" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -164

2.4.9.5 श्रीवास्तव जी ने समाज की छोटी-छोटी समस्याओं को उभारने की कोशिश की जबकि श्री राधिका रमण प्रसाद सिंह कि दृष्टि इसओर कम रही । श्रीवास्तव जी के पात्र उच्चवर्ग के, शिक्षित, सम्पन्न और सभ्य हैं। श्रीवास्तव जी सफल उपन्यासकार इसीलिये नहीं कहे जाते कि उन्होंनें समाज की विभिन्न समस्याओं को उठाया और उनका समाधान आदर्शात्मक ढूंढ निकाला वल्कि इसलिये भी कि शीर्षक के अनुकूल कथावस्तु, पात्रों का उचित चयन सम्वाद, पात्रानुकूल भाषा, नई और पुरानी परम्पराओं का संघर्ष, सुदृण शैली एवं मौलिकता, रोचकता, ने उन्हें सफल बनाया ।

श्रीवास्तव जी व राधिका रमण प्रसाद सिंह ने ज्ञान और भक्ति दोनों के समन्वित को ही ईश्वर प्राप्ति के साधन मानते है । ज्ञान श्रद्धा से प्राप्त होता है । श्रद्धा के विषय में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है:-

"श्रद्धा न्याय-बुद्धि के पलड़े पर तुली हुई एक वस्तु है जो दूसरे पलड़े पर रखें हुये श्रद्धेय के गुण, कर्म, आदि के हिसाब से होती है । श्रद्धा सत्कर्म या सद्‌गुण ही का मूल्य है जिससे और किसी प्रकार का सौदा नहीं हो सकता पर जब कि इस व्यापार युग में ज्ञान बिकता है, न्याय बिकता है, धर्म, बिकता है तब श्रद्धा ऐसे भाव क्यों न बिके । पर असली भाव तो इस लेन-देन के व्यापार के लिये उपस्थित नहीं किये जा सकते । खैर नकली सही ।"[1]

श्रद्धा से ही प्रेम उत्पन्न होता है। प्रेम के लिये तो इतना ही काफी है कि कोई भी व्यक्ति हमें शक्ल सूरत से या चाल ढाल से अच्छा लगे हम उसे प्रेम करने लगते हैं जबकि श्रद्धा में ऐसा कोई बन्धन नहीं है कोई भी व्यक्ति किसी भी तरह से सम्मान का पात्र हो वह चाहे रंग-रूप का कैसा ही क्यों न हो ।

इसीलिये शुक्ल जी ने कहा है कि :-

1- चिन्तामणि-(श्रद्धा भक्ति) -आचार्य रामचन्द शुक्ल - पृष्ठ - 47

"श्रद्धा का व्यापार स्थल विस्तृत है और प्रेम का एकान्त। प्रेम में घनत्व अधिक है और श्रद्धा में विस्तार।"[1]

"प्रेम का कारण कुछ अनिर्दिष्ट और अज्ञात होता है, श्रद्धा का निर्दिष्ट और ज्ञात होता है।"[2]

2.4.9.6 श्रीवास्तव जी का स्वर मानवतावादी है। उनके पात्र मानव धर्म की रक्षा के लिये अपना सब कुछ न्योछावर करने को तैयार रहते हैं। "विदा" में निर्मल "माँ" के अधिकारों को न मानने वाली अपनी शिक्षित पत्नी को भी उसके घर भेज देते हैं। उदाहरण एक नहीं हर उपन्यास में एक न एक पात्र के द्वारा मानव धर्म और नैतिकता की प्रतिष्ठा रखी है। श्रीवास्तव जी ने लिखा है

"सत्य धर्म तो मानव धर्म है जहाँ ऊँच-नीच का भेद नहीं है छोटे बड़े का प्रश्न नहीं, पवित्र अपवित्र की भिन्नता नहीं मानव, सबसे प्रथम मानव है, और दूसरे मानव भी उसके पूर्णतया बराबर हैं।"[3]

यही "विसर्जन" की कनक, "विदा" की चपला "विकास" के पंडित जी "बयालीस" के दिवाकर, बन्धन विहीना में "कंचन लाल" सभी मानव मात्र के हितैषी हैं।

राधिका रमण प्रसाद सिंह ने भी "राम-रहीम" में लिखा है:-

"ज्ञान विवेक है, भक्ति भाव है। ज्ञान रस है, भक्ति रस है। ज्ञान बुद्धि है, भक्ति हृदय है। ज्ञान तीर्थ है, भक्ति माधुर्य। ज्ञान तत्व है। भक्ति सत्व। ज्ञान नेम है, भक्ति क्षेम। ज्ञान चैतन्य है, भक्ति प्राण। ज्ञान सत्य की रोशनी है, भक्ति प्रेम की चाँदनी। ज्ञान प्रकाश है, भक्ति उच्छ्वास। ज्ञान सारथि कृष्ण का शंख निनाद है, भक्ति मुरली मनोहर की मुरली ध्वनि। तुम्हारे हृदय में प्रेम की मुरली हो, तुम्हारे मानस पट पर ज्ञान की तजल्ली भी, भक्ति के बिना ज्ञान वीरान है, ज्ञान के बिना भक्ति बोदी। दोनों का संगम मानव जीवन का आनन्द है।"[4]

1- चिन्ता मणि - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - पृष्ठ - 54

2- चिन्ता मणि - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - पृष्ठ - 54-55

3- बयालीस - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 117

4- राम-रहीम - राधिका रमण प्रसाद सिंह - पृष्ठ - 273

भक्ति के लिये ज्ञान होना अत्यावश्यक है। श्रीवास्तव जी और राधिका रमण प्रसाद सिंह दोनों ही ईश्वर की प्राप्ति तभी सम्भव मानते है। जब ज्ञान होगा । ज्ञान रूपी दीपक की तरह दोनो मानव अन्धकार पूर्ण रास्ते पर चलता हुआ ईश्वर को प्राप्त कर सकता है । ज्ञानहीन मानव इस रास्ते पर भटक जायेगा । श्रीवास्तव जी, श्री राधिका रमण प्रसाद सिंह की अपेक्षा अधिक सफल रहे ।

2.4.10 श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव और अन्य समकालीन उपन्यासकार

2.4.10.1 जैनेन्द्र कुमार

प्रेमचन्द के उपरान्त हमारी औपन्यासिक मान्यताओं में पर्याप्त अन्तर आ गया था । इससे भिन्न और भी कई-कई विचारधारों ने उपन्यास के क्षेत्र में प्रवेश कर इसे अधिक व्यापकता प्रदान की । इस परम्परा के लेखकों में जैनेन्द्र, अज्ञेय, जोशी के उपन्यास सफल और सुन्दर बन पड़े ।लेकिन इन उपन्यासकारों की कृतियां ठीक वैसी ही रही जैसे निर्जीव सुन्दरता की कोई उपयोगिता नहीं होती है। अगर हम ये कहें कि प्रेमचन्द के वाद और आजादी से पूर्व यानी दस वर्ष में जो रचनायें रची गई उनसे उपन्यास साहित्य का अहित ही हुआ हित नहीं । क्योंकि इनमें जीवन की विविध पक्षों का पूर्णता अभाव था। इनमें तो सिर्फ मनोवैज्ञानिक यथार्थ एवं मानसिक कुण्ठावाद का ही वाहुल्य था । प्रेमचन्द और उनके अनुगत कर्ताओं ने व्यक्ति कोसामाजिक ईकाई वल्कि उसे स्वयं में स्वतन्त्र ईकाई माना है । लेकिन मनोवैज्ञानिक कथाकार यथार्थवादी दृष्टिकोण के विरुद्ध व्यक्ति हो स्वयं एक ईकाई मानकर चले और उनका "व्यक्ति" समाज से दूर होता चला गया । मनोवैज्ञानिक यथार्थ वादी लेखकों में जैनेन्द्र, इलाचन्द जोशी, अज्ञेय आदि प्रमुख हैं ।

2.4.10.1.1 प्रेमचन्द, भगवतीचरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, सियाराम शरण गुप्त आदि में प्रतापनारायण श्रीवास्तव के अधिक समासीन थे । इनके अतिरिक्त भी कुछ नये ऐसे उपन्यासकार हुयेहैं,जिन्होंने भिन्न-भिन्न प्रकृतियों को लेकर साहित्य सृजन किया उनमें जैनेन्द्र, इलाचन्द जोशी, अज्ञेय , यशपाल, रांगेय राघव, फणीश्वर नाथ रेणु , गोविन्द वल्लभ पन्त, राहुल सांकृत्यायन, रामरतन भटनागर, अमृत लाल नागर, राज बहादुर सिंह, प्यारेलाल एवं बाल्मीकि, उपेन्द्र नाथ अश्क आदि ।

आजादी के बाद नई चेतना ने पुराने और नये खेवे के अनेक उपन्यासकारों को इस मोहजाल से निकालकर पुनः स्वस्थ मार्ग पर डाल दिया। प्रेमचन्द द्वारा लगाये गये इस पौधे में अब अनेक शाखायें फूट पड़ी थी ।

प्रेमचन्द के बाद जैनेन्द्र की खूब चर्चा रही । प्रेमचन्द के परवर्ती उपन्यास साहित्य के बारे में प्रकाश चन्द्र गुप्त ने लिखा है :-

"प्रेमचन्द की किसान-परम्परा को तजकर हिन्दी उपन्यास नई शाखाओं में बढ़ा-तत्व और रूप-दोनों की दृष्टि से एक धारा निम्न मध्यमवर्ग के जीवन, उसकी निराशाओं और सफलताओं को अपनाती है । इसके प्रमुख परिचायक जैनेन्द्र, भगवती प्रसाद वाजपेयी, अश्क आदि हैं। दूसरी धारा व्यक्ति धारा व्यक्तिवादी, अहंवादी, नाशवादी दृष्टि कोण को अपनाती है । इसके प्रतिनिधि - भगवती चरण वर्मा, अज्ञेय आदि हैं। एक धारा मनोविश्लेषण शास्त्र के प्रभाव में कुण्ठित अतृप्त वासनाओं की अभिव्यक्ति करती है । इसके प्रमुख प्रतिनिधि - इलाचन्द्र जोशी रहे है। एक अन्य धारा भारतीय श्रमजीवी वर्ग की अग्रगामी शक्तियों से सम्बन्ध जोड़ती है और भविष्य की धरती को संजोती है। इसमेंप्रमुख-प्रतिनिधि यशपाल, रांगेय राघव, पहाड़ी भगवत्त चरण उपाध्याय, नागार्जुन, अमृत लाल नागर आदि हैं ।"

2.4.10.1.2 जैनेन्द्र ने "सुखदा", "विवर्त","त्यागपत्र", तथा "व्यतीत" और "जयदोल" नामक उपन्यास लिखकर पुरानी परम्परा से ही चिपके रहे इनके इन उपन्यासों में कोई नवीनता नहीं है । जैनेन्द्र के बाद में प्रकाशित उपन्यास "मुक्तिबोध" पर साहित्य अकादमी ने 5 हजार रूपये का पुरस्कार प्रदान किया है । इस उपन्यास को जैनेन्द्र भी अपनी सर्वोत्कृष्ट रचना नहीं मानतेहैं। इन्होंने उपन्यास को सामाजिक सन्दर्भो से हटाकर व्यैक्तिक बना दिया ।

जैनेन्द्र के अनुसार उपन्यास का उद्देश्य :-

"मेरे ख्याल में उपन्यास में न व्यक्ति चाहिये, न टाइप न नीति चाहिये, न राजनीति । न सुधार, न स्वराज । उससे तो प्रेम की सघन व्यथा की मांग ही हो सकती है। और वह प्रेम इस या उसमें नहीं है, वल्कि इस उसकी परस्परता ही में है।" [1]

श्रीवास्तव जी आदर्शवादी लेखक थे । वह उपन्यास का उद्देश्य यथार्थ का आदर्शात्मक चित्रण ही ~~उपन्यास का उद्देश्य है~~ । वह चाहते थे कि ऐसे उपन्यासों का सृजन किया जाय जिससे समाज में व्याप्त वाह्य आडम्बरों से ~~समाज~~ हट कर चेतना-मय नवीन युग में प्रवेश करे । इसीलिये उन्होंने अपने उपन्यासों में समाज के हर पहलू को चाहे वह पति-पत्नी सम्बन्ध हो,

---

1-साहित्य का श्रेय और प्रेम - जैनेन्द्र कुमार - पृष्ठ - 109

नौकर, मालिक के सम्बन्ध, अमीर-गरीब, प्रेम प्रसंग हों, बाल विवाह या विधवा विवाह या अनमेल विवाह की समस्या हो आदि को अपना वर्णन विषय बनाकर समाज का हित किया उनके साहित्य का मूल उद्देश्य समाज का हित था जीने को तो सभी जी लेते हैं पशु, पक्षी, कीट, पतंगे लेकिन ऐसे जीने से कोई फायदा नहीं सही जीवन तो वही है जो समाज को साथ लेकर उसका हित करते हुये अथार्थ मानव धर्म को लकर ~~जिये उसी का जीवन सार्थक है~~ ।

2.4.10.1.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने भले ही उच्च मध्यम वर्ग का जो सभ्य, शिक्षित, सर्वगुण सम्पन्न हैं लेकिन यत्र-तत्र निम्न वर्ग या मध्यम वर्ग का चित्रण किया है ~~वह भी अपने में पूर्ण सफल है~~ । जबकि श्री जैनेन्द्र जी ऐसा न कर सके उन्होंने तो सिर्फ शिक्षित मध्यम वर्ग को ही चुना और उसे चित्रण करने में पूर्ण सफल भी रहे हैं, दोनों ही लेखकों की शैली और दृष्टिकोण दोनों में पर्याप्त अन्तर है।

श्रीवास्तव जी ने नारी स्वतन्त्रता, समानाधिकार, स्वतन्त्र एवं स्वच्छन्द विचरण के पक्षपाती हैं। अनमेल विवाह, बाल-विवाह और विधवा विवाह के विरोधी हैं। उनके नारी पात्र शिक्षित हैं। वह पति-पत्नी के शुद्ध प्रेम को ही दाम्पत्ति सुख मानते हैं । शुद्ध प्रेम वही होता है, जिसमें किसी तरह का स्वार्थ निहित न हो । स्वार्थ निहित प्रेम या वासनामय प्रेम को शुद्ध प्रेम नहीं कहा जा सकता :-

"विवाह की इच्छा स्वार्थ है, इसलिये वह प्रेम पाप है। अगर उसका निस्वार्थ प्रेम है, तो वह कभी विवाह की इच्छा नहीं करेगी । एक रूप से एक भाव से, निरन्तर प्यार करती रहेगी, और उसी प्रेम में अपना जीवन उत्सर्ग कर देगी ।" [1]

इतना ही नहीं स्वार्थ रहित प्रेम और भी बढ़कर लेखक स्वीकार करता है :-

---

1- "विदा" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 233

"निष्काम प्रेम भक्ति है। मैं आपकी भक्ति करती हूँ। जिस भक्ति से पुजारी अपने भगवान की पूजा करता है, उसी भक्ति से, बल्कि उससे भी अधिक भक्ति से, मैं तुम्हारी पूजा करती हूँ। पुजारी मूर्ति को नहीं भगवान की शक्ति को पूजता है। मुझे तुम्हारे शरीर से प्रेम नहीं, मैं तो तुम्हारी पूजा करती हूँ। मेरा हृदय तुम्हारे हृदय का दास है। यह प्रेम दो आत्माओं का प्रेम है, दोशरीर का नहीं।"[1]

2.4.10.1.4 शुद्ध प्रेम में शारीरिक मिलन का अभाव रहता और आत्मिक मिलन की आकांक्षा, स्वार्थ का त्याग एवं पवित्रता एवं आदर्श मूल होता है। इतिहास इसका साक्षी है कि आज तक शुद्ध प्रेम करने वालों ने कभी शरीर के मिलन को महत्व नहीं दिया वह चाहे लैला मंजनू हो या हीर राँझा, गार्गी आदि सभी इसके प्रमाण हैं।

2.4.10.1.5 जैनेन्द्र जी और श्रीवास्तव जी की मूल मान्यताओं में भी पर्याप्त अन्तर है। जैनेन्द्र जी ने मानव मन की कुण्ठाओं, दमित वासनाओं सैक्स और प्रेम का चित्रण स्पष्ट रूप से विस्तार पूर्वक किया है। और ऐसा लगता है कि इनके पति-पत्नी आपस में मतैक्य नहीं है इसका उदाहरण "सुनीता" "सुखदा", "विवर्त" और व्यतीत कथावस्तु का अवलोकन करने से पता चलता है। जैनेन्द्र जी लिखते हैं :-

"स्त्री पुरूष के बीच एक ही सम्बन्ध है, विवाह ? क्या दूसरा कोई सहयोग सम्भव नहीं ? जो साथ रहे, परस्पर विवाहित ही हों ? मैत्री, सहानुभूति, करूणा क्या इस तरह के सात्विक सम्बन्धों को आप समाज में सम्भव न बनने देंगे ? स्त्री पुरूष के बीच क्या सब सम्बन्ध शारीरिक मान लिया जायेगा और इसको आप श्रेष्ठ और उपादेय मानेंगे ?"[2]

1- "विदा" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ -324

2- "जयवर्धन" - जैनेन्द्र कुमार -पृष्ठ - 76

जैनेन्द्र ने एक नारी का सम्बन्ध दो पुरुषों से किया है, एक पति रूप में तो दूसरा सहयोगी रूप में । अगर हम यह कहेंगे, कि पति-पत्नी को चित्रित करना एवं उनके उद्देश्यों को समझने के कारण ही इनका वर्ण्य विषय सीमित एवं संकुचित हो गया है, । जबकि श्रीवास्तव जी का वर्ण्य विषय विस्तृत एवं मौलिक है । फिर भी दोनों लेखकों का अपने-अपने स्थान पर महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

2.4.10.2 उपेन्द्र नाथ अश्क

2.4.10.2.1 उपेन्द्रनाथ अश्क ने मध्यम वर्ग में व्याप्त तमाम कुण्ठाओं और आडम्बरों का चित्रण करते हुये सुन्दर सामाजिक उपन्यास लिखे हैं। जिनमें सामाजिक यथार्थवाद की पृष्ठ भूमि पर निराशा का सृजन ही अधिक हुआ है। इनके प्रमुख उपन्यासों में "गिरती दीवारें", "बड़ी - बड़ी आँखें," "गर्म राख" प्रमुख हैं। इनका "गर्म राख" अपने समय का बहुचर्चित उपन्यास था।

2.4.10.2.2 श्रीवास्तव जी ने भी यद्यपि उच्च मध्यम वर्ग का चित्रण किया और उसमें व्याप्त समस्याओं को उभारा लेकिन उन्हें कहीं निराशा हाथ न लगी। यद्यपि उन्होंने 20 - 25 उपन्यासों का सृजन किया लेकिन प्रकाशित 10-11 ही मिलते हैं लेकिन वह सब के सब प्रसिद्ध हैं। उनमें कुछ अप्रकाशित और कुछ अप्राप्य हैं।

अश्क जी के उपन्यासों में जीवन में उल्लास, खुशी एवं जागरण की भावना उत्पन्न करने की शक्ति नहीं है। इनका संघर्ष भी प्रभाव हीन सा बनकर रह जाता है। जबकि श्रीवास्तव जी के उपन्यासों में जीवन के प्रति जागरण, मनुष्य के प्रति प्रेम, दया और अवसाद और कुण्ठाओं से अलगाव उत्पन्न करते हैं।

2.4.10.3 इलाचन्द्र जोशी

=================

2.4.10.3.1 इसकाल में हिन्दी उपन्यास ने आशातीत उन्नति की नये और पुराने दोनों ही उपन्यासकारों ने सामाजिक क्षेत्र में साहित्य की इस विधा को आगे बढ़ाया । कुछ उपन्यासकार जो प्रेमचन्द युग से ही सृजन करते आ रहे थे वे इस युग में भी उसी गति से क्रियाशील हैं । जिनमें वृन्दावन लाल वर्मा, इलाचन्द्र जोशी, चतुरसेन शास्त्री, भगवती प्रसाद वाजपेयी, भगवती चरण वर्मा, जैनेन्द्र, अज्ञेय, अमृत लाल नागर, अश्क, यशपाल आदि प्रमुख हैं ।

2.4.10.3.2 इलाचन्द्र जोशी जी के नये उपन्यासों में -"मुक्तिपथ", "जिप्सी", "सुबह के फूल", तथा "जहाज का पंछी" आदि हैं । एक बात है कि जोशी जी के नये और पुराने उपन्यासों में पर्याप्त अन्तर दिखाई पड़ता है।

जोशी जी उत्तरोत्तर सामाजिक यथार्थवाद की ओर उन्मुख होते गये । हालांकि वह मानोवैज्ञानिक यथार्थवादी के रूप में प्रसिद्ध हैं। जोशी जी के"सुबह के फूल" और "जहाज का पंछी " में मानसिक कुण्ठावाद का प्रभाव बहुत कम है । इनका "जहाज का पंछी" उपन्यास बहुचर्चित रहा।

2.4.10.3.3 जोशी जी का विचार है कि घटनाओं के मूल में मानव की वाह्य परिस्थितियों का उतना सहयोग नहीं जितना आन्तरिक परिस्थि-तियों का उनका कथन है :-

"मेरा यह ध्रुव निश्चित विश्वास है कि व्यक्तियों के अर्न्तजीवन के स्वरूप ही सामूहिक वाह्य जीवन के रूपकों के रूपों में, विश्वव्यापी, राष्ट्रीय, अन्तर-राष्ट्रीय, आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों के प्रतीक बनकर प्रकट रहते हैं। सभी प्रकार के जीवन-चक्रों का मूल परिचारिका शक्ति है, विश्व मानव की सामूहिक चेतना ।"[1]

1- प्रेत और छाया - इलाचन्द्र जोशी - प्रस्तावना - पृष्ठ - 5

2.4.10.3.4 जोशी जी ने भी प्रेम जीवन का मूल है प्रेम रहित जीवन सिर्फ एक मशीन मात्र है । जोशी जी ने मनुष्य के अन्तः जगत की क्रिया कलापों को ही अपने उपन्यासों में चित्रित किया है अपेक्षा वाह्य घटनाओं के । इसका मतलब यह नहीं कि दूसरे विषयों परउनका अधिकार ही नथा । जोशी जी पर मार्क्सवाद प्रभाव था सम्भवतः क्योंकि उनके पात्र अपने रोगी होने की पुष्टि करते है मतलब यह कि वह आर्थिक संकट की पुष्टि करते हैं ।

2.4.10.3.5 श्रीवास्तव जी ने समस्याओं का वर्णन ही व्यवहारिक आधार पर करते हुये उनका समाधान आदर्शात्मक ढूँढ निकाला है। यद्यपि उन्होंने भी सैक्स, प्रेम, काम आदि का वर्णन किया लेकिन मर्यादाओं का पालन करते हुये । जब कि जोशी जी सैक्स, प्रेम, वासना, काम आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है ।

जोशी जी ने लिखा है :-

"सामूहिक हित के लिये मनुष्य को अपनेव्यक्तिगत सुख-दुख और राग-विराग की भावनाओं को विश्व व्यवस्था की एक विशेष स्थिति के स्थापित हो जाने तक तिलांजलि देनी ही होगी ।"[1]

जोशी जी की सफलता उनके अर्न्तवृतियों के चित्रण में, पात्रों के आन्तरिक विश्लेषण में, पात्रों के चयन में, घटनाओं के क्रम में एवं सम्वाद के संक्षिपीकरण में है । श्रीवास्तव जी जोशी जी की अपेक्षा अधिक सफल उपन्यासकार हैं। लेकिन दोनों ही अपनी-अपनी जगह महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

1- मुक्तिपथ - इलाचन्द्र जोशी - पृष्ठ - 407

2.4.10.4 अज्ञेय

===========

2.4.10.4.1 आज का युग विज्ञान युग है। विज्ञान ही की एक शाखा मनोविज्ञान है, जिससे उपन्यास साहित्य भी अछूता न रहा। इस प्रवृत्ति के लेखकों में जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय प्रमुख हैं। इन लेखकों ने मानव के वाह्य क्रिया कलापों की अपेक्षा मानव मन की अन्त: प्रवृत्तियों के चित्रण को अधिक महत्व दिया। दूसरी तरह हम यह कह सकते हैं इस प्रकार के लेखकों ने मानव मन में निहित उन कुण्ठाओं का चित्रण किया जो व्यक्ति के जीवन में विविध रूपों में प्रकट होती हैं। जैनेन्द्र व अज्ञेय जी इसी प्रकार के लेखक हैं। लेकिन इन में भी अन्तर है। "जैनेन्द्र के चरित्र निर्माण के मूल में गेस्टाल्ट- मनो- - विज्ञान काम करता है। यद्यपि "अज्ञेय" जी के चरित्र-चित्रण का आधार भी मनोविज्ञान ही है, लेकिन दोनों में अन्तर है। वह यह कि जहां जैनेन्द्र जी के प्रधान चरित्र विचित्र दीखते हुये भी अहंवादी नहीं है, वहाँ "अज्ञेय" जी के चरित्र घोर अहं से पूर्ण -पूर्ण हैं।" [1]

इसके उदाहरण हैं शेखर एक जीवनी, नदी के दीप।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में परिवेश - मंडल का वह रूप नहीं मिलता जो सामान्य या यथार्थवादी उपन्यासों में मिलता। इन उपन्या- - सों में मुक्त विचारों एवं स्थूल वस्तुत्वों का बहुत कम वर्णन होता है। " "अज्ञेय" जी ने कई उपन्यास लिखे लेकिन "नदी के दीप", "अपने अपने अजनबी", शेखर एक जीवनी में काफी साम्य है।

2.4.10.4.2 "अज्ञेय" जी के "शेखर एक जीवनी" में शेखर जेल की को- ठरी में फांसी की प्रतीक्षा में बैठे शेखर के मन में उठी भावनायें बिल्कुल स्मृत्या- - लोक पर आधारित जो असंबद्ध एवं कार्य कारण श्रृंखला रहित हैं। उसका चेतना प्रवाह जीवन की सम्पूर्ण घटनाओं में प्रवाहित होने लगता है। सच है जब हम एकान्त में रहते हैं तो मन में अनेक विचार और भावनायें उमड़ती रहती है, और यह भी आवश्यक नहीं कि यह किसी भावावेश या मानसिक विकृति या अन्य प्रकार के दबाव से ही उठें।

1- देवराज उपाध्याय - हिन्दीकथा साहित्य और मनोविज्ञान

शेखर एक जीवनी में शेखर कहता है :-

"चांद निकल रहा है। नाव की गति से नदी पर उठी हुई छोटी- छोटी मछलियां चांदनी में चमक कर परे हट जाती हैं मानों बुला रही हों । सतह के नीचे भी छोटी-छोटी बिजली से मचकने वाली मछलियां इधर उधर भागकर मानों हरी आग से कुछ लिखती जाती हैं । उनके भागने से आलोडित पानी भी किसी प्रकाश से चमक उठता है, मानों उसमें भी वही हरी आग लगी हुई है। xxxxxxxxxxxxxxxxनाव भी चांदनी में घुल सी गयी है और आलोक में मानों उसकी गति और भी शब्दहीन हो गयी । गर्मी के कारण मल्लाह भी चुप है xxxxxxxxरहस्य xxxxxxxx रहस्य xxxxxxx रहस्य शेखर धीरे धीरे अपने आप में से निकलने लगता है, खुलने लगता है । इस व्यस्त रहस्यमय मौन से मिलकर स्वस्थ होने लगता है xxxxxxxx होस्टल के लड़के , कालेज की लड़कियां, शहर के लोग सब उसकी चेतना में मिटने लगते हैं। उनके द्वारा पाये हुये आघात, घाव, इस स्वच्छ चांदनी में घुलने लगते हैं xxxxxx xxxxउसकी बांह थक रही है, वह हाथ की बजाय अपनी गर्दन लटका कर और पैर छत के सिरे में बंधी हुई एक रस्सी की गांठ में अटकाकर सीधा -सीधा लेट जाता है और पाता है कि वह फिसलता नहीं लेट सकता है xxxxxxx थकान उसे आती है, बड़ी मीठी थकान, पर मस्तिष्क उसका भरा आ रहा है, उन स्कूल के बच्चों, उनकी मुग्ध दृष्टि से, इस चांदनी से, और आज न जाने क्यों शारदा के ध्यान से भी xxxxxxx शारदा को देखे दो-वर्ष हो गये, न जाने वह है कहां, शेखर ने याद नहीं किया, लेकिन आज इतने दिन बाद, इतनी कलह और कटुता के बाद इस एक स्वच्छ, शान्त , स्नेह भरे क्षण में वह इस सारे रहस्य का हिस्सा बनकर आयी है शारदा xxxxxxxxxxxxxx थकान xxxxxxxxxxxxxxx चांदनी xxxxxxxxxxx शारदा ।" [1]

1- अज्ञेय - शेखर एक जीवनी {प्रथम भाग} - पृष्ठ -128 पंचम संस्करण

2.4.10.4.3 अज्ञेय जी ने एक ओर तो अपने उपन्यासों में पात्रों के क्रिया कलापों एवं मनस्थितियों का मनोवैज्ञानिक भाव भूमि पर चित्रण किया तथा दूसरी ओर असमान्य पात्रों की सृष्टि करके उनके अचेतन में स्थित मानसिक कुण्ठाओं एवं मनोव्याधियों का चित्रण किया । अज्ञेय जी के उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक यथार्थ देखने को मिलता है। इसका उदाहरण है उनका "शेखर एक जीवनी"।

मनोवैज्ञानिक फ्रायड का कहना है कि :-

"बचपन में ही मनुष्य के व्यक्तित्व का सारा ढांचा तैयार हो जाता है । यदि बचपन में किसी प्रकार की मानसिक ग्रन्थियां बन जाती हैं, तो वे आगे जाकर व्यक्तित्व का अंश हो जाती है और उनका निवारण बड़ी कठिनाई से हो पाता है ।"

अज्ञेय जी ने इसी दृष्टि को लेकर शेखर एक जीवनी उपन्यास का प्रणयन किया । अज्ञेय जी ने उपन्यास के प्रथम भाग "उषा और ईश्वर" में अहंता, भय और सेक्स का वर्णन किया । उपन्यास के नायक शेखर को इन तीनों प्रवृत्तियों ने कैसे प्रभावित किया यह दिखाया गया है ।

2.4.10.4.4 बचपन में मां-बाप के कठोर नियंत्रण के कारण शेखर का अहं इतना तीव्र हो गया कि वह अपने यौवनकाल में भी अहंवादी और विद्रोही बना रहा । और धीरे-धीरे यह अहं उसके जीवन का अंग बन गया । भयका प्रादुर्भाव शेखर के अन्दर जब होता है तब वह अजायब घर में चमड़े के अन्दर घास फूस से भरे नकली बाघ को देखकर जाता है। सेक्स का उत्पन्न भी मनोवैज्ञानिक ढंग से हुआ ।

शेखर का शीला, शारदा, शशि एवं सरस्वती से आशक्त होना और नौकरानी की नंगी पीठ पर बैठकर उल्लासित होना इन सबके मूल में सेक्स की प्रवृत्ति ही है ।

2.4.10.4.5 इसके अलावा 49 वें पृष्ठ पर भी अहम, भय और सेक्स की व्याख्या की है। यौवनावस्था में सेक्स की ओर उन्मुख होना, कालेज -जीवन में अन्ध विश्वासों का विद्रोह, सभ्यता की आड़ में व्यभिचारी प्रवृति, एम. ए. की पढ़ाई छोड़कर कांग्रेसी स्वयं सेवक होना, जेल के विभिन्न अनुभव ,

परित्यक्ता शशि के साथ जीवन यापन और शशि की मृत्यु आदिमें मनः स्थितियों का वर्णन किया है।

हिन्दी उपन्यास परम्परा में उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द के बाद तीन प्रवृत्तियों को लेकर उपन्यासों का सृजन किया गया । उनमें प्रकृतिवादी उपन्यास परम्परा को "उग्र" जी ने, समाजवादी यथार्थवादी उपन्यास की परम्परा को यशपाल और राहुल सांकृत्यायन ने, तथा मनोवैज्ञानिक उपन्यास परम्परा को जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी और अज्ञेय ने अपनाया ।

2.4.10.4.6 श्रीवास्तव जी ने आदर्शवादी यथार्थ का ही चित्रण किया है। उन्होंने प्रेमचन्द द्वारा प्रवर्तित परम्परा का पूर्ण और सफल चित्रण किया । अज्ञेय जी के उपन्यासों का अध्ययन करने पर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि वे व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं । और श्रीवास्तव जी समाजवादी "नदी का दीप" भी व्यक्तिवादी उपन्यास है सामाजिक बन्धनों की शिथिलता सीमा रहित होकर मानव को उच्छृंखल बनाकर घृणित वासना की आग में झोंक देने की भावना आदि का चित्रण इस उपन्यास में हुआ है ।"[1]

घटनाओं के चयन एवं जीवन दर्शन के प्रति दृष्टिकोण में भी यद्यपि अन्तर है । फिर भी दोनों ही उपन्यासकार अपने - अपने वर्ण्य विषय में सफल रहे । दोनों ही उपन्यासकारों ने उपन्यास साहित्य भंडार में वृद्धि की और उनकी इस अक्षय वृद्धि के लिये उपन्यास साहित्य ही नहीं हिन्दी साहित्य भी चिर ऋणी रहेगा ।

1- नदी के दीप -अज्ञेय - पृष्ठ - 309-313

2.4.10.5 यशपाल

=============

2.4.10.5.1 मार्क्सवादी उपन्यासकारों में यशपाल, राहुल सांकृत्यायन कृष्ण चन्द्र, नागार्जुन, डा० रांगेय राघव आदि का नाम लिया जाता है। इस विचार धारा के लेखकों का नेता यशपाल जी को ही माना जा सकता है। यशपाल साम्यवादी धारा से प्रभावित हैं इसको वह स्वयं स्वीकार करते हैं :-

" साहित्य और कला के प्रेमियों को मेरे प्रति शिकायत है कि कला को गौण और प्रचार को प्रमुख स्थान देता हूँ। मेरे प्रति दिये गये फैसले के विरुद्ध मुझे अपील नहीं करनी है। संतोष है, अपना अभिप्राय स्पष्ट कर पाता हूँ।"[1]

यशपाल ने "मनुष्य के रूप", "दिव्या", "अमिता", "झूठा सच" आदि प्रसिद्ध उपन्यास लिखे जो उनके "दादा कामरेड", "देश द्रोही" की परम्परा से हट गये हैं। यशपाल मार्क्सवादी तो थे ही साथ ही साथ फ्राइड का भी उनके ऊपर काफी प्रभाव है। उनके जिन उपन्यासों में साम्यवादी धारा से प्रभावित नहीं है उनमें मार्मिक व्यंग्यों का वर्णन देखते ही बनता है। यशपाल जी ने "दिव्या" (1945) और "अमिता" (1956) ऐतिहासिक उपन्यासों में आधुनिक साम्यवादी विचार धारा का वर्णन "दादा कामरेड" में क्रान्तिकारियों की गतिविधियों एवं साम्यवादियों द्वारा हड़तालों का आयोजन "देश द्रोही" में साम्यवादियों एवं कांग्रेसी कार्यकर्ताओं की गतिविधियों का चित्रण "मनुष्य के रूप" में आजाद हिन्द फौज का गठन, अंग्रेजों के अत्याचार, भारतीय राजनीतिक दलों की गतिविधियाँ आदि "झूठा सच में" भारत विभाजन एवं स्वतन्त्रता की घटनाओं का विस्तृत चित्रण है।

"काल्पनिक चित्र के ऐतिहासिक वातावरण के आधार पर यथार्थ का रंग देने का प्रयत्न किया है।"[2]

1- दादा कामरेड = "भूमिका" - यशपाल - पृष्ठ - 5

2- दिव्या - "प्राक्कथन" - यशपाल - पृष्ठ -5

यशपाल के उपन्यासों में एक प्रवृत्ति दिखायी देती है कि राजनैतिक उपन्यास जहाँ दुखान्त होते है वहीं ऐतिहासिक उपन्यास दुखान्त हैं।

"झूठा सच" का एक पात्र कहता है :-

"जनता निर्जीव नहीं है । जनता सदा मूक भी नहीं रहती देश का भविष्य नेताओं और मंत्रियों की मुट्ठी में नहीं है, देश की जनता के हाथ में है ।" [1]

यशपाल जी ने भी मध्यम वर्ग को ही अपने उपन्यास साहित्य का विषय बनाया और उसमें व्याप्त संघर्षों कुरीतियों, पाखण्डों का यथार्थ चित्रण किया है । इनके वर्णन कहीं-कहीं अश्लील हो गये हैं। समाज को शोषण से मुक्त कराना, प्रगति के रास्ते पर लाना, अन्धविश्वास और रूढ़िवादिता को नष्ट करना इनका मुख्य उद्देश्य रहा है। सामाजिक असमानता का, वैमनस्यता का, शोषण और पूँजीवाद का विरोध किया । कांग्रेसी कार्यकर्ताओं पर व्यंग्य करते हुये साम्यवादियों को सहानुभूति प्रदान की ।

यशपाल जी आदर्श प्रेम के पक्षपाती हैं । उनका विचार है कि आदर्श प्रेम त्याग पर आधारित होता है "अमिता" में युवरानी अमिता ममतामयी नारी है ; एवं आदर्श प्रेमिका भी है वह अपने प्रेमी को कंगन गिरवी रखकर दासता से मुक्त कराना चाहती है इस प्रेम के लिये दण्ड से दण्डित भी होती है ।

"अमिता" में महारानी अमिता का स्नेह एवं प्राणि मात्र के हित की भावना अशोक को युद्ध से विरत रहने के लिये बाध्य कर देती है। अशोक कहते हैं :-

"कलिंग की महारानी, मगध का विजयी सम्राट हार गया तुमने विजय पा ली xxxxxxxxx सम्राट अशोक प्रतिज्ञा करता है। वह किसी से छीनेगा नहीं, किसी को डरावेगा नहीं, किसी को मारेगा नहीं । अब अशोक हिंसा और युद्ध से विजय की कामना नहीं करेगा।वह कलिंग की विजय महारानी की भाँति निश्छल प्रेम से संसार के हृदयों को विजय करेगा ।"[2]

1- "झूठा सच" - यशपाल - पृष्ठ - 69

2- अमिता - यशपाल - पृष्ठ - 43

2.4.10.5.2 यशपाल के उपन्यासों में नारी के प्रति भौतिकतावादी दृष्टिकोण अपनाया गया है। प्रेम के सम्बन्ध में उनका कथन है :-

"और सब चीजों की तरह जीवन में प्रेम की गति भी द्वन्द्वात्मक है, प्रेम जीवन की सफलता और सहायता के लिये है ।"[1]

झूठा सच में जयदेव सोचता है :-

"मेरे लिये विवाह का मतलब केवल शारीरिक सम्बन्ध नहीं है वह लड़की तो प्रबल शारीरिक आकर्षण के अतिरिक्त और कुछ है नहीं। कैसे गले पड़ गई ।"[2]

यशपाल के उपन्यासों के कथोपकथन लम्बे-लम्बे एवं नीरसता पैदा करने वाले हैं :-

"यदि दरिद्रनारायण के सेवक, भंगी कालोनी में रहना चाहते वाले, केवल एक वस्त्र पहनने वाले, शास्त्रों और सैनिक शक्ति का विरोध करने वाले गान्धी के प्रादर्शन की अनुमति नहीं दे सकते थे । गान्धी जी को तो कैदी बनाकर आगा खां के महल में रखा जानापसंद नहीं था । उनकी वाणी बन्द होते ही उन लोगों ने उन्हें महलों में पहुँचा दिया ।"[3]

लेकिन व्यंग्य विनोद से भरपूर कथोपकथन बड़े सजीव बन पड़े हैं । पुराने रीति-रिवाजों का भी विरोध किया है :-

"यह छोटे - छोटे रीति रिवाज और विश्वास हम लोगों को किस प्रकार एक दूसरे से पृथक किये हुये हैं। क्या उन्हें निवाहते जाना ही परम्परा की रक्षा है ।"[4]

1- मनुष्य के रूप - यशपाल - पृष्ठ - 96

2- झूठा सच- "भाग - एक " - यशपाल - पृष्ठ - 39

3- झूठा सच - यशपाल - पृष्ठ - 73

4- झूठा सच - यशपाल - पृष्ठ - 79

2.4.10.5.3 यशपाल जी सामाजिक व्यवस्था के यथार्थपूर्ण अंकन करने में भी सफल रहे है :-

"जैसे ईटों के बिना इमारत नहीं बन सकती, उसी तरह विना व्यक्तियों के समाज भी नहीं बन सकता । समाज अपनी रक्षा या व्य - क्तियों के विकास के लिये ही व्यवस्था करता है, परन्तु मनुष्य के जीवन में परिवर्तन आ जाता है, उसकी आवश्यकतायें बदल जाती हैंऔर पुरानी व्यव- स्था के जो रूकावट अनुभव होने लगती है जैसे बचपन में कोई कपड़ा शरीर पर सीं दिया जाये तो उम्र बढ़ने पर दम घोटने लगेगा वही हालत हमारी सामा- जिक व्यवस्थाओं की भी है ।"[1]

"झूठा सच" 1942 - 1950 के बीच की लम्बी अवधि की समस्त राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों को अपने ~~समुन्नन~~ किये हुये है। प्रेमचन्द जी के गोदान के बाद हिन्दी साहित्य में यशपाल जी के लोकप्रिय उपन्यास "झूठा-सच" का द्वितीय स्थान है। यह यशपाल की सर्वश्रेष्ठ कृति है। यशपाल जी भाषा शैली की दृष्टि से भी सफल रहे हैं यत्र-तत्र उन्होंने चित्रोंयम भाषा का भी सुन्दर प्रयोग किया हुआ है। उपमा का एक सुन्दर प्रयोग देखि- ये :-

"पुरी समझ गया । उसका दम घुट रहा था। पंडित जी की शिष्टता और अपने मन में लिपटे हुये शब्द उसके कपाल पर नमदे में लिपटे हुये हथौड़े की तरह पड़ रहे थे ।"और भाषानुकूल शैली भी बन पड़ी है ।

2.4.10.5.4 युँद्ध की समस्या को युद्ध द्वारा नहीं । इसके लिये गांधी के अहिंसा के सिद्धान्तों की आवश्यकता है, भाई चारे की वसुधैव्य कुटम्बकय, समानता आदि की । यशपाल जी का कथन है :-

"हिंसा और दमन द्वारा अहिंसा की स्थापना सबसे बड़ी हिंसा है।"

इसके अलावा अमिता उपन्यास के प्राक्कथन में उन्होंने कहा है :-

1- दादा कामरेड - यशपाल - पृष्ठ - 5 -56

"जीवन में समृद्धि और सन्तोष पाने का मार्ग अपनी शक्ति को उत्पादन में लगाना है, दूसरों को डराकर और मारकर छीन लेने की इच्छा करना नहीं है। "अमिता" में अमिता के माध्यम से बार-बार उन्होंने इन्हीं सिद्धान्तों का प्रतिपादन कराया है :-

"किसी से छीनों मत , किसी को डराओं मत और किसी को मारो मत ।"

सच तो यही कि यशपाल जी ने पात्रों के व्यक्तित्व में अगर एक ओर सरसताऔर सजीवता ला दी है तो दूसरी ओर गम्भीरता और गहनता भी ।"

2.4.10.5.5 हिंसा पर अहिंसा की विजय, विश्व कल्याण की भावना का प्रतिपादन, बालजीवन की महत्ता, त्याग की महत्ता, मोक्ष की महत्ता भावनाओं और कर्तव्य का संघर्ष, हठ, नारी जीवन की महत्ता, धर्मान्धता पर चोट आदि उद्देश्यों को लेकर उपन्यासों का सृजन किया ।

अमिता में युद्ध पिपासु अशोक की हिंसक युद्ध पिपासा, कलिंग का ऐतिहासिक नर संहार और इसके विपरीत अशोक को युद्ध से विरक्त कराकर यशपाल जी ने यह प्रदर्शित कर दिया कि दूसरे को सताकर या मार कर यथार्थ विजय नहीं प्राप्त की जा सकती है।

"अमिता" में महारानी नन्दा [अमिता की माँ] महामात्य से कहती हैं :-

"नहीं -नहीं । महामति आचार्य, ऐसा नही हो सकता तथागत के संघ और भिक्षुओं को उनके स्थान से नहीं हटाया जा सकता ।श्रमणों और अर्हतों के ध्यान चिन्तन और साधना में विघ्न नहीं डाला जा सकता ।"

यशपाल जी उपन्यास कला की दृष्टि से सफल उपन्यासकार हैं ।

2.4.10.6 डा० रांगेय राघव

=====================

2.4.10.6.1 डा० रांगेय राघव ने दर्जनों उपन्यास लिखकर हिन्दी साहित्य की अक्षय वृद्धि की । उनका "मुर्दों का टीला" श्रेष्ठ उपन्यासों में माना जाता है । कबतक पुकारू, सीधा साधा रास्ता, चीवर, काका, अंधेरे के जुगनू आखिरी आवाज आदि प्रसिद्ध है। "कबतक पुकारू" आंचलिक उपन्यास है । इसमें भरतपुर के आसपास रहने वाले नटों का जीवन उनकी सामाजिक मान्यतायें आदि का चित्रण किया गया है ।

2.4.10.7 अमृत लाल नागर

===================

बूँद और समुद्र, शतरंज के मोहरे अमृत लाल नागर जी के सामाजिक उपन्यास हैं । "सेठ बांके मल " आंचलिक उपन्यास ही है और बूँद और समुद्र को भी आंचलिक उपन्यास माना जा सकता है ।

2.4.10.8 फणीश्वर नाथ रेणु

=====================

फणीश्वर नाथ रेणु, अमृतलाल नागर, निराला, नागार्जुन, उदयशंकर भट्ट आदि उपन्यासों को आंचलिक उपन्यासों की संज्ञा दी गई । "मैला आंचल", "परती परिकथा" आदि अति प्रसिद्ध उपन्यास हैं। परती परिकथा विश्व के श्रेष्ठ उपन्यासों में गिना जाता है ।

रेणु जी के उपन्यास अब उतने बहुचर्चित नहीं हुये जितने कि "मैला आंचल" और परती परिकथा है ।

2.4.10.9 रजनी पनिकर

==================

मोम के मोती, प्यासेबादल, पानी की दीवार, काली ककड़ी आदि सुन्दर उपन्यास सामने आये हैं। इन्होंने मध्यम वर्गीय समस्याओं का चित्रण विशेषत: नारी समाज की समस्याओं का सुन्दर यथार्थवादी चित्रण किया है। और समस्याओं का निदान आदर्शात्मक ढूँढने का प्रयास किया है।

2.4.10.10 हजारी प्रसाद द्विवेदी

========================

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने "बाण भट्ट की आत्म कथा", "चारु चन्द लेख", एवं "पुर्ननवा" उपन्यासों का प्रणयन करके हिन्दी को अक्षम साहित्य प्रदान किया । "बाण भट्ट की आत्मकथा " हिन्दी के श्रेष्ठतम उपन्यासों में से है । "पुर्ननवा" अन्तिम प्रकाशित उपन्यास है।

इनके अतिरिक्त मन्नू भंडारी का आपका "बन्टी" विन्दु सिन्हा का "स्मृति के देश", हिमाशु जोशी का "कंगार की आग" राही मासूम रजा का "आधा गांव", "टोपी शुक्ला" कमलेश्वर का "काली आंधी" गिरीश अस्थाना का "धूप धाही रंग", शानी का काला जल, धर्मवीर भारतीय का "गुनाहों का देवता", सूरज का सातवां घोड़ा, लक्ष्मीकान्त वर्मा का " "खाली कुर्सी की आत्म कथा", मोहन राकेश का "अंधेरे बन्द कमरे " हिमाशु श्रीवास्तव के "लोहे के पंख" व "नदी फिर बह चली" शैलेश भटियानी का "भागे हुये लोग", गिरजि किशोर का "लोग" श्रीलाल शुक्ल का "राग दरबारी " प्रसिद्ध उपन्यास हैं ।

उपर्युक्त विवेचन द्वारा यह कहा जा सकताकि उपन्यास ने प्रगति के साथ-साथ परिवर्तन भी प्राप्त किया । उपन्यास में यह परिवर्तन फ्राइड और मार्क्स के सिद्धान्तों के अनुसरण से आया इसलिये ये उपन्यासकार श्रीवास्तव जैसे विभिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न हैं । लेकिन श्रीवास्तव जी की अटूट साहित्य सेवा के लिये उपन्यास साहित्य उनका कृतज्ञ है और रहेगा ।

2.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव से पूर्व उपन्यास साहित्य और प्रतापनारायण श्रीवास्तव

2.5.1 यह सर्वमान्य है कि किसी भी भाषा के साहित्य में पहले पद्य साहित्य का विकास हुआ और बाद में गद्य साहित्य का । ऐसे ही हमारे यहां हिन्दी गद्य साहित्य का विकास हुआ । हिन्दी खड़ी बोली के गद्य का वृक्षारोपण भारतेन्दु जी ने किया और महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने उसका सिंचन किया तथा डा० रामचन्द्र शुक्ल डा० श्याम सुन्दर दास, जयशंकर प्रसाद एवं प्रेमचन्द जी साहित्यरूपी वृक्ष को फलने फूलने में सहयोग दिया । और यह वृक्ष आज इतनी सशक्त शाखाओं और टहनियों वाला हो गया कि जिसे किसी के सहारे की आवश्यकता नहीं रही। आज इस गद्य साहित्य ने जो विस्तृत क्षेत्र प्राप्त किया है । उसका श्रेय भी हम भारतेन्दु जी को देते हैं।

उपन्यास भी गद्य साहित्य की नई विधाओं में से एक और कविता एवं नाटक की अपेक्षा नवीनतर साहित्यक विधा है। उपन्यास के इस युग में जब उसकी शैशवस्था थी तब और आज जब वह अपनी उन्नति के चरमोत्सर्ग पर है काफी अन्तर है। देवकी नन्दन खत्री, ब्रजनन्दन सहाय, जगन्नाथ मिश्र, काशी प्रसाद तथा आखोरी सर्व श्रेष्ठ उपन्यासकार थे जिन्होंने ऐतिहासिक उपन्यासों का ही अधिक सृजन किया। इस युग के उपन्यासों में उपन्यास कला का अभाव सा आभास होता है लेकिन प्रयत्न कोशिश एवं लग्न की दृष्टि से अच्छे कहे जा सकते हैं ।

2.5.1.1 मानवीय दृष्टि से अगर औपन्यासिक वृत्तियों का गहन अध्ययन किया जाय तो इस निष्कर्ष परपहुँचते हैं कि उसके मूल में कुतुहल की प्रवृत्ति निहित होती है क्योंकि उपन्यास कथा प्रधान रचना है। इसके अलावा अगर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार जाय तो पता चलता है कि प्राचीन कथा आख्यायिक । के मूल भी कुतुहल की ही प्रवृति निहित थी। और इसी प्रवृति की तृप्ति हेतु मानव शादियों से कोशिश करता रहा है जिसकी प्राप्ति आज उपन्यासकार कर रहा है। कुतुहल की भावना को जगाने का प्रधान लक्ष्य है - "मनुष्य की आत्मान्वेषी वृति जिसकी आरम्भ रेखा की जिजीविषा और परिणति थी आत्मोपलब्धि।"[1]

--- 5 ---

1- सम्पादकीय आलोचना - उपन्यास विशेषांक

मनुष्य जब से होश सम्भालता है उसे ना ना तरह की समस्याओं कुण्ठाओं परेशानियों एवं अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों से उलझना पड़ता है। और वह इन परिस्थितियों से डर कर दूर भागा तो वह जीवन भरकभी आराम से नहीं रह सकता और अगर परिस्थितियों से संघर्षरत रहा तो वह एक न एक दिन सफल हो जाता है उपन्यास में इन्हीं प्रवृतियों का चित्रण किया जाता है उपन्यास हमें पलायन वादी नही संघर्षवादी बनाता है । उपन्यास जगत से बहुत अधिक सम्प्रक्त है। वह विशुद्ध गद्य युग की उपज है। उसकी प्रवृत्ति में गद्य का सहज स्वछन्द प्रवाह है। उपन्यास में दुनिया जैसी है उसे वैसी ही चित्रित करने का प्रयास करना प्रधान होता है। कथा आख्यायिकाओं का लेखक पुराने कवि की भाँति कल्पना द्वारा एक रसमय लोक निर्माण करता है। वस्तु : कथा आख्यायिकाएं काव्य के पास पड़ती हैं और उपन्यास तथ्य प्रधान जगत के पास ।

अत: स्पष्ट है कि उपन्यास का कथा आख्यायिका में सीधा सम्बन्ध नहीं है। उपन्यास का मूल श्रोत रोमांस तो माना जा सकता है किन्तु वह उससे भी पृथक है। प्रेमचन्द जी का हिन्दी उपन्यास में उदय ही उपन्यास का चरमोन्नति का युग कहा जाता है। क्योंकि प्रेमचन्द ही प्रथम उपन्यासकार थें जिन्होंने उपन्यास का सम्बन्ध मानव-जीवन से जोड़ा । उन्होंने अपने उपन्यास को नये वर्ण्य विषय, नई शैली एवं पूर्ण और सशक्त भाषा और आदर्शवादी पात्र युग जीवन की मार्मिक अभिव्यक्ति, सार्थक घटनायें का चित्रण किया । प्रतापनारायण श्रीवास्तव से पूर्व उपन्यास/वस्तु-चित्रण कथोपकथन, चरित्र चित्रण, भाषा शैली आदि के प्रौढ़तम रूप के दर्शन होते हैं।

प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में तत्कालीन मध्यमवर्गीय एवं निम्न वर्गीय समाज में प्रचलित सामाजिक कुरीतियों एवं कृषक वर्ग की समस्याओं का यथार्थवादी चित्रण कर उपन्यास को यथार्थ के धरातल पर ला दिया जिससे उपन्यास मानव जीवन का वास्तविक प्रतिबिम्ब सिद्ध हो सका । प्रेमचन्द गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित थे । अत: इनका उपन्यास साहित्य भी इससे न बच सका प्रेमचन्द ने एक ओर तो गरीब, किसान, मजदूर, तथा साधारण जनता को देखा जो श्रम पर जीवित है। और दूसरी ओर उससे विपरीत सांमत, मठाधीश, सूबेदार, भ्रष्ट पुलिस अदालत, मिल मालिक, पूंजी के मालिकों को देखा जो श्रम जीवी वर्ग के शोषण पर पलते हैं। एक शोषण से मुक्त होना चाहता था लेकिन दूसरा उसे श्रंखलाबद्ध बनाये रखना चाहता था उनकी सहानुभूति पूंजीपतियों के साथ नहीं, श्रमजीवी

वर्ग के साथ थी । पूंजीपति के समर्थ अर्थशास्त्री अपने ग्रन्थों में इस भ्रम की सृष्टि कर रहे कि पूंजीपति को धन तो उसके परिश्रम और व्यवसाय से प्राप्त होता है अतः इसका लाभ उसे मिलना न्यायसंगत है। इस तर्क का खोखला प्रस्तुत करते हुये आपने कहा है :--- " मैं तो दादा को गद्दी पर बैठे रहने के सिवा कुछ करते नहीं देखता और भी जो बड़े बड़े सेठ साहूकार है उन्हें भी फूलकर कुप्पा होते ही देखा है। रक्त और माँस तो मजदूर ही जलाते हैं।"[1]

पूंजीवादी व्यवस्था अधिक लाभाँश को प्राप्त करने के लिये अनेक हथकण्डे अपनाते हैं :- " व्यापार नीति में, धन या कपास में कचरा भर देना घी में आलू या घुईयां रावड़ देना औचित्य से बाहर न थे फिर बिना स्नान किये वे मुँह में पानी तक न डालते थे ।"[2]

पूंजीवादी व्यवस्था की स्थिति दिनों दिनों विस्फोटित होती जा रही थी तभी तो उन्होंने लिखा था :- "दरिन्दों के बीच में उनसे लड़ने के लिये हथियार बांधना पड़ेगा । उनके पंजों का शिकार बनना देवतापन नहीं जड़ता है ।"[3]

पूंजीवादी व्यवस्था जिस शोषण तन्त्र को विकसित करती है उसके अनेक पक्ष हैं जो उसमें बाधा नहीं डालने देते हैं सारे कानून गरीबों के लिये होते हैं :- " कहाँ है न्याय ! एक गरीब आदमी किसी खेत की बालें नोचकर खा लेता है, तो कानून उसे सजा देता है। दूसरा अमीर आदमी दिन दहाड़े दूसरों को लूटता है तो उसे पदवी मिलती है, सम्मान मिलता है।"[4]

प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास कर्मभूमि और गोदान में हरिजनों की समस्या को उठाया । शिलिया की माँ मातादीन को फटकारती हुई कहती है :- " हम चमार हैं इसलिये हमारी कोई बेइज्जती ही नहीं । xxxxxxxx तुम बड़े नियमी धर्मी हो, उसके साथ सोओगे , लेकिन उसके हाथ का पानी नहीं पिओगे । "[5]

1- कर्मभूमि - प्रेमचन्द - पृष्ठ - 76
2- कर्मभूमि - प्रेमचन्द - पृष्ठ - 81
3- मंगल सूत्र - प्रेमचन्द्र -पृष्ठ - 43
4- मंगल सूत - प्रेमचन्द - पृष्ठ - 47
5- गोदान - प्रेमचन्द - पृष्ठ - 208

2.5.1.3 साहित्य का सृजन युगानुकूल हो । उसमें समाज में व्याप्त कुण्ठाओं, वासनाओं, वाह्य आडम्बरों अर्थात् समाज का ज्यों का त्यों चित्रण अपने में समाहित रखता है। प्रेमचन्द जी ने कहा है :- "मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। कहने का तात्पर्य यह है कि साहित्य किसी का भी हो चाहे वह कथा साहित्य हो, चाहे नाट्य साहित्य हो, उसमें समाज का चित्रण होना आवश्यक होता है कहा भी गया है कि - "साहित्य समाज का दर्पण है।", साहित्य समाज का पथप्रदर्शक है । साहित्य कभी भी किसी को अन्धकार की ओर नहीं लेजाता वह तो उसका परम मित्र एवं हितैषी होता है, लेकिन यह श्रोता, वक्ता या दर्शक आदि की बुद्धि पर निर्भर करता है कि जिस निगाह से उसने उसे देखा, सुना और समझा उस पर वैसा ही उसका प्रभाव पड़ता है ।

2.5.1.4 उपन्यास का सम्बन्ध मानव जीवन से जोड़ने पर वह बहुत कुछ महाकाव्य का उत्तराधिकारी भी हो गया है। सिर्फ विशदता वैविध्यता, गाम्भीर्य क्रिया शीलता और दृश्यात्मकता को देखकर उपन्यास को महाकाव्य नहीं कहा जा सकता क्योंकि पात्रों एवं सामाज की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति आधुनिक उपन्यास - स में नहीं हो पाती है। "फाक्स ने इलियट का उदाहरण देते हुये कहा है कि - "इलीयट की विशेषता इसी में है कि वह समाज का सम्पूर्ण चित्र है । वह ऐसा समाज जिसमें व्यक्ति समष्टि से संघर्ष का अनुभव नहीं करता । यदि वह संघर्ष का अनुभव करता तो प्रकृति से ।"[1]

2.5.1.5 प्राचीन उपन्यास साहित्य का गहन अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि उसमें निम्न प्रवृत्तियों से प्रभावित था । 1-महाकाव्यात्मक उपन्यास (एपिक नाविल") 2- नाटकीय उपन्यास (ड्रामैटिक नावेल) । जब उपन्यास में मानव के सामाजिक संघर्ष एवं द्वन्द्वपूर्ण जीवन का चित्रण होता है तो उसे महाकाव्यात्मक उपन्यास कहते हैं। और अगर उसमें पात्रों की क्रियाशीलता एवं दृश्यात्मकता का चित्रण होता है तो उसे नाटकीय उपन्यास कहते हैं।

" मनुष्य के पिछले हुये आधार, विचारों और बढ़ती हुई यथार्थताओं के बीच उत्पन्न होती रहने वाली खाई को पाटना उपन्यास का कर्तव्य है ।"[2]

1- सम्पादकीय आलोचना - उपन्यास विशेषांक

2- विचार और वितर्क - डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी - पृष्ठ - 95

अतः श्रीवास्तव जी से पूर्व उपन्यासकारों की एक ऐसी लम्बी परम्परा है जो सामाजिक यथार्थ को लेकर चली। मुन्शी प्रेमचन्द इस प्रकार के लेखकों में अग्रगण्य हैं। मुन्शी प्रेमचन्द जी के समान ही प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी भी यथार्थवादी उपन्यासकारों में से हैं लेकिन उन्होंने आदर्श को सदैव सामने रखा और आदर्श को बनाये रखने के लिये यत्र - तत्र यथार्थ की भी अवहेलना कर दी है।

2.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों की प्रमाणिक तालिका एवं संक्षिप्त परिचय

==

अध्यात्मवादी भारत में कभी भी वह संकुचित और सीमित विचार धारा पन-पने नहीं पायी जो कि विश्व के अन्य राष्ट्रों में दृष्टि गोचर होते है। हमारे सभी महान पुरुषों ने चाहे वह किसी भी जाति, धर्म, सम्प्रदायके अनुयायी हो ~~लेकिन उन्होंने~~ कभी भी प्रायः अपने जीवन और साहित्य के बारे में विश-द व्याख्या नहीं कि क्योंकि अपने मुँह अपनी कृतियों की प्रशंसा अलापना उचि-त नहीं समझ यह अधिकार दूसरों को सौंप दिया। कालान्तर में लोगों ने उन-को पढ़ा और फिर उचित आलोचना की।

यह सर्व विदित है कि जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति प्रा-यः साहित्य में हुआ करती हैं, साहित्य पर येन केन प्रकारेण साहित्यकार का ही प्रभुत्व रहा करता है । साहित्यकार की मनोवृत्तियों के अनुसार ही उ-सका साहित्य होता है स्वाभाव के विश्लेषण में, चेतन अचेतन के विश्लेषण में साहित्यकार का ही हाथ रहा करता है । प्रेमचन्द ने तो "गोदान" में "होरी" के रूप में अपना वर्णन कर डाला ।

सफल साहित्यकार वही हो सकता है जो अपने भाव वि-धान के लिये वाह्य विधान पहले से ही तैयार कर ले । जो ऐसा करने में स-क्षम नहीं होते हैं वे सफल नहीं हो पाते है। क्रोचे ने भी कहा है :-"असली काव्य रचना अन्दर हो जाती है।" महाकवि तुलसी ने भी इसका समर्थन किया है:- "रचि महेश निज मानस राखा ।" माइकिल ने भी लिखा है :- " कोई कलाकार हाथ से चित्र नहीं बनाता मस्तिष्क से बनाता है ।"

प्रतापनारायण श्रीवास्तव की रूचि अंग्रेजी शासन काल के समय से ही साहित्य की ओर थी । यह सत्य है कि मनुष्य अपनी रूचि के अनुसार ही कार्य करता है । क्योंकि इच्छा ही सर्वोपरि हुआ करती है । और इच्छा के लुप्त होने पर ही मानव ~~सारे संसार को वश में कर लेता है :-~~

"जितं जगत्केन मनोहियेन ।" अर्थात जिसने मन को जीत लिया उसने संसार को जीत लिया} की तरह चाहहीन व्यक्ति ही सन्तो-- ष के कारण संसार के वास्तविक स्वाद का पान कर पाता है।

कबीर ने भी कहा है कि :-

"चाह गई चिन्ता मिटी मनुआ बेपरवाह ।

जिसको कछु न चाहिये सो जग शंहशाह ।।"

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने संसार से विरक्त होकर नहीं बल्कि संसार सागर में तैरते हुये आशा और निराशा के उहापोह में उलझते हुये साहित्य सागर की रचना की । उन्होंने साहित्य सृजन का शुभारम्भ कविताओं से किया और गणेश शंकर विद्यार्थी के बाद आप कहानी और उपन्यास की तरफ उन्मुख हुये । आपको सर्वाधिक ख्याति उपन्यास सृजन में मिली "विदा" के बाद आपने 20-25 उपन्यासों का प्रणयन किया किन्तु 18-19 उपन्यास ही प्रकाशित हो सके । आप करीब 43 वर्षों तक साहित्य साधना में रत रहे और इसी बीच आपने करीब -करीब 20 हजार पृष्ठों का साहित्य सृजन कर डाला ।

आपकी औपन्यासिक कृतियाँ इस प्रकार है :-

क्र0 सं0	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	वर्ष	प्रकाशक का नाम
1 -	विदा	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1928	प्रकाशक गंगा पुस्तक माला कार्यालय लखनऊ
2-	विजय	" "	1936	" " "
3-	विकास	" "	1938	" " "
4-	बयालीस	" "	1947	ज्ञान मण्डल लि. बनारस
5-	विसर्जन	" "	1949	आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली
6-	बेकसी का मजार	" "	1957	भारतीय प्रतिष्ठान कानपुर
7-	विषमुखी	" "	1958	" " "
8-	वेदना	" "	1959	भारतीय साहित्य मन्दिर दिल्ली
9-	विश्वास की वेदीपर	" "	1959	ओरिएण्टल बुक डिपो दिल्ली
10-	वन्दना	" "	1961	भारतीय साहित्य मन्दिर दिल्ली

11- वंचना	"	"	1962 प्रका0 राजपाल एण्ड संस दिल्ली
	"	"	पुनः जिज्ञासा प्रकाशन, दिल्ली
12- विनाश के बादल	"	"	1963 प्र0 हिन्द पाकेट बुक दिल्ली
13- विपथगा	"	"	1964 प्र0 जिज्ञासा प्रकाशन, कानपुर
14- बन्धन विहीना	"	"	1964 " " " "
15- व्यावर्तन	"	"	1964 " " " "
16- वन्दिता	"	"	1967 प्र0 हिन्दी प्रचारक प्रतिष्ठान वारणसी
17- वरदान	"	"	1971 प्र0 शब्द श्रीप्रतिष्ठान प्रेमनगर, कानपुर
18- विहान	"	"	1971 प्र0 विहान प्रकाशन कानपुर
19- माया देश का रहस्य	"	"	1972 ज्ञानभारती बाल पाकेट बुक्स लखनऊ
20- निष्प्रभ देश का रहस्य	"	"	1972 ज्ञानभारती बाल पाकेट बुक्स, लखनऊ
21- अथ से इति	"	"	अप्रकाशित

प्रतापनारायण श्रीवास्तव का अध्ययन और अनुभव इतना विशद और व्यापक था कि वह वृद्धावस्था में भी साहित्य सृजन से मोह न तोड़ सके । इसका प्रधान कारण यह भी था कि आपने अंग्रेजी और बंगला साहित्य के साथ - साथ उर्दू और संस्कृत साहित्य का भी विशद अध्ययन किया । दूसरा कारण यह कि न्यायाधीश के पद पर कार्यकाल में आपका विभिन्न व्यक्तियों, परिवारों एवं अनेकानेक समस्याओं के जटिलतम रूपों का अध्ययन करने का अवसर प्राप्त हुये थे ।

आपने साहित्य सृजन बगैर किसी दवाव, लोभ, प्रशंसा से रहित होकर मुक्त स्वर में किया ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव की औपन्यासिक कृतियों का अलोचनात्मक
:- अनुशील निम्न रूप में प्रस्तुत है :-

2.6.1 ॥ विदा[1] ॥

यह श्रीवास्तव जी की प्रथम कलाकृति है जिसके प्रणयन से श्रीवास्तव जी "विदा" वाले " के नाम से पुकारे जाने लगे थ । श्रीवास्तव जी की इस कृति ने तो उपन्यास जगत में एक नई लहर पैदा करदी थी। उपन्यास प्रेमियों ने मुक्तकण्ठ से इसकी प्रशंसा की । इस सफल कृति ने ही प्रतापनारायण श्रीवास्तव को "उपन्यासकार" की उपाधि से विभूषित होने का गौरव प्रदान किया ।इसके अभिमत में प्रेमचन्दजी द्वारा कहे गये दो शब्द इसकी महत्ता, सफलता के उद्-घोषक हैं :-

"मौलिक साहित्य की वृद्धि देखकर हिन्दी का कौन हितैषी है, जिसके हृदय में आनन्द की लहर न उठने लगेगी । "विदा" मौलिक उपन्यास है, और मेरे विचार में भाषा सौष्ठव, चरित्र-चित्रन और भाव व्यंजना में जो उपन्यास के तीन प्रधान स्तंभ हैं, प्रतापनारायण श्रीवास्त- - व को अपने पहले ही प्रयास में जितनी सफलता मिली है वह महान् आशाओं से परिपूर्ण है । माता का चित्रण तो अद्वितीय है ।"[2]

2.6.1.1 यह सच है कि "विदा" जैसी सफल कृति ने उन्हें उपन्यास की ओर खींचा । यह कृति ही उनके उदय का प्रथम संकेत था।इस कृति के बारे में सुधीन्द्र वर्मा ने लिखा है :-

"प्रतापनारायण श्रीवास्तव के प्रथम उपन्यास"वि-दा" ने उनकी शैली का सिक्का बैठा दिया था। घरेलू वातावरण में कहानी के सफल कथन ने स्वर्गीय श्री विश्वंभर नाथ शर्मा कौशिक की शैली का महान प्रतिनिधि सिद्ध कर दिया था । एक निरउद्देश्य कहानी को लेकर "विदा" की रचना की थी, परन्तु वह निरउद्देश्य कहानी ऐसी सजीव, रोचक और सूक्ष्म बन पड़ी कि कालेज के विद्यार्थी जीवन में ही श्रीवास्तव जी आधुनिक हिन्दी उपन्यासकारों की प्रथम पंक्ति में गिने जाने लगे ।[3]

1- विदा - दुलारे लाल भार्गव अध्यक्ष - प्रकाशित गंगा पुस्तक मालालखनऊ
2- विदा ॥दो शब्द॥ - प्रेमचन्द - पृष्ठ - 3
3- विजय ॥दो शब्द॥ - सुधीन्द्र वर्मा - पृष्ठ - 1-2

2.6.1.2 "विदा" में प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने सभी साधनों से सम्पन्न, शिक्षित, बंगलों में रहने वाले नागरिक जीवन व नागरिक सभ्यता में पलनेवाले पाश्चात्य सभ्यता से युक्त लोगों की कहानी गढ़ी है। और इस कथा में अत्याधिक ऐसी पारिवारिक हृदय स्पर्शी झलकियां दृष्टव्य हैं जो यथार्थवादी एवं भारतीय सभ्यता संस्कृति की उद्घोषक हैं।

श्रीवास्तव जी ने तीन परिवारों की कथा को इस ढंग से संजोया है कि कहीं भी नीरसता व तारतम्य की कमी नहीं आने पायीहै-

"जोइंट मजिस्ट्रेट रायबहादुर माधव चन्द्र की अबोध स्वाभिमानिनी पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति के रंग में रंगी हुई नई चेतना युक्त पुत्री कुमुदनी अपनीससुराल में सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाती है । बाद में वह अपनी गलती पर पश्चाताप करती है। श्रीवास्तव जी ने इसी का यथार्थ चित्रण किया है ।-

2.6.1.3 कहानी का शुभारम्भ निर्मल चन्द्र सिन्हा की "माँ" से होता है और समापन निर्मल निस्वार्थ प्रेम-योगिनी चपला का विषाद पूर्ण मुख को निर्मिय दृष्टि से देखते ही रह जाते हैं। निर्मल कुमुदनी को बहुत चाहते है और उसकी हर इच्छा को पूर्ण करने के लिये तैयार रहते हैं । कुमुदनी स्नेहवत्सला सास के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करती है और हमेशा अपने घर की शान शौकत की धमकी अपनी मा तुल्य सास को दिया करती । इतने पर भी शांता "माँ" उसकी रक्षा करती है और निर्मल चन्द्र को समझाते हुये कहती हैं :-

"माँ जब संतान को अपने आंचल में छिपा लेती है तब उसका कोई अनिष्ट नहीं कर सकता ।" [1]

शान्ता माँ की कामना है :-

1- "विदा" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 11

"राधा कृष्ण की युगल जोड़ी निहारूं, और तु-
म दोनों को हंसते खेलते देखकर उनकी सेवा करने के लिये चली जाऊँ । तुम राजा बनकर रहो और वह रानी बनकर । मुझे दासी ही बनकर जीवन के इने-गिन दिन काटने दो ।" [1]

2.6.1.4 मां मां होती है जो अपना सर्वस्व खोकर भी सन्तान को सुख पहुँचाती है । एकबार पुत्र तो कुपुत्र हो सकता है लेकिन माँ कुमाता नहीं । वह अपने सुख दुख की लालसा नहीं रखती । लेकिन कुमुदनी तो शान्ता के बुलाने पर भी नहीं आती है वह मां से ज्यादा हीरा"कुत्ता" की सेवा करती है । कुमुदनी ने हरकू की मां को भी नहीं छोड़ा :-

"चुप रह कुतिया कहीं की । छोटे मुंह बड़ी बात । अभी मारते - मारते निकाल दूंगी, मिजाज दुरस्त हो जायेंगे । जि-सके मुँह लगी है उसीसे बातें किया कर । नहीं जानती, मैं तुम्हें जेलखाने की चक्की तक पिसवा सकती हूँ। ऐसे वैसे घर की बेटी नहीं हूँ। हजार मरतबे मनाकर दिया हरामजादी से कि मेरे मुँह न लगा कर । किसी दिन ठीक कर दूंगी ।"

कुमुदनी ने परिवार के किसी भी सदस्य को छोड़ा नहीं था शान्ता उसे शान्त करती है कहती है कि नन्हें आ रहे होंगे तो वह कहती है :-

"आते होंगे, तो क्या लाट साहब हैं। होंगे अपने घर के । यहां कोई उनकी सहने वाला नहीं । मेरे बाप के यहां ऐसे ऐसे पच्चास नौकर हैं ।" [2]

इसके अलावा वह निर्मल पर व्यंग्य भरी धमकी देती है :-

"अगर इसका बदला न लूं तो रायबहादुर की लड़की नहीं ।xxxxxxx क्या बताऊँ । एक साहब वह आते हैं बड़े मातृभक्त हैं। क्या कहना । सतजुगी हैं कि बातें । दूसरे श्रवण कुमार हैं ।" [3]

- -

1- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 15 - 16

2- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 17

3- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ 5 19

कुसुदनी कहती है, ग्रेजुएट नहीं तो क्या, अण्डर ग्रेजुएट तो हूँ उनसे किस बात में कम हूँ ।

2.6.1.5 अन्तत: ऊब कर वह अपने बाबू को पत्र लिखती है जिसमें निर्मल बाबू की झूठी शिकायतें लिखती हैऔर इसके बाद स्वयं मायके चली जाती है।और माधव जी उसकी दूसरी शादी मिस्टर देवदत्त वर्मा से करने के लिये तैयार हो जाते हैं। मिस्टर वर्मा कुमुदनी को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिये प्रयास करते है परन्तु कुमुदनी उनमें कोई रुचि नहीं रखती है। कुमुदनी की भाभी लज्जावती आदर्श भारतीय नारी है उनमें उदारता, स्नेह भावुकता, पतिव्रता की मूर्ति है कुमुदनी से कहती है :-

"स्त्रियों का पति ही सब कुछ होता है। xxxxxxxx स्त्री एक आदर्श पतिभक्त नारी दिखाई देती है। और एक तुम हो जो देवोपम स्वामी को भी पाकर प्रसन्न नहीं होती हो । उसकी निन्दा करती और सुनती हो । बहन यह कसूर तुम्हारा नहीं उस पाश्चात्य सभ्यता और आदर्श का है जो तुम्हेंदी जा रही है, और तुम्हारे सामने रखा जा रहा है। पुरुषों के सहवास में तुम्हें युनिवर्सिटी मेंशिक्षा दी जाती है। और पेरिस की वीरांगनाओं का आदर्श रखा जाता है तब यह विषम फल क्यों न फले । बहन सती की तरह आदर्श नारी बनने का प्रयत्न करो ।"[1]

2.6.1.6 मिस्टर माथुर और निर्मल चन्द सिन्हा के साथ धीमे - धीमे घनिष्ट सम्बन्ध होने लगते हैं। इस सम्बन्ध में निर्मला जो प्रेम को मानव मात्र की वासना पूर्ति का एक साधन मानती थी और विवाह करने के लिये तत्पर नहीं थी लेकिन निर्मल ने तो उसके ऊपर ऐसा प्रभाव जमा दिया कि वह अपने को भूल जाती है और निर्मल से प्रेम करने लगती है। और निर्मल जोअभी तक पुर्न: विवाह के विरोध में थे लेकिन मंसूरी में पहाड़ से गिरने पर चपला की निस्वार्थ सेवा, निस्वार्थ प्रेम ने उन्हें भी चपला की ओर आकृष्ट कर दिया । वह चपला से शादी करने के लिये मां से अनुरोध करते हैं ।

1- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 77

चपला मिस्टर निर्मल सिन्हा को पति रूप में मान लेती है और यह आशा करती है कि वह सिन्हा से इस जन्म में तो नहींअगले जन्म में जरूर मिलेगी । अपनी सहेली कुमुदनी को पत्र लिखकर सचेत कर देती है कि कुमुदनी आकर अपने धन को फिर से प्राप्त कर ले, कुमुदनी मिस्टर सिन्हा को प्राप्त कर लेती है । इसके बाद चपला विदेश चली जाती है ।

2.6.1.7 इस कृति में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने प्रेम के शुद्ध और वासना परक दोनों रूपों का चित्रण किया है । केट का देवदत्त से, लज्जा-वती का मुरारी से, मुरारी का लज्जा से, चपला का निर्मल से, निर्मल का माँ से, विशुद्ध प्रेम है। देवदत्त का केट से, कुमुदनी से, चपला से वासना परक प्रेम है। उपन्यास में आदि से अन्त तक कौतुहल की भावना बनी रहती है।

"विदा" में नाटकीयता के तत्व भी दृष्टिगोचर होते हैं। प्रारम्भ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियत्याप्ति तथा फलागम, कार्यावस्थाओं का समुचित और सुन्दर संगुम्फन किया गया है। इस उपन्यास में भारतीय सभ्य-ता और संस्कृति की महत्ता, पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति की अपेक्षा अधिक महत्व की है। और विजय श्री भी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की ही मिलती है।

2.6.1.8 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसे मिस्टर, मिसेज, मिस, ड्राईंग रूम, टेनिस, मोटर या हवाखोरी, सिनेमा का ही वर्णन करने वाला उपन्यास कहा है।"[1]

कुछ भी हो "विदा" श्रीवास्तव की श्रेष्ठ कृति है जिसमें भारतीयता परिलक्षित होती है ।

2.6.1.9 उपन्यास का नामकरण सर्वदा सार्थक सिद्ध होता है कुमुदनी का पतिगृह त्याग कर पितृगृह , गमन और फिर पितृगृह से पतिगृह गमन मिस्टर वर्मा का इस संसार से हमेशा के लिये विदा होना, चपला का वि-देश गमन आदि प्रमुख घटनायें उपन्यास के नामकरण की सार्थकतायें समर्थक हैं ।

1- इन्दौर में चौबीसवें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साहित्य विभाग के सभापति के पद से दिये गये अभिभाषण में से उद्धृत ।

2.6.2 ।। विजय[1] ।।

====================

श्रीवास्तव जी ने "विदा" के बाद "विजय" उपन्यास का प्रणयन किया । यह उपन्यास प्रतापनारायण श्रीवास्तव का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है अपने समय का बहुचर्चित एवं प्रसिद्ध भी रहा है। "विजय" के"दो शब्द" में सुधीन्द्र वर्मा ने लिखा है :-

"हिन्दी उपन्यासों की पृष्ठ भूमि पर उच्च मध्यमवर्ग के विशेषतः अंग्रेजी मनोवृत्ति के पात्रों के सफलता से चित्रित करने वाले सर्व प्रथम उपन्यासकार श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव का "विजय" लोक प्रिय उपन्यासों ।xxxxxxxxxxxxxxx"विजय" उनका दूसरा उपन्यास था जिसने प्रकाशित होते ही लोगों का ध्यान अपने समस्या मूलक कथानक के कारण आकर्षित किया, और विजय लेखक की एक सर्व श्रेष्ठ रचना मानी गयी ।"[2]

2.6.2.1 विजय की सफलता तो उसके "संस्करणों" के पुनः - पुनः प्रकाशन से लग जाती है । "विजय" में प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने चार परिवारों की कथाओं को बैरिस्टर राधारमण, राजेश्वरी पत्नी, मनोरमा पुत्री, राजेन्द्र बाबू "दामाद" और दूसरे परिवार जस्टिस सर रामप्रसाद और उनकी बाल विधवा पुत्री "कुसुमलता", डा० आनन्दी प्रसाद "दामाद" एवं तीसरा राज परिवार राजा भूपेन्द्र किशोर, श्रीमती किशोरीएवं "माया देवी "पुत्री" प्रकाशेन्द्र "दामाद", नरेन्द्र कुमार "पुत्र", की एवं मिसेज डेविड मायादास उर्फ एलिना रोज उर्फ मिस ट्रैवीलियन की कथाओं को समोचित ढंग से पिरोया है ।

2.6.2.2 लेकिन उपन्यासकार का प्रमुख उद्देश्य एक "विधवा" हिन्दू नारी की कहानी को इतने मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया जो उसकी सफलता की साधक है। बाल विधवा कुमारी कुसुमलता जिसे अपनी शादी का पता

- -

1- विजय - प्रकाशक - गंगा पुस्तकमाला कार्यालय लखनऊ सन् 1936

2- विजय - "दोशब्द " -सुधीन्द्र वर्मा

तक नहीं जो अपने बाल पति के साथ खेलती आई, अम्मी, से उसे जाने तक के लिये मना करती कहती कि "इन्हें भैंजना नहीं मैंइनके साथ खेलती हूँ उसस बाल पत्नी को क्या पता कि यह उसका केवल खेल का साथी नहीं जीवन साथी है। कालगति किसी ने देखी नहीं और वह बाल पत्नी "विधवा " हो गयी । मां बाप का रुदन उससे देखा न गया वह पूँछ ही लेती है और बाहर जाकर फिर खेलने लगती है। धीमे - धीमे कुसुम को सब आभास हो गया । और वह अपनी सहेली मनोरमा के दामपत्य सुख को देखकर अपने को कोसने लगी वह भी अपने भाग्य से दाम्पत्य सुख को पाने की लालसा करने लगी । वह सोचती है -

" विधवा- विवाह संसार में होता है, एक इसी अभागे देश में नहीं होता। दूसरे देश इस मूर्ख, अपढ़, निश्चेष्ठ देश से कितने आगे हैं। दूसरे देशों में स्त्री के समानाधिकार है, किन्तु इसदेश में वह पराधीन है। सब पुरानी लकीर के फकीर बने हैं ।ऐसे जिद्दी पातकी पुरूष दूसरे देश में नहीं हैं। आज कितने ही धर्म ध्वजी समाज के नेता मेरा स्त्रीत्व भंग कर- - ने के लिये तैयार हैं। किन्तु आज मैं विवाह कर लू तो हिन्दू समाज नाक मुँह सिकोड़ेगा मुझे म्लेच्छी कहेगा ।"[1]

2.6.2.3 कुसुम एक शिक्षित और पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित एवं नवीनता को लिये हुये जागृत नारी है वह तो उन शास्त्र ग्रन्थों को राख कर देना चाहती है जो मानव जीवन को सुख शान्ति नहीं दे सकते तो अ- शान्ति की राह भी तो न बतायें ।वह कहती है :-

"xxxxxxxxxxxxx पुराने शास्त्र जो मनुष्य को निस्तेज बनाते हैं, जला देने चाहिये। उनका अस्तित्व संसार से मिटा देना चाहिये एक नया युग हो, नई लहर हो, जिसमें पुराने पन की बू न हो । xxxx xxxxxxx जिस दिन इस देश में प्राचीनता चली जायेगी, उसदिन यह देश स्वतन्त्र हो जायेगा ।"[2]

1- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 58-59

2- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 59

वह समाज के पुराने बन्धनों को तोड़कर शादी करने का दृण निश्चय कर लेती है :-

"इन समाज के बन्धनों में बंध कर नहीं रहूँगी । इनसे लडूंगी और लडूंगी अपने वैधव्य से ।"[1]

कुसुमलता का यहां एक सुन्दर, स्वतन्त्र नव जागृत नारी रूप चित्रित है :-

"मैं विवाह करूंगी अपना वर चुनूंगी जो मेरी शर्तों के अनुसार मुझ से विवाह करने के लिये तैयार होगा । मैं उसके साथ विवाह करूंगी ।"[2]

2.6.2.4 कुसुमलता की मां बालकाल में काल कलवित हो गयी थी उसकी सौतेली मां ने उसे कभी इस बात का भी एहशास नहीं होने दिया कि वह उसकी सौतेली मां है।

2.6.2.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने राजेश्वरी को आदर्श मां के रूप में अंकित किया है । राजेश्वरी मनोरमा और दामाद राजेन्द्र प्रसाद को अपने प्राणों से भी ज्यादा प्रेम करती है । देखिये :-

"जिस दिन मेरी आँख के सामने से दूर चली जाओगी । उस दिन तुम्हारी मां भी यह संसार छोड़ देगी । मेरा अवलम्ब तुम्ही तो हो ।"[3]

2.6.2.5.1 कुसुमलता भी अपनी मां की ममता को जानती है वह उन्हें भी किसी तरह का दुख पहुँचाना नहीं चाहती है :-

" पापा से आप चाहे भले कह दीजियेगा, लेकिन अम्मा से किसी बात का जिक्र न कीजियेगा और वह मेरी बीमारी की खबर सुन कर सारा धीरज खो देंगी और बेहाल हो जायेगी । उनका खाना पीना हराम हो जायेगा ।"[4]

1- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -67
2- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 104
3- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 28
4- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-430

"विजय" में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने प्रेम के वासना - मय रूप को मिस ट्रैविलियन के द्वारा अंकित किया। काम वासना में रत रहने वाली हिन्दू नारी सेवा की संचालिका एवं यूरोपियन वुमैन कान्फ्रेंस की सदस्या मिसेज डेविड माया दास उर्फ ऐलिनर रोज उर्फ मिसेज ट्रैवीलियन जो सज्जनता समाज सेवा का नकाब पहनकर छात्रों और राजा महाराजाओं एवं खुबसूरत नवजवानों के साथ रंगरेलिया मनाया करती थी और जिसे धनार्जन करने का माध्यम ही बना रखा था, का सुन्दर अंकन किया है :-

मिस ट्रैवीलियन मनोरमा के रूप सौन्दर्य से एवं उसके पति राजेन्द्र के पुरूषत्व पर आशक्त हो जाती है लेकिन जब राजेन्द्र उसकी ओर किसी तरह आशक्त नहीं होते तो वह उसकी पत्नी मनोरमा को मिठाई के साथ नशे की दवा खिलाकर राजा प्रकाशेन्द्र से उसका स्त्रीतव भंग करा देती है ।

2.6.2.5.2 दूसरी ओर कुसुम भी राजेन्द्र प्रसाद को बहुत चाहती है लेकिन वह मनोरमा के पति है और वह उसके सुख, को दुख में बदलना नहीं चाहती । मनोरमा उसे अपनी सौत रखने के लिये भी तैयार हो जाती है। इसी बीच कुसुम की शादी भी डा० आनन्दी प्रसाद से हो जाती है लेकिन अट्ठारह महीने तक वह राजेन्द्र को भुला नहीं पाती है । लेकिन वाद में जब उसे आभार होता है तो उसने उन्हें पति रूप में ग्रहण कर आनन्द से जीवन यापन करने का विचार किया । माया देवी का प्रकाशेन्द्र से, राजेश्वरी का मनोरमा से, मनोरमा का राजेन्द्र से, राजेन्द्र से मनोरमा का प्रेम शुद्ध प्रेम का रूप दिखाकर प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उपन्यास को सार्थक कर दिया ।

2.6.2.6 "विजय" में कुसुमलता ईश्वर में विश्वास नहीं रखती थी लेकिन वाद में ईश्वर वादी हो गयी । शक्ति का नाम ईश्वर है वह कहती है :-

"शक्ति का नाम भगवान है । जो शक्ति संसार में व्याप्त है, वह भगवान है । जिस शक्ति से पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है, जिस शक्ति से ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु अपने काम में लगी उस शक्ति का नाम ईश्वर है। ब्रह्माण्ड के शक्ति समूह का नाम भगवान है ।"[1]

2.6.2.7 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "विजय" में कुसुम के माध्यम से ही पूजा, पाठ, कीर्तन, मन्त्रों का विरोध किया है। कुसुम कहती है:-

"पूजा पाठ के मन्त्रों में वाक्य है, ईश्वर का गुणगान और उसकी गुलामी मसलन आप ऐसे हों, आप वैसे हों और मैं आपका दास हूँ। आपकी शरण में आया हूँ, आप दीनबन्धु हैं मैं दीन हूँ, आप मेरी रक्षा कीजिये, मुझे संसार सागर से पार उतारिये इत्यादि इत्यादि । मैं ऐसा पूजा पाठ तनिक भी पसन्द नहीं करती मैं यह मानती हूँ कि शक्तियों के केन्द्र का नाम भगवान है ।"[2]

2.6.2.8 विजय में प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने ईसाई धर्म को ही नहीं अपितु अन्य धर्मों से श्रेष्ठ हिन्दू धर्म को माना है। हिन्दू धर्म और संस्कृति मनोरमा के माध्यम से व्यक्त की है । साथ-साथ श्रीवास्तव जी ने पाश्चात्य संस्कृति का खण्डन भी मनोरमा के माध्यम से करवाया । मनोरमा मिस ट्रैवीलियन से कहती है :-

"पश्चिम के सिद्धान्तों पर मैं समाज का निर्माण श्रेयस्कर नहीं समझती ।"[3]

2.6.2.9 और कहती है :-

"यद्यपि मैंने पश्चिमीय आदर्शों पर शिक्षा पाई है किन्तु दूसरों की तरह अपनी जातीयता नहीं खोनी है। मुझमें अपनी जाति का अभिमान है, और यह अभिमान है कि हमारा समाज, हमारा धर्म ईश्वर का ज्ञान रूप है। मैं सभ्यता पहचानती हूँ मुझे उसमें जन्म लेने का गौरव है, गर्व है, और अभिमान है। हमें अपने उठने के लिये अपना ही बल चाहिये, किसी अन्य विदेशी बल की आवश्यकता नहीं ।"[4]

1- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 464
2- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -478
3- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 178
4- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 112

श्रीवास्तव जी ने एक ओर तो पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का खण्डन तथा वहीं दूसरी ओर मनोरमा के माध्यम से ही हिन्दू धर्म और भारतीय संस्कृति का मण्डन किया है:-

"त्याग, पवित्रता, तपस्या और क्षमा का उच्चतम रूप हिन्दू धर्म ही में मिलेगा । हिन्दू नारी पिता के लिये पति के लिये सब कुछ त्याग कर सकती है। हिन्दू पति अपनी प्रियतमा के लिये हंसते हंसते प्राण विसर्जन कर देगा, हिन्दू पुत्र अपने माता पिता को सन्तुष्ट करने के लिये त्रिलोक के वैभव पर लात मार देगा । हिन्दू माता अपनी सन्तान के लिये एक सती काल से भी टक्कर लेगी । हिन्दू पिता अपनी सन्तान के लिये भूखों मर जायेगा। ऐसा त्याग, ऐसी पवित्रता और ऐसी तपस्या कहां मिलेगी ! तभी तो कहते हैं कि ईश्वर का आशीर्वाद हिन्दू धर्म है। हिन्दू धर्म की विजय ईश्वरत्व की विजय है।"

2.6.2.10 मायादेवी पति के दुराचारोंसे लाचार होकर पितृगृह आ जाती है और राजा भूपेन्द्र किशोर प्रतिशोध लेने के लिये इग्लैण्ड चले जाते है । वहीं मिश्र में डेविड नाम के भिखारी से मुलाकात होती है ।उ--से साथ लेकर राजेन्द्र बाबू के साथ सपरिवार हिन्दुस्तान वापिस आ जाते हैं यहां आकर राजा प्रकाशेन्द्र और ट्रेवीलियन के आदर्श प्रेम का स्व--पन पूरा होन से पहले मिसेज डेविड माया दास उर्फ ऐलिना रोज उर्फ मिस ट्रेवीलियन की कहानी का पर्दाफास हो जाता है। अन्त में राजा साहब कुसुम, राजेन्द्र और अपनी पत्नी मायादेवी से गलती मनाते हैं ।

2.6.2.11 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "विजय" के माध्यम से समा--ज में व्याप्त "बाल विवाह ", "विधवा" समस्या को उठाया है और उसका आदर्शमय समाधान भी प्रस्तुत कियाहै ।

पुरानी परिपाटी पर नव चेतना की विजय, ईसाई धर्म एवं संस्कृति पर हिन्दू धर्म एवं भारतीय संस्कृति की विजय काम वासनामय प्रेम पर शुद्ध प्रेम की विजय, दिखाकर लेखक ने नामकरण की सार्थकता सिद्ध कर दी ।

2.6.3.3.2 अमीलिया भारतेन्दु को भुला नहीं पाती और सच भी है बालकाल का प्रेम कभी भुलाया नहीं जा सकता है। वह प्रेम हृदय के अन्त: स्थल में अपना घर बना लेता है। वह कहती है :-

"उसकी मधुर स्मृति मैं अपने हृदय में अन्तिम दिन तक छिपाये रहूँगी । मेरा जीवन तो उसी स्मृति पर अवलम्बित है । यह सत्य है कि मैं सब कुछ खो बैठी हूँ लेकिन उसकी स्मृति अब भी मेरे पास सुरक्षि-त है - उसतरह , जैसे कोई महाकृपण अपना धन छिपाये रहता है। भला उस स्मृति को मैं किस तरह भुला सकता हूँ ।" [1]

2.6.3.3.3 दूसरी ओर विश्वविद्यालय में पढ़ने वाली आभा से भारतेन्दु का प्यार हो जाता है उनके परिवार वाले भी दोनों की शादी करने के लिये तैयार हो जाते हैं। आभा और भारतेन्दु का प्रेम स्वच्छन्द कोटि का प्रेम है । आभा कहती है:-

"मालती , प्रेम एक सर्वव्यापक शक्ति है, जिसकी नींव पर ही भगवान का अस्तित्व और उसका विश्वास स्थित है । प्रेम जीवन का अद्भुत विकास है, जिसके साथ ही ब्रह्म का वास्तविक रूप यथा गति से इन्द्रियों द्वारा देखा जाता और फिर उसमें लीन हो जाता है। इसी मिलन का नाम मोक्ष है, और इन्द्रियों द्वारा दिग्दर्शन ही का नाम जीवन है ।" [2]

2.6.3.4 श्रीवास्तव जी ने "विकास" में पूँजीपतियों के विलासमय आनन्द और ऐश्वर्यमय जीवन का उल्लेख किया है। पूँजीपति किस प्रकार सें ~~किस प्रकार के~~ निर्भीक होकर निर्धनों का दमन और शोषण करते हैं जो छटपटा तो सकते हैं लेकिन मुँह नहीं खोल सकते ।यही पूँजीपति धर्म के ठेकेदार हैं। जो "धर्म" के अर्थ को भी नहीं समझते । हालांकि संसार के सभी धर्मों का उद्देश्य प्राणी मात्र का कल्याण करना हैएवं मानव को सन्मार्ग पर लाना है। धर्म के बारे में "आचार प्रभवो धर्म:", आचार परमो धर्म:" "महाभारत"में कहा गया है। मनु ने धैर्य,क्षमा, चित्तवृत्ति,-

---

1- विकास - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 204

2- विकास - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -142

निरोध, अस्तेय, आन्तरिक तथा बाहय शुद्धि, इन्द्रिय - संयम, सद्बुद्धि, विद्योपार्जन तथा अक्रोध इन दस गुणों को धर्म का लक्षण बताया है ।

"धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रह: ।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।" [1]

अहिंसा, सत्य प्राणि मात्र पर दया, क्षमा, यथाशक्ति दान को गृहस्थ के लिये उत्तम धर्म कहा गया है :---

" अहिंसा सत्यवचनं सर्वभूतानुकम्पनम् ।
क्षमा दान यथाशक्ति गार्हस्थ्य् धर्म उत्तम: ।।" [2]

और धर्म के विशालतम् रूप को देखिये :----

"सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मां कश्चिद् दु:खभाग्भवेत् ।।"[3]

वास्तव में सभी धर्मों का सारतत्व एक ही है मानव मात्र के लिए कल्याण प्रद होना जो ऐसा नही है वह धर्म नहीं हो सकता और कुछ भी हो सकता है ।

2.6.3.5 श्री वास्तव जी ने डिपो वालों के अत्याचारों का वर्णन इस प्रकार किया है :---

"यहां सतीत्व का नाम है पाप और व्यभिचार का नाम है पुण्य । यहां से निकलना कठिन ही नहीं बिल्कुल असम्भव है । डिपो वाले रात को शराब पीकर खूब व्यभिचार करते है। और जो स्त्री उन्हे अधिक प्रसन्न कर देती है उसके लिए काले पानी में अच्छी मजदूरी की सिफारिश करते है । [4]

1:-मनुस्मृति --- 6/98

2:-महाकर्ण पर्व-- 69

3:-आनन्द रामायण-- 72

4:-विकास-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ-143

2.6.3.5 अनुपगढ़ के राजा कामेश्वर प्रसादसिंह जिनका विवाह मालती के साथ सम्पन्न हुआथा । मातादीन नामक एक चतुर व्यक्ति जो स्वामी गिरिजानन्द की पत्नी से प्रेम करता था । वह अनूप कुमारी उर्फ कौशल्या उर्फसिरोज स्वामी को राजा अनूपगढ़ के अन्तः पुर में रखवा देता है ।धीमे-धीमे कामेश्वर प्रसाद उसे अपनी रखैल बना लेते है । मातादीन से यह देखा न गया और उसने राजा कामेश्वर प्रसाद को नपुंसक बना दिया । लेकिन दूसरी दवा के प्रयोग से राजा फिर से पुरूषत्व को प्राप्त कर लेते है । बाद रहस्योदघटित देखकर अनुप कुमारी मातादीन की हत्या कर देती है ।

2.6.3.6 श्रीवास्तव जी ने "पूर्वजन्म " की घटनाओं की स्मृति का वर्णन माधवी द्वारा करवाया है । जो अपने को डा० नीलकंठ की पत्नी और माया को अपनी पुत्री घोषित करती है । हांलाकि इनका पूर्व घटना से कोई सम्बन्ध नहीं है । प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी ने नील कंठ द्वारा वर्णभेद की समस्या भी उठाई है ।

नीलकंठ कहते है:----

"वर्णव्यवस्था जिस समय स्थापित की थी , उस समय कुछ और था और इसके कुछ और ही अर्थ थे । इसका कार्य भी कुछ दूसरा ही था , परन्तु वह तो आज एक दूसरे रूप में यहां अपना अधिकार जमायें हुये है जिसका नाश - परमावश्यक है ।

2.6.3.7 मनमोहन पंडित जिन्होंनें अथकपरिश्रम एवं मेहनत करके जो धन सम्पत्ति एकत्रित की थी , उसका अपने एक मात्र पुत्र को न देकर श्रमिक वर्ग के हित में बांट देते है ।"

2.6.3.8 श्रीवास्तव जी ने समस्याओं को खड़ा किया और उनका समाधान आदर्शात्मक ढंग से प्रस्तुत किया यही उनकी सफलता की कुंजी है । वह भारतेन्द का आभा से और अमीलिया का डा० हुसैन के भाई से विवाहकराकर समस्याओं को हत्या कर देते है मातादीन की हत्या ही भी सुख और शान्ति प्रदान कर ती है ।

2.6.4

(बयालीस)[1]

2.6.4.1 श्री प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने " बयालीस" में जैसा की इसके नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि इसका प्रणयन 1942 की क्रान्ति को लेकर किया। सत्य और अहिंसा के पवित्र सिन्द्धातों पर आधारित गान्धीवाद का प्रभाव इस पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। गान्धी जी मनुष्य का हृदय जीतने में विश्वास रखते थे। वह जानते थे कि प्रेम और अनुनय विनय द्वारा किया गया परिवर्तन चिरस्थायी होता है। अपेक्षाकृत बल और शक्ति के गान्धीवाद अन्याय और शोषण की समाप्ति,शान्ति अहिंसात्मक उपायों द्वारा ही करना चाहता है। भारतवर्ष युगों से विश्व को शांति का सन्देश देता आ रहा है। यही कारण है कि उसने अहिंसा के शान्ति पूर्ण मार्ग द्वारा मातृ भूमि को विदेशियों के जाल से सरलता से मुक्त करा लिया।

2.6.4.2 श्रीवास्तव जी ने समाज में व्याप्त अनेकानेकसमस्याओं को लिया है। जमींदारी प्रथा एवं जमींदारो द्वारों आम जनता का शासन एवं शोषण की जड़ है।

शारदा जमींदारों के खिलाफ है वह कहती है:——

"जमींदारी प्रथा ही सब अनर्थों का मूल है।" [2]

श्रीवास्तव जी ने पूंजीवाद एवं जमीदारी प्रथा दोनों का ही विरोध किया है। श्रीवास्तव जी ने अंग्रेजो की कूटनीति का तथा दूरदर्शिता का भी वर्णन किया। अंग्रेजो ने कुछ जमीदारों को पद लोलुप एवं धन देकर देकर अपने हाथ की कठपुतली बना रखा था। जिससे अपने दुष्कर्तव्यों की पूर्ति इन्हीं लोगों से किया करते थे। सर-भगवान सिंह एक ऐसे सम्भ्रान्त व्यक्ति है जो अंग्रेजों के लिए अपनी अपनी धर्मपत्नी एवं सन्तान की भी परवाह नहीं करते है।

1:- बयालीस --- ज्ञान मण्डल्य लिमिटेड बनारस।

2:- बयालीस -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ- 84

भगवानसिंह ने देशवासियों में आपसी फूट डालने के लिए धर्मावलम्बीयों की शारणा ली। इस काम की पूर्ति के लिए मौलना अनवर साहब, अब्दुल गनी एवं पंडित गोपीनाथ को पकड़ा। इन स्वार्थियों ने भोली भाली भारतीय जनता को साम्प्रदायिकता के नाम पर खूब भड़काने की कोशिशें की।

2.6.4.3 अनवर ईदू को गांजा पिला कर हिन्दुओं के खिलाफ भड़काता है :---

"तुम यहां के मुसलमानों को गोल में मिला लो, और एक दिन रात के वक्त हिन्दुओं पर हमला कर दो, उनके घर लूट लो, और इस तरह माला माल हो जाओगे। मैं तुमको हथियार दूगां, करौली, चाकू, छुरे, बन्दूक, तलवार हजारों की तादाद में इस मसजिद में जमाकर दूगां, जिनका इस्तेमाल वक्त पर करना। पुलिस से डरने की तुमको कोई जरुरत नहीं है, अंग्रेजी फौजों से मुतलक डरो नहीं। ये सब तुम्हारी ही इमदाद करेंगे।" ये देशद्रोही इतने पर भी बस नहीं करते और गांव के सर्व सर्वा जनाब रहीम को पैसों से खरीदना चाहते है लेकिन रहीम इस तुच्छ कार्य की अवेहलना करता है। परिणाम - स्वरूप मोहर्रम के अवसर पर मुसलमान पीपल का पेड़ काटने को तैयार हो जाते है और हिन्दु उन्हें ऐसा करने से मना करते है। क्योंकि वह पीपल पर ब्रहम का निवास मानते है अन्त में दोनों जातियां लड़ने को तैयार हो जाती है लेकिन मौके पर भगवान-सिंह के सुपुत्र श्री दिवाकर पहुंचकर उन्हें शान्त करने के प्रयास मेंखुद चोटें खा जाते हैं। इस पर गांव वालों दिवाकर के इस कार्य की दाद में प्रशंसा करते और खुद अंग्रेजो के खिलाफ लड़ने का प्राण ठान लेते है।

2.6.4.4 प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने हिन्दू और मुसलमानों में एकता दिखाकरअखंडता, राष्ट्रीयता, एकता की ओर भी संकेत किया है। गुलाब, अखिया, रहीम, नसीम, मनोहर ये भारतीयता के पोषक है। यह अंग्रेजों को विदेशी और देशद्रोही मानते है रहीम कहते है :---------

1:- बयालीस --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ-- 7।

"हिन्दू और मुसलमान एक ही जिस्म के दो आजा हैं। एक ही माँ के बेटे हैं। मुझे तो दोनों में कोई अन्तर नहीं दिखाई पड़ता है। हिन्दू अगर सूर्यको मानते है तो मुसलमान चाँद को लेकिन चाँद और सूरज दोनों खुदा के नूर हैं।"[1]

2.6.4.4.1 नसीम भी हिन्दू और मुसलमानों को भाई भाई मानता है और हिन्दू धर्म एवं इस्लाम में कोई अन्तर नहीं मानता अखिया के शब्दों में :—

" हिन्दू मुसलमान धर्म अल्लाह की दोनों आँखें है— एक दाहिनी और एक बायीं।"[2]

2.6.4.4.2 अनवर जो अभी तक भगवान सिंह के कहने से भारतीय जनता में फूट डाल रहा था, । वह भी अब इस कार्य को तुच्छ समझने लगा है —

" अंग्रेजी हुक्काम के लिये हिन्दू और मुसलमान दोनों दुश्मन है, दोनो से एक सा खतरा है, इसलिये वे काँटे से काटा निकाल रहे है। हिन्दूओं और मुसलमान को लड़ा कर दोनों की ताकत जाया कर रहे हैं। मगर जब वे गाँव तबाह करते हैं तब उसके सारे वासिन्दों पर गोलियां चलाते है, वहाँ वे हिन्दु मुसलमानों का लिहाज नहीं करते।[3]

2.6.4.5 प्रताप नारायण श्रीवास्तव नैतिकता की, मानवता की, भारतीयता की प्रतिष्ठा के समर्थक है। रहीम के शब्दों में :—

" सत्य धर्म तो मानव धर्म है, जहाँ ऊंच नीच का भेद नहीं

===

1:- बयालीस -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ —217

2:- बयालीस— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ—154

3:- बयालीस —प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ—217

है छोटे बड़े का प्रश्न नहीं पवित्र अपवित्र की भिन्नता नहीं। मानव सबसे प्रथम मानव है, और दूसरे मानव भी उसके पूर्णतया बराबर हैं। "[1]

2.6.4.6. श्रीवास्तव जी ने "बायालीस" में रिश्वत खोरी की समस्या भी उठाई है जो वर्तमान समय की भंयकर समस्या है जिसके कदम बढ़ते बढ़ते हर आफिस तक पहुँच गये है जिसने अपने रूप को ही नहीं बल्कि नाम को भी बल दिया उसी का एक उदाहरण देखिये :--

"घूस का साम्राज्य तो सारे संसार में फैला हुआ है, किन्तु भारत में उनकी राजधानी स्थापित है। राजधानी [पुरुष घूस लेना अपना परम अधिकार] स्वत्व विचारते हैं। xxxxxxxxxxxx xxxxxx भगवान की भाँति घूस के भी सहत्र नाम हैं, कहीं यह कुछ कहीं मेहनताना, कहीं शुकराना, कहीं ईनाम, कहीं पान सुपारी, कहीं सिगरेट बीड़ी, कहीं पगड़ी साफा, कहीं कपड़ा लता, कहीं रवजाना, कहीं डाली लगाना, कहीं बच्चों का खिलौना, कहीं बच्चों की मिठाई आदि नामों से प्रचलित है। सहत्र नाम के अतिरिक्त यह सहत्र मूर्ति भी है।"[2]

2.6.4.7 यह समय भारतीय जनता के जागरण का समयथा जब उसे परतन्त्र होने का एहसास हुआ था। दिवाकर के नेतृत्व में रमईपुर के ग्राम वासियों ने अहिंसा पूर्ण आन्दोलन चलाकर अंग्रेजी शासन के पैर हिला दिये। उस सेना के संचालक मॉरिस भारतीयों को देखकर कहते है।

" सर भगवान, क्या आपने इन्ही निरीह व्यक्तियों के मुकाबले के लिये सहायता मांगी थी। इनके पास डंडा भी तो नहीं है।"[3]

1:- बयालीस -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ--117

2:-बयालीस --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव-- पृष्ठ --171

3:-बयालीस---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव-- पृष्ठ --227-228

2.6.4.8 भारतीयों की ताकत तो सर भगवान सिंह ही जानते थे वह कहने लगे--

"कैप्टन मॉरिस ,आप इनको साधारण न समझिये । ये सब विष के भरे हुये महान आपत्तिकारक हैं । इन्होंने क्रान्ति को शान्ति के आवरण में छिपा रखा है । ये पृथ्वी की भाँति अचल है, वायु की भाँति शक्तिशाली है, अग्नि के समान तेजोमय है, जल की तरह शीतल है और आकाश जैसे व्याप्त होकर हमको निष्प्राण करने वाले हैं । इनको समूल नष्ट करने में हमारा और अंग्रेज जाति का कल्याण है । यदि इनमें से एक भी जीवित बचेगा तो वह शत सहस्त्रों को अपना ही जैसा बना डालेगा ।" [1]

2.6.4.9 अंग्रेजी की हिंसात्मक नीति का शिकार समस्त रमईपुर गाँव हो गया । अन्ततः सर भगवान दास भी इस काण्ड से विक्षुप्त हो उठे ।

2.6.4.10 प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी ने इसमें भारतीय जनता के जागरण , अंग्रेजो के अत्याचारों पूँजीपतियों द्वारा जनता का शोषण, रिश्वत खोरी आदि समस्याओं को और आकृष्ट किया । उपन्यास "बयालीस" का शीर्षक समोचित एवं अपने नामकरण की सार्थकता को पूरा करता है ।

1:- बयालीस -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ --228

2.6.5

॥ विसर्जन ॥

2.6.5.1 प्रताप नारायण श्रीवास्तव का " विसर्जन " उपन्यास भी गांधीवाद से प्रभावित है। गांधीवाद ने अंग्रेजों के हिंसात्मक अत्याचारों एवं शोषण दमन का तथा पूंजीपतियों के अत्याचारों का जबाब हिंसात्मक नहीं अहिंसात्मक ढंग से दी। यही कारण था कि भारतीय जनता ने गांधी और उनके सिन्द्धातों को श्रद्धा से स्वीकार किया। गांधीवाद के बारे में गांधी जी ने स्वयं कहा है।

"अहिंसा एक निर्जीवसिन्द्धात नहीं है, अपितु एक जीवित और प्राणदायिनी शक्ति है। यह शूरवीरों का एक गुण है। तथ्यतः उनका सर्वस्थ है। यह आत्मा का एक विशिष्ट गुण है। यह सबसे उच्चतम धर्म है अहिंसा के सूर्य के उदय होते ही घृणा क्रोध और ईर्ष्या -द्वेष आदि अन्धकार रूपी शत्रु भाग जाते हैं।[2]
और-

" आज गांधी दर्शन पागल के हाथों में पड़ा हुआ पत्थर नहीं है, न ही लक्ष्य पर साधा गया बन्दूक का निशाना है, यह तो राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान का एक सफल राजनीतिक शास्त्र है।" [3]

1:- विर्सजन — प्रताप नारायण श्रीवास्तव—जिज्ञासा प्रकाशन देवनगर, कानपुर।

2:- गांधी और गांधीवाद —डा० सीतारमैया —पृष्ठ—93

3:- गांधी और गान्धीवाद —डा० वी० पट्टाभि सीतारमैया—पृष्ठ—।

2.6.5.2 श्रीवास्तव जी ने गांधीवाद का समर्थन " विर्सजन " बायालीस" आदि में किया है । विर्सजन में मिल मजदूरों की हड़ताले जो सत्य और अहिंसा से युक्त " सत्याग्रह " के मार्ग की ओर प्रशस्त करती है । "सत्याग्रह" के सम्बन्ध में गांधी जी के विचार इस प्रकार है :---

"It means mass resistance on a non-violent basis against the government when negotiations and constitutional methods have failed. It is called 'civil' because it is non-violent resistance by people who are ordinarily law abiding citizens also because the laws which they choose to disobey are not moral laws but only such as are harmful to the people."[1]

इसी सत्य के लिये मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिये देशवासियों की रक्षा के लिये दिवाकर ने सत्याग्रह का पथ अपनाया है । दिवाकर की इस भयंकर शक्ति को देखकर अंग्रेजों की पुलिस और फौज भी भयभीत हो जाती है।

2.6.5.3 श्रीवास्तव जी ने पूंजीपतियों और श्रमिकों के मध्य जो खाई बन गयी है उसकी ओर भी संकेत किया है पूंजीपति असंख्य धन सम्पत्ति के स्वामी तो होते ही है । साथ ही साथ उत्पादन के साधनों पर भी व्यक्तिगत अधिकार रखते है । पूंजीपति जिस प्रकार मशीने खरीदते थे वैसे ही वह मजदूरों की मजदूरी भी खरीदने लगे जिसके परिणाम स्वरूप श्रमिक वर्ग निर्धन ,अकिंचन एवं दरिद्र होता गया। एक ओर प्रकाशपूर्ण प्रासाद तो दूसरी ओर दुर्गन्धपूर्ण टूटी फूटी झोपड़ियां ।

---

1. Gandhism in Theory and Practice — Narendra Chandra Bandyopadhyaya, Page 1.

" लाला कंचनलाल ने ह्विस्की का एक पेग चढ़ाते हुऐ कहा--
"मजदूर के नाम से मुझे चिढ़ हो गयी है । मैंने अपने मिल के मैनेजरों को हुक्म दे रखा है कि तुम जितना मजदूरों को मारोगें, सताओगें और तंग करोगें उतना ही तुम्हारा फायदा है, तुम्हें उतनी ही जल्दी तरक्की दी जायेगी ।"[1]

" मैं तो इन से यहाँ तक परेशान हो चुका हूँ कि मैंने सार्जेंट से कह दिया है कि जो मजदूर बदमासी करता नजर आये, उसको पहले गोली के घाट उतार दो, पीछे जो खर्च होगा मैं सहर्ष खर्चकर डालूगां।" [2]

2.6.5.4 इन पूंजीपतियों को इतने पर भी शान्ति न थी वे मजदूरों और निर्बल वर्ग की इज्जत से खेलने लगे । रामनाथ ने अपनी पत्नी उर्मिला की सतीत्त्व रक्षा में सेठ वामनदास की हत्याकर दी । रामनाथ गिरफ्तार हुये और जेल भेज दिया गया । वामनदास की पुत्री ने अपने पिता के कुकर्मों की क्षमा रामनाथ से तथा उसकी रिहाई की कोशिश की लेकिन पूंजीपतियों और उनकी समर्थक ब्रिटिश सरकार ने विचारे निर्दोष रामनाथ को प्राण दण्ड की घोषणा सुना दी । श्रमिक वर्ग इस हृदय दग्ध की घटना कोसहन न कर सके और उन्होने इस अन्याय का विद्रोह किया लेकिन पूंजीपतियों ने दबा दिया ।------

" श्रमिक वर्ग चिल्ला उठा - अन्याय, घोर अन्याय है ।" पुलिस इसको लिये पहले तैयार थी । उसने उत्तेजित भीड़ पर लाठी चार्ज कर दिया शान्ति रखने के लिये वचन बद्ध होते हुये भी मजदूर बिना कारण के लाठी प्रहार सहा न कर सके, उन्होने भी ईंट पत्थर और लाठी चलाना आरम्भ कर दिया ।

==

1:- विसर्जन -- डा० प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ--68

2:- विसर्जन -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ -- 68

सशस्त्र पुलिस प्रतीक्षा कर रही थी उसनेआंख मूंद कर फायर करना शुरू कर दिया । मजदूरों की लाशों पर लाशें गिरने लगी । जिनको भागने का अवसर मिला वह भाग गये और शेष घायल तथा मृत होकर अदालत के प्रांगण में पड़ गये । पांच मिनट के पश्चात पूंजीपतियों के अतिरिक्त कोई भी श्रमिक वर्ग का साथी वहां नहीं था ।[1]

2.6.5 नीच, उधम, दुराचारी, नैतिक दुर्बलताओं से युक्त मदान्ध हर असम्भव कार्य करने को भी सम्भव करने वाला पूंजीपति वर्ग निर्बल जनता के ऊपर छाया रहता था । इसी नीति का वर्णन चन्द्र नाथ ने किया है -

"हमारा ध्येय है मजदूरों को कम-कम मजदूरी देना गुलामों की भांति इनसे काम लेना और उसी भांति उनके स्त्री बच्चों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना ।"[2]

इन पूंजीपतियों ने पूंजी के माध्यम से हर चीज पर अपना अधिकार कर लिया है। चाहे कानूनी हो या गैर कानूनी एक मिल मालिकपूंजीपति चन्द्रनाथ के कथानुसार -

"पूंजीपति इस ब्रहमाण्ड की अजेय शक्ति है भौतिक और अभौतिक सभी प्रकार के सुखों को प्राप्त करने का साधन पूंजी है । पूंजी के बल से ही क्षुद्र शक्ति वाला मानव इतना बलवान हो जाता है कि वह भगवान पद को प्राप्त करता है, और संसार में पूंजित होता है। देवताओं और असुरों का भेद इसी पूंजी के सिद्धान्त पर अनादि काल से होता है । xxxx xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx पूंजीपति अपनी पूंजी की रक्षा के लिये लड़ता है और पूंजीहीन व्यक्ति उसको हथयाने के लियेअपना जीवन विसर्जन करता है।"[3]

- -

1- विसर्जन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 64-65

2- विसर्जन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 75

3- विसर्जन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 217

2.6.5.6 दूसरी और श्रमिक जीवन था जो अत्यन्त निम्न कोटि का है :--

"यहां के काम करने वाले मजदूर जहां तहां बसे हुये थे, किन्तु फिर भी कई एक ऐसी बस्तियां उत्पन्न हो गयी थीं जहां मजदूरों की आबादी विशेष रूप से थी । वहां से निकलना वैसा ही था जैसा रौरव नर्क से गुजरना । चारों ओर फटे हुये टाटों की दीवालें उठी हुई थी नाली के एक सिरे दूसरे सिरे तक मलमूत्र बिखरा हुआ था ।"[1]

शनैः शनैः इन श्रमिकों में भी जागृत भावना पैदा हो गयी । हरखू की मां कुमुदनी के भला बुरे कहने पर कहने लगी--

"बहु जी, मैं गरीब हूँ तो क्या मैं इज्जत है । चक्की पिसवाना और किसी से । मुझे नौकरी की भटक नहीं है । अकेला तो पेट है, जहां मेहनत मजूरी करूंगी, वहीं खाने भर को दो पैसा पैदा कर लूंगी ।"[2]

2.6.5.7 सेठ वामनदास की सुपुत्री "कनक" को वासना का शिकार बनाने में असमर्थ मिल मालिक पूंजीपति चन्द्रनाथ, विलासी जिलाधीश निक्सन ने षडयन्त्र रचकर कनक की सम्पत्ति हड़प कर ली "कनक" को देशद्रोही का आरोप लगाकर कालेपानी की सजा मिली । दुर्भाग्य से मिस्टर निक्सन का स्थान्तरण भी हो जाता है । निक्सन उर्मिला को वासना का शिकार बनाने के लिये पकड़ लेते है लेकिन "कनक" चिल्ला उठती है तो निक्सन रिवाल्वर निकाल कर मारने को उद्यत होते हैं सौभाग्य से खुद ही पिस्तौल के शिकार हो जाते है। कनक डा० सेन की सहायता से रामनाथ को प्राप्त कर लेती है लेकिन अन्त में उर्मिला को रामनाथ अर्पित कर देती है ।

1:-विर्सजन -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ --126

2:-विदा-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ -- 17

2.6.5.6 दूसरी ओर श्रमिक जीवन था जो अत्यन्त निम्न कोटि का है :—

"यहाँ के काम करने वाले मजदूर जहाँ तहाँ बसे हुये थे, किन्तु फिर भी कई एक ऐसी बस्तियां उत्पन्न हो गयी थीं जहाँ मजदूरों की आबादी विशेष रूप से थी । वहाँ से निकलना वैसा ही था जैसा शौख नर्क से गुजरना । चारों ओर फटे हुये टाटों की दीवालें उठी हुई थी नाली के एक सिरे दूसरे सिरे तक मलमूत्र बिखरा हुआ था ।"[1]

शनैः शनैः इन श्रमिकों में भी जागृत भावना पैदा हो गयी । हरखू की माँ कुमुदनी के भला बुरे कहने पर कहने लगी—

"बहु जी, मैं गरीब हूँ तो क्या मैं इज्जत है । चक्की पिसवाना और किसी से । मुझे नौकरी की भटक नहीं है । अकेला तो पेट है, जहाँ मेहनत मजूरी करूंगी, वहीं खाने भर को दो पैसा पैदा कर लूंगी ।"[2]

2.6.5.7 सेठ वामनदास की सुपुत्री "कनक" को वासना का शिकार बनाने में असमर्थ मिल मालिक पूंजीपति चन्द्रनाथ, विलासी जिलाधीश निकसन ने षडयन्त्र रचकर कनक की सम्पत्ति हड़प कर ली "कनक" को देशद्रोही का आरोप लगाकर कालेपानी की सजा मिली । दुर्भाग्य से मिस्टर निकसन का स्थानान्तरण भी हो जाता है । निकसन उर्मिला को वासना का शिकार बनाने के लिये पकड़ लेते है लेकिन "कनक" चिल्ला उठती है तो निकसन रिवाल्वर निकाल कर मारने को उद्धृत होते हैं सौभाग्य से खुद ही पिस्तौल के शिकार हो जाते है। कनक डा० सेन की सहायता से रामनाथ को प्राप्त कर लेती है लेकिन अन्त में उर्मिला को रामनाथ अर्पित कर देती है ।

==

1:-विर्सजन — प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ —126

2:-विदा— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ — 17

2.6.5.8 अन्त में चन्द्रनाथ एवं निकसन दोनों ही अपने अपने अपराधों को स्वीकार करते है । पामीला एवं श्रीमती निकसन निर्धन के पसीने एकत्र की हुई सम्पत्ति को जन सेवा में लगा देती है । तथा स्वयं तथा स्वंय जन सेवा में सलंग्न हो जाते है ।

"यंत्र तत्र "[1] श्रीवास्तव जी आत्मा परमात्मा , दुःख - सुख , लाभ- हानि,हास - विलास, जीवन- मृत्यु , पाप-पुण्य का तात्त्विक एवं दार्शनिक वर्णन भी किया है ।

2.6.5.9 श्रीवास्तव जी ने दाम्पत्य प्रेम में जो प्रेम, सौहार्द होता है उसके साथ साहब दीन एवं यशोदा के माध्यम से कटुता एवं वैषम्य को प्रकट किया है । साहबदीन अपनी पत्नी को सिर्फ एक दासी की तरह रखता है वह उसे लात मारकर घर से निकाल देता है और कहता है :--

"यह सम्पत्ति तेरे बाप की नहीं है मेरे बाप दादों की और मेरी कमाई हुई है । इसमें तेरा कोई हक नहीं है । निकल मेरे घर से रोज रोज का झगड़ा तो मिटे ।"[2]

2.6.5.10 श्रीवास्तव जी ने " विर्सजन में नारी समस्या पूंजीवाद की समस्या , श्रमिक वर्ग की समस्या ,राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय समस्यों के साथ साथ नाफाखोरी , निर्बल ग्रामीणों की समस्याओं का सफल चित्रण किया है ।

==

1:- विर्सजन — 119,121,217,270,271,392
लेखक :- प्रताप नारायण श्रीवास्तव

2:-विर्सजन — पृष्ठ—-240
लेखक:- प्रताप नारायण श्रीवास्तव

" विर्सजन " का शाब्दिक अर्थ है— छोड़ना , परित्याग होना , बिना होना , चला जाना , समाप्ति, आवाहन किये हुये देवता से पुनः स्वस्थान गमन की प्रार्थना करना आदि । श्रीवास्तव जी ने श्रमिकों में हीनता की भावना का परित्याग , नारियों में अत्याचार के खिलाफ विद्रोह , पूंजीपतियों के प्रति गुलामी से छुटकारा अन्त में निकलन और चन्द्रनाथ का अपराध स्वीकार करना घटनाएं उपन्यास की सार्थकता को सिद्ध करने में सहायक है ।

2.6.6

((बेकसी का मजार)) ।

2.6.6.1 श्री अमर कथा शिल्पी प्रताप - नारायण श्रीवास्तव जी का "बेकसी का मजार " ऐतिहासिक उपन्यास है । इसमें श्रीवास्तव जी ने 1857 की क्रान्ति का वर्णन किया है ।

नित्य के जीवन में हम देखते है कि कोई कल निर्धन था तो आज धनवान , यदि कल उन्नति के शिखर पर था तो आज अवनति की गर्त में पड़ा है । महान् से महान् राष्ट्र जो कल उन्नति के शिखर पर था आज गुलामी के पंजे में और जो कल दासता की बेड़ी में जकड़ा ,था आज वह स्वतन्त्र है । ठीक ऐसे ही विश्व की कितनी सभ्यता ने अपने वैभव के गर्व के साथ गीत गाये लेकिन आज उनकी ध्वनि भी नहीं सुनाई देती है । यदि उत्थान और पतन का क्रम सृष्टि के साथ चलता रहता है ।

==

1:- बेकसी का मजार --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव— प्रकाशन भारतीय प्रतिष्ठान , पी0 रोड कानपुर

2.6.6.2 भारतीय जनता ने जब अपनी गुलामी की जंजीर काट डालने की कोशिश की तो उसे वहीं का वहीं दबा दिया गया जहाँ से उठी थी लेकिन यह देशप्रेम की भावना पूरी तरह से बुझी नहीं। भारतीय जनता अंग्रेजों के खिलाफ अपनी आवाज खोलने लगे । कहा भी जाता है---

"सब दिन जात न एक समान ।"

श्रीवास्तव जी ने इस उपन्यास का केन्द्र स्थल दिल्ली को और अन्तिम मुगल सम्राट बहादुर शाह जफर को चुना । जो वृद्ध और देश प्रेम की भावना के वशीभूत, धार्मिक प्रवृत्ति के है। किन्तु क्रांतिकारियों के आग्रह करने पर वह उनका नेतृत्व करते है ----

"या खुदा इस जईफी में तू मुझे कैसे कठिन इम्तिहान में डाल रहा है । हाथ पैरों में ताकत नहीं, तलवार कैसे पकडूगां । "[1]

और कहते है ---

" भाइयों तुम्हारा बादशाह खुद पनाह ढूंढता है, लेकिन उसे कही भी सिर बचाने की गुजांइश नहीं देख पड़ती । तैमूरी खानदान का सूरज डूब रहा है, नहीं बल्कि डूब गया है । अब उसमें इतना तेज नहीं है कि वह आप लोगों को गर्मी बख्शें ।" [2]

2.6.6.3 बहादुर शाह जनता के आग्रह पर उनका दिल तो रख देते है लेकिन कहते है जिस दिन हमें कोई योग्य मिल जायेगा उसे यह सब अधिकार सहर्ष उसी को समर्पित कर देंगें ।

==

1:- बेकसी का मजार --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव---पृष्ठ---357

2:-बेकसी का मजार --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ---363

अधर अंग्रेज भी जवानों को बहादुर शाह के खिलाफ भड़काया करते थे-----

" वे सारी पेंशन अपनेही ऐश में खर्च करते हैं, बुढ़ापे में भी शादी की है, वे पक्के फरेबी, झूठे और जाहिल हैं, और हिन्दुओं के घोर शत्रु है, और जो रियाया को हमेशा लूटा करते है, और रैयत की स्त्रियों को दिन दहाड़े लूट ले जाते है, नाहक खून खराबा करते रहते है।

2.6.6.4 गुलशन, शाहसाहब, नाना-साहब, अस्करी माता बदलसिंह, जवां बख्त, अजीमुल्ला, मौलवी, अहमदुल्ला, हजरत महल, आदि जगह जगह क्रांतिकारियों को प्रोत्साहित करते तथा देश के कौने- कौने में अपने गुप्तचर भेजकर क्रांति की तैयारी शुरू कर देते है। शाह साहब, लखनऊ, अवध बिठूर, पटना, कलकत्ता, कानपुर मेरठ, झांसी, कालपी, आदि जगह क्रांति का सन्देशा भेजते है 31 मई निश्चित करते है। अजीमुल्ला का इग्लैंण्ड जाना एवं युद्ध को नजदीक से दिखाकर श्रीवास्तव ने कल्पना का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है।

2.6.6.5 अंग्रेज सरकार वृद्ध मुगलसम्राटशाह को बन्दी बना लेते है और उनके पुत्रों की निर्मम हत्या कर देते है। वृद्ध बहादुर शाह को देश निष्काषित किया जाता है। साथ में बेगम जीनतमहल, जवां बख्त (पुत्र) एवं शाहजादी को विक्ट्री जहाज द्वारा रगून की ओर ले जा रहा था लेकिन मार्ग में छदम वेश में अजीमुल्ला और गुलनार पहुंच जाते है और चलने के लिये बहादुर शाह से कहते है वह कहते है ------

"अजीमुल्ला मुझे अफसोस है कि मैं तुम्हारे साथ नहीं चल सकता है हिन्दुस्तान का बादशाह भगोड़ा नहीं है। वह जंग करते करते हारा है, जरूर, मगर जान के डर से भागेगा नहीं।

इसके अलावा मैं फिरंगियों की कैद में मरकर जी कर गुजरूंगा, वह बयावां में ठोकरे खाते भटकते हुए मर कर नहीं कर सकूंगा। मैं मर कर भी जिन्दा रहूंगा, मेरी मौत इस जिन्दगी को खत्म कर दूसरी शक्ल में मुझे बहुत जल्द तबदील करेगी, उस समय मैं चिराग की तरह रोशन हो आजादी पर कुर्बान होने वाले शहीदों का रहनुमा बनकर उन्हें रास्ता दिखा सकूंगा।"[1]

2.66.6 उपन्यास के पात्र बहादुर शाह, जीनत महल, शाहसाहब, नानासाहब, लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे, अहमदुल्ला, अजीमुल्ला, बेगम हजरत महल, हडसन, कर्नलस्मिथ एवं वाजिद अली आदि ऐतिहास सम्मत् एवं घटनाएं भी ऐतिहास सम्मत् हैं। प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने पात्रों में देश प्रेम की भावना भी खूब कूट-कूट कर भरी है :-

" जिसकी मिट्टी पानी से यह तन बना है, जिसकी हवा से यह जिन्दा रहता है, जिसकी आग से यह हरकत करता है, उसके साथ बेवफाई नहीं कर सकता। इस पर आंच आने से पहले मैं उसे अपने तन पर झेलूंगा और अगर इसकी हिफाजत न कर सका तो मरकर इसी खाक में मिल जाऊंगा। वतन की खाक और पानी अन्नत से ज्यादा अकसीर है। जब तक जिन्दा हूँ तब तक इसकी खाक का चन्दन लगाऊंगा और मर कर इसी में जर्रा- जर्रा होकर मिल जाऊंगा।"[2]

1:- बेकसी का मजार --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव--पृष्ठ --550

2:- बेकसी का मजार --प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ --182

2.6.6.7 इस उपन्यास का कलेवर बड़ा है क्योंकि यह विषय ही व्यापक एवं घटनाओं का आधिक्य फिर भी घटनाओं के बाहुल्य होने पर भी उनको एक सूत्र में पिरौना श्रीवास्तव जी की सफलता का द्योतक है ।

श्रीवास्तव जी ने उपन्यास का नामकरण भी नेता के अनुरूप ही किया । उपन्यास आद्यन्त आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक एवं सूक्ष्म है बहादुर शाह के ही अन्तिम शब्द देखिये ———

" न किसी की आँख का नूर हूँ न किसी के दिल का करार हूँ। जो किसी के काम न सके, वह एक मुश्त गुबार हूँ ।।

× × × × × ×

"कोई मुझ पर फूल चढ़ाये क्यों कोई लाके शमा जलाये क्यों,
कोई मुझ पै अश्क बहाये क्यों कि मैं बेकसी का मजार हूँ ।।"।

2.6.6.8 सूर्य जब उदय होता है तब उसकी आभा लाल होती है और जब अस्त होता है तब भी उसकी आभा लाल ही होती है अतः उसके उदयास्त में कोई अन्तर नहीं आता। कहा भी है ——

"उदेति सविता ताम्रस्ताम्र एवास्तमेतिच ,
सम्पतौ च विपतौ च महतामेक रूपता ।।"

गीता में भगवान कृष्ण ने भी यही उपदेश दिया है :——

" सुख दुःखे समेकृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ,
मय्यर्पित मनोबुद्धि भक्तिमान्यः समेप्रिय : ।"

यानी सुख - दुख में, लाभ - हानि में, जय-पराजय में समान भाव रखते हुये अपना मन और बुद्धि देने वाला भक्त मुझे प्रिय है। मेरा आशय यहाँ सिर्फ इतना ही है कि भयानक से भी विपत्ति में भी मनुष्य को हतोत्साहित नहीं होना चाहिए । बहादुर शाह को श्रीवास्तव जी ने बिल्कुल ऐसा ही रूप दिया ।

===

1:-बेकसी का मजार ——प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ—552

सही कहा जाता है------

"समय की शिला पर मधुरलेख कितने,
किसी ने बनाये किसी ने मिटाये ।।"

2.6.7

ऽऽ बिषमुखी ऽऽ[1]

2.6.7.1 प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने "बिषमुखी" उपन्यास की कथावस्तु उनकी बहुमुखी प्रतिभाकी द्योतक है। यद्यपि इसकी वस्तु दीर्घ है लेकिन रोचकता ज्यों कि त्यों रही। श्रीवास्तव जी ने इसमें समस्याओं का जमघट कर दिया है लेकिन उनका समाधान भी ढूंढ़ने में सफल रहे हैं।

"विश्व स्वास्थ संघ" की बैठक में भाग लेने के लिये जाते हुये विश्वनाथ एवं क्रान्ति जलयान के दुर्घटनाग्रस्त होने पर एक दूसरे के करीब आ जाते है। स्वाभिमानवी स्वतन्त्रता एवं पाश्चात्य सभ्यता की पोषक, कर्मवादी कान्ति कप्तान सुरेशचन्द्र की पत्नी कहे जाने पर उनसे आक्रोश प्रकट करती है। लेकिन काल चक्र उसे विश्वनाथ के लाकर खड़ा कर देता है ------

"तो यह कहिये कि आप जितना बड़े भैया से दूर भागती गई, नियति उतना ही आपको उनके समीप घसीटती गयी।"[2]

सुहासिनी उसके द्वारा सन्देहों का निवारण करने पर एवं विश्वनाथ के द्वारा प्राणों रक्षा किये जाने पर वह उसकी ओर आकृष्ण हो जाती है तथा विवाह कराने के लिए तत्पर हो जाती है।

1:- बिषमुखी ---प्रताप नारायण श्रीवास्तव --भारती प्रतिष्ठान कानपुर

2:-बिषमुखी --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ ---116

2.6.7.2 इस उपन्यास में वर्णित घटनाएँ वास्तविक है जैसे मोबां सर्प की पूजा, सर्प के काटने से काटने वाले के शरीर में सर्वात्मा का प्रवेश और कालेलू द्वारासर्वात्मा का शरीर से बाहर निकलना आदि । यह घटनाओं उपन्यास में रोचकता बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई है ।

2.6.7.3 श्रीवास्तव जी ने इस सामाजिक उपन्यास में सयुंक्त परिवार की समस्या ~~की समस्या~~ को भी उभारा है । क्रान्ति की सौतली मॉराजेश्वरी अपने सौतले पुत्रों के व्यवहार से दुखी रहती है और ~~में~~ वह वैश्या भी उन्हीं के द्वारा बनाई जाती है :------

"लाने वालो तो हम लोग है, क्योंकि तुम्हारे सौतले लड़कों ने तुमको एक हजार रूपया में बेंच दिया है ।"[1]

इतना ही नहीं और भी देखिये -------

" उनके कहे अनुसार काम करने में ही मेरी भलाई पड़ती थी इसके अतिरिक्त दूसरा मार्ग भी नहीं थी । सौतले पुत्रों के व्यवहार से मेरी रक्षा उस घर में जाने की न होती थी ।"[2]

2.6.7.4 प्रेम गुण रहित , आकार रहित, कामना रहित , प्रतिक्षण बढ़ता रहता है । विच्छेद रहित , सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर है । प्रेमी जब स्वयं प्रेममय बन जाता है तो उसे प्रेम ही प्रेम दीखता है ~~प्रेम मय~~ में भगवान के सिवा उसेकोई अन्य वस्तु दिखाई नहीं देती है । इसमें शारीरिक शक्ति का हनन होता है और आंतिरिक शक्ति का वर्धन होता है ।

1:- बिषमुखी --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव--- पृष्ठ ---318

2:- बिषमुखी --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --- पृष्ठ ---319

जिसे प्रेमी अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर लेता है। श्रीवास्तव जी इस पर भी प्रकाश डाला है:--

" तपस्या और मानसिक बल से ऐसा होता है भारतीय मुनि और महर्षियों के अक्राश्रमों में भी ऐसा होता था। इनके तपोबल से हिंसक और बिषमय प्राणी निरीह हो जाते हैं। xxxxxxxxxxxxxxxxxxसूक्ष्म शक्तियाँ तो स्थूल शक्तियों से अधिक प्रभाव शाली होती है और वे ऐसा करने में समर्थ हैं। यह शक्ति निरन्तर अध्यवसाय और स्थूल शक्तियों को नष्ट करने से प्राप्त होती है।[1]

2.6.7.5 श्री वास्तव जी ने विज्ञान और कल्पना के रंग से रंगे हुये इस उपन्यास को नामकरण अपनी सार्थकता सिद्ध करता है।

" साँप का विष तो केवल उसके एक दांत में होता है, किन्तु वह सम्पूर्ण रूप से विषमुखी हो गयी थी।"[2]

1:- विषमुखी --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ --156

2:- विषमुखी --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ ---265

2.6.8

॥ वेदना ॥[1]

2.6.8.1 प्रस्तुत उपन्यास में प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने अवैध संतान समस्या का चित्रण किया है।अवैध संतान से तात्पर्य जारज संतान से है । जारज संतान को हेय दृष्टि से तो देखा ही जाता है साथ साथ वह समाज के कलंक स्वरूप होते है । ऐसी ही दुर्घटना लखनऊ के सम्मानीय मिनिस्टर श्री भैरव दत्त की पुत्री किरण के साथ होती है । भैरवदत्त अपनी धर्मपत्नी ज्योतिर्मयी के साथ सुख पूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे जो शिक्षित एवं सर्वगुण सम्पन्न एवं नवीनता के पोषक है । उनमें कहीं भी अभिमान, बड़प्पन , कटुता नहीं है वह हमेशा प्रसन्नचित , जीवन में सरलता एवं पवित्रता और सादगी से पूर्ण है । पति पत्नी में आपस में खूब पटती है :---

"अच्छा जैसा तुम बताओगी वैसा ही बोलूगां । सुबह - सुबह लोग तोते को राम- राम बोलना सिखाते है , और तुम मुझे झूठ बोलने की शिक्षा देती हो। तुम्हारे राज में रहना है , तुम्हारे जैसी बात करनी ही पड़ेगी ।"[2]

2.6.8.2 ज्योतिर्मयी गंवार और अनपढ़ है:---

" तुम तो बाल की खाल निकालती हो , आज बहुत कानून बघार रही हो ।"

" मिनिस्टर की बीबी बनने की योग्यता प्राप्त कर रही हूँ ।

"बदकिस्मत यदि सुबह का भूला शाम को घर आ जाये तो भूला नहीं कहाता ।"

" लेकिन मेरी धज तो देहातिन ही रहेगी ।"

कोई हर्ज नहीं : जब खमीर बदल जायेगा , तो ऊपरी सज धज बदलने में कितनी देर लगती है ।"

1:- वेदना--- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --- प्रकाशन भारतीय साहित्य मन्दिर दिल्ली ।

2:-वेदना---प्रताप नारायण श्रीवास्तव--- पृष्ठ--13

" तुम तो ज्यों ज्यों बूढ़े होते हो , त्यों त्यों .....

"गंवार और देहाती हो ते जाते हो । " भैरव ने ज्योति का वाक्य पूरा किया । पति पत्नी दोनों हंसने लगे । [1]

2.6.8.3 श्रीवास्तव जी ने दाम्पत्य जीवन के उदाहरण किसी न किसी रूप में हर उपन्यास में किया है । भैरव दत्त और ज्योतिर्मयी के इसी हर्षानन्दमय जीवन की यात्रा कर रहें थे । किरण ज्योतिर्मयी किरण को शिक्षा ग्रहण करने के लिये दिल्ली भेजने के प्रस्ताव के खिलाफ है । क्योंकि वह भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की समर्थक है । लेकिन पति द्वारा अत्याधिक अनुरोध भी न ठुकरा सकी और अनुमोदन दे देती है । किरण वहाँ अपनी सहेली प्रभा तथा उसकी माता सोरा,जो अपने पति राजनाथ से प्रतिशोध लेने के लिए, प्रेमनाथ एवं शाशि के चरित्र भ्रष्ट पुत्र एंव पुत्री के कर देती है । वही किरन को भी अपने जाल में फसां लेती है । किरण गर्भावस्था को प्राप्त हो जाती है । वह पहले तो आत्म हत्या करना चाहती है लेकिन वह मां बाप के दर्शन करने के उद्देश्य से लखनऊ की ओर प्रस्थान करती है ।

2.6.8.4 किरण की मां ज्योतिर्मयी को जब इस जघन्य अपराध के बारे में ज्ञात हुआ तो वह अदम्य साहस से काम लेती है अपने अन्तरतम् के मनोभावों को छिपा लेती है जैसी कोई खास बात ही न हुये हो । पति भैरव दत्त को सुना देती है । भैरवदत्त किरण से कहते हैं :------

" इस तरह को व्याकुल नहीं होता । अभी हम दोनों तुम्हारी रक्षा के लिए है । यदि यह भेद हमें पहले मालूम हो जाता ,तब तो किसी दिक्कत का सामना ही न करना पड़ता । किन्तु अब भी कुछ नहीं बिगड़ा , सब ठीक हो जायेगा । भला इस छोटी से बात के लिये तुम्हें फांसी लगाने की क्या जरूरत थी । मैं इन गात्रों को कोई अहमियत नहीं देता । न मैं यह

===

1:- वेदना---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ----पृष्ठ ---112-113

स्वीकार करने के लिये तैयार हूँ कि तुमसे कोई अपराध या पाप हुआ है। तुमको शर्माने पर मुहँ छिपाने की कोई जरूरत नहीं है। एक दो दफ्तों में तुम्हारी हालत पहले जैसी हो जायेगी।"[1]

2.6.8.5 श्रीवास्तव जी यहाँ भैरवदत्त को देवत्व से भी ऊपर उठा दिया। भला यह कभी नहीं हुआ है न होगा जब कि किसी बाप की पुत्री के कौमार्यावस्था में गर्भ आ जाय और बाप कहे कोई बात नहीं। दूसरी बात श्री-वास्तव जी ने यह भी उठायी है कि उस वक्त अवैध सम्बन्ध रहे गर्भों का गर्भपात करा दिया जाता था। तीसरी यह कि जारज सन्तान को हेय और निकृष्ट दृष्टि से देखा जाता था। इस समस्या को श्रीवास्तव जी ने व्यापक रूप दिया है ------

"उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि मानों वह उनसे प्रश्न कर रहा है कि मेरा भविष्य क्या होगा। क्या मैं भी इन जारज बालकों की भाँति अपने प्रकृति माता पिता के स्नेह से वंचित रखा जाऊंगा। अपने माता पिता की अवैधता के लिये मुझे दंडित किया जायेगा। उनके हृदय से अन्याय के लिये घृणा उत्पन्न हुई और वह क्षुब्ध हृदय हो गये।"[2]

2.6.8.6 श्रीवास्तव जी ने इस समस्या के निराकरण के लिये यह समाधान निकाला-----

"एक आश्रम स्थापित करो, और उसमें इन लड़कों को लाकर भर्ती करो उन्हें पढ़ाई के साथ साथ दस्तकारी कार्यों की भी तालीम हो। अगर सब नहीं तो कुछ जरूर सुधर जायेंगे। मेरा विश्वास है कि हर इन्सान तरक्की करना चाहता है।"[3]

==

1:- वेदना- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ -- 12-13

2:-वेदना- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ --59

3:- वेदना-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ ---215

लौरा जो राजा भीमसिंह से अवैध सम्बन्ध रखती थी। और उसकी पहली सन्तान प्रेमनाथ राजा भीमसिंह की ही थी, अन्त में वह भीमसिंह के पास जाकर राजनाथ की हत्या का षडयंत्र रचती है लेकिन वह राजनाथ की हत्या न कर सकने के कारणऔर ग्लानि, लज्जा एवं क्षोभ के कारण आत्म हत्या कर लेती है। उधर भीमसिंह अपने पुत्र प्रेमनाथ के प्राणों की रक्षा के निमित्त किरण को भैरवदत्त से माँग लेते है। प्रभा एवं प्रेमनाथ किरण से क्षमा माँगते है। सरल स्वाभावी बालिका किरण उन्हें क्षमा ही नहीं करती बल्कि कहती है :--------

" प्रेम मैं तुमको मरने नहीं दूंगी। तुम्हारे सिवाय मेरी गति भी तो नहीं है। किसी अन्य के साथ मैं विवाह नहीं कर सकती। इस देह की पवित्रता तुमसे खंडित हुई है, तुम्हारे अतिरिक्त इसका कोई अधिकारी नहीं।"[1]

2.6.8.7 श्रीवास्तव जी ने " विदा" विजय" वरदान" आदि में माँ के चरित्र को काफी, सम्मान व इज्जत दी है लेकिन " वेदना"में लौरा जैसी माँ का चित्रण करके अपनी व्यापक बुद्धि का परिचय दिया।

2.6.8.8 श्रीवास्तव जी का " वेदना" नामकरण सार्थक है किरण के कौमार्यावस्था में गर्भ आने से ज्योतिर्मया एवं भैरवदत्त की वेदना और प्रेमनाथ का पश्चाताप एवं स्वंय किरण की वेदना जो, अकथनीय है, आदि घटनायें नामकरण की सार्थकता सिद्ध करने में सक्षम है।

2.6.8.9 श्रीवास्तव जी ने स्त्री जाति के अन्तर में निहित वेदना को मूर्त रूप देना चाहा है। "वेदना" दुःखग्रस्त मानव की मूंक अभिव्यक्ति है।

1:- वेदना-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ -- 422

2.6.9

﴾ विश्वास की वेदी पर ﴿ [1]

2.6.9.1 अमरकथा शिल्पी श्री प्रताप-नारायण श्रीवास्तव ने इस उपन्यास के माध्यम से राष्ट्रीय समस्या का यथार्थ अंकन किया है। साथ ही साथ वासनात्मक प्रेम का भी बड़ा मनोहारी चित्रण किया।

चीनी नवयुवती सूया अपने पिता चिनमिन्ह के साथ दिल्ली में रहती है। वह कैप्टेन अर्जुन सिंह को अपनी वासना तृप्ति का शिकार बनाती है। अर्जुन सिंह भी उसके रूप सौन्दर्य में आसक्त होकर अपने माँ बाप एवं धर्मपत्नी मंजुला का भी परित्याग देता है। चीनी नवयुवती सूया रूपवती एवं सेक्सी युवती है--------

" सूया की केशराशि कैप्टन की ठुड्डी को स्पर्श करती हुई उसे पुलकित कर रही थी। उसके सिर से निकलती हुई सुगन्ध उसे मुग्ध कर विवेक हीन बनाये लगी।"

" सूया उसके समीप आकर उसको अपने बाहुपाश से बाधती हुई बोली, जन्म से नहीं किन्तु संस्कार से अब तुम चीनी हो गये। हमारी तुम्हारी मिलन की बाधाऐं समाप्त हो गयी। मैं अब मन, वचन, कर्म से तुम्हारी हूँ।"[2]

2.6.9.2 सूया का प्रेम सिर्फ वासनात्मक प्रेम है, एक पुरुष से उसकी तृप्ति कभी होती नहीं है।

==

1:-विश्वास की वेदी पर--प्रताप नारायण श्रीवास्तव--प्रकाशन ओरिएण्टल बुक डिपो दिल्ली

2:-विश्वास की वेदी पर -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव--पृष्ठ--87-88

पहले वह फौज के एक न एक प्रतिष्ठित व्यक्ति को चीनी हिन्दी संघ का सदस्य बनाती फिर उसे आकर्षित करती। अर्जुन सिंह से अब जाने पर उसने प्रमोद को शिकार बनाने का भरसक प्रयास किया लेकिन जब वह असफल हो गयी तो वह प्रमोद की जान की शिकार बन गई। अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये वह उसे चीन भेजती है। चीन पहुँचने पर लू जो प्रमोद की हत्या करने के उद्देश्य से सूया के द्वारा भेजी गयी थी वह वहां अपनी वास्तविक स्थिति को बताती है---

"यह सब सरकारी है, हमारा निजी कुछ नहीं है वेतन उतना मिलता है जितना भारत के साधारण कर्मचारी को मिलता होगा। मणि आदि सब सरकारी हैं, और आप लोगों के कारण हम यहां है। आपके जाते ही वैभव के सब सामान छिन जायेगें और पैदल रगड़ना पड़ेगा।"[1]

2.6.9.4 इधर सूया और उसके पिता चिनमिन्द में अनबन हो गयी एंव चिनमिन्द सूया की हत्या कर देते है। चिन्हमिन्द को प्राणदण्ड दिया जाता है। प्रमोद, मंजुला, दामिनी, अमृता, एंव अर्जुन सिंह में देश प्रेम की भावना का उदय होता है। यह सब मिलकर देश की रक्षा का प्रण करते है :---

"वे आक्रामक हैं, और हम रक्षक/आक्रामक का बल केवल पशुबल पर आधारित होने से वह पंगु है, क्योंकि उसकी भूमि अन्याय, प्रतिहिंसा और निम्न कोटि का स्वार्थ है। इसके विपरीत रक्षक शक्ति, न्याय, अहिंसा, और सब पर आधारित होने से वह अनेक है।"[2]

==

1:-विश्वास की वेदी पर — प्रताप नारायण श्रीवास्तव—पृष्ठ—188

2:-विश्वास की वेदी पर— प्रताप नारायण श्रीवास्तव—पृष्ठ—339-340

2.6.9.5 श्रीवास्तव जी ने सूया के समान ही वासना प्रिय केसर कुंवर का वर्णन भी बहुत अच्छा किया है । केसर कुंवर अपने पति लाला वंशीधर को विषपान कराकर मृत्यु की गोद में सुला देती है और अपने दमाद वेद प्रकाश सहगल के साथ उन्हीं के घर में रंगरेलियां मनाने लगती है लेकिन जब केशर कुंवर का मन उससे भर गया फिर उसने विरजू को अपनी ओर आकर्षित करना शुरू कर दिया लेकिन दामाद के घर में वह विरजू से मिलने में उसने उपयुक्त समझा तो उसने वेदप्रकाश का घर त्याग कर अपने घर आ गयी जहां वह पूर्ण रूप से स्वतन्त्र थी । कहा जाता है कि अकाल मृत्यु से आत्मा को कुछ दिनों यही भटकना पड़ता है श्रीवास्तव जी ने लाला वंशीधर की आत्मा का वैसा ही दिखाया है । भटकती वंशीधर की आत्मा विरजू के शरीर में प्रवेश कर जाती है और उसे इस कुकर्म से रोकती हैं । केसर कुंवर पंडित हरिकृष्ण से गीता पाठ आदि करवाती है । जिससे वंशीधर की आत्मा को प्रेतयोनि से मुक्ति मिले । अन्त में ------

" उसी स्थान पर वंशीधर के प्रेत से वेष्ठित विरजू लेट गया और उसके मुख से तीन बार हरिशरणम्, हरिशरणम्, हरिशरणम् की ध्वनि निकली और सब शान्त हो गया ।"

वंशीधर की आत्मा किसी अनजान लोक को प्रस्थान कर गयी ।" 1

2.6.9.6 श्रीवास्तव जी की आस्था कर्मवाद है । गीता में भी कहा गया है कि मनुष्य के बस में तो सिर्फ काम करना है उसके फल को देना या न देना परमात्मा के हाथ है ------

==

1:- विश्वास की वेदी पर — प्रताप नारायण श्रीवास्तव—पृष्ठ-326

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।"[1]

लाला वंशीधर की आत्मा विरजू के शरीर में प्रविष्ट होकर केसर कुंवर को सत्कर्म का उपदेश देती है ------

"मनुष्य यावज्जीवन कर्म करता है , क्योंकि इस लोक में कर्म ही प्रधान है । उसका समस्त भविष्य कर्म पर आधारित है । कुछ कर्म ऐसे होते है, जिनकी प्रतिक्रिया तुरन्त होती , कुछ की देर से और कुछ जीवनोपरान्त फल देते है । xxxx....xxxxxxxप्रत्येक क्रिया तुरन्त ही तदनुरूप प्रतिक्रिया को जन्म देती है, स्थूल कर्मों की प्रति-क्रिया स्थूल होती है और सूक्ष्म क्रियाओं की सूक्ष्म । सूक्ष्म तत्व वह है जिनका जन्म भावनाओं से होता हैऔर वे स्थूल से अधिक शक्ति शाली तथा ब्रहमाण्ड व्यापी है ,भाव जनित क्रियाओं की प्रति-क्रियाओं अपने सूक्ष्म रूपों में ब्रहमाण्ड में विचरण करती हुई मनुष्य का आगामी जीवन नियोजन करने में संलग्न रहती है । जब आत्मन् पार्थिव शरीर से विमुक्त होता है , तब उसके कर्मों की प्रतिक्रियाओं की रूप रेखा में जो उसके कर्म के साथ साथ तैयार होती रही है, प्रवेश कर नव पार्थिव शरीर प्राप्त करता है । इसी प्रकार आत्मन् भावनाओं के वशीभूत होकर नित्य नवीन योनियों की प्राप्ति और त्याग करता रहता है ।" [2]

===

1:- श्री भगवद्गीता ---- पृष्ठ- 247

2:-विश्वास की वेदी पर -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ-136-137

2.6.9.7 श्रीवास्तव जी का यह उपन्यास राष्ट्रीय चेतना का उद्घोषक एंव नारी के वासनात्मक रूप का यथार्थ अंकन करता है। साथ ही साथ उपन्यास का कथानक भी सुसंगठित, सुसम्बद्ध रोचक एंव जिज्ञासा पूर्ण है। श्री - वास्तव जी परजन्म - पुर्नजन्म एंव कर्मवाद में आस्था रखते हैं, जिसका यत्र तत्र उन्होंने चित्रण किया है। तथा चीन की हत्या पूर्ण कपटनीत का भी उल्लेख देखने को मिलता है जो भाई चारे के नाम पर हिन्दुस्तानियों पर विश्वासघात करते हैं।

2.6.10

¤¤ वन्दना ¤¤[1]

2.6.10.1 श्री वास्तव ने "वन्दना" उपन्यास में "विदा" की को ही गति प्रदान की है। दूसरे शब्दों में अगर हम यह कहे कि वन्दना अपने में पूर्ण उपन्यास नहीं है बल्कि विदा का ही दूसरा खण्ड है तो अतिशयोक्ति न होगी। "व्यालीस"[2] में वर्णित 1942 की कथा की झलकियां भी यत्रतत्र दृष्टिगोचर होती है। यह तथ्य इस बात के धोतक हैं कि श्रीवास्तव जी की "मन"-स्थिति कहीं कहीं अटकी सी रही है। दूसरी बात यह भी हो सकती है कि वह अपनी बात को मूर्ति रूप देने में असफल रहे, इसीलिये बार- बार कोशिश करते रहे। तीसरी बात यह भी हो सकती है कि 1942 की क्रांति का प्रभाव इतना अधिक बड़ा था कि वह अपनी कलम को स्थिर न कर सके।

==

1:- वन्दना — प्रताप नारायण श्रीवास्तव ¤ प्रथम संस्करण ¤ 1961
भारतीय साहित्य मन्दिर फव्वारा नई दिल्ली।

2:- प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन —— डा० उर्मिल गम्भीर —पृष्ठ —26

2.6.10.2 "वन्दना" एक सामाजिक उपन्यास है जिसकी सृष्टि श्रीवास्तव जी ने अपने मित्रों पाठकों के आग्रहस्वरूप की है । इसमें " विदा" कीकहानी को आगे बढ़ाया गया है । वस्तुत: "वन्दना" विदा" का उपसंहार है । पात्र वही है, परिस्थितियां परिवर्तित हो गयी है । कथानक विदेशी और भारतीय भूमि तक विस्तृत है और कतिपय नवीन पात्रों का भी इसमें समावेश किया गया है । वह भी किसी न किसी रूप में "विदा" के पात्रों से सम्बन्धित ही है । [1]

2.6.10.3 प्रताप नारायण श्रीवास्तव सरल हृदय , हसमुख, विनोद प्रिय , स्नेहमय एंव हिन्दू धर्म में आस्था एंव विश्वास रखने वाले व्यक्ति थे । यही छाप उनके पात्रों में परिलक्षित होती है । कथा इस तरह से है कि माधव प्रसाद अपने दोहित्र कमलनयन के साथ रहने लगते है । कमलनयन जर्मनी के हवाई आक्रमणों में घायल हो जाते । चपला कैट कमलनयन की मुखाकृति की निर्मलचन्द्र से साम्य होने के कारण कमलनयन को देखकर अपनी पुरानी स्मृतियों में खो जाती है और इसी वजह से वह कमलनयन को "स्मृतिकुमार " नामकरण करती है । वस वह स्मृतिकुमार को बहुत चाहने लगती है अपनी सहेली सलीमा के साथ स्मृतिकुमार को लेकर वह मिश्र पहुँचती है । " विदा" में मैं पहले ही लिख चुका हैकि चपला का निर्मल से प्रेम विशुद्ध प्रेम है जिसमें त्याग , बलिदान की आभा परिलक्षित होती है। निर्मलचन्द्र के विवाह के प्रस्ताव का चपला विरोध करती है , क्योंकि वह जानती है कि निर्मल विवाहित है । श्री वास्तव जी ने कहीं कहीं आवेश वस वासनात्मक प्रेम का भी चित्रण किया है । चपला और निर्मल के प्रेम को विशुद्ध और भक्ति का रूप दिया है ।

1:- वन्दना —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —— पृष्ठ —113

" निष्काम प्रेम भक्ति है। मैं आपको भक्ति करती हूँ जिस भक्ति से पुजारी अपने भगवान की पूजा करता है, उसी भक्ति से, बल्कि उससे भी अधिक भक्ति से मैं तुम्हारी पूजा करती हूँ। पुजारी मूर्ति की नहीं भगवान की शक्ति को पूजता है। मुझे तुम्हारे शरीर से प्रेम नहीं मैं तो तुम्हारी पूजा करती हूँ। मेरा हृदय तुम्हारे हृदय का दास है। यह प्रेम दो आत्माओं का प्रेम है दो शरीर का नहीं।" [1]

2.6.10.4 श्रीवास्तव जी ने प्रेम का अपने उपन्यासों में विशद वर्णन किया है। चपला निर्मल के प्रेम को भूला नहीं पाती है। क्योंकि उसका प्रेम शरीर (वासनात्मक) का नहीं बल्कि आत्मा (विशुद्ध) प्रेम था। और निर्मल की स्मृति के हृदय में बिठाकर विदेश चली जाती है।

2.6.10.5 "वन्दना" में पहुँचकर चपला का प्रेम आध्यात्मिक रूप ले लेता। जिससे वह इस तरह व्यक्त करती है :-

"मैं अभी तक उनके प्रति अपने मोह को त्याग नहीं सकी हूँ। जिस मूर्ति को हृदय में धारण कर अहर्निश ध्यान करती रही, जिसको भगवान का प्रतिरूप मैंने उसी तरह माना है। जैसे भक्त अपने इष्टदेव को किसी एक रूप में मानता है, तब कैसे उससे विराग हो सकता है। दैहिक मिलन की कामना को भस्म इस आशा पर किया है कि मरणोपरान्त मेरा उसके साथ मिलन होगा। मैंने उनको ब्रह्म के समान अनन्त और विराट माना है। उन्हीं में इस जीवनोपरान्त बूंद के समान समुद्र में मिल जाने की साधना की है × × × × ×

1:- विदा —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव- पृष्ठ --- 324

× × ×× उनके क्षण भंगुर शरीर की मैंने कभी कामना नहीं की, उनकी अनन्त प्रभविष्णु ज्योति की जो आत्मा के रूप में उनके जड़ शरीर में विद्यमान है, जो अणु की भाँति परमविराट ब्रह्म का सूक्ष्म रूप है, जिसमें ब्रह्म और कोई अन्तर नहीं है, उसकी मैंने सतत उपासना की है, अपने चित को उसी के ध्यान अहर्निश लगाया है, तब यह मोह कैसे कलुषित हो सकता है। उस परम ज्योति के तेज से मोह का कलुष तो पहले ही परिष्कृत हो गया है।[1]

2.6.10.5.1 प्रेम कभी भी एक तरफा नहीं होता बल्कि प्रेमी और प्रेमिका दोनों के हृदय में बराबर की ठण्डी आग लगी रहती है। दूसरे शब्दों में अगर हम यह कहें कि "प्रेम की दरिया अथाह होती है।" श्रीवास्तव जी ने प्रेम के विशुद्ध रूप का जितना अधिक "विदा" और वन्दना" में किया उतना किसी दूसरी उपन्यास कृति में नहीं।

2.6.10.5.2 श्रीवास्तव जी ने निर्मल के माध्यम से प्रेम तत्व को निम्न शब्दों में अंकित किया है :——

"उसका जन्म तो तपस्या के लिये हुआ है। भगवान के संकेत से हमारे सामने एक भूला आदर्श उपस्थित करने के लिए वह स्वेच्छाया तपस्या कर रही है। इतना स्पष्ट तो बता चुका हूँ कि उसमें राधा भाव पनपा फूला और फला है"। × ×× × × × × चपला के हृदय-धरातल को राधा तत्व ने अपने अनुकूल समझकर उसपर अपना प्रभाव स्थापित किया। वह जिस प्रकार प्रस्फुटित हुआ है, वह स्वयं आप देख रही हैं।

1:-वन्दना — प्रताप नारायण श्रीवास्तव — पृष्ठ— 446-447

वह प्रयोग नहीं योग चाहती है। अब वह प्रेम योगिनी है।"[1]

प्रेमी की कोई भी वस्तु हो, चाहे वह सजीव हो या निर्जीव वह उसमें अपने प्रियतम के रूप को देखती है इसी लिये प्रेमी की हर चीज उसे प्रेममय लगती है। सच्चे प्रेम की यही पहचान है।

2.6.10.6 स्मृतिकुमार, चपला, कैट, सलीमा मिश्र में रहने लगती है। उस समय में स्वतन्त्रता आन्दोलन चल रहा था निर्मल बाबू भी लज्जावती के साथ अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने की कोशिश कर रहे थे तथा आन्दोलन कारियों का सहयोग दे रहे थे। अन्ततः ब्रिटिश सरकार निर्मल चन्द्र को अपराधी घोषित कर के बरेली की जेल में कैद कर दिया जाता है। लेकिन फिर भी वह उनकी दिल की आवाज को नहीं रोक पाती है। जेलर खान साहब के क्रूर अत्याचारों को देखकर उन्हीं की कोमल हृदया पुत्री नूर अत्याधिक प्रभावित होती है और अपना संयम खो बैठती है। उसकी मनःस्थिति बिगड़ जाती है जिसे देखकर उसकी माँ कुलसुम अपने पति खानबहादुर से क्षमा याचना के लिये कहती है और खानबहादुर निर्मलचन्द्र से क्षमा याचना करते हैं।[2]

निर्मलचन्द्र की सहनशीलता और कर्तव्य परायणता को देखकर ही बरेली के लोग उनके भक्त बनजाते है।

1:- वन्दना —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —— पृष्ठ ——25।

2:- वन्दना—— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —— पृष्ठ —— 158

2.6.10.7 इधर इलाहाबाद पहुँचने पर निर्मलचन्द्र को कमलनयन खो जाने का समाचार मिलता है यह उनके हृदय को झकझोर देती है और वह मुरारी को लेकर साथ में कमलनयन की तलाश में इग्लैण्ड की ओर प्रस्थान कर देते है। इग्लैण्ड में मिस्टर सेसिल और मरफी इतना पूरा साथ देते है और ये कमलनयन को पाने में सफल हो जाते है। वहीं से वह मिश्र पहुँचते है और चपला को पाकर वह भी अतीत की स्मृतियाँ जो लुप्त प्राय हो गयी थी पुनः जागृत हो उठती है। इस बार फिर वह चपला को अपनाने का आग्रह करते है। किन्तु वह मना कर देती है।

दुर्भाग्यवश कमलनयन के सीढ़ियों से गिरने से मस्तिक पर चोट आ जाती है जिससे उसको फिर अपने दुर्घटना पूर्ण जीवन की स्मृतियाँ याद आ जाती है और वह चपला और केट को अपरिचित समझने लगता है।

2.6.10.8 लज्जा, कुमुदनी, शान्ता, सुभाषिणी भी मुरारी के नियन्त्रण पर मिश्र की ओर प्रस्थान करती है। उपन्यास का अन्त सुखद है क्योंकि श्रीवास्तव जी ने 15 अगस्त सन् 1947 को स्वतन्त्रता दिवस पर सब को भारत लौटा-कर देश प्रेम की भावना को भी विकास दिया है। श्रीवास्तव जी हिन्दू धर्म में आस्था व विश्वास रखते थे जो उनके उपन्यासों में स्पष्ट दिखाई देता है। वह ईश्वर का अस्तित्व शक्तिरूप में मानते थे मूर्ति रूप में नहीं। साथ ही साथ वह ईश्वर को शाश्वत, सर्वशक्ति-सम्पन्न, सर्व व्यापक भी मानते थे। वन्दना में ईश्वर को शक्ति रूप में स्वीकार किया है।

1:- वन्दना --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव — पृष्ठ —210

" वन्दना" की कथावस्तु में व्यापकता तो है ही साथ ही साथ घटनाओं का भी आधिक्य है, जिसकी वजह से रोचकता एवं तारतम्यता में नीरसता भी आ गयी है। श्रीवास्तव जी ने " वन्दना " और " विदा" प्रेम के विशुद्ध रूप के चित्रण करने में जो सफलता मिली वह उन्हें किसी अन्य उपन्यास में नहीं श्रीवास्तव जी योग में आस्थावान थे क्योंकि "वन्दना" में उन्होंने योग के रूप और महत्व की विशाद व्याखा की है। फिर भी श्रीवास्तव को " वन्दना " में उतनी सफलता नहीं मिली जितनी विदा में। " वन्दना में रोचकता मर्मस्पर्शिता, एंव सुसंगठितता का अभाव है।

2.6.11

वंचना[1]

2. "वंचना" का शाब्दिक अर्थ धोखा देना ठगना, पढ़ना, वांचना है। श्रीवास्तव जी ने इस उपन्यास के माध्यम से चीनियों के कुचकों, छलों, प्रपंचों एंव अनैतिक कार्यों का पर्दाफाश किया है। साथ साथ बौद्ध धर्म के सिद्धांतों व यौगिक क्रियाओं का विशद वर्णन किया है।[2]

1:- वंचना-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --प्रकाशक-जिज्ञासा देवनगर ,कानपुर ।

2:- वंचना-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 156, 159, 188, 193, 343, 381, 382,

2.6.11.1 महात्मा गौतम बुद्ध की ढाईहजारवीं जयन्ती पर सैकड़ों भारतीय नव युवक एंव चीनी युवतियों ने बौद्ध धर्म में दीक्षा ग्रहण की । उन्हीं में अविनाश मणि माला के पुत्र यशोधर और नवयुवती चिन-चुनने भी दीक्षा ग्रहण की । चिनचुन चीनी गुप्तचर थी । जिसे अपनी इच्छाओं एवं भावनाओं का दमन करके गुप्त-चरों का कार्य करना पड़ता था, जबकि वह इस प्रकार के कार्यों से मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करती रहती थी ।

2.6.11.2 चिनचुन यशोधर के भाई (यमज) विनोद को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है । गायत्री के पुत्र आनन्द में बौद्ध रिमपोन्चे वासवा के गुरु की आत्मा प्रविष्ट हो गयी और वासवा को अपने योग बल से अपने पूर्व जन्म में घटित की स्मृति हो जाती है ।[1]

2.6.11.3 चिनचुन अपने (चीनी) सर्वोच्च अधिकारी कांग के अनुचित आचरण से व्यथित एवं रूष्ट होकर वेश परिवर्तन कर बौद्ध धर्म के साथ सारनाथ को त्यागकर तिब्बत चली जाती है । लेकिन वहां चीनी सैनिकों से तिब्बत के घिर जाने पर वासवा अपने योगबल से आंधी और तूफान का वातावरण तिब्बतेश्वर का भारत भेज देते हैं ।

1:- वंचना --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव---पृष्ठ -- 59-60

चीनी सर्वोच्च अधिकारी कांग तिब्बत के राजमहल में प्रतिष्ठ कर चिनचुन को पहचान कर उसकी हत्या कर देता है । सौभाग्यवश एक बिल्ली कांग पर कूद कर उसकी हत्या कर देती है ।

2.6.11.4 यशोधर, वासवा, मासपा स्वतन्त्र रूप से भारत वापिस आ जाते हैं। वासवा और मासपा मार्ग में ही आत्म दाह कर लेती है। क्योंकि वासवा का विचार था कि मैंने अपनी शक्ति का उपयोग प्रकृति की सहज गति के विरुद्ध किया है, इसलिए मुझे पश्चाताप करना पड़ेगा ।

2.6.11.5 जब यशोधर बनारस वासियों को चीन की गतिविधियों से अवगत कराता है । चीन की नीति से अवगत होने पर समस्त बनारस वासी उनसे प्रतिशोध लेने के लिये उद्यत हो उठते है ।

"वंचना" के माध्यम से श्रीवास्तव जी ने भारतीय संस्कृति का मण्डन एवं पाश्चात्य संस्कृति का खण्डन किया है । [1]

भारतीय जीवन में आदर्श का मूल जहाँ पारस्परिक सहयोग और प्रेम है वहीं पाश्चात्य जीवन में आदर्श का मूल पारस्परिक होड़ है ।

1:-वंचना — प्रताप नारायण श्रीवास्तव — पृष्ठ — 364
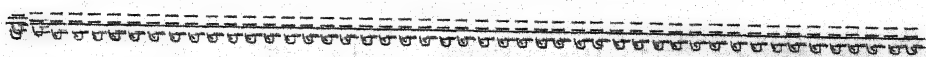
2.6.12

॥ विपथगा ॥[1]

2.6.12.1 "विपथगा" का शाब्दिक अर्थ बुरे या गलत रास्ते पर चलने वाला, कुमार्गी, चरित्र-हीन, बदचलन आदि । श्रीवास्तव जी के उपन्यासों में विषय वस्तु की दृष्टि से विविधता अधिक देखी जाती है । इस उपन्यास के माध्यम से चलचित्र की वास्तविकता एंव अभि-नेत्री बनने की इच्छुक नवयुवतियों की विनाश गाथा को अत्याधिक मार्मिक ढ़ग से प्रस्तुत किया है ।

2.6.12.2 नारी-सुलभ दया, कोमलता, स्नेह विश्वास, क्षमा आदि से वंचित इस नारी नहीं कह सकते हैं ।[2] ऐसी ही लता है जो सिर्फ धन और सम्मान चाहती है । लता अपनी पुत्री छवि को सिनेमा अभिनेत्री के रूप में देखना चाहती है । इसके लिये वह अपने पति श्रीमान् मलहोत्रा तक की अपेक्षा कर देती है :——

" मलहोत्रा " तुम असभ्य और जंगली हो । साधारण शिष्टाचार के नियमों से अपरिचित होने से तुम सभ्य समाज के लिये अयोग्य हो ।[3]

2.6.12.3 लता छवि को नीलम सिनेटोन कम्पनी में इन्टरव्यू दिलाने के लिये बम्बई ले जाती है । बम्बई में मिस्टर कुमार व महाराज महेन्द्र-सिंह ॥ जालसाज ॥ से परिचय होता है ।

1:- विपथगा — प्रताप नारायण श्रीवास्तव — प्रकाशन जिज्ञासा प्रकाशन देवनगर, कानपुर

2:- तुम सब कुछ हो फूल, लहर विहगी, तितली, मार्जारी, आधुनिके कुछ नहीं अगर हो तो केवल नारी ।।"—पन्त

3:- विपथगा — प्रताप नारायण श्रीवास्तव — पृष्ठ—18

राजा महेन्द्र सिंह बहुमूल्य उपहारों द्वारा कुमार लता एवं छवि को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। परन्तु जब छवि को चलचित्र जगत की वास्तविकता को बोध होता है तो उसका अभिनेत्री बनने का शौक समाप्त हो जाता है, और चलचित्र जगत से घृणा एवं नफरत करने लगती है।

2.6.12.4 महेन्द्र सिंह नकली हीरों का हार गिरवी रखवा कर कुमार से एक लाख रूपया लेकर लता को मदिरापान करा कर उसकी सम्पूर्ण राशि लेकर भाग जाता है। बाद में पुलिस अधिकारी द्वारा वास्तविकता का पता लगने पर लता और कुमार पश्चाताप करते हैं।

2.6.12.5 लता आत्मग्लानि एवं लज्जा से अभिभूत हो कर आत्म हत्या करने के लिये, अग्रसर हो उठती है किन्तु मिस्टर मल्होत्रा उसके प्राणों की रक्षा करते हैं। लता के पतन के पश्चात भी मल्होत्रा (उसके पति) उसे मुक्त स्वच्छन्द हृदय से अपना लेते है।[1]

2.6.12.6 "विपथगा" एक सामान्य कोटि का उपन्यास है जिसमें श्रीवास्तव जी ने मध्यमवर्गीय जीवन का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया है ऐसे दाम्पत्य जीवन का भी वर्णन किया है जिसमें वाह्य रूप से पूर्ण शान्ति है लेकिन आत्मिक सहयोग नहोने के कारण एक प्रकार/खोखलापन और रिक्तता होती है ।[2]

उपन्यासकार ने उपन्यास के अन्त में भारतीय संस्कृति की विजय दिखाकर सुखद वातावरण की सृष्टि की है ।

1- विपथगा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 144

2- विपथगा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 23

2.6.13

॥ बन्धन विहीना[1] ॥

2.6.13.1 बन्धन विहीना का शाब्दिक अर्थ बन्धन रहित या स्वच्छन्द है । सुनयना ऐसी ही नारी पात्र है जो बन्धन रहित है । प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "बन्धन विहीना" में उत्कोच की समस्या को उठाया है तथा इस प्रथा को मानवता के विकास में बाधक माना है ।[2]

2.6.13.2 "आजकल जमाना फीस, रिश्वत और इनाम, शुकराने का है । फीस लेना हक है, रिश्वत जबरदस्ती है, इनाम खुशी है और शुकराना मेहनत का मुआविजा है ।"[2]

"विक्रमनगर की महारानी सुनयना "नारी निकेतन" का शिलान्यास अपने महामन्त्री कंचल लाल द्वारा कराना चाहती है, इसके लिये वह कंचनलाल के चपरासी कोले खाँ और मातादीन को रिश्वत के रूप में करोड़ों रूपये दिये ।"[3]

2.6.13.3 "महारानी सुनयना और महाराजा दलजीत सिंह का विवाह होते हुये भी दोनों अर्हिनिश निजी प्रेम प्रसंगों में लीन रहते है । जो यौन-विकृतियों का परिचायक है । सुनयना अपने महामन्त्री कंचनलाल अग्रवाल को प्रेम जाल में फसाना चाहती है किन्तु कंचनलाल के सिद्धान्तों और विचारों से प्रभावित होकर एवं उपदेशों से वह इस प्रकार के कुकृत्यों को त्याग सादगी को ग्रहण कर लेती है ।"[4]

1- "बन्धन विहीना" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - प्रकाशन - जिज्ञासा प्रकाशन देवनगर, कानपुर

2- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 143

3- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 61 - 80

4- बनधन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 242, 262, 264

2.6.13.4 "आधुनिक शिक्षा को मातादीन नैतिक जीवन सेदूर तकनीक का अभाव, ईमानदारी से दूर, धार्मिक आचरण से दूर, उसे सिर्फ विलास, बेईमानी, ऐश्वर्य की भावना एवं डिगरियों की तालीम मानता हैं।" [1]

2.6.13.5 "इस उपन्यास में उपन्यासकार ने सात्विक विधवा "।[2]

उत्कोच शिक्षा आदि समस्याओं का चित्रण किया है। कहीं कहीं - "श्रीवास्तव जी इतने आदर्शवादी हो गये कि यथार्थ की अवहेलना ही कर बैठे।" [3]

"बन्धन विहीना" एक सामान्य कोटि का सामाजिक उपन्यास है।

1- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 260

2- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 66

3- बनधन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 258

2.6.14

(व्यावर्तन [1])

================

2.6.14.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "व्यावर्तन" में चीनी सरकार की नीतियों सम्बन्धी घटनाओं का विशद वर्णन किया है जो वास्तविक एवं यथार्थ प्रतीत होता है ।

चीनी सरकार ने भारतवर्ष पर आक्रमण करने से पूर्व भारत के प्रत्येक नगर में अपने कुछ गुप्तचर भेजे थे जो कि प्रतिष्ठित नागरिक के रूप में यहाँ रहते थे इनमें सुन्दर नवयुवतियों की संख्या अधिक थी । इन गुप्तचरों के प्रेम प्रसंगों के मूल में राजनैतिक कूटनीतिज्ञता होती है । इनकी प्रेम क्रीड़ाओं में वासना और लालसा का प्राधान्य रहता है, इनकी आतुरता एवं अश्रुबूंदें होते हैं ।

2.6.14.2 " यह नवयुवतियां (चीनी गुप्तचर) कभी अपनी कामुक क्रीड़ाओं द्वारा, कभी शारीरिक स्पर्श के प्रलोभन द्वारा, कभी अपने प्रेमियों को अपना दास बना लेती है ।"[2]

रमणीमोहन भी कला के मोहपाश में फसकर अपने पिता के भय से मिनचू के साथ कलकत्ताचला जाता है ।

2.6.14.3 अमरीका का एक बहुत बड़ा उद्योगपति एवं सिनेटर लैम्वर्ट अपनी भतीजी की तलाश में भारत आता है । यहाँ उसका परि- -चय चीनी गुप्तचर मिलर से होता है । मिलर से उसे एक नक्शा प्राप्त होता है जिससे उसे चीनी सरकार को आगामी योजनाओं का पता लग जाता है ।

1- व्यावर्तन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - प्रकाशक - जिज्ञासा प्रकाशन देवनगर कानपुर

2- व्यावर्तन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -205, 209-210

चीनी गुप्तचर कला उर्फ मिनचू के सोहपार्श [1] से रमणीमोहन को मुक्त करवाता है तथा रमणीमोहन को उनकी कार्यविधियों के बारे में अवगत कराता है । रमणी मोहन अपनी भूल पर पश्चाताप करता है ।

मिसेज रिपुदमन सिंह, कला उर्फ मिनचू काऊची, लूँग, मिलर आदि चीनी गुप्तचर की मृत्यु अत्यन्त क्रूर ढंग से होती है। श्रीवास्तव जी ने इस घटना के द्वारा यह दर्शाया है कि अच्छे कार्यों का परिणाम अच्छा और बुरे कार्यों का परिणाम भी बुरा होता है । यह उपन्यास घटना प्रधान है ।

2.6.15 (वन्दिता[1])

=================

2.6.15.1 इस औपन्यासिक कृति में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने 1814 ई० के नेपाल युद्ध का वर्णन इतने मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया जो उनके ऐतिहासिक रूप को मुखरित करती है ।

कलूँगा दुर्ग का अधिपति बलभद्र सिंह थापा जो अपनी अल्पसंख्यक प्रजा केसाथ शान्त, परस्पर सहयोग एवं स्नेहमय व्यवहार से सुखमय जीवनयापन कर रहा था। अंग्रेजों की एक कुदृष्टि ने उसे भी बेचैन कर दिया ।

2.6.15.2 1814 ई० में अंग्रेजी सरकार ने बलभद्र सिंह थापा को एक राजदूत के माध्यम से एक पत्र भेजा जिसमें लिखा कि वह अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार कर ले । राजा बलभद्र सिंह ने स्वीकार करने से इन्कार कर दिया । इसपर अंग्रेजों ने जनरल डिलेस्पी के नेतृत्व में एक सेना कलूँगा दुर्ग पर अधिकार करने के लिये भजी ।

2.6.15.3 राजा बलभद्र सिंह थापा और उनकी प्रजा ने अपने राज्य और राजा के लिये अपने प्राणों की बाजी लगा दी । लेकिन हिन्दुओं को विश्वासघात एवं युद्ध सामग्री के अभाव के कारण और सैनिकों के अल्पसंख्यक होने के कारण पराजित होना पड़ा । इस युद्ध में पुरुषों ,

स्त्रियों एवं बच्चे सभी ने भाग लिया । गौरी और पार्वती ने तो अंग्रेजों को भयभीत कर रखा था ।

2.6.15.4 पार्वती की प्रशंसा करते हुये स्वयं राजा बलभद्र सिंह थापा कहते है :-

"जो नेपाल अभी तक अपने वीर पुरूषों के लिये विख्यात था वह अब नारियों के लिये भी वन्दित होगा । जिस प्रकार महिषासुर - मर्दनी शक्ति रूपिणी दुर्गा ने असुरों का विनाश किया था, उसी प्रकार तुमने इन फिरंगियों का वध किया है । तुम हमारे लिये सदैव वन्दिता रहोगी ।"[1]

वन्दिता का कथानक सुसंगठित एवं सुसंबद्ध है । उपन्यास में आदि से अन्त तक रोचकता और औत्सुक्य की भावना विद्यमान है ।

===

1- वन्दिता - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 220

2.6.16 (वरदान [1])

==================

2.6.16.1 वरदान समस्या प्रधान सामाजिक उपन्यास है। और वह समस्या भारतीय एवं पाश्चात्य असंतुलित दृष्टि कोण की, दम्पति के मध्य वैचारिक विरोध की तथा माता और पत्नी के मध्य सेतुस्वरूप पुत्र अथवा पति की। सभी पात्र सुशिक्षित तथा आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं। इस उपन्यास के माध्यम से प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने माँ के त्याग, स्नेह, ममता, सेवा, सहिष्णुता और आदि गुणों का वर्णन किया है।

2.6.16.2 प्रोफेसर अतुल सिन्हा लखनऊ यूनिवर्सिटी में दर्शन विभाग में है। वे मातृ भक्त पुत्र, भाव प्रवण पति एवं कर्तव्यनिष्ठ शिक्षक है। आधुनिक वैभव की सम्पूर्ण साधन उपलब्ध है।

2.6.16.3 पत्नी रागिनी परम आधुनिका है स्वतन्त्र विचारों की समर्थिका और स्वच्छन्द जीवन यापन की अभ्यासिनी है। प्रोफेसर अतुल के यहाँ इतना स्नेह मिलता है कि वह उसका गलत अर्थ लगा बैठती है। फलतः अपने पिता को एक पत्र लिखती है, जिसमें यातनापूर्ण जीवन की दुःख भरी बातें लिखती है।

2.6.16.4 रागिनी के पिता नलिनी रंजन पुलिश इंसपेक्टर जनरल है। वह रागिनी के पत्र को पढ़कर क्रोधित हो उठते है। उमाचरण "पुत्र" से इस सम्बन्ध में बात करते हैं किन्तु उमाचरण को प्रतिक्रिया शून्य पाकर वह उसे रागिनी को लाने का आदेश देते है।

2.6.16.5 रागिनी अपने साथ टाइगर नामक कुत्ते को लाई थी। उसने उसे खूब सिखा लिया था। वह ससुराल वालों का उपहास करने में रागिनी का साथ देता था।

1- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - प्रकाशक- शब्द श्री प्रतिष्ठान, 105/260 प्रेमनगर, कानपुर - सन् - 1971

2.6.16.6 उमाचरण यूनिवर्सिटी पहुँचते हैं वहाँ उनकी मुलाकात कामिनी से होती है। लेकिन उमाचरण पारिवारिक समस्या एकान्त में सुलझाना चाहता है इसीलिये वह कामिनी को साथ नहीं ले जाना चाहता है और वह कामिनी को बाजार में ही छोड़ देता है।

2.6.16.7 प्रोफेसर कोठी पर पहुँचकर देखते है कि रागिनी पलंग पर मुहँ ढके लेटी है। वह कारण जानना चाहते है किन्तु रागिनी अन्य मनस्क स्वर में बोलती है कि वह ताल्लुकेदारों के घर के योग्य नहीं है, उसे वहाँ की एक भी बात पसन्द नहीं है। व्यक्ति, परिवार, समाज देश और विदेश आदि को लेकर वाद विवाद होता है। रागिनी पाश्चात्य सभ्यता का समर्थन करती है। जबकि प्रोफेसर अतुल भारतीय सभ्यता के समर्थक हैं। वार्तालाप वैयक्तिक स्तर पर उतर आता है और व्यंग्यपूर्ण भाषा का प्रयोग होता है। हर प्रकार से पत्नी को अपने विचारों से प्रतिकूल पाते हैं तो विवश होकर मैके चले जाने की अनुमति दे देते हैं। माँ अतुल को ऐसा करने से मना करती है। इसी बीच उमाचरण आ जाते है और वह पिता की आज्ञानुसार रागिनी को ले जाने का प्रस्ताव रखते हैं। माँ उमा को समझाती है। अतुल से अनुनय विनय करती है कि रागिनी कोठी से न जाय। किन्तु रागिनी साहस पूर्वक ममत्व ठुकराकर चल देती है।

2.6.16.8 रागिनी की पुरानी सहेली कामिनी नलिनी-रंजन के बंगले में प्रवेश करती है तो सर्वप्रथम उसकी भेंट रागिनी से होती है। बातों ही बातों में प्रो० अतुल की चर्चा छिड़ जाती है। कामिनी प्रो० अतुल की बड़ी प्रशंसक है। रागिनी विरोधी धारणा को ही व्यक्त करती है।

2.6.16.9 किशोर रागिनी का सहपाठी है। उसके आने पर रागिनी उसका स्वागत करती है। दोनों में ससुराल को लेकर वार्तालाप होता है। ससुराल की विरोधी होने पर भी वह किशोर के मुँह से ससुराल की बुराई सुनना पसन्द नहीं करती। रागिनी और किशोर इंगलिश पिक्चर देखने जाते हैं। वहाँ किशोर रागिनी से शराब का दु-

-राग्रह करता है। रागिनी किशोर के अभद्र व्यवहार से क्रोधित हो उठ-
ती है, और वहाँसे उठकर चल देती है ।

2.6.16.10 नलिनीरंजन रागिनी का विवाह किशोर के साथ करना चा-
हते हैं। इस सम्बन्धमें रागिनी से सलाह लेते हैं, लेकिन रागिनी प्रसंग
टाल देती है ।

रागिनी की सहेली मनोरमा उससे मिलने आती है। दोनों
में पति पत्नी प्रसंग को लेकर परस्पर वार्तालाप होता है। मनोरमा भा-
रतीय नारी के पति धर्म का समर्थन करती है, और रागिनी उसका वि-
रोध । इसी समय कामिनी आती है और विनीता के अस्वस्थ होने की
सूचना देती है।

2.6.16.11 नलिनीरंजन को कस्टम कमिश्नर के रूप में बम्बई जाने का
आदेश मिलता है। रागिनी भी पिता के साथ बम्बई जाती है। नलिनी-
रंजन किशोर केसाथ रागिनी को विदेश जाने का प्रस्ताव रखते हैं। किन्तु
रागिनी अस्वीकार कर देती है। और लखनऊ वापिस लौट जाने की इच्छा
व्यक्त करती है। किशोर के साथ वैवाहिक सम्बन्ध की बात सुनकर वह
अचेत हो जाती है। सचेत होने पर उसे लखनऊ से आया तार प्राप्त होता
है जिसे पढ़ते ही पढ़ते वह अचेत हो जाती है ।

2.6.16.12 नलिनी रंजन के वापिस आने पर गंगा उन्हें तार और चि
- ट्ठी लाकर देती है। चिट्ठी समाप्त होते होते उमाचरण को सहसा
उपस्थित देखकर लखनऊ का विवरण सुनते - सुनते रागिनी अचेत हो जाती
है। चेतना लौटने पर वह स्वीकार करती है कि मुझे वहाँ इतना अधिक
स्नेह और सम्मान मिला कि मैं भूल वश उसे कपट समझ बैठी ।

रागिनी माँ के चरणों में अश्रुविन्दुओं से अर्चना करती है।
माँ "विनीता" उसे गले लगाती है और कहती है:-

"अतुल मेरे जीवन भर की पूँजी है, जिसे मैंने तुम्हें सौंपा है
इससे अधिक तुझे मैं दे ही क्या सकती हूँ। अतुल को मेरा वरदान समझना।"

2.6.16.13 माँ काशीवास के लिये प्रस्थान करना चाहती है, रागि-
नी और अतुल उन्हें जाने से मना करते हैं। कामिनी रागिनी के कन्धे पर
हाथ रख कर कहती है :-

"वाह माँ जी यह कैसे हो सकता है । आप कहा करती थी कि मूल से ब्याज अधिक प्यारा होता है । xxxx जब ब्याज की बारी आयी तब आपने घर छोड़ने का निश्चय ले लिया ।"

2.6.16.14 विनीता रागिनी को अंक में भर कर आनन्द व्यक्त करती है कि " तूने मेरी अन्तिम साध भी पूरी कर दी ।" और वह माला को आदेश देती है कि सारा सामान खोल दे । काशी जाने का समय अभी नहीं आया है। जीवन के उत्तरदायित्व से मुंह मोड़ने के अपराध को भगवान भी क्षमा नहीं करते । विनीता का मुख मण्डल नैसर्गिक आभा से प्रदीप्त हो उठा । कक्ष में उपस्थित सभी का मौन माँ की महिमा से अभिभूत हो उठता है।

"वरदान" उपन्यास सामाजिक तो हैं किन्तु समाज की किसी समस्या विशेष को चित्रित नहीं करता वरन् गृहस्थ जीवन में वैयक्तिक मान्यताओं के उद्घाटन तथा उनके समाधान पर विशेष प्रकाश डालता है ।"

2.6.17 ॥ विहान[1] ॥

===============

2.6.17.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रणीत "विहान" सन् 1857 की क्रान्ति पर आधृत एक सफल औपन्यासिक कृति है । इसमें प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने भारतवासियों के आपसी जाति-भेद, वर्ण-भेद वर्ग-भेद, एवं धर्म-भेद को त्यागकर एक सूत्र में बंधकर भारतीय स्वतन्त्रता को विपुल स्वर दिया । क्रान्ति की आगामी योजनाओं सम्बन्धी घटनाओं का सम्यक वर्णन किया है ।

"बेकसी का मजार लिखने के बाद यह विचार हुआ था कि क्रान्ति अग्र, नियामकों के सम्बन्ध में पृथक-पृथक लिखा जाय इस क्रान्ति से लेखक का घनिष्ट सम्बन्ध होने के कारण ऐसी इच्छा होना स्वाभाविक है, और उसी इच्छा का प्रथम पुष्प "विहान" है, x x x x x x x x x x x x x x x जो सचमुच क्रान्ति का विहान ही कहा जा- - येगा ।"[2]

2.6.17.2 इस उपन्यास की कथावस्तु इस प्रकार है :-

"28 जनवरी सन् 1851 को महाराष्ट्र राज्य के अन्तिम पेशवा बाजीराव अपनी मृत्यु शैय्या पर लेटे हैं उनके पास नानाराववैद्य राज एवं बाजीराव की दोनों पत्नियां मैनाबाई और सईबाई व पुत्रियां योगाबाई और सुकूबाई सभी मर्माहित होकर आँसू बहा रहीं । अपनी मृत्यु के अन्तिम क्षणों में बाजीराव ने नानासाहब को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया । जिसकी सूचना वह लिखित गर्वनर जनरल को दे चुके थे। कुछ क्षणों के बाद हरिशरणं कहते हुये वह स्वर्गवासी हो जाते हैं ।"[3]

1- विहान-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-सन् 1971, पृ0 विहान प्रकाशन कानपुर

2- विहान "आमुख " - प्रतापनारायणं श्रीवास्तव

3- नानाराव के प्रमुख वैद्य का नाम

बाजीराव पेशवा की मृत्यु के उपरान्त नाना-साहब, तान्त्या टोपे और महारानी लक्ष्मीबाई ने मिलकर अंग्रेज व अंग्रेजी शासन के विपरीत साम, दाम, दण्डभेद युद्ध की सभी नीतियों का अनुशरण किया। नानाराव ने उत्तरी भारत दिल्ली से लेकर कलकत्ता तक की जनता एवं नरेशों को एक सूत्र में बाधा तथा स्वयं अंग्रेजों के परम विश्वास पात्रों में से रहे ।

2.6.17.3 नाना साहब को एक अंग्रेजी और फ्रासीसी भाषा जानने वाले व्यक्ति की आवश्यकता थी । और इस आवश्यकता की पूर्ति एक मिशनरी स्कूल में अंग्रेजी के अध्यापक अजीमुल्ला आकर पूरी करते हैं । अजीमुल्ला को नानासाहब/अपना दोस्त बनाकर अपने यहाँ रखा । बाला साहब, तान्त्या टोपे सभी ने अजीमुल्ला को अपना साथी समझा/

साधारण जनता ही नहीं वीरवनिताऐं भी अंग्रेजों की विरोधिनी हो गई । उनकी गृह सभाओं जहाँ सैनिक प्रायः एकत्रित होते थे तथा अंग्रेजी विरोधी विचारों का विनमय हुआ करता था ऐसी ही एक वीरवनिता अजीजन थी । जो नाच गा, गा कर अंग्रेजों की शासन व्यवस्था की कमजोरियाँ व योजनाओं का पता लगाती तथा उनके खिलाफ जनता को भड़काती ।

2.6.17.4 तात्या, नानासाहब, अजीमुल्ला एवं रानी लक्ष्मीबाई सभी अपना-अपना क्रान्ति के आरम्भ करने के बारे में पेश करते है । इसके लिये सबसे मदद लेनी जरूरी है। अतः दस हजार सैनिक सौ गोलन्दाज और असं लाख रूपये तथा इनके युद्ध का सब सामान झांसी की रानी लक्ष्मीवाई से मांगा गया ।

2.6.17.5 झांसी के दुर्ग का निरीक्षण करते हुये अपार धन मिला । जो अंग्रेजो को भारत से ही नहीं विश्व से निकालने के लिये पर्याप्त होगा । नानासाहब ने घूम-घूम कर गुप्त प्रचार करना आरम्भ किया । भीतर ही भीतर सुलगती हुई अग्नि को लार्ड डलहौजी की समाज्यवादी नीति ने इसे बहुत भड़का दिया । उत्तर और दक्षिण के कई राज्य जैसे -अवध, पंजाब, नागपुर, झांसी, सतारा, बरार, अर्काट,

सिंध आदि देश के नरेशों को पदच्युत करके उनकी भूमि अंग्रेजों के अधिकार में आ गई। और उनके किलों पर यूनियन जैक फहराने लगे। ऐसे ही भाग्य हीनों में अवध के नवाब वाजिद अलीशाह/जिन पर आयोग्यता का अपराध लगाकर उनसे लखनऊ छीन लिया गया और कलकत्ते के भटिया बुर्ज में कैद कर दिया गया।

2.6.17.6 शाहाबाद विहार के कुवंरसिंह, मुगलबादशाह बहादुरशाह ने भी अंग्रेजी राज्य को उखाड़ फेंकने में क्रान्ति करारियों की मदद की। बेगम हजरत महल ने फैजाबाद के मौलवी अहमदुल्ला ने क्रान्ति का सन्देश घर-घर पहुँचाना आरम्भ किया।

नाना साहब ने दिल्ली के सम्राट बहादुर शाह को अपनी कार्यविधि बताई। वृद्ध सम्राट बहादुर शाह एवं उनकी नवोढ़ा पत्नी जीनत महल भी बहुत खुश हुयीं और उनकी मदद करने को कहा। बेगम जीनत महल नाना साहब को राखी बान्ध कर पवित्र स्नेह बन्धन में बांध लेती हैं।

2.6.17.6 कानपुर की अजीजन और उसके सहयोगी नसीर खाँ, गंगादीन, रामसिंह, सभी अंगेजों के विरोधी है। यह सब क्रान्ति की आग में कूदने के लिये उतावले हो रहे हैं। मेरठ की फौज बागी होगी और दिल्ली पर उनका अधिकार हो गया है। सारे फिरंगियों को मौत के घाट उतार दिया गया एवं बादशाह का हरा झन्डा लाल किले पर फहरा रहा है।

"मिस्टर हिलसर्डन और जेन्ररल ह्वीलर, मै अभी बाजार से आ रही हूँ। आज बाजार का रंग ही बदला हुआ है। सब अपनी दुकाने बन्द किये बैठे हैं, और भयावय सन्नाटा छाया हुआ है कुछ औरतें नंगी तलवारें लिये और कुछ गाती हुई निकली हैं। x x x x x x x x x x x xx x x x x फिरंगियों से लड़ाई छिड़ गई है और वे सब के सब मौत के घाट उतार दिये गये हैं।"[1]

1- विहान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 120

2.6.17.8 कलक्टर हिलर्सडन ने कुछ सैनिक भेजकर आजीवन[2] कैद करना चाहा लेकिन वहाँ पर पहुँच कर सबसे अंग्रेजों के खिलाफ हो जाते है । आजीवन ने कहा:—————

"शाबाश, हिन्दु स्तान के रण बाँकुरों शाबाश, आओ हमारी फौज में शामिल हो जाओ । फिर -गियों को हिन्दुस्तान से खदेड़कर बाहर निकालने और घर -घर में हरा झण्डा फहरा दो और बुलन्द आवाज में कहा -मुल्क खुदा का, हुकूमत बादशाह की, और हुक्म बिठूर के राजा नाना साहब का / हमारे रहनुमा पेशावा है ।"[1]

बाद में नाना साहब ने अपनी कुशल नीति के द्वारा अंग्रेजों के द्वारा एकत्रित खजाना जो नबाबगंज की कोठी में था अपने अधिकार में कर लिया । अंग्रेजों ने ऐसा क्या सोचा भी नहीं था । कि उन्हें एक बूँद पानी के लिये तरसाना पड़ेगा । नाना साहब को मालूम था कि अंग्रेजों को जाते देखकर क्रांतिकारी उनको मार डालेंगे । इसलिये उन्होंने उन्हें रात में गंगा के रास्ते से इलाहाबाद जाने के लिये नावों का प्रबन्ध किया । किन्तु अंग्रेजों ने इसे विश्वास घात समझा और रात्रि में जाने से इन्कार कर दिया । हीलर अपनी दो पुत्रियाँ एंव पत्नी के साथ तथा डाड सुबह जाने के लिये तैयार हो गये । जब ये लोग खाना होरहे थे उसी समय किसी सिपाही ने बिगुल बजा दिया, यद्यपि यह प्रस्थान संकेत था लेकिन नाविक ने इसको दूसरे अर्थ मे समझा और वे एकाएक नालों में कूद पड़े और देखकर कुछ लोग भी भाग दिये ।

2.6.17.9 यह भगदड़ देखकर कर्नल मार्ग्रे टामसन ने जो दूसरी नाव पर था, मल्लाहों पर गोली चला दी । परिणाम यह हुआ कि दोनों ओर से लड़ाई शुरु हो गयी । जिसमें जनरल व्हीलरसुदितसभी मार डाले गये । इसी लड़ाई में मुलर की गोली से अजीवन घायल हो गई थी ।

1:- विद्रोह— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —— पृष्ठ ——125

2.6.17.10 नाना साहब के राज्यारोहण की सभी क्रियायें पूर्ण हो गयी तब उन्होंने अपने राज्य के पदाधिकारियों को नियुक्त किया वदनियां बादी और शासक विभिन्न क्षेत्रों के लिये नियुक्त किये। किशान सिंह ने नानासाहब की कई बार रक्षा की और उनकी रक्षा में अपने प्राणों की आहुति भी देदी। लेकिन बाद में वह स्वयं कहती कि मैं राजपूत नहीं राजपूत के वेश में अजीवन है ———

"यह हमारे स्वातन्त्र्य युद्ध का विहान है। विहान के पश्चात् स्वातन्त्र्य सूर्य का उदय होगा यह निश्चित है।"[1]

1:- विहान ---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ ---209

2.6.18

॥ विरागिनी ॥

2.6.18.1 "विरागिनी" प्रताप नारायण श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत सामाजिक उपन्यास है। जिसमें उपन्यास कार ने एक साथ कई समस्याओं को उभारा है। धर्म के नाम पर तीर्थ स्थानों पर होने कुकृत्यों का भी वर्णन किया है।

2.6.18.2 उपन्यास की संक्षिप्त कथा इस प्रकार है—

"बाबू ब्रजनन्दन सहाय की पक्षाघात से मृत्यु के बाद बेमिसल उसकी पत्नी कोकिला के ऊपर एक विधवा पुत्री भुवनेश्वरी, और दो बच्चों जिनमें एक आठ वर्ष का पुत्र राधेश्याम था। बाबू ब्रजनन्दन सहाय पार्सल आफिस में क्लर्क के उनके समय में घर ठाठ - बाट को हाथरस में इनके पूर्वजों का एक मकान था, जहां इनके छोटे भाई मनमोहनकाकब्जा था। मनमोहन धूर्त, नैसलची, थे। मनमोहन के मादक द्रव्यों की पूर्ति के लिये सेठ दुलीचन्द्र से रूपये उधार लेते थे कई बार ब्रजनन्दन सहाय ने उनके कर्जे को चुकाया। एक बार मनमोहन ने भाई से पैसे मांगे। मगर वह न दे सके तो मन मोहन आक्रोश में आकर मकान को सेठ दुलीचन्द्र के रेहन कर दिया। भाई की ममता वस उसे भी ब्रजनन्दन सहाय ने छुड़ाया। लेकिन मनमोहन के चरित्र में कोई ~~कमी~~ न आयी। और उन्होंने अपनी पत्नी का सारा जेवर व बर्तन भाड़े सेठ दुलीचन्द्र के यहां ~~पहुँच गये~~। ब्रजनन्दन सहाय ने इन्हें चपरासी की जगह ~~जगह पर~~ नियुक्त करा दिया।

1:-विरागिनी — प्रताप नारायण श्रीवास्तव — प्र० श्री गणेश प्रकाशन, 2/315 बी० अन्नपूर्णा मन्दिर नबाबगंज कानपुर।

बृजनन्दन सहाय की बड़ी लड़की भुवनेश्वरी जब विवाह योग्य हुई । तो उन्होंने अपनी इच्छा के अनुसार 100 बीघे की मौरूसी खेती के मालिक स्वामी दयाल के पुत्र रामदयाल के साथ कर दी ।

2.6.18.3 अकस्मात् नगर में ताऊन का प्रकोप हुआ और स्वामी दयाल और रामदयाल उसके शिकार हो गये । स्वामी दयाल के परिवार में अब जिसकी पत्नी शिवरानी और विधवा भुवनेश्वरी एवं कनिष्ट पुत्र शिवदयाल ही शेष रहे । भुवनेश्वरी गर्भवती थी और उसने रामदयाल की मृत्यु के बाद एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम मोहन लाला रखा गया ।

2.6.18.4 भुवनेश्वरी की सास शिवरानी उसे हमेशा कुलटा, डाइन, डंकनी कह कह हमेशा डाँटा करती । भुवेनश्वरी का बाहर पास पड़ोस में जाना तो दूर घर के एक कमरे से दूसरे कमरे मे जाना भी दूभर हो गया था । वह अपने पुत्र मोहन लाल को न तो अपने पास रख सकती थी और न ही उसे हमेशा यथा समय दूध बगैरह पिला पाती थी जब भी उसे दूध पिलाना होता तो शिवरानी स्वयं उसके पास आकार बैठ जाती और पिलाने के बाद लेकर चली जाती । धीमे- धीमे शिवरानी ने ऊपर का दूध पिलाने की आदत डाल ली और अब भुवनेश्वरी को मोहनलाल के दर्शन भी न हो पाते थे ।

"अरे आदमी को खाये अभी एक साल भी नहीं बीता, अब क्या देवर को खाना चाहती है ।"[1]

अत: शिवरानी भुवनेश्वरी से उसके देवर को भी दूर रखने लगी ।

1:- विरागिनी — प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ — 29

शिवदयाल तो भुवनेश्वरी की छाया मात्र तो दूर इसके नाम को सुनकर ही कांप जाता था। वह उसे साक्षात् मौत समझने लगा।

2.6.18.5 इधर भुवनेश्वरी के पिता की मृत्यु के बाद उसके चाचा मन मोहन लाल ने कोकिला के द्वारा हाल का मकान भी विकवा दिया। कोकिला की गृहस्थी में कुछ नहीं था। सब रिश्तेदार एवं सगे सम्बन्धी भी कोकिला को साथ देने से मुहमोड़ गये। इतने में भुवनेश्वरी की सास का पत्र कोकिला को मिला तो कोकिला ने भुवनेश्वरी को भी अपने पास बुला लिया। भुवनेश्वरी ने घर की स्थिति देखी तो उसे बहुत दुःख हुआ।

2.6.18.6 अन्त में कोकिला ने सोचा———

" अपनी दरिद्रता को नष्ट करना मनुष्य का पहला धर्म है " उपाय यथा साधन पर ध्यान नहीं देना चाहिए। तेरा प्रेमी एक धनवान व्यक्ति है, और संसार की गहराइयों से अवगत नहीं है। पढ़ने का तो एक बहाना है। इसी को जारी रखते हुये उससे धन तथा आभूषण प्राप्त करो।[1]

कोकिला ने शिवकुमार से और भुवनेश्वरी ने दमोदर से खूब सम्पत्ति ऐंठी।

2.6.18.7 भुवनेश्वरी की अपेक्षा कोकिला पैसों को अधिक महत्त्व देती है वह कहती है :—————

" वह मानुषिक धर्म करता है और उसी भांति करने के लिए तुमी स्वच्छन्द हो। सब कुछ करो, परन्तु पैसे पर विशेष ध्यान रखो।

1:- विरागिनी —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —— पृष्ठ —— 76

केवल ऐन्द्रिय भोग में लीन न हो जाओ । उसके साथ पैसा भी एकत्र करो । पैसा मुख्य है और ऐन्द्रिय भोग गौण । अपने मनको अपने वश में रखो । पुरुष को बधुआ बनाओ, तुम उसकी गुलाम बनो । × × × × × × × × × मूर्ख मुझसे क्यों डरती हो धनाश्रय से कोई कष्ट होता है । "[1]

2.6.18.8 धीरे-धीरे भुवनेश्वरी अपनी माँ से अधिक चतुर हो गयी । दोनों ने अब पैसा कमाना अपना धन्धा बना लिया । भुवनेश्वरी ने जब एक दामोदर की जारज सन्तान को जन्म दिया तो उसकी माँ ने कहा ---

" अरे इस कलंक से मोह न कर , मुझे दे । मैं इसका गला घोट कर इसकी चिल्लाहट को सदा के लिए बन्द किये देती हूँ ।"[2]

और उसने वैसा ही किया ।

2.6.18.9 भुवनेश्वरी के जीवन में अब एक नये उमाचरण का प्रवेश होता है । वह उससे भी काफी जेवर, साड़िया, एवं श्रृंगारिकता का सामान और कोठी बगैर ले लेती है । कोकिला भी अपने कोठी के चपरासी ठाकुर रामसिंह से उसकी पूरा का पूरा वेतन शराब में पीजाती है। रामसिंह एक दिन कोकिला को पीटता है तो लोग दौड़ दौड़ कर आ जाते है तो वह बताता है :--------

" ये दोनों माँ बेटी सरीफों के वेष में चकला चलाती है। बड़ी मक्कार है । मेरे मालिक उमाचरण भैया की रखैल यह खूब सूरत छोकरी है । जिसने अपने रूप के जादू से चिपकाकर उसे बेमौत मार डाला । उसी तरह इसकी माँ ये बड़ी प्रचंड डाइन है । मुझे खाना चाहती थी मैं उसके चक्र में मैं नहीं फंसा ,

1:-विरागिनी -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ --9।

2:-विरागिनी --प्रतापनारायण श्रीवास्तव--पृष्ठ ---186

मेरा सब पैसा, जो मुझे वेतन से मिलता था, और मेरे घर से आता था, खेतों की आमदनी से वह सब खा गई। मुझे भिख मंगवा दिया। "[1]

अब भुवनेश्वरी ने शिक्षा अधीक्षक को अपना उल्लू सीधा करने के लिये फांसा और जूनियर टीचर से सीनियर टीचर हो गई और इसके अलावा उनसे और भी पैसे ऐंठने लगी पैसे कोठी का किराया, साज सज्जा का सामान साड़ी आभूषण आदि।

" राधेश्याम के साथी रामेश्वर के साथ राजेश्वरी का विवाह कर दिया जाता है। क्योंकि राजेश्वरी भी राधेश्याम की अवैध सन्तान की माँ बन चुकी थी।

2.6.18.10 कोकिला को सम्पत्ति से मोह था। एक दिन उसने सोचा कि भुवनेश्वरी की ससुराल की सम्पत्ति पर क्यों न कब्जा किया जाय। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये वह भुवनेश्वरी को नाना प्रकार के मोह दिखाती हुई कहती है:-----

"तुम यदि अपनी सम्पत्ति की देखभाल नहीं करोगी तब दूसरे लोग अर्थात् दूर के सारे सगे सम्बन्धी आ कर अधिकार कर लेगें। जो सर्वथा अनुचित है। और मोहन राजा की सम्पत्ति हाथ से निकल जायेगी। इस लिये आशंकाऐं और संकोच त्याग कर कन्नौज जाओं और वहाँ तब तक रहो, जब तक तुम्हारी सास जीवित है। उसके परलोक वास हो जाने पर सम्पत्ति का अधिकार करना और मकान बेंच कर चली आना।"[2]

1:-विरागिनी -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ -- 212

2:-विरागिनी ---प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ ---268

किन्तु जब भुवनेश्वरी अपनी ससुराल पहुँचती है तो उसकी सास शिवरानी उसे इतना मोह , प्यार और सत्कार देती है कि वह अपनी पुरानी जिन्दगी को भूल जाती है । शिवरानी कहती है :-----

" तुम्हारे अभाव में मैं उसके भार से बहुत दबी थी । रातदिन अपनी भूल पर पछताती और और प्रभु से विनय करती थी कि वह तुमको लौट आने की बुद्धि प्रदान करें । अन्तर्यामी भगवान ने वह मेरी प्रार्थना सुन ली और तुम आ गई । अपने पापों को तुमसे क्षमा पाकर मैं अब पूर्णरूप से मुक्त हूँ, तुम इस गृहस्थी का भार सँभालों ।"[1]

8.6.18. ।। मोहन राजा से अब वह अगाध प्रेम करने लगी थी जिससे छोड़ना उसके सम्भव नहीं था । इन्ही दिनों विसूचिका का प्रकोप कन्नौज क्षेत्र में फैला । जिससे शिवरानी मोहन राजा , भुवनेश्वरी एवं सरजू की माँ ने कन्नौज छोड़कर काशी आ गई । और भुवनेश्वरी की माँ के यहाँ रहने लगी । कुछ दिनों के बाद गंगाजल पड़ा द्वारा राजेश्वरी को भुवनेश्वरी एवं ~~xxxxx~~ कुकृत्यों का पता चलता है और वहीं दामोदर एवं ठाकुर शिवकुमार भी आ जाते हैअपने पापों का प्रायश्चित करने के लिए भुवनेश्वरी ने पवित्र गंगा का वरण वैसे ही किया जैसे पृथ्वी ने जनक नंदिनी सीता से, फटकर, अपनी शरण में आश्रय दिया था। "[2]

उपन्यास का शीर्षक कथानुकूल है । भाषा पात्रानुकूल सरल बोलचाल की भाषा है । विरागिनी उपन्यास श्रीवास्तव जी की उपन्यास कला की उत्कृष्टतम कला कृति है ।

1:- विरागिनी — प्रताप नारायण श्रीवास्तव — पृष्ठ —— 277

2:- विरागिनी —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव — पृष्ठ ——334

2.7 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का वर्गीकरण

वर्गीकरण की दृष्टि से प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों को अधोलिखित वर्गों में विभाजित कर सकते हैं :-

2.7.1 सामाजिक उपन्यास

2.7.2 ऐतिहासिक उपन्यास

2.7.3 राजनैतिक उपन्यास

2.7.4 आदर्शवादी उपन्यास

2.7.5 बाल मनोरंजनात्मक उपन्यास

2.7.6 आत्मकथात्मक उपन्यास

2.7.1 सामाजिक उपन्यास

इन उपन्यासों के माध्यम से उपन्यासकार समाज और उसमें व्याप्त अनेकानेक परम्पराओं, रीतियों, प्रथाओं व समस्याओं का चित्रण करता है। हिन्दी में इस प्रकार के उपन्यासों की दीर्घ श्रृंखला है । इसी श्रृंखला की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है प्रतापनारायण श्रीवास्तव और उनके उपन्यास ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने उपन्यासों में समाज के उच्च मध्यमवर्ग का चित्रण किया है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत "विदा" "विजय", "विपथगा", "बन्धन विहीना", "विषमुखी", "वेदना", "वन्दना", एवं "वरदान" आदि उपन्यास सामाजिक हैं। इन उपन्यासों में अनेक समस्याओं को आपने उठाया है। जिनमें अधोलिखित प्रमुख हैं :-

2.7.1.1 विधवा विवाह की समस्या

2.7.1.1.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने विधवा विवाह की समस्या को "विजय" उपन्यास में नई पृष्ठिभूमि में अंकित किया है । सर रामप्रसाद अपनी रुग्ण पत्नी की आत्मतुष्टि के निमित कुसुमलता का विवाह बाल्यकाल में कर देते हैं । जबकि कुसुम को पति पत्नी विवाह और वैधव्य का अर्थ ज्ञात नहीं था । धीरे-धीरे जब वह यौवनावस्था की दहलीज पर पैर रखती है तो वह अपने को दाम्पत्य सुख से वंचित पाती है। वह देश और समाज को कोसती हुई कहती है :-

"विधवा विवाह संसार में होता है एक इसीअभागे देश में नहीं होता । दूसरे देश इस मूर्ख, अपढ़, निश्चेष्ठ देश से कितना आगे हैं। दूसरे देशों में स्त्री के समानाधिकार है, किन्तु इस देश में वह पराधीन है। सब पुरानी लकीर के फकीर हैं। ऐसे जिद्दी पातकी पुरूष दूसरे देश में नहीं हैं। आज कितने ही धर्मध्वजी, समाज के नेता मेरा स्त्रीत्व भंग करने के लिये तैयार है, छिपा-छिपाकर पाप करने के लिये तैयार हैं। किन्तु अगर मैं आज विवाह कर लूँ, तो हिन्दू समाज नाक मुँह सिकोड़ेगा, मुझे म्लेच्छी कहेगा। × × × × × × × × × × × × × पुराने शास्त्र जो मनुष्य को निस्तेज बनाते हैं, जला देने चाहिये। उनका अस्तित्व संसार से मिटा देना चाहिए एक नया युग, एक नई लहर हो जिसमें पुराने पनकी बू न आती हो । पुरूष स्त्री के अधिकार समान हों। जिस दिन इस देश से प्राचीनता चली जाएगी । उसी दिन वह देश स्वतन्त्र हो जायेगा ।"[1]

2.7.1.1.2 कुसुमलता समाज के इन बन्धनों को तोड़ने के लिये तैयार हो जाती है और अपनी इच्छानुसार पति का चुनाव स्वयं ही करती है:-

"इससमाज के बन्धनों में बंधकर नहीं रहूँगी ।इनसे लडूँगी, भाग्य से लडूँगी और लडूँगी अपने वैधव्य से ।"[2]

"मैं विवाह करूँगी । अपना वर चुनूँगी । जो मेरी शर्तों के अनुसार मुझसे शादी करने के लिये तैयार होगा मैं उसके साथ विवाह करूँगी।[3]

2.7.1.1.3 विधवा विवाह की समस्या का यह समाधान प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उचित ही खोज निकाला । उनके विचार से अगर विधवा को अपना वैधव्य भार स्वरूप हो तथा उसे जीवन-पर्यन्त निभाने में अगर वह अपने को असफल समझती है तो उसे समाज के इस बन्धन को तोड़कर विवाह कर लेना ही उचित है, नहीं तो वह एक दिन पतन के इतने गहरे गड्डे में गिर जायेगी

1- विजय- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -58-59

2-विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 58

3- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 59

जिससे फिर कभी वह उभर नहीं सकती है ।

2.7.1.2 अर्न्तजातीय विवाह की समस्या

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "विषमुखी" उपन्यास में इस समस्या को उठाया है। कान्ती और विश्वनाथ का विवाह अर्न्तजातीय "बन्दना" में रायबहादुर और सलीमा कमलनयन और आयशा का भी इसी श्रेणी का है ।[1]

2.7.1.3 वर्ण भेद की समस्या

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में इस समस्या को जहां-तहां उठाया गया है ।[2] "विकास" में मिस्टर वर्मा और केट, "विजय" में राजा प्रकाशेन्द्र और श्रीमती मायादास डेविड उर्फ एलिनर रोज उर्फ मिस ट्रेवीलियन के माध्यम से उपन्यासकार ने इस समस्या को उभारा है ।

2.7.1.4 अवैध प्रेम से उत्पन्न जारज सन्तान की समस्या

2.7.1.4.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी का विचार है कि "प्रेम एक सर्व व्यापी शक्ति है, जिसकी नींव पर ईश्वर या भगवान का अस्तित्व और उसका विश्वास स्थित है। प्रेम जीवन का अद्भुत विकास है । जिसके साथ ही ब्रह्म का वास्तविक रूप मन्थरगति से इन्द्रियों द्वारा देखा जाता और फिर उसमें लीन हो जाता है। इसी मिलन का नाम मोक्ष है, और इन्द्रियों द्वारा दिग्दर्शन ही का नाम जीवन है।"[3]

2.7.1.4.2 जहाँ पर शुद्ध प्रेम होता है वह परस्पर लगाव, आत्मीयता एवं सुख सम्पन्नता देखने को मिलती है जैसे "विदा" में निर्मलचन्द और कुमुदनी का प्रेम, "विजय" में मनोरमा और राजेन्द्र प्रसाद का प्रेम, राजेश्वरी और बाबू राधारमण "विदा" में मुरारी शंकर और लज्जावती का प्रेम, "वेदना" में ज्योतिर्मय और भैरवदत्त का प्रेम, "बन्धनविहीना" में रानी सुनयना और महाराजादलजीत सिंह का प्रेम, वन्दना में रायबहादुर

- -

1- विषमुखी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -116

2- विषमुखी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 134

3- विकास - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 141-142

और सलीमा, कमलनयन और आयशा का प्रेम, "बयालीस" में दिवाकर और गुलाब, "वन्दिता" में मानबहादुर और पार्वती आदि का प्रेम है। लेकिन प्रेम के एक दूसरे रूप में जिसे वासनात्मक प्रेम या यौन विकृतियों का प्रेम कहते हैं इसमें मात्र शारीरिक स्पर्श या वैभव की लालसा या फिर राजनीतिक कूटनीतिकता होती है। "वेदना" विश्वास की वेदी पर, वंचना और व्यावर्तन में इसी प्रकार के प्रेम का वर्णन किया गया है प्रेम का यह रूप आधिक एवं आवेश मात्र होता है। इस प्रेम से उत्पन्न सन्तान को समाज सादर ग्रहण नहीं करता उसे कलंकी, अथवा पातकी की संज्ञा से विभूषित करता है। यह समस्या हमारे देश में स्वतन्त्रता के बाद अधिक देखने को मिलती है।

2.7.1.4.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "वेदना" में इस समस्या को उभारा है। आपका कथन है:-

"स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ हमारे राष्ट्र के सम्मुख अनेकानेक सामाजिक समस्यायें उठ खड़ी हुई हैं, क्योंकि स्वतन्त्र राष्ट्र का मापदण्ड उसकी सामाजिक व्यवस्था है। हमारा राष्ट्र उस दिशा में सचेष्ठ है तथा परिणाम स्वरूप इस सम्बन्ध में अनेक विधान हमारे संसद ने पारित किये हैं। शताब्दियों से पद-दलित नारी को विश्राम अवश्य मिला वह कुछ अग्रसर हुई है परन्तु पुरुष और नारी के पारस्परिक सम्बन्धों की - जो सामाजिक जीवन का आधार है कई गुत्थियाँ अब भी उलझी हुई हैं। उनको निष्पक्ष भाव से सुलझाना अभीष्ठ है। अवैध प्रेम से उत्पन्न जारज सन्तान भी कलंक है। उनके लिये समाज में सम्मानीय स्थान प्राप्त कराने की व्यवस्था करना समय की पुकार है। प्रस्तुत कथानक के द्वारा इस समस्या की ओर ध्यान आकर्षित करने का मेरा यह शुद्ध प्रयत्न है।"[1]

वेदना में भैरवदत्त अपनी इकलौती पुत्री किरण को शिक्षा ग्रहण करने के लिये दिल्ली भेजते हैं। दिल्ली में वह अपनी सखी शशिप्रभा और उसकी माँ लौरा की दुरसन्धियों के कारण वह गर्भवती हो जाती है[2]

1- वेदना (भूमिका) - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 3

2- वेदना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -11-12

2.7.1.4.4 ज्योतिर्मयी और भैरवदत्त को जब इस स्थिति का ज्ञान होता है तो ज्योतिर्मयी को तो बहुत दुख होता है किन्तु उसके पिता भैरवदत्त को जरा भी मानसिक आघात नहीं होता। अन्त में किरण प्रेमनाथ की क्षमा याचना और अपनी सखी शशि प्रभा की प्रार्थना पर प्रेमनाथ को अपना जीवन साथी चुन लेती है । वह कहती है :-

"प्रेम मैं तुमको मरने नहीं दूँगी । तुम्हारे सिवाय मेरी गति भी तो नहीं है। किसी अन्य के साथ मैं विवाह नहीं कर सकती । इस देह की पवित्रता तुमसे खंडित हुई है, तुम्हारे अतिरिक्त इसका कोई अधिकारी नहीं हो सकता ।"

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने इस समस्या का समाधान उचित ढूँढ कर निकाला जिससे किरण और उसके बच्चे को समाज में समान सम्मान मिल सकेगा ।

2.7.1.5 समाज सेवा बनाम सफेदपोश अपराधी

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने समाज के उन ठेकेदारों को भी उभारा है जो वाह्य रूप से तो सभ्य पवित्र और आत्मीयता का बखान करते हैं किन्तु हृदय से छल, कपट, और ईर्ष्यालु होते हैं। "विजय" में मिस ट्रैविलियन एक समाज सेविका के रूप में चित्रित है। जिसकी समाज सेवा में लालसा एवं वासना का आधिक्य है। वह अपने प्रेमियों को उत्तेजनात्मक पदार्थों का सेवन कराकर उनके तन, मन, धन की स्वामिनी बनना चाहती है। उसकी आतुरता और आँसू मात्र दिखावा है। जिसके हृदय में कलुषता एवं शारीरिकता का ही प्राधान्य है। वह राजा प्रकाशेन्द्र को अपनी ओर आकृष्ट करती है। मिस ट्रैवीलियन राजा प्रकाशेन्द्र के साथ दिन रात काम क्रीड़ा में मस्त रहती है। एक दिन उसने मनोरमा को अपने यहाँ बुलाकर उसे बेहोशी की दवा पिलाकर मदांध प्रकाशेन्द्र से उसका सर्वनाश करा देती है। बाद में इस संस्था एवं संस्था प्रवर्तक मिस ट्रैवीलियन के कार्यों से लोग घृणा करने लगते हैं ।

2.7.1.6 साम्प्रदायिक समस्या

हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायिकता को भड़का कर स्वार्थ सिद्धि करने वाले राजनेताओं को प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "बयालीस" में अधिक चित्रण किया

है। भगवान सिंह ने रसूलपुर की जनता को जीर्ण-क्षीण करने के लिये अनवर एवं गोपीनाथ के माध्यम से हिन्दू और मुस्लिम दोनों सम्प्रदायों को मानने वालों को खूब भड़कवाया अन्तोगत्वा दोनों में वैमनस्य हो गया। साथ ही भयंकर हिंसा काण्ड हुआ जिसको शान्त करने के सत्ता के लोभी विवेकहीन भगवान सिंह ने अंग्रेजी सरकार का सहारा लिया।

2.7.1.7 चलचित्र जगत की वास्तविकता एवं अभिनेत्री बनने की इच्छुक युवतियों की विनाश गाथा की समस्या

वर्तमान समाज की यह एक ज्वलन्त समस्या है जो दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। "विपथगा" में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस समस्या को अत्यन्त मार्मिक ढंग से अंकित किया है:-

मिस्टर मल्होत्रा की पत्नी लता धन और सम्मान को प्राप्त करने के लिये अपनी पुत्री छवि को अभिनेत्री बनाने के उद्देश्य से "नीलम सिनेटोन कम्पनी " में इन्टरव्यू दिलाने के लिये बम्बई ले जाती है। किन्तु वहां पर मिस्टर कुमार और महाराज महेन्द्र सिंह जालसाज लता और छवि दोनों का सर्वनाश तो करते ही हैं साथ ही सम्पूर्ण धनराशि एवं गहने हड़प जाते हैं। बाद में पुलिस अधिकारियों द्वारा पता चलता है कि यह जालसाज हैं इनका काम यही है। भोली भाली युवतियों की लूट-पाट करना और अगर हाथ लगा तो बेच डालना सब कुछ यह लोग करते हैं।

2.7.1.8 उत्कोच की समस्या

"बन्धन विहीना" में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस समस्या को उभारा है। रिश्वत के बगैर आज के युग, समय में कोई कार्य नहीं होता। यह एक ऐसी देवी है जिसे अनेको रूपों, नामों से जाना जाता है कार्य छोटा हो या बड़ा, बगैर इस देवी की उपासना से पूर्ण नहीं होता "बन्धन विहीना" में इसकी एक झलक देखिये :-

"आजकल जमाना फीस, रिश्वत और इनाम, शुकराने का है। फीस लेना हक है, रिश्वत जबरदस्ती है, इनाम खुशी है और शुकराना मेहनत का मुआविजा है।"[1]

1- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 143

विक्रम नगर की महारानी सुनयना "नारी-निकेतन" का शिलान्यास मंत्री कंचन लाल से करवाने के लिये उत्तकेचपरासी काले खाँ को और मातादीन को कईबार रिश्वत में सैकड़ों रुपया दे डालती है। इससे यह विदित होता है कि बगैर रिश्वत का सहारा लिये अधिकारी वर्ग से मिलना दूभर ही नहीं असम्भव है ।

2.7.1.9 <u>नारी स्वतन्त्रता एवं समानता की समस्या</u>

2.7.1.9.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने अधिकांश उपन्यासों में इस समस्या को उभारा ही नहीं है, बल्कि स्त्री स्वतन्त्रता एवं समानता के आप भी पक्षधर हैं। लेकिन इतनी स्वतन्त्रता के नहीं कि वह अपनी मर्यादा की सीमा को लाँघ जाये ।

"विजय" में कुसुमलता पुरुष वर्ग को स्वार्थी मानती है वह कहती है कि अगर एक स्त्री का पति मर जाये तो वह दूसरा विवाह नहीं कर सकती और यह वर्ग एक नहीं तीन-तीन चार-चार विवाह कर सकता है वह कहती है कि हमें इस अधिकार के लिये लड़ना होगा ।

2.7.1.9.2 "विदा" में कुमुदिनी अपने पति निर्मलचन्द सिन्हा से कहती है :-

"ग्रेजुएट नहीं तो क्या, अन्डर ग्रेजुएट तो हूँ । उनसे किस बात में कम हूँ ? x x x x x x x x x x x x फिर किसी से दबकर क्यों रहूँ ।"[1]

"स्त्री पुरुष के अधिकार समान हों ।"[2]

स्त्री स्वतन्त्रता के बारे में आपने लिखा है :-

" नहीं, सच्ची स्त्री स्वाधीनता वही है, जहाँ स्त्री पर अत्याचार न हो । स्त्री-पुरुष दोनों एक होकर रहें। दोनों में मतभेद न होने पावे । स्त्री को यह गर्व न हो, मैं स्वामी से बड़ी हूँ और न स्वामी को अभिमान हो कि ईश्वर ने सब बुद्धि मेरे ही हिस्से में रखी है। स्त्री घर की मालकिन है और पुरुष बाहर का लेकिन दोनों में मतैक्य हो

1- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 19

2- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 61

दोनों उस पवित्र प्रेम में बंधे हों, जहाँ न राग है, न अभिमान है, न द्वेष है और न कलह ।"[1]

2.7.1.9.3 कलह, ईर्ष्या, द्वेष वहीं पर उत्पन्न होते हैं जहाँ पर समानता का प्रश्न उठता है। हालांकि नर-नारी दोनों मिलकर समाज का सृजन करते हैं। प्रतापनारायण श्रीवास्तव का विचार है कि स्त्री पुरूष वर्ग के अत्याचारों को मूक होकर सहन नहीं कर सकती अब वह समय चला गया है:-

""पुरूष स्वर अब जयघोष न बन पायेगा । नारी अब भूत की योग्य वस्तु न रहकर वर्तमान की प्रलयघटा बन चुकी है और अगर यदि वह भविष्य को भी अपने हाथ में ले ले तो विद्युत की तड़प को भी प्रताड़ित कर सकती है ।"[2]

अतः आपने अपने सामाजिक उपन्यासों में स्त्री स्वतन्त्रता और समानता का चित्रण मार्मिक ढंग से किया है ।

2.7.1.10 आधुनिक शिक्षा प्रणाली एवं बेरोजगारी की समस्या

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने वर्तमान बेरोजगारी का प्रधान कारण हमारी आधुनिक शिक्षा प्रणाली का है जो मात्र बेरोजगार करने के अलावा कुछ नहीं दिला पाती है। इसमें न तो तकनीकी शिक्षा दिलाई जाती है जिससे शिक्षा प्राप्त करने के बाद शिक्षार्थी अपनी रोटी कपड़े का भार स्वयं उठा सके । उसी का वर्णन करते हुये आपने लिखा है :-

"वह भी पुराने ढंग से चलाई जा रही है। शिक्षा में डिगरियों की कद्र है, लेकिन असली तालीम की नहीं । बच्चों के दिमाग में सच्चाई, नेक नीयती, ईमानदारी, धार्मिक आचरण के प्रति लगाव उत्पन्न नहीं किया जाता, बल्कि उनमें विलास, बेईमानी और ऐश्वर्य की भावना सिनेमा स्कूलों द्वारा भरी जाती है ।"[3]

1- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 161

2- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 46

3- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 145

आपने आधुनिक शिक्षा प्रणाली की वास्तविकता का उद्घाटन किया । देश की आर्थिक स्थिति को बिगाड़ने का बहुत कुछ श्रेय हमारी शिक्षा पद्धति का है ।

2.7.1.11 पूँजीवाद की समस्या

2.7.1.11.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने पूँजीवाद का विरोध कई औपन्यासिक कृतियों में किया है। और पूँजीपतियों के विलास, ऐश्वर्यपूर्ण जीवन का स्पष्ट चित्रण "विसर्जन", "विदा", "विकास", में देखने को मिलता है। आज का पूँजीपति मात्र अपनी नीच स्वार्थपूर्ण तुच्छ घटना के पीछे एक दो नहीं सैकड़ों गरीबों के खून की बलि ले लेते हैं और सरकार उसे देखती रहती है। बल्कि और मदद करती है । "लाला कंचन ने व्हिस्की का एक पेग चढ़ाते हुये कहा :-

"मजदूर के नाम से मुझे चिढ़ हो गयी है। मैंने अपने मिल के मैनेजरों को हुक्म दे रखा है कि तुम जितना मजदूरों को मारोगे, सताओगे और तंग करोगे उतना ही तुम्हारा फायदा है, तुम्हें उतने ही जल्दी तरक्की दी जायेगी ।x x x x x x x x x x x x मैंने सार्जेन्ट से कह दिया है कि मजदूरबदमाशी करता नजर आये उसको पहले गोली से मौत के घाट उतार दो, पीछे जो खर्च होगा मैं सहर्ष कर डालूँगा ।"[1]

2.7.1.11.2 पूँजीपति अपनी अपार शक्ति पूँजी का सहारा लेकर बड़े-बड़े अधिकारी को अपना दास बना लेते हैं और उनकी इच्छा पूर्ति में सहयोग करते हैं । ये स्वतन्त्र होकर निर्धनों का शोषण करते हैं। इनके ऐश्वर्य पूर्ण जीवन की एक झलक देखिये :-

"लखनऊ के कैसरबाग में प्रवासी व्यापारी मनमोहननाथ के स्वागतोपलक्ष में बाहर के प्रतिष्ठित व्यापारी और नागरिकों ने भोज का विराट आयोजन किया था । x x x x x x x x xबारहदरी के सामने का उद्यान छतन साज से अलंकृत था, जो नवाब कालीन लखनऊ के ऐश्वर्य की थोड़ी सी झलक दिखाता था । चारों ओर रंगबिरंगे बिजली

1- विसर्जन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 68

के बल्ब लगे हुये थे, जिनसे इन्द्रधनुष के रंगों का प्रकाश निकलकर दर्शकों के नेत्रों को मुग्ध कर रहा था। भीतर एक मधुर स्वर से बैन्ड बाजा बज रहा था, जिसकी स्वर लहरी घूमती हुई आकाश में विलीन हो रही थी चारों ओर हर्ष और उल्लास का समारोह था।"[1]

2.7.1.11.3 यह पूँजीपति थोड़े से काम के लिये लाखों रुपये खर्च कर देते हैं। "बन्धन विहीना" में मात्र कंचनलाला को बुलाने के लिये सुनयना सैकड़ों रुपये उसके चपरासियों को दे डालती है इस वर्ग में भलाईयों की अपेक्षा दोष अधिक होते हैं लेकिन इनके दोष इनकी पूँजी धो डालती है। यह समाज के घर नीच से नीच कार्य करने को तैयार रहते हैं बस सिर्फ पैसा पास आये हालाँकि इन्हें पैसों की ~~xxxx~~ कोई कमी नहीं होती है लेकिन उसमें इतना मोह हो जाता है कि दिन रात उसीके बारे में सोचते रहते है।

2.7.1.12 मदिरा पान की समस्या

2.7.1.12.1 शराब के नशे में मनुष्य अच्छे और बुरे का भेद भूल जाता है। यह न केवल व्यक्ति की धन सम्पत्ति को क्षय करती है बल्कि शारीरिक पतन भी करती है। मदिरा पान करने वाले व्यक्ति को मदिरा के सिवा कोई चीज अपने ओर आकृष्ट नहीं कर पाती। वह उसके लिये हर काम करने को तैयार हो जाता है। यहां तक कि बच्चों की शिक्षा दीक्षा एवं पत्नी का भविष्य और अपने कुलपरम्परा का भी दिवाला निकाल देता है:-

"शराब जब मनुष्य के अन्दर प्रवेश करती है तब बुद्धि बाहर निकल जाती है। यह तो हर दर्जे की बेवकूफी और नालायकी है कि आप अपना पैसा खर्च करें और बदले में हाथ लगे बेहोशी और बदहवासी[2]

1- विकास - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 33

2- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 55

2.7.1.12.2 शाराब के अभ्यस्त मनुष्य को हम मनुष्य नहीं कहते क्योंकिउसके सोचने, समझने की शाक्ति क्षीण हो जाती है:--

जब मनुष्य शाराब ग्रहण करते है तब विवेक उससे नमस्कार कर लेता है और विवेकहीन प्राणी कम से कम मनुष्य तो नहीं रह जाता।[1]

प्रताप नारायण श्रीवास्तव इसे मानव मात्र का सबसे बड़ा शात्रु मानते है ---

"युद्ध, दुर्भिक्ष और महामारी ने मिलकर मानव जाति का इतना अहित नहीं किया है जितना अकेली मदिरा ने) संसार की अपेक्षा मदिरा ने अधिक मनुष्यों को डुबोया है।"[2]

2.7.1.12.3 प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने "विदा" विकास "वरदान" एंव "वन्दना " में माँ के ऐसी रूप का भी चित्रण किया है। " वरदान " में में प्रोफेसर अतुल अपनी पत्नी रागिनी को डाटते हुये कहते है ---

"रागिनी तुम मर्यादा की सीमा का उल्लघंन न कर रही हो। माँ मेरे लिये सर्वस्व है। x x x x x माँ की मानसिक शान्ति के लिये मैं त्रैलोक्य का सुख त्याग सकता हूँ।"[3]

2.7.1.12.4 अतुल माँ को वह ईश्वर के समान नहीं स्वंय ईश्वर मानते है माँ के ममत्व की एक बूंद को वह अमृत्व के सामने समुद्र से भी अधिक कल्याणकारी मानते है इसी लिये वह कहते है कि माँ का निरादार करने वाले को मैं कभी माफि नहीं कर सकता।

माँ के अक्षय और अकपट स्नेहाधिक का चित्रण भी वरदान "विदा" विकास एंव "वन्दना" में पर्याप्त देखने को मिलता है।

==

1:- वरदान ---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ --- 75

2:- वरदान-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ ---56

3:-वरदान --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --- पृष्ठ ---29

वरदान उपन्यास में तो कथा की अपेक्षा भाव ने प्रधान स्थान ग्रहण कर लिया है। विनीता सब के मंगल की कामना करती है---

"हे कुल देवता। सब की रक्षा करना। अभी बहू का बचपना है। धीरे -धीरे सब समझ जायेगी। अतुल भी लड़का ही है। उसे अक्षय, सहिष्णु शक्ति प्रदान करना, दोनों का दाम्पत्य जीवन सौरव्य एंव शान्ति पूर्ण बनाना।"[1]

इन सब के अलावा प्रताप नारायण श्रीवास्तव के सामाजिक उपन्यासों के अन्तर्गत अनेक भावों रूपों और समस्यायों का चित्रण किया है।

2.7.8 ऐतिहासिक उपन्यास

2.7.2.1 प्रताप नारायण श्रीवास्तव कृत "बेकसी का मजार" प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास में वर्णित अधिकांश घटनायें एंव पात्र वास्तविक एंव इतिहास सम्मत है।

सन् 1857 तक मुगल साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो चुका था। साम्राज्य छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त था जिस पर अंग्रेज सरकार का शासन था। अंग्रेज इन सब में आपस में फूट पैदा कराये रहते थे। कभी भी इनको आपस में मिलने नहीं दिया जाता था। दिल्ली सम्राट शांहशाह बहादुरशाह अब सम्राट न रहकर सरकार का केवल पेन्शानियर ही रह गया था।

"कौन बादशाह। बहादुरशाह। वह तो हमारा पेंशनिया गुलाम है, उह, उससे भी गया बीता है। दिल्ली कम्पनी बहादुर की है, बहादुर तो जानवर की तरह अपने लाल किले के बाडे में बन्द रहता है। उसकी दिल्ली मत बोलो, कम्पनी बहादुर की दिल्लीबोलो। समझी।"[2]

==

1:- वरदान ---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---- पृष्ठ---29

2:- बेकसी का मजार ---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव---पृष्ठ---4

2.7.2.2 अंग्रेजों ने बहादुर के बारे में जनता एंव भारतीय सैनिकों को प्रतिकूल बनाने में खूब अफवाये फैलायी ।

"पेंसारी पैंशन अपने हीरेशा के कामों में खर्च करते है, बुढ़ापे में भी शादी की है, वे पक्के फरेबी, झूठे और जाहिल है, और हिन्दुओं के घोर शत्रु हैं, जो रियाया को हमेशा लूटा करते है, और रैयत की स्त्रियों को दिन दहाड़े लूट ले जाते है," नाहक खून खराबी करते है ।"[1]

अंग्रेजो की इन अफवाहों का भारतीय जनता पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वह क्रांति का नेता, उन्हीं को चुनती । हालांकि बहादुरशाह इतने कमजोर हो गये थे कि वह यह बोझ उठाने के लिए अपने को असमर्थ बताते हुये कहते है :—

"या खुदा, इस जईफी में तू मुझे कैसे कठिन इम्तिहान में डाल रहा है । हाथ पैरों में ताकत नहीं, तलवार कैसे पकड़ूंगा ।"[2]

2.7.2.3 प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने "बेकसी का मजार में क्रांति का वर्णन किया । आपके वर्णन में गहनता, यथार्थता, के साथ व्यापकता भी है, यत्र तत्र आपने कल्पना का सहारा लेकर तत्कालिक समाज की घटनाओं को चित्रित किया है । जहां कहीं उन्हें इतिहास की बिखरी सामग्री को एक सूत्र में पिरोने की आवश्यकता पड़ी है अथवा रसानुभूति की तीव्रता हेतु अवसर आया है, उन्होंने निसंकोच कल्पना का सहारा लिया है किन्तु उनकी कल्पना से इतिहास का किंचित व्यर्थ नहीं हुआ है । कल्पना ने इतिहास के निर्जीव शरीर में प्राण ही फूंके है उसके स्वरूप को विकृति नहीं किया है । अत: उपन्यासों में पात्र और घटनाओं की ऐतिहासिकता की पर्याप्त रक्षा हुई है । जैसे -अजीमुल्ला और

==

1- बेकसी का मजार — प्रताप नारायण श्रीवास्तव—पृष्ठ—23

2- बेकसी का मजार — प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ—357

गुलनार का प्रसंग, मातावदल सिंह और गुलशान, मैना और गुलशान, बेगमजीनतमहल, द्वारा खजाने का अविष्कार एंव गुलनार का वैवस परिर्वतन आदि घटनाओं में काल्पनिकता का पुट देखा जा सकता है। सम्राट बहादुर शाह, बेगमजीनत-महल, शाहसाहब, नानासाहब, लक्ष्मीबाई, अहमदुल्ला, अजीमुल्ला, तात्याटोपे, बेगम हजरत महल, हडसन, वाजिदअली, कर्नलस्मिथ आदि पात्र इतिहास सम्मत है।

2.7.2.4 प्रताप नारायण श्रीवास्तव कृत "बेकसी का मजार" में घटनाओं का आधिक्य है। इस महान कार्य को करने के लिए प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने बड़ी कुशलता का परिचय दिया है, लेकिन फिर भी कथावस्तु में शिथिलता आ गई है इसके लिये प्रताप नारायण श्रीवास्तव को दोषी नहीं माना जा सकता। क्योंकि जहाँ पर पात्रों की अधिकता हो. घटनाओंकी अधिकता हो विषय की व्यापकता हो वहाँ पर शिथिलता आना स्वाभाविक ही है। प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने इस उपन्यास में युगीन वातावरण, युगीनभाषा, युगीन वेशभूषा आदि का उचित वर्णन किया है।

2.7.3 राजनैतिक उपन्यास

2.7.3.1 प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का अनुशीलन करने के/सन् 1857 से लेकर 1965 तक की समस्त राजनैतिक सांस्कृतिक प्रवृत्तियों का चित्र स्पष्ट हो जाता है। आपके उपन्यासों में कहीं राष्ट्रीय भावना, कहीं भारत के अतीत

वैभव एवं गौरव का और कहीं मातृ भूमि के सौन्दर्य का वर्णन मिलता है । बयालीस,[1] बन्धन विहीना,[2] वेदना,[3] वन्दना,[4] विसर्जन,[5] आदि उपन्यासों में यह प्रवृत्तियां देखी जा सकती है । 1947 की स्वतन्त्रता का मूलाधार प्रताप नारायण श्रीवास्तव 1942 की क्रांति में मानते है ।

" कुछ भी हो , किन्तु मेरा विश्वास है कि अंग्रेज अब कुछ महीने या वर्ष इस देश में रह सकेगें । दीपक बुझने के पहिले बड़े जोर से प्रकाशित होता है । इसी प्रकार ब्रिटिश सत्ता का भी यह ही निर्वाण काल है ।"[1]

2.7.3.2 "बयालीस " में हिन्दू और मुसलमान दोनों स्नेह पूर्वक जीवन बीता रहे थे लेकिन अंग्रेज सरकार सरभगवान सिंह की रियासत के गांव रमईपुर में उसी के द्वारा साम्प्रदायिक विद्वेष की अग्नि लगा देते है । यह कार्य पूरा करने के लिये भगवान सिंह अनवर और जागेश्वर को अपना सहयोगी बनाता है ।यह दोनों हिन्दू और मुसलमानों को खूब भड़काते है जब यह दोनों लड़ते है तो अंग्रेज सरकार इनके ऊपर अन्धा-धुन्ध गोलियों की बौछार करती है जिससे बहुत से ग्रामीण परिवार उजड़ जाते है । बाद में अखिया , रहीन, अनवरगुलाब, नसीम, मनोहर आदि सभी पात्र साम्प्रदायिक विद्वेषको राष्ट्रीय एकता अखण्डता और मानवता के लिये अहित कर मानते है ।

1-बयालीस- (निवेदन) --प्रताप नारायणश्रीवास्तव --पृष्ठ-2,10, 15,18,20,35,55,158,228, आदि ।

2-बन्धन विहीना--प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ --143

3-वेदना-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ ---135

4- वन्दना--- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ --113

5:- विसर्जन -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ --55,104, 236, 240, 408, 376, 377, 469

6- बयालीस -- (निवेदन) -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ--2

"हिन्दू और मुसलमान एक ही जिस्म के दो अजो हैं, एक ही मां के बेटे है मुझे तो दोनों में कोई अन्तर दिखाई नहीं पड़ता है । हिन्दू अगर सूर्य को मानते हैं तो मुसलमान चांद को लेकिन चांद और सूरज खुदा के दोनों नूर हैं ।"[1]

ये निहत्थे ग्रामीण जब राष्ट्रीय एकता की भावना से एक जुट होकर अंग्रेजों के विपरीत कार्य करने को उद्यत हो उठते हैं । " भारत छोड़ो" का नारा लगाकर स्वतन्त्रता संग्राम की क्रांतिमें कूद पड़ते है ।

"हमारे पास वायु शक्ति , सैनिक शक्ति, अस्त्र व्यस्त शक्ति, विध्वंसक बम इत्यादि नहीं है, किन्तु हमें अब उसकी आवश्यकता नहीं हैं । हम अहिंसक सेना के सिपाही है । सत्य हमारी ढाल है , अहिंसा हमारी अस्त्र है और जनता हमारी शक्ति है । कुछ दिन पहले मैं अहिंसा पर विश्वास नहीं करता था , अस्त्र व्यस्त से भी अधिक बल जनता में है और जनता का बल विश्वास और लगनमें हैं, तथा विश्वास और लगन का बल केवल सत्य और अहिंसा में है । हमारा उद्देश्य सत्य है , अतएव ईश्वर हमारी सहायता करेगा ।"[2]

2.7.3.3 सन् 1942 में गांधी जी ने बम्बई में राष्ट्रीय महासभा में यह घोषणा की -- मैं आजादी चाहता है, आज रात को ही कल सबेरे से पहले आजादी चाहता हूँ - अगर वह प्राप्त हो सके ।"[3]

==

1- बयालीस --- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ --217

2-बयालीस -- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ ---199-200

3-बयालीस --प्रताप नारायण श्रीवास्तव -- पृष्ठ ---179

प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने "बयालीस में दिवाकर, "वन्दना" में निर्मलचन्द्र "विर्सजन" में मिल मजदूरों आदि के द्वारा असत्य पर सत्य की और हिंसा पर अहिंसा की और द्वेष पर प्रेम की विजय दिखाई है। महात्मागांधी के सत्य अहिंसा का विशाद वर्णन प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में देखने को मिलता है। महात्मा गांधी ने अपने सदाचरण के द्वारा समाज में दिये हुये उन काले नामों को जो अब तक अंग्रेज और अंग्रेजी शासन के पालतू भक्त थे। गांधी की आवाज पर वह सब उनके उनके साथ हो लिये और अपने अपने कार्यों पर पश्चाताप किया।

2.7.3.4 प्रताप नारायण श्रीवास्तव कृत विहान भी राजनैतिक उपन्यास है जिसके बारे में आपने लिखा है —

"बेकसी का मजार लिखने के बाद यह विचार हुआ था कि क्रांति के अग्र नियामकों के सम्बन्ध में प्रथक प्रथक लिखा जाय। इस क्रांति से लेखक का घनिष्ट सम्बन्ध होने के कारण ऐसी इच्छा होना स्वाभाविक है, और उसी इच्छा का प्रथम पुष्प "विहान" है, जिसमें नानासाहब की क्रांति कारी योजनाओं को उपन्यास में चित्रित किया गया है।"[1]

सन् 1857, प्रताप नारायण श्रीवास्तव का भारत की राजक्रान्ति से बहुत निकटतम सम्बन्ध रहा है। आपके प्रपितामहश्री हनुमान सिंह इसी राजक्रान्ति में अन्धकाराछन्न हुये।

"विहान में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने हिन्दू और मुसलमानों की एकता का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है जिन्होंने अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिये न केवल एकता के सूत्र में बधें बल्कि दोनों ने अपने तन, मन धन को मां भारती के चरणों पर न्यौछावर करके देश को परतन्त्रतता की कड़ियों से छुटकारा दिलाया।

===

1- विहान (आमुख) —प्रताप नारायण श्रीवास्तव —पृष्ठ—1-2

2.7.4 आदर्शवादी उपन्यास

प्रतापनारायण श्रीवास्तव मूलतः आदर्शवादी हैं। आपके साहित्य में विशेषकर उपन्यास में आदर्श और यथार्थ वाद का समन्वय पाया जाता है। भले ही आपकी औपन्यासिक पृष्ट भूमि यथार्थ पर आधारित होती है। परन्तु उसका पर्यवसान आदर्श में ही होता है। अतः आपकी रचनाओं का मूल मन्त्र आदर्शवाद है। श्रीवास्तव जी ने आदर्श को केवल वचन रूप में ही ग्रहण न कर उसे मन्त्र और कर्म, विचार और भाव सभी के क्षेत्र में स्वीकार किया । "विदा" में कुमुदनी के वापिस पतिगृह लौट आने पर तथा पति निर्मलचन्द और सास शान्ता से क्षमा-याचना करने में, चपला के त्याग में "विजय " में विधवा कुसुमलता के पुनः विवाह में, "वेदना " में अवैध सन्तान को अपनाने में तथा उनके लिये आश्रय की स्थापना करने में, आदि के मूल में लेखक की आदर्शवादी भावना ही है। निर्मलचन्द (विदा) भैरव दत्त (वेदना) कंचन लाल (बन्धन विहीना) दिवाकर (बयालीस) विनीता और अतुल सिन्हा (वरदान) आदि आदर्शवादी पात्र हैं। इनके कार्यों से सत्य की आस्था व्यक्त होती है।

सारतः श्रीवास्तव जी जीवन के आदर्श स्वरूप में जैसी आस्था रखते थे उसी आस्था की अभिव्यक्ति आपकी रचनाओं में परिलक्षित होती है, उन रचनाओं में वरदान का प्रथम स्थान है। अतः वरदान आपका आदर्शवादी उपन्यास है। भारतीय संस्कृति और हिन्दू जीवन व्यवस्था के प्रति उनके हृदय में अगाध विश्वास है। भारतीय संस्कृति के वे घोर समर्थक रहे हैं और उनकी यह आस्था और मोह ही उनकी रचनाओं में व्यक्त हुआ है। परार्थवादी सांस्कृतिक मूल्यों की अन्तः सलिला अपनी सजीवनी शक्ति से उनके सम्पूर्ण साहित्य को सम्पुष्ट अवश्य करती है, किन्तु चिन्तन का अवगुण्ठन कला के सौन्दर्य को आच्छादित नहीं करता है अपितु उसके साहित्यक सौन्दर्य में वृद्धि ही करता है।

2.7.5 बाल मनोरंजनात्मक उपन्यास

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के अधिकांश उपन्यास सामाजिक ऐतिहासिक और राजनैतिक है । प्रतापनारायण श्रीवास्तव को बच्चों से अधिक प्रेम था । अतः आपने बालसुलभ क्रीड़ाओं इच्छाओं एवं प्रवृत्तियों का सजीव एवं स्वाभाविक रूप आपके "माया देश का रहस्य"[1] और निष्प्रभ देश का रहस्य[2] उपन्यासों में देखा जा सकता है। यह उपन्यास रोचक है।

2.7.6 आत्मकथात्मक उपन्यास

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "अथ से इति" उपन्यास में अपने ही जीवन की घटनाओं को उपन्यास की कथावस्तु का रूप प्रदान किया है कथा को रोचक एवं जाति प्रदान करने के लिये विभिन्न पात्रों का आश्रय लिया । जिनमें कुछ पात्र काल्पनिक एवं कुछ वास्तविक भूमि से अवतरित किये गये हैं। इस उपन्यास कार का रूप उभर कर सामने आता है।

निष्कर्षतः प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों को सामाजिक , राजनैतिक ऐतिहासिक बाल मनोरंजनात्मक एवं आत्मकथात्मक वर्गों में विभक्त किया गया है। उपन्यासकार ने इन रूपों का समोचित वर्णन किया है जो उसकी सफलता में सहायक है।

1- माया देश का रहस्य- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - प्रकाशन ज्ञानभारती बाल पाकेटबुक्स लखनऊ

2-निष्प्रभ देश का रहस्य - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - प्रकाशन - ज्ञान भारती बाल पाकेट बुक्स लखनऊ

तृतीय अध्याय

उपन्यासकला के निकष पर प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यास

3.1 उपन्यास कला के निकष पर प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यास

उपन्यास के तत्व

कथावस्तु, पात्र और चरित्र चित्रण, कथोपकथन, देशकाल और वातावरण, भाषा शैली और उद्देश्य माने गये हैं। इन्हीं तत्वों को आधार पर प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का अनुशीलन प्रस्तुत है :-

3.1.1 कथावस्तु

3.1.1.1 कथावस्तु के सम्बन्ध में प्रतापनारायण श्रीवास्तव का कथन है कि :-

"कथानक उपन्यास रचना का सर्वाधिक प्रमुख तत्व है। मकड़ी के जाले की भांति कथानक का तानावाना इस प्रकार से बुनना पड़ता है कि कथानक के विभिन्न सूत्र परस्पर सम्ब्रन्ध रहें। कभी-कभी कथानक के सफल संगुम्फन के लिये कथा को अन्त से आदि की ओर ले जाना पड़ता है। कथानक की विश्रृंखलता अथवा असम्बद्धता को मैं उपन्यास रचना की असफलता मानता हूँ।" [1]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के अध्ययन एवं अनुभव का क्षेत्र व्यापक रहा है। इसीलिये आपके उपन्यासों में विषय वस्तु की दृष्टि से और घटनाओं की दृष्टि से व्यापकता एवं विविधता देखने को मिलती है। आपने अपने उपन्यासों में न केवल व्यक्तिगत जीवन की घटनाओं को ही चित्रित किया है बल्कि राष्ट्रीय और अन्तराष्ट्रीय घटनाओं तक को कथानकों में समाहित किया है।

1- वरदान (भूमिका) - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ - 2-3

3.1.1.2 जिन उपन्यासों की कथावस्तु सामाजिक है अर्थात जहां पर आपने कथानकों का चुनाव वास्तविक जगत से किया है। वहां दुःख और कष्ट द्वारा पारिवारिक और वैयक्तिक जीवन की सुखद परिस्थितियों का चित्रण करना ही आपके कथानकों की पृष्ठिभूमि रही है। जीवन में जहां वैयक्तिक मानसिक संघर्ष, वैचारिक संघर्ष, पारिवारिक संघर्ष, पारि-वारिक विसंगतियां, दाम्पत्य जीवन में कटुता, कलुषता, होती है, वहीं आपको कथानक के लिये कथा सूत्रों की प्राप्ति हो जाती है। आपने स-माज में जो देखा है, सुना है, उसी को आपने सुन्दर ढंग से लिपिबद्ध क-रने की चेष्टा की है।

3.1.1.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के कथानकों का आधार सभी प्रका--र की सुख सुविधाओं से सम्पन्न उच्च, मध्यम वर्गीय जीवन का वर्णन है। उच्च मध्यम वर्गीय समाज में व्याप्त अनेक कुण्ठाओं, रूढ़ियों, कुप्रथाओं को आपने उभारा है। जिनमें -- "विधवा विवाह की समस्या"[1]। बाल वि-वाह की समस्या[2]। अन्तर्जातीय विवाह की समस्या[3]। अनमेल विवाह की समस्या[4]। रिश्वत चोरी (उत्कोच)[5]। जारज सन्तान की समस्या[6]। शिक्षा पद्धति की समस्या[7]। वर्ण भेद की समस्या[8]। अर्थ व्यवस्था की सम--स्या[9]। साम्प्रदायिक समस्या[10]। चलचित्र जगत की वास्तविकता एवं अभिनेत्री बनने की इच्छुक नवयुवतियों की विनाश गाथा की समस्या[11]। नारी समानता एवं स्वतन्त्रता की समस्या[12]। पूँजीवाद की समस्या[13]। प्रमुख हैं ।

3.1.1.4 सर रामप्रसाद की बाल विधवा पुत्री कुसुमलता विधवावि-वाह का समर्थन करती है। वह कहती है कि :-

---

1-विजय, बन्धन विहीना 2-विकास 3-विषमुखी
4-बेकसी का मजार 5-बयालीस, बन्धन विहीना 6-वेदना 7-बन्धन विहीना 8-विषमुखी 9-बयालीस, विसर्जन 10-बयालीस 11-विपथगा 12- विदा, विजय, वरदान 13- बयालीस

"विधवा-विवाह संसार में होता है, एक इसी अभागे देश में नहीं।" [1]

वह समाज के इस बन्धन को तोड़ने के लिये उद्धत हो जाती है और कहती है कि मैं अपनी इच्छानुसार पति का चुनाव करूँगी जो मेरी शर्तों के अनुसार विवाह करने के लिये तैयार होगा।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने सात्विक विधवा जीवन को आदर्श रूप में स्वीकार किया है लेकिन उसे नारी समाज पर थोपने से इन्कार किया है :-

"जो पाप करे, वह हिन्दू विधवा नहीं, उसे विवाह करना आवश्यक है। संस्कार मानती है, रूढ़ि मानती है और समाज मानती है।" [2]

"मैं विधवा विवाह के पक्ष में नहीं हूँ परन्तु यह कहती है कि अगर विधवा अपनी तपस्या साधन करे, और सांसारिक प्रलोभनों से दूर रहकर तप करे, तो यह उसके लिये कल्याणकारक है। ऐहिक सुखों को ही सुख न समझना चाहिए, किसी और सुख की कामना होनी चाहिए, जो अनंत है, असीम है, और अविनाशी है। कर्म का बंधन नष्ट करने का अवसर विधवा होकर प्राप्त हुआ, तो उससे पूरा लाभ उठाना परम धर्म है। परंतु जो विधवा धर्म-पालन नहीं कर सकती, उनके लिये तो विवाह ही कल्याणकारी है। [3]

3.1.1.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के "विदा", "विजय", "विकास", "विपथगा" और "बन्धन विहीना" आदि उपन्यासों में आपने पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति का वर्णन पात्रों के माध्यम से किया है। लेकिन अन्तोगत्वा उस पर भारतीयता की ही विजय अंकित की है। आपने जीवन और समस्याओं का यथार्थ रूप से चित्रण करते हुये भी आपने आदर्श के प्रति मोह एवं उसकी प्रतिष्ठा की चेष्टा बनी रही है। आपके उपन्यासों में यह प्रवृति अत्याधिक प्रभावित रही है। आपने अपने उपन्यासों में

- -

1- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 58

2- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 102

3- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 178

न केवल समस्याओं का समाधान ही आदर्शमय किया है बल्कि आदर्श पात्रों का चित्रण भी किया है ।

3.1.1.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में माँ के स्नेहमयी, सहिष्णु और स्थामयी माँ का चित्रण किया है । "विदा" में "शान्ता", विजय में "राजेश्वरी", "वरदान" में "विनीता", "बन्दना" में सलीमा, बंचना में "मणिमाला" व गायत्री, विश्वास की बल वेदी पर में "करूणा"सुन्दरी" बन्दना में शान्ता, वेदना में ज्योर्तिमयी ऐसी ही आदर्श माँ है जो अपने परिवार कोसुख सम्पन्न देखने के लिये अपना सब कुछ त्याग सकती है ।

" माँ शब्द के अर्थ हैं दया, क्षमा, स्नेह और ममता और वात्सल्य का अन्तिम रूप है माँ है ।"[1]

माँ के बारे में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने भी वरदान की भूमिका में काफी विशेष वर्णन किया है। विजय में राजेश्वरी सौतेली"माँ" है लेकिन उसका मनोरमा और अपने दामाद राजेन्द्र प्रसाद के प्रति अगाध स्नेह है :-

"जिस दिन मेरी आंखों के सामने से दूर चली जाओगी, उसी दिन तुम्हारी माँ भी यह संसार छोड़ देगी । मेरा अवलम्ब तुम्ही तो हो ।"[2]

मनोरमा भी अपनी माँ राजेश्वरी को कभी सौतेली होने का आभासनहीं होने देती । वह उसे उतना ही चाहती है जितना माँ उसे चाहती है :-

"पापा से आप चाहे भले कह दीजियेगा, लेकिन अम्मा से किसी बात का जिक्र न कीजियेगा । वह मेरी बीमारी सुनकर सारा धी- - रज खो देंगी और बेहाल हो जायेगी ।"[3]

1-विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 13

2-विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -28

3- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 430

3.1.1.7 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में आदर्श पिता का भी यत्र-तत्र वर्णन देखने को मिलता है, "विजय" में सर रामप्रसाद और राधारमण "विकास" में डा0 नीलकंठ, "बंदना" में निर्मल, "वेदना" में भैरव दत्त आदर्श पिता हैं। वेदना में भैरवदत्त तो आदर्श की सीमा कों भी लांघ जाते हैं। अविवाहिता पुत्री किरण को गर्भावस्था में देखकर वह अपनी पुत्री से तनिक भी क्रोधित नहीं होते हैं। बल्कि किरण को धीरज बधाते हुये कहते हैं कि दो चार दिन में सब ठीक हो जायेगा ।[1]

हालांकि विश्व के किसी भी देश का , किसी भी जाति का और किसी भी धर्म को मानने वाला इसे साधारण बात नहीं कहेगा बल्कि अपनी मान, मर्यादा के लिये दुःखी अवश्य होगा ।

3.1.1.8 "विकास" में पंडित मनमोहन जनहित और लोक कल्याण-कारी है। वह श्रमिक वर्ग के हित के लिये अपने एकलौते पुत्र भारतेन्दु को समस्त सम्पति का उत्तराधिकारी न बनाकर उसे श्रमिक वर्ग के हित के लिये अर्पित कर देना मानवधर्म के अनुकूल है ।[2]

3.1.1.9 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने ऐतिहासिक उपन्यासों की कथ कथावस्तु में ऐतिहासिकता की रक्षा के लिये यथा शक्ति प्रयास किया । जहां कहीं उन्हें इतिहास की बिखरी सामग्री को एक सूत्र में पिरोने की आवश्यकता पड़ी है अथवा रसानुभूति की तीव्रता हेतु अवसर आया है। उन्होंने निःसंकोच कल्पना का सहारा लिया है, किन्तु उनकी कल्पना से इतिहास का किंचित व्यर्थ नहीं हुआ है। कल्पना ने इतिहास के निर्जीव शरीर में प्राण ही फूंके हैं उसके स्वरूप को विकृत नहीं किया है -

"या खुदा, इस जईफी में तू मुझे कैसे कठिन इम्तिहान में डालरहा है । हाथ पैरों में ताकत नहीं, तलवार कैसे पकडूंगा।"[3]

1- वेदना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 12-14

2- विकास- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 308

3- बेकसी का मजार - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 357

3.1.1.9.1 बेकसी का मजार ऐतिहासिक उपन्यास है जिसमें 1857 में हुये प्रथम स्वतन्त्रता आन्दोलन का व्यापक ~~इतिहास सम्राट~~ का वर्णन किया है। सम्राट बहादुर शाह, जीनत महल, शाहसाहब, तात्या टोपे, नाना साहब, रानी लक्ष्मी बाई, अजीमुल्ला, अहमदुल्ला, अडसन, वाजिद अली हजरत महल, कर्नल स्मिथ आदि इतिहास ~~सम्राट~~ पात्र हैं। अत: उपन्यास में पात्रों एवं घटनाओं की ऐतिहासिकता की पर्याप्त रक्षा हुई है।

"वन्दिता" में नेपाल युद्ध, बयालीस में 1942 में घटित स्वतन्त्रता आन्दोलन , विनाश के बादल , वंचना एवं व्यावर्तन में भारत चीन संबंधों एवं चीन के छलपूर्ण, विश्वासघाती नीतियों का सजीव वर्णन किया ।

अत: श्रीवास्तव जी के उपन्यासों के कथानक इतने सरल एवं सजीव है व स्पष्ट हैं कि एक बार पूरे का पूरा कथानक पाठक को मात्र एक ही बार के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है । आपके उपन्यासों में सिर्फ बेकसी का मजार ही एक ऐसा उपन्यास है जिसमें घटनाओं की अधिकता के कारण ही शिथिलता आ गयी है। 900 पृष्ठ में विस्तृत कथा वस्तु वाले उपन्यास में जिसमें लेखक ने 1857 की सम्पूर्ण घटनाओं को एकत्र करने का अदम्य साहस किया ही नहीं बल्कि कर दिखाया ।

3.1.1.9.2 फिर भी घटनाओं की बहुलता के कारण उनमें जो तेज गति आ गई है उसके कारण पाठक की जिज्ञासा यत्र तत्र अपरिपक्व रह गयी है। इस विश्रृंखला योजना के कई कारण हो सकते है :-

1- पात्रों की भरमार

2- संक्षिप्त कलेवर में सब कुछ समेटने की चेष्टा की गई है। अत: सभी घटनाओं का सम्यक आकलन नहीं हो सका ।

3- बहुत सी घटनाओं को सूचना मात्र देकर छोड़ दिया है ।

4- कथोपकथनों का बाहुल्य है जिसके कारण धारा प्रवाह में बाधा होती है अत:कथानक में नीरसता आ गयी है ।

5- श्रीवास्तव जी के उपन्यासों में एक पात्र 10-15 पृष्ठों तक अपने विचार ही प्रकट करता रहता है ।

6-आदर्श की प्रतिष्ठा के लिये उन्होंने बहुत से पात्रों को प्रधान बना

दिया है । और फिर उन सब का परिणाम सुखद दिखाने के प्रयत्न में उन्हें अनेक अवस्थाओं से होकर जाना पड़ा । फलतः विषय का विस्तार स्वाभाविक था । अतः कथानक का समुचित विकास नहीं हो सका ।

अतः प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यास की कथावस्तु उपन्यास कला के तत्वों के अनुरूप ही है।

3.1.2 पात्र और चरित्र चित्रण

3.1.2.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने मध्यम वर्गीय जीवन से कथा-नक के चुनाव कारण पात्र भी मध्यम वर्गीय ही लिये है। आपके व्यापक अध्ययन, पर्यटन अनुभव और दृष्टि कोण के परिणाम स्वरूप पात्रों का चयन स्थानीय न होकर सार्वभौमिक है, जातीय न होकर अन्तर्जातीय है और सामयिक न होकर सार्वकालिक है। आपके पात्र पारिवारिक वात--वरण में प्रेम कर्तव्य, त्याग और सेवा का समन्वयात्मक संघर्ष के साथ अनु--सार होते हैं। प्रत्येक पात्र अपने कर्तव्य के प्रति सजग प्रतीत होता है। संघर्ष शील जीवन के सफल असफल दोनों ही प्रकार के पात्रों का चयन ब-हुत ही सोच समझकर आवश्यकतानुसार किया है। पात्रों के वैचारिक सं-घर्ष और भावात्मक द्वन्द्व द्वारा चरित्र का वास्तविक स्वरूप उद्भावित होता है ।

3.1.222 पात्र जीवनके विभिन्न क्षेत्रों परिस्थितियों और भावनाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। पात्रों के माध्यम से आपने नवीन मान्यताओं का खण्डन एवं प्राचीन मान्यताओं का पोषण कराया है। विगत परम्पराओं के समर्थक आपके अधिकांश पात्र प्रतीत होते हैं। कभी- कभी आप वैयक्तिक दर्शन की अभिव्यक्ति के लिये ऐसे पात्रों का भी निर्माण करते हैं जो आपकी मान्यताओं के समर्थन में सहायक सिद्ध होते हैं ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी के पात्र यथार्थ के प्रति सजग और आदर्श की स्थापना में कटिबद्ध, असफलताओं पर विजय प्राप्त कर सफल, और सार्थक जीवन के वरण और स्वागत के लिये समुत्सुक तथा वर्तमान और भावी पीढ़ी के दिशा- दर्शक के रूप में चित्रित हुआ है ।

श्रीवास्तव जी के पात्र वर्ग-भावना से परे है उनका एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व है, वैयक्तिक भावनाएँ और विचार हैं, आदर्श हैं जिनकी स्थापना में ही वेरत रहे हैं इसीकारण उनके पात्रों में जीवन्तता है, गति है, और विविधता है। पात्रों का चरित्र-चित्रण संयम और सुव्यवस्थित होने के कारण जीवन्त, सार्थक और अनुकरणीय बन पड़ा है।

श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में विभिन्न पात्रों का अंकन सफलता पूर्वक किया है। अधोलिखित प्रमुख हैं :-

1- माता 2- पिता 3÷ पति-पत्नी 4-अन्य सम्बन्ध

(अ) - विधवा (ब) - भाभी नन्द आदि - आदि ।

3.1.2.2.1

1- माता
======

प्रतापनारायण श्रीवास्तव माँ की महत्ता का प्रतिपादन माँ के असीम औदार्य, निष्कपट, स्नेह और अनुपम उत्सर्ग का वर्णन आपने अपने उपन्यासों में किया है "माँ" मेरी दृष्टि में धरातल पर दैवी शक्ति का वह अवतार है जो अपने अपार ममत्व, निष्कपट स्नेह, अतुलनीय उत्सर्ग निः-स्वार्थ सेवा और असामान्य असहिष्णुभाव से सन्तानों को पालित-पोषित ही नहीं करती है, वरन उनसम्बन्धों की सृष्टि भी करती है जो हमारे वैयक्तिक पारिवारिक, सामाजिक और मानवीय सम्बन्धों की आधार शिलायें हैं। माँ हमारे समस्त मानवीय सम्बन्धों की केन्द्र विन्दु है । मातृ भावना के अभाव में सम्बन्ध या तो स्वार्थ पूर्ण बन जाते हैं या शत्रुता का रूप धारण कर लेते हैं । माँ मानव के लिये पृथ्वी पर दैवी वरदान है । इस वरदान का सम्मान करनेवाला सदा सुखी और सान्नद रहता है, शान्ति अनुभव करता है । वर्तमान विषमताओं में संघर्षरत मानव की रक्षा यदि सम्भव है तो केवल मातृत्व की अनुभूति द्वारा ही, क्योंकि मातृत्व में न तो कलुष होता है और न विद्रोह ही । जाति , धर्म और देश से परे सब का सर्वाधिक कल्याण आकांक्षी महिमामयी मूर्ति माँ का सम्मान, अभिवादन और अभिनन्दन करना मानव मात्र का प्रथम कर्तव्य है।"[1]

नारी पुरुष की जननी ही नहीं, उसकी पालक होती है। अतः मानवता की दृष्टि से माँ का पद महान है। उसपद के सम्मुख प्रत्येक प्रकार के पुरुष का नतमस्तक होना अनिवार्य है। परन्तु यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि नारी के उदरसे जन्म लकर भी पुरुष उसके प्रति निष्ठावान नहीं रहा ।

- -

1- वरदान (अपनी बात) - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 2-3

"माँ का प्रेम भगवान का वात्सल्य रूप है।"[1]

"वन्दना" में भीसलीमा का आयशा एवं जुलेखा के प्रति प्रेम उच्च कोटि का है। वह अपनी दोनों पुत्रियों के प्रति अगाध स्नेह रखती है।

"वंचना" में मणिमाला और गायत्री दोनों ही आदर्श-माताओं के उदाहरण हैं। वे अपनी संतान से अत्यधिक प्रेम करती हैं। गायत्री अपने पुत्र आनन्द को बौद्ध भिक्षु वासना से रक्षा करने के निमित्त बनारस से ही पलायन कर जाती है।

"वंचना में मणिमाला अपने पुत्रों विनोद यशोधर तथा "विश्वास की वेदी पर" में करुणा सुन्दरी अपनी सन्तान प्रमोद एवं दामिनी के चरित्र एवं भविष्य निर्माण के लिए आरम्भ से ही उद्योगशील है।

"बयालीस" में यशोधरा का अपने पुत्र दिवाकर "विसर्जन" में लछमिन का अपने पुत्र यशावन्त सिंह, "वेदना" में ज्योतिर्मयी का अपनी पुत्री किरण तथा "बेकसी का मजार" में बेगम का गुलशान और गुलनार के प्रति प्रेममय व्यवहार आदर्श की कोटि तक पहुँच गया। किन्तु उनका चित्रण लेखक ने इस प्रकार से किया है कि वह देवी न बनकर मानवी ही बनी रही है। "वरदान" में विनीता भी आदर्श माँ है।

किन्तु "वेदना" में लौरा और "विपथगा" में लता का व्यवहार भारतीय संस्कृति के अनुरूप नहीं है। लौरा पति राजनाथ से प्रतिशोध लेने के निमित अपनी दोनों सन्तानों प्रेमनाथ और शाशि को चरित्र भ्रष्ट कर देती है, उनकी पवित्रता को नष्ट कर उन्हें चरित्रहीनता के पाप पंक में आपादमस्तक विलीन कर देती है।

1:- विजय —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव ——पृष्ठ ——477

लता भी अपनी पुत्री छवि को सिनेमा अभिनेत्री के रूप में उपस्थिति करने के उद्देश्य से प्रत्येक उचित अनुचित कार्य करती है किन्तु कालान्तर में अपनी भूल से अवगत होने पर यह पति से क्षमा -याचना कर लेती है ।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में नारी के मातृरूप को अत्यधिक महत्व प्रदान किया है ।

"स्त्री के विकास की चरम सीमा उसके मातृत्व में हो सकती है ।"[1]

मातृत्व में नारी जीवन की सफलता है । सन्तान को जन्म देना , उसका पालन पोषण करना, अन्तिम क्षण तक उसकी रक्षा करना और आजीवन उसकी उन्नति में योग देना -मातृत्व का यही आदर्श है, यही उसका शाश्वत रूप है ।

प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी के प्राय: सभी उपन्यासों में भी इस शाश्वत रूप के समस्त रूपों का चित्रण हुआ है उसकी ममता , दया , क्षमा , सहिष्णुता का जैसा आदर्शरूप इन उपन्यासों में दृष्टिगत होता है वैसा ही आदेर्श रूप अपनी सन्तान के प्रति उसकी हित चिन्ता का भी । सन्तान चाहे अयोग्य हो, चाहे समाज की आँखों में पतित और तिरस्कृत हो , माँ का वात्सल्य से परिपूर्ण अंचल सदैव उस पर छाया रहता है ।

1:- श्रृंखला की कड़िया ------- महादेवी वर्मा---- पृष्ठ----96

पिता

प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने अपने उपन्यासों में भारतीय संस्कृति के अनुरूप पिता को स्नेहमय आदर्शरूप एवं समस्त अच्छाइयों का प्रतीक माना है। विदा में रामबहादुर माधवचन्द्र का अपनी पुत्री कुमुदनी के प्रति अगाध प्रेम है। अपनी पुत्री के ससुराल में होने वाली अवस्था का वर्णन पढ़कर वह क्रोधित हो उठते हैं और उसे अपने घर वापिस बुलाकर उसका पुनर्विवाह करना चाहते है। वह अपनी कन्या को प्रत्येक प्रकार से सुखी देखना चाहते है। माधवचन्द्र अत्यन्त क्रोधी स्वभाव के हैं। उनमें आत्माभिमान की भावना अत्यन्त प्रबल है। यही कारण है कि कुमुदनी के उनसे आज्ञा लिये बगैर पति-गृह जाने पर वह कह उठते है :--

" मैं इसका प्रतिशोध लूंगा। प्रतिशोध घोर होगा। ऐसा घोर कि संसार भय से मेरी ओर देखेगा और सिहर कर पीछे हट जायेगा। जो पिता अपनी पुत्री को उसके पति के रक्त में स्नान करायेगा, उसे अनन्त वैधव्य के गड्ढे में डुबो देगा, उसके सामने पति उसके शरीर के टुकड़े टुकड़े करेगा और छोटी छोटी बोटियां करके चील-कौवों को खिला देगा, क्या संसार उसको देखकर भय खायेगा-क्या संसार में हलचल न फैल जायेगा, संसार थर्रा उठेगा।"[1]

2.8.2.3.2. माधवचन्द्र का गुस्सा शीघ्र शान्त हो गया और अन्त में मुरारी को क्षमा करके कुमुदनी के पास जाने को तत्पर हो उठते है।

==

1:- विदा---प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ--34।

" वेदना" में भैरवदत्त , भीमसिंह और राजनाथ के रूप में श्रीवास्तव जी ने आदर्श भारतीय पिता का चित्र प्रस्तुत किया है । भीमसिंह के हृदय में अपनी सन्तान प्रेमनाथ के अगाधस्नेह है वह उसे निरोग करने के लिए यथाशक्तिप्रयास करते है । और उसकी प्रसन्नता के लिए अपने विरोधी भैरव-दत्त से उसकी पुत्री का हाथ मांग लेते है । राजनाथ भी अपनी पुत्री शाषिा के चरित्र भ्रष्ट होने की उत्तरदायी उसकी मां लौरा को ही स्वीकार कर, उसे पूर्ववत् मानकर, अपनी उदारता को प्रकट करते है ।

भैरवदत्त का चरित्र तो अत्यन्त सुन्दर बन पड़ा है। वह एक शिक्षित , आधुनिक विचारों से अवगत सहिष्णु पिता है । पुत्री किरण के गर्भवती होने पर किरण से कहते है:--

"किरन इस तरह कोई व्याकुल नहीं होता है । अभी हम दोनों तुम्हारी रक्षा के लिये है । यदि यह भेद हमें पहले मालूम हो जाता , तब तो किसी दिक्कत का सामना न करना पड़ता है । किन्तु अब भी कुछ नहीं बिगड़ा । सब ठीक हो जायेगा । भला इस छोटी सी बात के लिये तुम्हें फांसी लगाने की जरूरत थी । मैं इन बातों कोई अहमियत नहीं देता । न मैं यह स्वीकार करने के लिये तैयार हूँ कि तुम से कोई अपराध या पाप हुआ है । तुमको शर्माने या मुहं छिपाने की कोई जरूरत नहीं है । एक हो हफ्ते में तुम्हारी हालत पहले जैसी हो जायेगी ।"[1]

1:- वेदना-- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ --12-13

2. 8. 2. 3. 3 भैरवदत्त का यह कथन अस्वाभाविक सा लगता है क्योंकि विश्व की किसी भी मानव जाति में विवाह से पूर्व पुत्री का गर्भवती हो जाना अपराध माना जाता है ।

"विर्सजन " बलवन्त सिंह " बेकसी का मजार " में बहादुरशाह , "विषमुखी " में डा० आनन्द और "वन्दना" में सलीम बहादुर पाशा और निर्मल के अन्त:करण में अपनी सन्तान के प्रति प्रगाढ़ प्रेम है । सलीम के हृदय में अपनी सन्तान आयशा के प्रति अगाध अनुरक्ति है और वह उसे सभी प्रकार की सुख सुविधाओं से संयुक्त कर देता है । बलवन्त सिंह यद्यपि निर्धन कृषक है किन्तु फिर भी अपने पुत्र सन्तू और महावीर की पारिवारिक अव्यवस्था को देखकर पीड़ित हो उठता है।

"बयालीस " में सर भगवान प्रसाद यद्यपि सन्तान प्रेम से आप्लावित है । किन्तु राज्य सम्मान के समक्ष वह सन्तान , पत्नी को कुछ नहीं समझते और यही कारण है वह अपने एक मात्र पुत्र दिवाकर की हत्या कर देते है । किन्तु बाद में उनका हृदय और मस्तिष्क इस प्रकार दुख की अग्नि से दग्ध हो उठता है कि वह विक्षिप्त हो जाते है ।

"वरदान" में नलिनी रंजन रागिनी और उमाचरण के पिता है । उनका जीवन आत्म संयम में नियमितता कर्तव्य परायणता , अनुशासन प्रियता और अटल विचार शक्ति का प्रतीक है । परिस्थितियों का सामना करने और उन पर विजय पाने में वह यथेष्ट सक्षम हैं किन्तु रागिनी उनकी दुर्बलता है । वह रागिनी को परम सुखी देखने के लिए लालायित रहते है। उमाचरण और रागिनी से पिता के रूप में (आशीर्वचन) बोल-

ते है :---

"तुम दोनों सदा सत्पथ चलो । कर्मण्ता को तुम वरण करो, सफलता तुम्हें वरण करे।"[1] नलिनी रंजन का चरित्र अत्यन्त सन्तुलित आकर्षक और अविस्मरणीय है । कर्मण्ता और कर्तव्य परायणाता का प्रतिरूप यह चरित्र पाठकों के मस्तिष्क में अमिट छाप छोड़े बिना नहीं रहता । "वरदान" में ही कामिनी के पिता भीमसेन उच्चश्रेणी के वकील एक अजय पिता, और व्यवहार सम्पन्न प्राणी है । वह अपने पुत्र भानुविक्रम से कहते है:---

" जब किसी जवान बेटी के पिता बनोगे तब पता चलेगा कि आ रही होगी और आ रही है में कितनाअन्तर होता है । अवस्था मूछों को सफेद धीमे -धीमे करती है किन्तु है बेटी के गलत कदम से चेहरे को काला होते देर नहीं लगती है ।"[2]

अत: प्रकार स्पष्ट है कि पितृ रूप का अंकन श्रीवास्तव जी ने अत्यन्त सुन्दर ढंग से अपने उपन्यासों में किया है ।

1:- वरदान--- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ---339

2:- वरदान--- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---पृष्ठ ---347

3.1.2.2.3 ¶¶ पति- पत्नी ¶¶

प्रताप नारायण श्रीवास्तव ने पत्नी धर्म के उस शाश्वत रूप का विस्तृत एवं बहुमुखी चित्रण किया है । पति बुरे स्वभाव वाला मनमाना बर्ताव करने वाला अथवा धन ही क्यों न हो वह उत्तम स्वभाव वाली नारियों के लिए श्रेष्ठ देवता के समान है । परिवार को बनाने या बिगाड़ने में पूरा पूरा योगदान पति- पत्नी का ही होता है । श्रीवास्तव जी ने इस नारी की स्वधीनता की ही व्याख्या करते हुये पति पत्नी के कर्तव्यों को भी निर्धारित किया है :—

" नहीं सच्ची स्त्री-स्वाधीनता वही है जहाँ स्त्री स्त्री पर अत्याचार न हो । स्त्री - पुरुष दोनों एक होकर रहें । दोनों में मतभेद न होने पावे । स्त्री को यह गर्व न हो, मैं स्वामी से बड़ा हूँ और न स्वामी को अभिमान हो कि ईश्वर ने सब बुद्धि मेरे ही हिस्से में रक्खी है । स्त्री घर की मालकिन है और पुरुष बाहर का । लेकिन दोनों में मतैक्य हो । दो उस पवित्र प्रेम सूत्र में बधे हो , जहाँ न राग है , न अभिमान है, न द्वेष है और न कलह ।"1

" विजय " में मनोरमा और राजेन्द्र प्रसाद, "विदा" में मुरारी शंकर और लज्जा ," वन्दना" में बहादुर पाशा और सलीमा , बेचैना " में अविनाश और मणि- माला "वेदना" में भैरवदत्त और ज्योतिर्मयी ; बन्धन विहीन " में दलजीत सिंह और सुनयना का जीवन अत्यन्त सन्तोष मय है । पति पत्नी परस्पर स्नेह पूर्वक जीवनयापन करते है । इनके पारिवारिक सम्बन्ध मधुर हास विलास मय है ।

1:- विदा —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव ——पृष्ठ ——150

" विजय "में राजेश्वरी और सर राधारमण प्रसाद का वैवाहिक जीवन अत्यन्त सुखमय है।"[1]
पति पत्नी में परस्पर अगाध स्नेह एवं दृढ़ विश्वास है। "विजय" में कुसुमलता के मन में चूंकि राजेन्द्र प्रसाद के प्रति आकर्षण एंव प्रेम की भावना थी और वह विवाह के बाद भी राजेन्द्र प्रसाद को ही चाहती रहती है। लेकिन बाद में अपने पति आनन्दी प्रसाद की आलोकमय की भावना को देखकर अपनी भूल पर प्रायश्चित करती है और आनन्दी प्रसाद को ही अपना स्नेह प्रदान करती है।

" विदा" में कुमुदनी नव पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त अधुनातन चली है जिसका अंहकार उसे पति×से उसे अलग कर देता है। किन्तु अन्त में भाभी लज्जा वती के उपदेश और उनके प्रेम मय जीवन को देखकर वह भी पति गृह आ जाती है। प्रताप नारायण श्रीवास्तव जी ने कुछ इस प्रकार के भी पति पत्नी युगल को चित्रित किया है जिनमें पति अपनी पत्नी की उपेक्षा कर अन्य के प्रति अग्रसर होता है। बयालीस में सर भगवान राज्य सम्मान के समक्ष अपनी पत्नी की अवहेलना कर देता है।

"विजय" में भी राजा प्रकाशेन्द्र टैवीलियन के सम्पर्क में आने पर अपनी सती साध्वी पत्नी मायावती को उपेक्षा कर देता है किन्तु बाद में भूपेन्द्रकिशोर के प्रयास से उसे अपनी भूल का ज्ञान होता है। और वह निश्चल भाव से पत्नी के संग जीवन यापन करने लगता है। श्रीवास्तव जी ने पारिवारिक जीवन पर आधृत होने के कारण ही उपन्यासों में दाम्पत्य जीवन के सुन्दर उदाहरण यत्र त्रत दृष्टिगत होते है।

1:- विजय—— प्रताप नारायण श्रीवास्तव ——पृष्ठ ——12,13-16।

3.1.2.2.4 अन्य सम्बन्ध

श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में परिवार से सम्बन्धियों का वर्णन भी किया है। उनमें से मुख्य है, विधवा का चित्रण।

विधवा

श्रीवास्तव जी ने विधवा समस्या को अपने उपन्यासों में और आपका इस सम्बन्ध में अपना अलग दृष्टि कोण रहा है। विधवा अपने जीवन को सेवा भाव और सात्त्विक जीवन वृत से जीवनयापन करती है तो उसका जीवन जीना एक तपस्या है। और अगर वह विधवा जीवन को संयामित रूप से निर्वाह नहीं कर पाती है तो समाज को उसे पुर्नविवाह की स्वीकृत देनी चाहिए। अन्यथा वह पतन की ओर उन्मुख हो जाती है। श्रीवास्तव जी ने "विजय" में कुसुमलता के माध्यम से विधवा की समस्या को चित्रित किया है वह सोचती है ---

"मेरे भाग्य में पति- सहवास का सुख नहीं है। यह निश्चेष्ट कार्य है, इसीलिये भाग्य है किन्तु अगर मैं अपना विवाह कर लूं तो वही सुख मेरे जीवन में आ जायेगा।"[1]

कुसुमलता प्राचीन रूढ़ियों से लिपटी हुई भारतीय समाज को कोसती है --

" विधवा-विवाह संसार में होता है। एक इसी अभागे गुलाम देश में नहीं होता है। × × × × ×आज कितने ही धर्म -ध्वजी समाज के नेता मेरा स्त्रीत्व भंग करने के लिऐ तैयार है, छिपा कर पाप करने के लिए तैयार है किन्तु अगर मैं आज विवाह कर लूं, तो हिन्दू समाज नाक -भौ सिकोड़ेगा, मुझे मलेच्छी कहेगा।"[2]

1:- विजय ---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव ---- पृष्ठ ---57-58

2:-विजय ---- प्रताप नारायण श्रीवास्तव --पृष्ठ ---58

कुसुमलता दृढ़ निश्चय कर लेती है कि मैं स्वयं अपने वर का चयन करूँगी और उसी से विवाह करूँगी जो मेरी शर्तों को स्वीकार करेगा। हिन्दु धर्म की समर्थक मनोरमा विधवा के जीवन को निर्गुण तपस्या मानती है :------

"विधवा की तपस्या निगुर्ण उपासना है, पति आँखो से ओझल है, परन्तु फिर भी चारों ओर है। स्वपन को सत्य करने के लिये अपना स्थूल शरीर तो जलाना ही पड़ेगा - यह वैधव्य इसी का मार्ग है। विधवा का शरीर स्थूल का चोला पहने पार्थिव नहीं है, बल्कि सत्य, शिवं, सुन्दरं है। वह मर कर पार्थिव पति से जुदा नहीं होती, बल्कि असीम पति के गले का हार होती है। निवृत्ति मोक्ष और लीना कैसा अनोखा मार्ग है।"

" हिन्दू विधवा हिन्दू धर्म का विराट रूप है।"[1]

किन्तु जिसके लिये विधवा जीवन एक समस्या और बोझ बन जाये उसे पुर्न विवाह कर लेना है उचित है।

" जो पाप करे, वह हिन्दू विधवा नहीं, उसे विवाह करना आवश्यक है। सरकार मानती है, रूढ़ि मानती है और समाज मानता है।"[2]

कुसुमलता के पिता सर रामप्रसाद भी अपनी भूल का अहसास करते है और कुसुमलता का विवा ह डा० आनन्दी प्रसाद से करके उसे जीवन में फिर से खुशियां भर देते है।

"बन्धन विहीना" में भी श्रीवास्तव जी ने सात्त्विक जीवन को आदर्श रूप में स्वीकार करते हुये भी व्यवहारिक दृष्टिकोण से विधवा-विवाह का समर्थन किया है।"[3]

1:- विजय —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —— पृष्ठ —— 101

2:-विजय —— प्रताप नारायण श्रीवास्तव —— पृष्ठ —— 102

3:-बन्धनविहीना—— प्रताप नारायण श्रीवास्तव—पृष्ठ—77

॥ भाभी— ननद ॥

भाभी और ननद का रिश्ता अपने अजीब गरीब है जो रस , माधुर्य और हास्य परिहास से परिपूर्ण होता है । भाभी ननद को और कभी ननद भाभी को हास्य परिहास के द्वारा हास्य ही उपदेश भी दे देती है । भाभी और ननद के प्रसंग उपन्यास में रोचकता ला देते है ।"[1]

श्रीवास्तव जी ने भाई- बहिन , बहिन -बहिन आदि पारिवारिक सम्बन्धों का विस्तृत चित्रण नहीं किया सिर्फ यत्र तत्र संकेत मात्र किया है ।[2]

श्री वास्तव जी ने अपनी जीवन के रंग बिरंगे चित्र प्रस्तुत करके भारतीय उच्च मध्यम वर्गीय समाज का चित्रण किया ।
यों तो श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में अनेकों चरित्रों की उद्भावना की लेकिन कुछ अधिक महत्त्व पूर्ण चित्रित किये है । "विदा" में शान्ता और निर्मलचन्द्र "विजय" में कुसुमलता , भूपेन्द्र किशोर, "विकास " में मनमोहन नाथ , "बन्दना" में निर्मलचन्द्र "बयालीस " में नसीम "विश्वास" की वेदी पर " में कैप्टन अर्जुन सिंह मंजुला ,अमृता, दामिनी और प्रमोद "विषगथा" में लता "वंचना" में यशोधर --"विषमुखी " में विश्वनाथ "बेकसी का मजार " में जीनत महल , जवां खां तथा शाहजादी और वरदान में विनीता

का चरित्र अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया है । श्री वास्तव जी नारी के चरित्र को जो विरोधों की श्रृंखला प्रतीत होती है , किन्तु वह भारतीय और पाश्चात्य, सभ्यता और संस्कृति के बीच की कड़ी है , औचित्य अनौचित्य की कसौटी है भावना और कर्तव्य का सन्तुलित स्वरूप है ,वैयक्तिक और सामाजिक सीमाओं की विभाजकरेखा है और आस्था आस्था की जीवन्त शक्ति है। श्रीवास्तव जी ऐसे अप्रतिम चरित्रों की अवतारणा के लिये बधाई के पात्र है ।

1:-विदा—प्रताप नारायण श्रीवास्तव—पृष्ठ—66, 67, 94, 96
2:-विर्सजन प्रताप नारायण श्रीवास्तव- -पृष्ठ—98-98

3.1.3 कथोपकथन

पात्रों के वार्तालाप को ही कथोपकथन कहा जाता है। यही वह तत्व है जिससे उपन्यासकार कथा, विकास, पात्र चरित्र चित्रण उद्देश्य प्राप्ति और देशकाल चित्रण में सफल होता है। कथोपकथन दो प्रकार का होता है--

1- अभिनयात्मक

2- विश्लेषणात्मक

उपन्यास में जब कथोपकथन अपने स्वाभाविक रूप में आता है, तो उसमें नाटक का सा रस आने लगता है। कथोपकथन की सफलता के लिये आवश्यक है कि चमत्कार व संवाद छोटे और चुस्त, व्यंजक और सांकेतिक, आकर्षक और चमत्कार पूर्ण, भावानुरूप, पात्रानुकूल एवं परिस्थिति अनुरूप हो। साथ ही स्वाभाविकता, औचित्य, चुटीलापन और सजीवता होनी आवश्यक है।

3.1.3.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रेमचन्द युगीन उपन्यासकार होने के नाते आपके समस्त उपन्यासों में दीर्घ कथोपकथन मिलते हैं। जो कहीं - कहीं तो तीन-तीन, चार-चार पृष्ठ तक देखे जा सकते हैं। दीर्घ कथोपकथन विषय विवेचन के लिये तो उपयुक्त प्रतीत हो सकते हैं लेकिन कथा प्रवाह एवं मनोरंजन की दृष्टि सेनहीं, ऐसे कथोपकथनों से नीरसता आ जाती है। " वरदान " एक ऐसी कृति है जिसे इस दोष से मुक्त रखा गया है।

3.1.3.1.1 कथानक के विकास में कथोपकथन का योगदान

कथावस्तु का विकास कथोपकथन पर बहुत कुछ निर्भर रहता है। गतिशक्ति कथोपकथनों से कथा प्रवाह तीव्र बना रहता है। "विदा" में मुरारीशंकर और लज्जावती का पारस्परिक वार्तालाप दृष्टव्य है :-

"मुरारी"- अच्छा अपराध हुआ क्षमा कीजिये।"

लज्जा ने प्रसन्न होकर कहा- अच्छा क्षमा किया, लेकिन भविष्य में

ऐसी गलती न होने पाये ।

मुरारी ने अपनामस्तक नतकर कहा-- श्रीमती जी की आज्ञा शिरोधार्य है । यह कहकर मुरारी ने लज्जा का हाथ सप्रेम पकड़ लिया और धीरे -धीरे दबाने लगे ।"[1]

"विजय" में कुसुमलता और मनोरमा का वार्तालाप देखिये —

कुसुमलता ने शान्त स्वर में कहा —"अरे तुम हो मन्नी "

मनोरमा ने हंस कर कहा -- "हाँ मैं हूँ तुम्हारी ....।"

कुसुमलता ने उसकी ओर देखकर कहा ---"क्या कहती क्यों नहीं, रूक क्यों गई,

मनोरमा ने उसकी ओर देखते हुए कहा--"कह दूँ बुरा तो न मानोगी ।"

कुसुमलता ने विश्वास दिलाते हुये कहा —"नहीं मैं बुरा नहीं मानूगीं, । तुम कहो ।"

मनोरमा ने उसके कान के पास जाकर धीमे स्वर में कहा—" तुम्हारी सौत ।"[2]

"वरदान" में भी अतुल और रागिनी के मध्य वार्तालाप से कथानक को गति मिली है । वह दृष्टव्य है ——

"तबियत तो ठीक है ।"

"बहाना किये लेटी हूँ ।"

"कुछ बताओगी भी नहीं।"

"बताने से कोई लाभ नहीं । बस मुझे पापा के घर भेज दीजिये ।"

"तुम्हें आये हुये अभी कुछ ही तो दिन हुये हैं । इस बार इतनी जल्दी क्यों ।"

"मैं ताल्लुकेदारों के घर के योग्य नहीं हूँ ।"

"किन्तु मुझसे तो तुम में ऐसी कोई अयोग्यता अनुभव नहीं होती है ।"[3]

==

1- विदा - प्रताप नारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-- 87

2-विजय— प्रताप नारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ —263-263

3- वरदान- प्रताप नारायण श्रीवास्तव— पृष्ठ-- 77

3.1.3.1.2 पात्रों के चरित्र चित्रण में कथोपकथन का योगदान

पात्रों के चरित्र चित्रण में कथोपकथन का योगदान पर्याप्त मात्रा में रहता है । चारित्रिक गुणों का उद्घाटन कथोपकथनों के माध्यम से ही होती है । "विदा" में निर्मलचन्द्र और शान्ता, शान्ता और कुमुदनी , निर्मलचन्द्र और कुमुदनी के व्यक्तिगत संवाद "विजय " में मनोरमा और राजेश्वरी , बाबू राधारमण और राजेन्द्र प्रसाद मनोरमा और कुसुमलता डा० आनन्दी प्रसाद और राजा प्रकाशेन्द्र मिस ट्रेवीलियन व राधेलाल, मिस ट्रेवीलियन और राजाप्रकाशेन्द के सम्वाद "विकास" में मनमोहन , अनूपरूपी कामेश्वर प्रसाद , अमीलिया और भारतेन्दु के पारस्परिक वार्तालाप "बयालीस" में दिवाकर "माधवी " यशोधरा , सर भगवान सिंह के सम्वाद "विर्सजन" में सेठ वामनदास , रामनाथ , ऊर्मिला, पामीला, श्रीमती निकसन के सम्वाद ,"बेकसी का मजार " में बादशाह , बेगम जीनत , जवाँ बख्त , शाहजादी के सम्वाद; "विषमुखी " में विश्वनाथ, क्रांति, सुरेशचन्द्र, "सुहासिनी" आदि में कथोपकथन, "वेदना में मिनिस्टर भैरवदत्त, ज्योतिर्मयी , किरण शाश्वि प्रभा के पारिस्परिक वार्तलाप " विश्वास" -- की वेदी पर " में सूवा , चिनमिन्ह अर्जुनसिंह एंव उनकी पत्नी मुजुला , आदि का वार्तलाप ; "वन्दना" में माधव प्रसाद , कमलनयन , निर्मलचन्द्र , कुमुदनी , शान्ता , बहादुर पाशा सलीम लज्जा मुरारी आदि के कथोपकथन " वचंना" चिन-चुन , यशोधर, बासव , मालपा , आदि के कथोपकथन "बन्धन" "विहीना" में सुनयना, कालेखाँ , मातादीन , महारानी सुनयना, कंचन लाल अग्रवालआदि के कथोपकथन ;"व्यावर्तन " में रमणी मोहन (उधोगपति) , मिलर, मिसेज , रिपुदमनसिंह, कला , काऊची, लूंग आदि, के सम्वाद "वन्दिस में भी बलभद्र सिंह थापा जनरल डिलेस्पी गोरी , पार्वती , आदि के सम्वाद, "वरदान" में विनीता, कामिनी, रागिनी, नलिनीरंजन, अतुल उमाचरण, गंगा आदि के कथोपकथनों से पात्रों के चरित्र की प्राण प्रतिष्ठा की है ।

"वरदान" में रागिनी और उमाचरण के एक कथोपकथनों की झांकीप्रस्तुत है--

"फिर चलिये कहीं घूमने चलें ।"

"उद्देश्यहीन कहीं आना जाना मुझे पसंद नहीं ।"

"पापा जी भी सुबह से नहीं हैं। समय किसी प्रकार तो कटना ही चाहियें।"

"कोई भी पुस्तक निकालकर पढ़ने लगों, समय अपने आप कट जायेगा ।"

"आपकी पुस्तकों में मेरा मन नहीं लगता ।"

"मेरी न सही, प्रोफेसर अतुल सिन्हा की कोई पुस्तक उठा लो ।"

"रागिनी उफना कर उठ खड़ी हुईऔर बोली-"देखिये भाई जी ।"

"मुझे उनसे न कोई मतलब है, न उनकी पुस्तकों से * वह सर साहब हैं आपके या कामिनी के ।"[1]

3.1.3.1.3 कथोपकथन द्वारा पात्र वैचित्र्य

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने जहां पात्र वैचित्र्य अभिव्यक्ति कथोपकथनों द्वारा की है वहां कथोपकथन अत्यन्त सजीव एवं अत्यन्त मार्मिक हृदयस्पर्शी बन गये हैं। चरित्रों की उन सूक्ष्म से सूक्ष्म विशेषताओं का उद्घाटन किया है जिनको स्पष्ट रूप में अभिव्यक्त करने में पात्र भी संकोच का अनुभव करते हैं। (विदा) "विसर्जन" आदि में कथोपकथन द्वारा पात्र वैचित्र्य की अभिव्यक्ति हुई है । कामिनी और उमाचरण का वार्तालाप की "वरदान" में एक सुन्दर झलक देखिये :-

"अच्छा-अच्छा, अब आप कब पधार रहे है ।"

"जब आज्ञा हो ।"

"अभी, इसी समय, मेरे साथ ही ।"

"स्वीकार, किन्तु एक शर्त है ।"

"स्वीकार है ।"

" क्या स्वीकार है ।"

"आप की शर्त ।"

"परन्तु शर्त क्या है, जाने विना स्वीकृत कैसे व्यक्त कर दी ।"

1- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 131

"कोई आवश्यकता नहीं । आशंका और भय विश्वास के अभाव के द्योतक है।"

"इस सीमाहीन विश्वास के लिये कृतज्ञ हूँ।"[1]

श्रीवास्तव जी इस प्रकार के वार्तालाप द्वारा पात्रों के मध्य सम्बन्ध की घनिष्टता, तक्कल, व्यवहार और अपरिहार्य आमन्त्रण आदि सूक्ष्म महत्वपूर्ण विशेषताओं का उद्घाटन किया है ।

3.1.3.1.4 वातावरण के निर्माण में कथोपकथन का योगदान

अधिकतर वातावरण का सृजन उपन्यासकार ने अपने वक्तव्यों द्वारा किया है लेकिन यत्र-तत्र ऐसे मैं उद्धरण मिल जाते हैं जहाँ कथोपकथन द्वारा वातावरण एवं देशकाल का निर्माण किया है। "वरदान" में नलिनीरंजन और किशोर के आपसी वार्तालाप का एक सुन्दर सजीव चित्रण प्रस्तुत है :-

नलिनीरंजन पूछते हैं-"और तुम क्या करते हो ? "

"वही पेशा अर्थात वकालत ।"

"किसी कम्पटीशन में नहीं बैठे ? "

"मुझे नौकरी पसन्द नहीं, वकालत में आजादी रहती है ।"

"वास्तव में आनन्द आजादी में ही है। नौकरी पेशा वालों की भी कोई जिन्दगी है। रात दिन दौड़ - धूप करना पड़ती है। न ठीक से एक जगह रह पाते हैं और न घर गृहस्थी का ही सुख भोग पाते हैं। अब मुझे ही देखो । दम मारने तक की फुरसत नहीं मिलती ।"

"जी हाँ आपको फुरसत कहाँ । जुर्म दूसरे करते हैं और परेशानी आपको उठानी पड़ती है।"

"बड़ा खराब महकमा है। दुनिया इस महकमें के अफसरों को खुश किस्मत समझती है, लेकिन मैं जानता हूँ कि इससे बढ़कर जिल्लत का महकमा दूसरा नहीं है। इसमें न पैसा है न इज्जत है।"[2]

1- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 70-71

2- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 87

3.1.3.1.5 भाषा शैली के निर्धारण में कथोपकथन का योगदान

कथोपकथन द्वारा उपन्यास में प्रयुक्त भाषा और शैली का परिचय प्राप्त होता है। पात्रानुकूल भाषा और शैली की भिन्नता कथोपकथनों पर ही अवलंबित होती है। उदाहरणार्थ " वरदान" में गंगा की भाषा और रागिनी की भाषा में पर्याप्त भिन्नता है:-

"नाहीं दीदी जी, आपके जाय के बाद से कोऊ नाहीं आवा xxxxxxxxxxxxx अबै तो तार आवई रहय। चिट्ठी पत्री कहूँ इत्ती जल्दी आवत है । xxxxxxxxxxx चाह वाह लाई ? x x x x x x x x x लेव दीदी जी । लागत है दीदी जी का चाह पसन्द नाहीं आई xxxxxxयहिका रहय देव दीदी जी । न पियो । अब दिन दूसर बनाइ लाइत है ।"[1]

3.1.3.1.6 उद्देश्य की अभिव्यक्ति में कथोपकथन का योगदान

उपन्यासकार अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिये ही अन्य सभी तत्वों का समावेश करता है। भिन्न तत्वों का सूक्ष्म चित्रण और उनका सफलता पूर्वक निर्वाह किसी कृति को महान बनानेके लिये पर्याप्त नहीं है । उपन्यास की महानता तो उसके उद्देश्य में ही निहित होती है। कहीं तो यह उद्देश्य कृति में आद्योपान्त व्यक्त रहता है और कहीं पात्रों के कथोपकथन से मुखरित होता है ।

3.1.3.1.7 सजीवता, संक्षिप्तता, स्वाभाविकता एवं सार्थकता

कथोपकथन में जब सजीवता, संक्षिप्तता, स्वाभाविकता एवं सार्थकता का समावेश होता है तो वह प्रभावोत्पादक हो जाता है। उदाहरणार्थ प्रस्तुत है :-

सजीवता- "तबियत तो ठीक है ?"

"बहाना किये लेटी हूँ ।"

"कुछ बताओगी भी ।"

"बताने से कोई लाभ नहीं ।"[2]

1- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 33

2- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 63-64

संक्षिप्तता :- "अच्छा-अच्छा अब आप कब पधार रहें है ?"

" जब आज्ञा हो ।"

"अभी । इसीसमय । मेरे साथ ही ।"

"स्वीकार किन्तु एक शर्त है ।"

"स्वीकारहै।"

"क्या स्वीकार है ।"

"आपकी शर्त ।"

× × × × × × × × × ×

× × × × × × × × × ×

"इस सीमा हीन विश्वास के लिये कृतज्ञ हूँ ।"[1]

स्वाभाविकता :- "दीदी जी । ई दवाई काहे धरिन है टिम तो हुई गवा। दवाई पिये माँ लापरवाही नाहीं करन चाही ।"

"मुझे नहीं पीनी है दवा अवा । उठा ले जा इसे । बाहर फेंक दे जाकर ।

"नाही दीदी जी, दवाई का फेंकै के वास्ते डाक्दर साहब दीन रहे ? मोर दीदी दवाइ पी लेव ।"

"गंगा मैं भली चंगी हूँ । मैं दवाई अब नहीं पियूंगी ।"

"अच्छा आज भर पी लेव । कल से न पीयो ।

"गंगा । तू मेरे पीछे क्यों पड़ी रहती है ?"[2]

सार्थकता:-

"सर आप रागिनी जी को ले क्यों नही आते ?"

"ले आने का प्रश्न ही नहीं उठता ~~अब~~ वह स्वेच्छा से गयी है ।"

"इसका मतलब है कि आप माँ जी को सुखी नहीं देखना चाहते ।"

"माँ को सुखी देखने के लिये मैं सबकुछ कर सकता हूँ ।"

"किन्तु रागिनी को आप नहीं ला सकते ।"

× × × × × × × × × × × × × × × × ×

1-वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 17-18

2- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 34-45

× × × × × × × × × × × × × × ×

× × × × × × × × × × × × × × × ×

"सर, सम्भव है, वह क्षण आ चुका है ।"[1]

चरित्र चित्रण की भांति ही श्रीवास्तव जी को कथोपकथन में काफी सफलता मिली है। कहीं कहीं आपके कथोपकथन अधिक लम्बे हो गये हैं। किन्तु शैली की रोचकता एवं भावों की गम्भीरता के कारण उनमें अस्वाभाविकता एवं नीरसता का समावेश नहीं होने पाया है । हां नीरसता पाठक को वहां महसूस होने लगती है जहां कहीं आपके कथोपकथन दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति के माध्यम बनते है ।

3.1.4 देशकाल और वातावरण

3.1.4.1 सच्चा साहित्यकार वही होता है जो देशकाल और वातावरण से न सिर्फ परिचित होता है बल्कि अपनी कृतियों में उसका सफल और सशक्त निर्वाह भी करता है। श्रीवास्तव जी ऐसे ही सफल उपन्यासकार हैं जिन्होंने कथानक या पात्रानुकूल वातावरण का सृजन किया है। जिस समाज के अंचल विशेष का चित्रण आपने किया, उसका आपको पूर्ण ज्ञान था । आप उसमें ऐसी प्राण प्रतिष्ठा करते हैं कि पाठक को सुपरिचित सा प्रतीत होता है। श्रीवास्तव जी ने जिस वातावरण विशेष को भी स्पर्श किया वही सुपरिचित, सजीव एवं सार्थक बन पड़ा ।

"यदि आपने पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति में शिक्षित नारी (कुसुमलता, रागिनी) को कुत्ते टाईगर के साथ खेलते दिखाकर एवं ट्रेनिंग देते दिखाकर उस वातावरण की सृष्टि की है ।"[2]

1- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 137,

2- विदा, वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 156,36

3.1.4.2 प्राचीन परम्पराओं के प्रति व्यामोह, पारिवारिक मान्यताओं एवं मूल्यों के प्रति आस्था तथा पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति से प्रभावित पात्रों को मानसिक विघटन को चित्रित करने के लिये जिस वातावरण को अपनाया गया है, वह कथानक, पात्र तथा विचारों के सर्वथा अनुकूल है ।

देशकाल और वातावरण की दृष्टि से भी श्रीवास्तव जी को मनोवांछित सफलता प्राप्त हुई है। उपन्यास में वर्णित रीति-रिवाज, परिस्थिति, रहन-सहन, आचार-विचार, समय, स्थान तथा प्रकृति वर्णन आदिको ही देशकाल कहा जाता है। देशकाल और वातावरण दोनों ही दृष्टि से श्रीवा- -स्तव जी के उपन्यास सफल है । क्योंकि उपन्यास की सफलता में देशकाल और वातावरण का विशेष योगदान होता है ।

3.1.5 भाषा - शैली

3.1.5.1 भाषा शैली उपन्यास का आवश्यक एवं प्रमुख तत्व है। हम जो कहना चाहते या जिस घटना विशेष का वर्णन या चित्रण करना चाहते हैं, उसके लिये किसी न किसी भाषा और कहने के ढंग [शैली] की आवश्यकता पड़ेगी। अर्थात भावाभिव्यक्ति का, भाषा शैली सशक्त माध्यम है। भावाभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं वरन् स्वाभाविकता एवं यथार्थता बहुत कुछ भाषा शैली पर निर्भर रहता है।

श्रीवास्तव जी प्रेमचन्द युगीन उपन्यासकार है। प्रेम चन्द काल में जिस भाषा शैली का निर्माण हुआ था उसी का प्रतिनिधित्व आपने मृत्युपर्यन्त किया । अर्थात आपकी भाषा उर्दू मिश्रित मुहावरेदार हिन्दी है। श्रीवास्तव जी गूढ़ं से गूढ़ भावों और दार्शनिक विचारों को आप बड़ी सरलता से सामान्य बोलचाल की भाषा में व्यक्त करने में सिद्ध हस्त है ।

वैसे भाषा शैली के प्रति आपका न तो कोई आग्रह है और न ही कोई दृष्टिकोण । आपका विचार था कि विषय और पात्रानुकूल भाषा शैली का स्वतः ही जन्म होता है। प्रयास जन्य भाषा और कृत्रिम शैली में आपका विश्वास नहीं था। फिर भी आपके साहित्य में भाषा के विविध रूप देखने को मिलते हैं :-

1- "यौगिक शक्ति निर्वाण प्राप्त कराने में अत्यन्त सहायक है। दैविक होने से उसकी गति सत्कर्मों की ओर रहती है । योगशक्ति उर्ध्वगामी है। इसीलिये योगी किसी का अहित नहीं करते, भले ही उनके विरुद्ध कोई दुष्कर्म करे। क्षमा- - शील होना योगी का प्रथम कर्तव्य है । "[1]

2- "मनुष्य यावज्जीवन कर्म करता है क्योंकि इस लोक में कर्म ही प्रधान है । उसका समस्त भविष्य कर्म पर आधारित है कुछ कर्म ऐसे होते है, जिनकी प्रति- क्रिया तुरन्त होती है, कुछ की देर में और कुछ जीवनोपरान्त फल देते हैं।"[2]

3- "या खुदा इस जईफी में तू मुझे कैसे कठिन,अम्तिहान में डाल रहा है। हाथ - थ पैरों में ताकत नहीं तलवार कैसे पकडूँगा ।"[3]

4- "हुजूर इनकी कोठी बड़ी आलीशान है, और इसे अगर अजायब घर कहा जाय तो मुबालगा न होगा ।"[4]

5- "क्या मैं काम ही काम करने के लिये आयी हूँ ? यदि ऐसा था, तो एक मिसराइन से शादी क्यों न की ? मुझसे तो यह काम नहीं हो सकता । कौन चूल्हे के आगे बैठकर फू - फू करे । जिसको सौ दफे गरज हो, करे न ? मुझे कौन गरज ? बुढ़िया ने बाग डोर अपने हाथ में लेकर घोड़ा मुझे सौंप दि- या है ।"[5]

6- "लेविन, एट,नाइन । प्रोफेसर अतुल को पहचानता है ।"[6]

7- "अबे तो तार आवई रहय । चिट्ठी पत्री कहूँ इन्ती जल्दी आवत है।"[7]

1-वंचना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 159

2- विश्वास की वेदी पर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 136

3- बेकसी का मजार - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 357

4- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 80

5- विदा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 31

6- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 115

7- वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 146

वैसे श्रीवास्तव जी ने बोल चाल की भाषा को ही साहित्यरूप-
-र्क रूप देने का प्रयत्न किया है और उसमें हिन्दी के तत्सम और तद्भव श-
ब्दों का किंचित मात्र प्रयोग यत्र-तत्र दृष्टि गोचर होता है । आपने उर्दू, फा-
रसी और अंग्रेजी के शब्दों का निःसंकोच प्रयोग किया है । भाषा, पात्र, वा-
-तावरण एवं विषयानुकूल सर्वत्र देखने को मिलती है।

चिन्तन के क्षणों में भाषा दर्शन से प्रभावित सी प्रतीत होतीत
है तो उसमें गम्भीरता, दुरूहता, सरलता, सूक्ष्मता, भावप्रवणता, प्रवाहमयता
एवं भावाभिव्यंजकता आपकी भाषा के प्रधान गुण हैं। शब्दों के चयन एवं उनके
समोचित प्रयोग में आप सफल रहे । व्यंजना शक्ति आप की भाषा की विशि-
ष्टता रही ।

3.1.5.2 शैली

उपन्यासकार जिस ढंग से अपने विचार और भावों को अभिव्यक्त करता है ।
उसे "शैली" कहते हैं। "शैली" कलाकार के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होने के
साथ ही पाठक को मोहित करने का साधन भी है।"[1] शैली से ही उपन्यास
में रोचकता, आकर्षण एवं प्रभाविकता आती है। सामान्य रूप से उपन्यासों
में निम्नांकित भेद मिलते हैं :-

1- वर्णनात्मक शैली

2- आत्म कथात्मक शैली

3- पत्रात्मक शैली

4- डायरी शैली

5- नाटकीय शैली

श्रीवास्तव जी कुशलशिल्पी कलाकार हैं, उनकी अपनी खुद की शैलीहै
जिसमें न तो शैथिल्य है और न ही कृत्रिमता । उनकी अपनी शैली में भी नि-
म्न प्रकार के रूप देखने को मिल जाते हैं :-

1- 2

1- विवेचनात्मक शैली

2- मनोविश्लेषणात्मक शैली

3- भावात्मक शैली

4- हास्य व्यंगात्मक शैली

प्रथम श्रीवास्तव ने इस शैली का सर्वाधिक वर्णन किया है । मनोविश्लेषणात्म- क शैली में गम्भीरता प्राप्त होती है। भावात्मक शैली प्रवाहमयता तथा विषयानुकूल स्वरूप ग्रहण करती रहती है । हास्य व्यंग्य की प्रचुरता भी आपकी शैली में मिलती है। कभी-कभी तो गम्भीर से गम्भीर क्षणों में भी व्यंग्य के दर्शन होते है । सरलता, संक्षिप्तता, छोटे- छोटे वाक्यों एवं हास्य व्यंग्य के समुचित प्रयोग ने आपकी शैली को एक विशेष रूप प्रदान किया है।

श्रीवास्तव जी के उपन्यासों की भाषा शैली विषयानुकूल, पात्रानुकूल रही है उसमें क्लिष्टता एवं दुरूहता का समावेश नहीं होने पाया ।अतः भाषा शैली की दृष्टि से आपके उपन्यास एवं आप सफल रहे ।

3.1.6 उद्देश्य

3.1.6.1 उपन्यासकार अपने उद्देश्य को पूरा करनेके लिये ही अन्य सभी तत्वों का सूक्ष्म चित्रण और उनका सफलता पूर्वक निर्वाह किसी भी कृति को महान बनाने के लिये पर्याप्त नहीं है । उपन्यास की महानता उसके उद्देश्य में निहित है। यदि अन्य तत्वों का सुन्दर रोचक मिश्रण तो है पर उद्देश्य स्वरूप नहीं है तो, तो वह उपन्यास उसी प्रकार उपेक्षणीय होगा जिस प्रकार सब प्रकार से सुन्दर रोचक भोजन यदि वह स्वास्थकर नहीं हो तो उपेक्षणीय होता है ।

अन्य तत्वों की सुन्दरता के साथ साथ उद्देश्य का सुन्दर होना भी नितान्त आवश्यक है। जो साहित्य मानव जीवन को कटुताओं से ऊपर न उभार सके, लोगों में चारित्रिक बल का संचार न कर सके, उनकी वृत्तियों का कल्याण कारी परिष्कार न कर सके वह साहित्य नहीं होता और चाहे कुछ क्यों न हो उद्देश्य विहीन या निम्न उद्देश्य का साहित्य कभी भी उत्कृष्ठ नहीं हो सकता है ।

अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिये उपन्यासकार पात्रों में कांट छांट कर पाठक के सामने प्रस्तुत करता है। वह पात्रों मे उसी अंश की लिपि

बद्ध करता है जो उसके उद्देश्य में सहायक होते हैं।उपन्यासकार का कर्तव्य केवल मनोरंजन प्रस्तुत करना ही नहीं है अपितु मनोरंजन के माध्यम से सत उद्देश्य स्थापित कर समाज को, जाति देश को नया रास्ता देना है। इस प्रकार साहित्यकार से देश को नया जीवन, साहित्य को नवीन मोड़ और समाज को मानव जीवन का नया रास्ता देना है। इस प्रकार अन्य तत्वों का तानावाना उद्देश्य के लिये ही बुना जाता है ।

अमर कथा शिल्पी प्रतापनारायण श्रीवास्तव की रचनाओं में उद्देश्य के निम्न रूप देखने को मिलते हैं :-

(अ) मुख्य उद्देश्य

(ब) गौण उद्देश्य

3.1.6.1.1 (अ) - प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का मुख्य उद्देश्य :-

1- माँ के त्याग, स्नेह, ममता, सेवा, सहिष्णुता व औदार्य आदि महानगुणों का विवेचन ।"

2- अहिंसा पर हिंसा की विजय ।

3- विश्व कल्याण की भावना का प्रतिपादन ।

4- पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का अवमूल्यन तथा भारतीय सभ्यता और संस्कृति की उन्नति ।

3.1.6.2.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का गौण उद्देश्य

1- माँ की महत्ता का प्रतिपादन करना ।

2- धर्मान्धता पर चोट ।

3- नारी जीवन की महत्ता का प्रतिपादन करना ।

4- बाल जीवन की महत्ता ।

5- भावना और कर्तव्य का संघर्ष ।

6- मोक्ष की महत्ता का प्रतिपादन ।

7- रिश्वतखोरी का विरोध करना ।

8- विधवा समस्या का प्रतिपादन करके समाज में उसे सम्मानीय स्थान दिलाना

9- समय की नियमितता ।

10- प्रेम वासना का मर्यादित चित्रण करना ।

11- विश्वास, छल, कपट आदि कुकृत्यों को प्रस्तुत करना ।

12- अनमेल विवाह एवं बाल विवाह का विरोध।

"विदा", "वन्दना", एवं "वरदान" में माँ की महत्ता को सर्वोपरि स्वीका-र किया है एवं पारिवारिक जीवन का हृदयस्पर्शी स्वाभाविक झलकियों को चित्रित किया है। "विजय" में विधवा समस्या को प्रतिपादित किया है। " "विकास" में स्वयं को सभ्यता एवं संस्कृति का एक मात्र ठेकेदार समझने वाले जो जन्म से तो भारतीय है किन्तु उनका व्यवहार, वेशभूषा, खान-पान वि-देशी रंग में रंगा है। "बयालीस " में 1942 की क्रान्ति को , रिश्वत खोरी, अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय घटनाओं का प्रतिपादन करना है। "वि-सर्जन" के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का जागरण एवं हड़ताल और आन्दोलन के औचित्य को स्वीकार करते हुये गांधी के अहिंसा वाद का प्रतिपादन कि-या । साथ ही साथ ग्रामीणों की दुर्दशा, नारीकी स्थिति, मदिरापान के दोष आदि को चित्रित करना ही आपका उद्देश्य था । "बेकसी का मजार" में देश, प्रेम की भावना को कूट-कूट कर भरना, गांधीवादी धारा का प्रति-पादन एवं 1857 की क्रान्ति का वर्णन करना आपका उद्देश्य था । "विष-मुखी" में अन्तर्जातीय विवाह कीसमस्या, वर्ण भेद का समस्या, कुली प्रथा की विभीषिका एवं अफ्रीकी जातियों में ज्ञान विज्ञान आदि का सजीव चित्रण। "वेदना" में अवैध प्रेम से उत्पन्न जारज सन्तान को सम्मानीय स्थान दिलाने का उद्देश्य रहा है। "विश्वास की वेदी पर" में हिन्दी चीनी भाई भाई की आड़ में किये गये चीन के विश्वासघातों से भारतीय जनता को चेतना प्रदान करना । "वंचना" में चीनी गुप्तचरों की कार्यवादी एवं भारत के सा-थ विश्वासघात का वर्णन करना । "विपथगा" में चलचित्र जगत की वास्तवि-कता एवं अभिनेत्री की इच्छुक युवतियों की विनाश गाथा को मार्मिक ढंग से चित्रण करना। "वन्धन विहीना" में रिश्वतखोरी की समस्या को उभारना "व्यावर्तन" में चीनी आक्रमण से पूर्व चीनी गुप्तचर व्याप्त हो गये थे और वेयहां पर पंचमार्गी सेना का संगठन कर रहे थे । "वन्दिता" में 1814 के नेपाली युद्ध को अत्यन्त व्यापक धरातल परमर्मस्पर्शी ढंग से स्पष्ट किया है।

श्रीवास्तव जी मानवतावादी लेखक थे। आप भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के पोषक ही नहीं वरन् व्याख्याता भी थे । आपने समाज में व्याप्त कपटपूर्ण आचरण, छल, प्रपंच, विसंगतियों, मनोविकारों, अनास्थाजन्य

दुरभिसन्धियों, विघटनकारी विचारों एवं अनाचारजन्य आचरणों से मुक्त हो सरल संवेदनशील सहृदय और निष्कपट बनकर जीवन यापन करें यही श्रीवास्तव जी की रचनाओं का मूल उद्देश्य है।

वस्तुतः श्रीवास्तव जी जीवन के आदर्श स्वरूप में आस्था रखते थे और उसी की अभिव्यक्ति आपकी रचनाओं में हुई है। आपने आदर्श की प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिये बहुत से पात्रों को प्रधान बना दिया है। और उन सबका परिणाम सुखान्त दिखलाने के प्रयत्न में उन्हें अनेक अवस्थाओं से होकर जाना पड़ा । फलतः विषय का विस्तार स्वभाविक था और कथा-वस्तु का समुचित विकास न हो सका ।

रस और भाव

बहुत से हिन्दी विद "रस और भाव" को भी उपन्यास का तत्व मानते हैं। उपन्यास को महाकाव्य कहा जाता है अतः इसमें भी रस और भाव का होना स्वाभाविक ही हैं। उपन्यासों में भी महाकाव्य के ही समान श्रृंगार, करूण, वीर,हास्य रसों का समावेश होता है ।

साहित्य संरचना का मुख्य भाव प्रेम मानव मन की कोमलतम वृत्ति है, जो जीवन पर्यन्त उससे सुसम्बद्ध रहती है। प्रेम भाव को केन्द्र विन्दु बनाकर जीवन के अन्यान्य भावों विचारों, स्वरूपों, स्थितियों एवं घटनाओं का तानावाना बुना जाता है। श्रीवास्तव जी ने कई उपन्यासों में प्रेम को केन्द्रीय भाव के रूप में ग्रहण किया है। आपके उपन्यासों में प्रेम के विविध रूपों की मार्मिक कल्पना हुई है। प्रेम दो रूपों में मिलता है :-

1- आदर्श प्रेम 2- वासना जनित प्रेम

आदर्श प्रेम

श्रीवास्तव जी ने प्रेम के दोनों ही रूपों को चित्रित किया है परन्तु, वासनाजनित प्रेम की अपेक्षा आदर्श प्रेम अधिक उत्कर्षता को प्राप्त हुआ है। वस्तुतः वासनात्मक प्रेम समाज में निन्दनीय है जबकि आदर्श प्रेम वन्दनीय है।

1- "विदा," "वन्दिता", "वरदान" आदि

शुद्ध प्रेमभाव भी दो प्रकार का है एक दाम्पत्य प्रेम दूसरा स्वछन्द प्रेम श्रीवास्तव जी ने दोनों ही प्रेमों का मर्यादा पूर्वक वर्णन किया है। श्रीवा--स्तव जी ने "विदा"[1] में निर्मल और कुमुदनी, केट का मिस्टर वर्मा, मुरारी शंकर व लज्जावती का प्रेम, "विजय" में मनोरमाऔर राजेन्द्र प्रसाद का प्रेम "विकास" में मालती का प्रेम "विसर्जन" में उर्मिला व रामनाथ, "वेदना" में ज्योतिर्मय और भैरवदत्त का प्रेम, "बन्धन विहीना"[2] रानी सुनपना एवं महाराजा दलजीत सिंह आदि का प्रेम, हास्य परिहास से परिपूर्ण एवं जिसमें स्वार्थ की अपेक्षा त्याग का प्राधान्य है।

श्रीवास्तव जी ने ऐसे भी दाम्पत्य जीवन का चित्रण किया है जिसमें कटुता, वैषम्य एवं अभाव का चित्रण है "विकास" में मालती और कामेश्वर, "विसर्जन" में साहबद्दीन व यशोदा , "विश्वास की वेदी पर" में कर्नल सहगल एवं प्रकाश कुँअर आदि का प्रेम ।

श्रीवास्तव जी ने स्वच्छन्द प्रेम का भी अत्यन्त संयमित एवं सुन्दर सफल चित्रण किया है आपके प्रेम में सर्वत्र त्याग, सात्त्विकता एवं पवि-त्रता का प्राधान्य है आपने विदा में लिखा है:-

"विवाह की इच्छा स्वार्थ है, इसलिये वह प्रेम पाप है। अगर उसका निःस्वार्थ प्रेम है, तो वह कभी विवाह की इच्छा नहीं करेगी । एक रूप से एक भाव से, निरन्तर प्यार करती रहेगी, और उसी प्रेम से अपना जीवन उत्सर्ग कर देगी ।"

"विकास"[4] में आभा और भारतेन्दु का प्रेम, "वंदना" में रायबहादुर और सलीमा, कमलनयन और आयशा का प्रेम, "विषमुखी"[5] में विश्वनाथ और कान्ति का प्रेम, "वेदना"[6] में प्रेमलाल और किरण , "बया-लीस"[7] में दिवाकर और गुलाब का प्रेम , "वन्दिता" में मानबहादुर और पार्वती का प्रेम आदि स्वच्छन्द प्रेम के उच्च कोटि के उदाहरण हैं।

1- विदा-प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 233

2- बन्धन विहीना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ - 23-24

3-विश्वास की वेदी पर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ - 10-11

4- विकास - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 142

5- विषमुखी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 424-425

6- वेदना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 292

7- बयालीस - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 204

वासना जनित प्रेम

श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में इस प्रकार के प्रेम काभी वर्णन किया है जिसके मूल में कहीं शारीरिक तृप्ति, कहीं वैभव लालसा, कहीं राजनीतिक कूटनितिज्ञता रहती है। श्रीवास्तव जी ने "विश्वास की वेदी पर",[1] "वंचना"[2] "व्यावर्तन"[3] आदि में वर्णित प्रेम में राजनीतिक कूटनीतिज्ञता ही विद्यमान है।

"विजय"[4] में मिस ट्रेविलियन, राजा प्रकाशेन्द्र "विकास" की अनूप कुमारी, सूरज बख्श "विपथगा" की लता कुमार आदि इस प्रकार की प्रेयसियां है जो अपने प्रेमी के माध्यम से धन कमाना चाहती हैं।

विचार प्राय: भाव प्रेरित होते हैं क्योंकि विचारों के मूल में भाव ही रहते हैं। यह भाव ही हैं जो हमारे विचारों को उत्पन्न करते हैं

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि श्रीवास्तव जी ने अपने उपन्यासों में प्रेम का आदर्श स्वरूप अभिव्यंजित है । जिस प्रेम में शारीरिकता का प्राधान्य हो, हृदय की कलुषिता हो, झूठे आंसू हो, झूठी आतुरता हो, आडम्बर पूर्ण वाह्य प्रदर्शन मात्र हो वह वास्तविक प्रेम नहीं हो सकता, कुछ भी हो प्रेम तो वही है जिसमें आत्मिकता सात्विकता, पवित्रता एवं एकनिष्ठता हो । आदर्श प्रेम की अभिव्यंजना श्रीवास्तव जी ने अधिकतर अपने उपन्यासों में की है।

अत: प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यास तात्विक दृष्टि से सफल हैं। इसी सफलता ने उन्हें महान कथाकार के पद पर समासीन किया है।

1- विश्वास की वेदी पर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 87-88

2- वंचना - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -84, 89, 90 -91

3- व्यावर्तन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 205, 209-10

4- विजय - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 118

चतुर्थ अध्याय

कहानीकार प्रतापनारायण श्रीवास्तव

4.1 हिन्दी कहानी : स्वरूप, उद्भव - विकास

4.1.1 गतिशीलता जीवन है और गति हीनता मृत्यु। गतिशील जीवन साहित्य, देश जाति आदि ही पल्लवित और पुष्पित होता हुआ संसार को सौरभमय बना देता है। मानव का इस गतिशील विधा को किसी परिभाषा विशेष में बाधने के लिये निरन्तर चिन्तन मनन करता है। उन्हीं में से कुछ भारतीय एवं पाश्चात्य उत्कृष्ट विद्वानों के विचार प्रकट कर रहा हूँ :-

4.1.1.1 पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार :-

4.1.1.1.1 सर एडगर एलिन पो के मतानुसार - "कहानी जीवन की एक ऐसी प्रभावपूर्ण झलक है, जो किसी एक ही विचार, भाव, प्रसंग या मार्मिक घटना के उद्घाटन द्वारा अपनी सम्पूर्ण एकात्मकता में पाठक को चमत्कृत कर देती है। कहानी का कलेवर इतना छोटा हो कि एक ही बैठक में पढ़ा जा सके।"[1]

4.1.1.1.2 एच.जी. बेल्स की कहानी के विषय में धारणा है:- "कि साहित्य के मार्मिक एवं हृदय स्पर्शी स्वरूपों में कहानी ही सर्वाधिक सन्तोषप्रद विधा है।[2]

बेल्स ही के शब्दों में - "कहानी वह फिक्सन है जो अधिक से अधिक 20 मिनिट में पढ़ी जाये।"[3]

1- "A short story is a narrative short enough to be read in a single sitting written to make an impression on the reader, excluding all that does not forward that impression complete and final in itself."
— Adger Alin Pow

उद्धृत-भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धान्तों का समन्वित सर्वांगीण विवेचनात्मक अध्ययन - प्रो0 भारत भूषण सरोज - पृष्ठ - 197

2- "It can not be defined except as one of the most satisfying form of literary impression."
— H.G. Wels

उद्धृत-हिन्दी कहानी स्वरूप और उद्भव विकास-डा0 मोहनलाल-पृ0-323

3- "Any piece of short fiction which can be read in twenty minutes would be a short story."
—H.G. Wels

उद्धृत-भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र-डा0 कृष्णदेव शर्मा-पृष्ठ - 182

4.1.1.1.3 आर० एल० स्टीवेन्स की कहानी के विषय में धारणा है कि :- "कहानी समग्र जीवन का प्रतिलोम नहीं है वरन् जीवन के किसी अंग वशिष का सरलीकरण है ।"[1]

4.1.1.1.4 कहानी की वर्ण वस्तु को दृष्टिगत रखते हुये चेखोव ने कहानी को निम्नलिखित शब्दों में बांधना चहा है :- "One must write simple things how Peter Sendimovitch married Maria in Rome."[2]

4.1.1.1.5 एलरी सेडविक के मतानुसार- "कहानी दौड़ की भांति है जिसका आरम्भ और अन्त विशेष महत्व रखता है।"[3]

4.1.1.1.6 मागहम का विचार है कि -"कहानी का आदि, मध्यएवं अन्त सुव्यवस्थित होना चाहिये।"[4]

4.1.1.1.7 मि० बुलैट जीवन के एकांकी चित्रण को कहानी का अनिवार्य लक्षण मानते हैं ।"[5]

4.1.1.1.8 सर ह्यू वाल पोल के शब्दों में - "कहानी, कहानी होनी चाहिये अर्थात असमें घटित होने वाली वस्तुओं का लेखा जोखा होना चाहिये और वह आकस्मिकता से पूर्ण हो। उसमें क्षिप्रगति के साथ अप्रत्यासित विकाश हो, जो कौतुहल द्वारा चरम विन्दु और सन्तोष जनक अन्त तक ले जाये ।"[6]

1- "The short story is not a transcript of life, but a simplification of some side of life."

उद्धृत-भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र - डा० कृष्णदेव शर्मा - पृष्ठ-183

2-

उद्धृत-कथानिका - भूमिका - कमलेश्वर -पृष्ठ - 4

3- "The short story is like a horse race. It is start and finish that counts much."

उद्धृत-हिन्दी कहानी स्वरूप और विकास-डा० मोहनलाल-पृष्ठ- 21

4- "The short story must have a well point beginning at middle and an end."

उद्धृत- कथा कुसुमांजिली-राजनाथ शर्मा - पृष्ठ - 14

5-

उद्धृत- साहित्यिक निबन्ध-डा० राजनाथ शर्मा पृष्ठ - 59।

6-

हिन्दी कहानी और कहानीकार-वासुदेवनन्दन प्रसाद-पृष्ठ-39

4.1.1.2 भारतीय हिन्दी आचार्यों ने भी कहानी के स्वरूप पर अपने-अपने ढंग से विचार किया है-यद्यपि प्रेरणा उन्होंने भी पाश्चात्य विद्वानों से ही ग्रहण की है।

अमर कथा शिल्पी मुंशी प्रेमचन्द के मतानुसार-"कहानी एक ऐसी रचना है, जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र,उसकी शैली,उसका कथा विन्यास सब उसी एक भाव की पुष्टि करते हैं- वह एक ऐसा गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।" साथ ही मुंशी प्रेमचन्द जी ने श्रेष्ट कहानी की विशेषता बताते हुये लिखा है -"सबसे उत्तम कहानी वह होती है जो किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित हो ।"[1]

"आखयायिका में सौन्दर्य की झलक का चित्रण करना और उसके द्वारा रस की सृष्टि करना ही कहानी का उद्देश्य है।"[2] --- "जयशंकर प्रसाद"

"जीवन का चक्र नाना परिस्थितियों के संघर्ष से उल्टा-सीधा चलता रहता है। इस सुवृहत चक्र के किसी विशेष परिस्थिति की स्वाभाविक गति का प्रदर्शन ही कहानी होती है।"[3] -"इला चन्द्र जोशी"

"आखयायिका चाहे किसी लक्ष्य को सामने रखकर लिखी गई हो व लय वि-हीन हो, मनोरंजन के साथ अवश्य किसी न किसी सत्य का उद्घाटन करती है।[4]
-"रामकृष्ण दास"

"घटनात्मक इकहरे चित्रण का नाम कहानी है और साहित्य के सभी अंगों के समान रस इसका आवश्यक गुण है।"[5] - "चन्द्र गुप्त विद्या लंकार"

"छोटी कहानी एकस्वतः पूर्ण रचना है, जिसमें एक तथ्य या प्रभाव अग्रसर करने वाली व्यक्ति केन्द्रित घटना या घटनाओं के आवश्यक परन्तु कुछ अप्रत्याशित ढंग से उत्थान और पतन मोह के साथ-साथ पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने वाला कौतूहल पूर्ण वर्णन है ।"[6] --"बाबू गुलाब राय "

1- उद्धृत - प्रेमचन्द उर्दू हिन्दी कथाकार - डा0 जफर रजा -1983-पृ0- 113
2- उद्धृत -कहानी और नई कहानी -डा0 नामवर सिंह - पृष्ठ - 117
3-उद्धृत-हिन्दी कहानी और कहानीकार-डा0 वासुदेव नन्दन प्रसाद सिंह-पृ0-86
4- उद्धृत - कथा कुसुमांजिली - राजनाथ शर्मा - पृष्ठ - 14
5- उद्धृत - हिन्दी कहानी स्वरूप और विकास - डा0 मोहन लाल -पृ0-21
6- उद्धृत - साहित्य निबन्ध - डा0 राजनाथ शर्मा - पृष्ठ - 590

डा० श्याम सुन्दर दास ने कहानी की परिभाषा इस प्रकार की है :- "एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को रखकर लिखा गया नाटकीय आख्यान है।"[1]
डा० जगन्नाथ प्रसाद वर्मा ने कहानी की परिभाषा अधिक स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार करते हुये कहा है - " कहानी में सबसे ज्यादा महत्व की वस्तु विषय का एकत्व या विषमगत एकदेशीयता है। यह एकत्व किसी भी क्षेत्र का हो सकता है। भाव, विचार, घटना, चरित्र किसी भी क्षेत्र में क्यों न हो, लेखक का ध्यान किसी एक विषय पर केन्द्रित रहता है।"[2]

4.1.1.3 पाश्चात्य एवं भारतीयविद्वानों की इन परिभाषाओं की विविधता को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि कहानी को किसी एक निश्चित परिभाषा विशेष में नहीं बांधा जा सकता है। क्योंकि कहानी का समग्ररूप इतना विशाल है कि वह किसी परिभाषा विशेष से व्यक्त ही नहीं हो पाता है। उपर्युक्त परिभाषायें भी तो सिर्फ एक या अधिक कहानियों की विशेषताओं का उद्घाटन ही करती हैं। कहानी के समग्र रूप का सम्पूर्ण विवरण नहीं । कहानी के स्वरूप को सम्यक रूप से समझने के लिये उसके रूप विधायक तत्वों की विवेचना भी आवश्यक है।

4.1.1.4 उपर्युक्त (इन) परिभाषाओं से कहानी के स्वरूप की कुछ विशेषताओं को निर्धारित किया जा सकता है--

1- कहानी का आकर लघु हो । जो 10 से 20 मिनट के मध्य पढ़ा जा सके । शिल्प विधि सरल हो ।

2-कहानी में एकत्व हो, और यह एकत्व भाव, विचार, घटना, चरित्र आदि किसी का भी हो सकता है।

3- कहानी मेंएकत्व के साथ-साथ लक्ष्य प्रभाव की सृष्टि भी हो ।

4- कहानी कोरी कल्पना मात्र न हो, अगर कोरी कल्पना ही है तो कल्पना के बल से इतनी स्वाभाविकता एवं सजीवता ला दी जाय कि वह सत्य घटना सी प्रतीत होने लगे ।

5- कहानी रोचक, हृदय-स्पर्शीय एवं सार गर्भित हो ।

6- कहानी में देशकाल और वातावरण का पूर्ण निर्वाह हो।

1-उद्धृत - साहित्यालोचन - डा० भारत भूषण सरोज - पृष्ठ - 198

2- उद्धृत - साहित्यालोचन - डा० भारत भूषण सरोज - पृष्ठ - 196

7- कहानी की भाषा ,भाव, एवं शैली का चयन भी बहुत सावधानी पूर्वक करना चहिये ।

8- कहानी में किसी न किसी सत्यांश की निहित अत्यावश्यक है जो अपने उद्देश्य में सहायक सिद्ध हो ।

9-कहानी में कहीं ठहराव न होकर सर्वत्र गति होनी चाहिये। यह गति कभी घात- प्रतिघात से और कभी भावपूर्ण संक्षिप्त संवादों से हाती है ।

10- कहानी में कहीं भी विश्रृंखलता न आने पाये ।

अर्थात कहानी का आकार लघु, संवेदन की एकता, प्रभावान्विति सत्य का आधार, मनोविज्ञानिकता एवं सक्रियता का होना अत्यावश्यक है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि कहानी सीमाबद्ध नहीं की जा सकती है ।

4.1.2 हिन्दी कहानी : उद्‌भव और विकास

4.1.2.1 कहानी के मूल में जिज्ञासा और अभिव्यक्ति दो प्रवल मनोवृत्तियां कार्य करती हैं। वस्तुतः सभ्यता के आरम्भिक क्षणों में जब मनुष्य ने भाषा सीखी होगी तब अपने मनोगत अनुभवों को दूसरों पर व्यक्त करने और दूसरों के अनुभव सुनने के लिये कहानी का आश्रय लिया होगा।इसलिये कहानी को साहित्य की आदि विधा माना जाये तो अत्युक्ति न होगी । कहानियों का आरम्भ ऋग्वेद से होता है और आगे चलकर ब्राहमण ग्रन्थों में "उपनिषदों", "पुराणों" और "जातकों" में कहानियां मिलती हैंतदन्तर "वृहत्कथा", बैताल पंचविंशति, सिंहासन, द्वात्रिंशका, शुक सन्तति आदि कथायें मिलती हैं। नाथ पंथियों और सिद्धों के उपदेश की भी कथाओं के माध्यम से ही प्रभावित होते थे। इन कहानियों में नीति, धर्म व सदाचार के प्रतिपादन के लिये घटना और पात्रों की योजना की जाती है।

हिन्दी साहित्य में कहानियों का शुभारम्भ वीरगाथा काल से प्राप्त होता है वीरों की कथायें गीतों में पायी जाती थी। "ढोला मारू", हीर -राँझा", "बैताल पच्चीसी" आदि कहानियां इसी प्रकार की हैं। इन्हें गाथाओं के रूप में चित्रित किया।

भक्तिकाल में लेखकों ने अनेक भक्तों की कथाओं का संग्रह किया जिसमें "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" तथा "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता"--

–अधिक प्रसिद्ध है। इनकी भाषा बृजभाषा होती थी जो गद्य के उपयुक्त नहीं थी परन्तु इन्हें कहानियाँ न मानकर पुरानी शैली के जीवन चरित्र मानना ही अधिक उचित है क्योंकि ये कहानियां नहीं हैं।

खड़ी बोली में गद्य रचना सन 1800 से आरम्भ होती है और तभी से उसमें कहानी का आरॅम्भ होता है। हिन्दी गद्य के प्रर्वतकों में लल्लू लाल जी, सहल मिश्र ने संस्कृत कथाओं को आधार मानकर कहानियां लिखी। लल्लू लाल जी ने "सिंहासन बत्तीसी, बैताल पच्चीसी, माधवानल, काम कंदला, शकुन्त–ला तथा प्रेम सागर" की रचना की। सहल मिश्र जी ने "नासिकतोपाख्यान, लिखा। इन कहानीकारों ने भाषा का अभिप्राय भाषा के स्वरूप को स्थिर करना अधिक था अपेक्षा कहानी लिखने के। सय्यद इंशा अल्ला खां ने "रानी केतकी की कहानी" राजा शिव प्रसाद सिंह ने "राजा भोज का सपना" लिखा।

हिन्दी में सर्वप्रथम कहानी लेखक कौन है औरसर्व प्रथम कहानी कौन सी है? यह एकदम निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता है। अगर "कहानी" शब्द मात्र से ही कहानी का अर्थ लिया जाय तो इंशा अल्ला खां की "रानी केतकी की कहानी" हिन्दी की सर्व प्रथम मौलिक कहानी मानी जानी चाहिये। परन्तु वास्तव में कहानी शब्द को छोड़कर कहानी के और लक्षण नहीं मिलते।

4.1.2.2 "सरस्वती" सं0 1957 के प्रकाशन के साथ ही साथ आधुनिक मौलिक कहानियों का आरम्भ समझना चाहिये। उसी वर्ष उसमेंकिशोरी लाल गोस्वामी की एक सुन्दर कहानी "इन्दुमती" प्रकाशित हुई। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत है --"यदि इन्दुमति किसी बंगला कहानी की छाया नहीं है तो भी यह हिन्दी की सबसे पहली कहानी ठहरती है, वास्तव में इस कहानी पर अंग्रेजी कवि टेम्पैस्ट नाटक की छाप है साथ ही साथ इसमें यथार्थ जीवन की अ–भिव्यक्ति भी नहीं है।" सन् 1903 में आ0 रामचन्द्र शुक्ल ने "ग्यारह वर्ष का समय", गिरजा दत्त वाजपेयी ने "पंडित और पंडितानी" लिखी है। 1907 में बंग महिला की "दुलाई वाली", 1909 में वृन्दावन लाल वर्मा की "राखी बंध भाई" व मैथिलीशरणगुप्त की "नकली किला", 1910 में जयशंकर प्रसाद की "ग्राम और 1911 में राधिका रमण की "कानों में कंगन" 1913 में विश्वम्भरनाथ कौ–शिक की "रक्षा बन्धन" 1915 में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की "उसने कहा था" नामक कहानियां उल्लेखनीय हैं। "ग्राम" "दुलाई वाली", व उसने कहा था" में ही नवीन तत्वों का समावेश हुआ है।

4.1.2.3 प्रेम चन्द अपने युग के प्रतिनिधि कलाकार थे। 1907 में "सोजेवतन" नामक प्रथम कहानी संग्रह उर्दू में प्रकाशित हुआ। 1915 से वे हि- न्दी में लिखने लगे और 1916 में हिन्दी की पहली कहानी "पंच परमेश्वर" प्रकाशित हुई। प्रेमचन्द ने अपने समग्र जीवन में लगभग 300 कहानियां लिखी और उन्हें उपन्यास की अपेक्षा कहानी में अधिक सफलता मिली।

प्रेम चन्द युग के प्रमुख लेखकों में सुदर्शन, विश्वम्भरनाथ शर्मा, जयशंकर प्रसाद, रामकृष्ण दास, बेचन शर्मा, "उग्र", चतुरसेन शास्त्री, एवं प्रतापन- नारायण श्रीवास्तव आदि हैं। सुदर्शन, कौशिक और श्रीवास्तव प्रेमचन्द के अनुया- यी हैं। प्रतापनारायण श्रीवास्तव के निकुंज 1922, आशीर्वाद 1934, दो साथी 1950, नवयुग 1953, विधाता का विधान 1961, कहानी संग्रह प्रकाशित हुये।

4.1.2.4 वर्तमान युग का शुभारम्भ श्री जैनेन्द्र कुमार जोशी जी से होता है। प्रेमचन्द की मृत्यु 1936 में हुई थी और उनके जीवन काल में ही कहानी में परिवर्तन होने लगा था। इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय, भगवती चरण वर्मा, उपेन्द्र नाथ अश्क, यशपाल एवं निराला आधुनिक युग के प्रमुख कहानीकार हैं। इन लेखकों ने मानव जीवन की विविध प्रवृतियों एवं दुर्वलताओं का यथार्थ चित्रण किया। इनकी कहानियों में प्रौढ़ता, रमणीयता, व्यापक सहानुभूति, मनोविश्ले- षण आदि सभी गुंण हैं।

निष्कर्षत: जैसे - जैसे मानव सभ्यता का विकास हो रहा है ठीक वैसे ही हिन्दी कहानी का विकास हो रहा है और आज हिन्दी के कथा साहित्य की, विकास की दृष्टि से उत्तरोत्तर उन्नति हो रही है। भारतीय कथाकारों ने आज विश्व की समस्त शैलियों अपना लिया है। आजकल हास्य रस की कहानियां भी लिखी जाने लगी।

4.2.1 हिन्दी कहानी के तत्व

तात्त्विक दृष्टि से विद्वानों ने कहानी के छः प्रमुख तत्व स्वीकार किये हैं :- कथावस्तु, पात्र एवं चरित्र चित्रण, कथोपकथन, देशकाल तथा वातावरण, वर्णन शैली और उद्देश्य ।

कुछेक विद्वानों का मत है कि शीर्षक भी कहानी का आधार भूत तत्व है ।

4.2.1.1 कथावस्तु

कहानी में भाव, विचार या वस्तु के प्रभाव की अभिव्यक्ति उसमें एक कथा का होना आवश्यक है, जिसके द्वारा कहानीकार प्रभाव को अभिव्यक्त करता है । इसी को कहानी की "कथावस्तु" कहते हैं। यह कहानी का महत्वपूर्ण एवं अनवार्य तत्व है। चाहे वह किसी भी रूप में हो ।कथानक कहानी की आत्मा है। यदि कथानक ही रोचक, सामयिक, हृदयग्राही और स्वाभाविकता लिये हुये न होगा तो कहानी ऐसी होगी जैसे विना मूर्ति का मन्दिर या विना शरीर के वस्त्र या यों कहें कि विना गुणी जनों के राज सभा । यदि कथानक सुन्दर और स्वाभाविक हुआ तो वह कहानी के अन्य अभावों को भी बोलने नहीं देता है । नवीन प्रणाली के अनुसार सिनेमा के गानों को ही शीर्षक बना कर कहानी गढ़ने की प्रथा का प्रौढ़ता को पहुँचने के पहले ही अंत हो जायेगा । कोरे भाषा के शब्द जाल पर टिकी हुई कथा की इमारत आज नहीं तो कल बैठ जायेंगी । कहने का तात्पयर्य यह है कि कहानी पढ़ने के वाद ऐसा प्रतीत हो कि घटना कोरी मनगढ़न्त ही नहीं है । वल्कि पात्रों में कल्पित पात्रों के प्रति सहानुभूति का प्रादुभाव हो जाय और वह छड़भर के लिये उसी कथा में कथित पात्रों और घटनाओं में अपने को खो दें। और यदि कथा में ऐसा उतार चढ़ाव न हुआ जिससे पाठकों में कुतूहल या उत्सुकता विशेष और प्रचुर मात्रा में उत्पन्न हो तो वह कहानी अधिक रूचिकर न होगी । प्रधान घटना को उप घटनाओं से सुसज्जित करना तथा घटना वैचित्य का इस प्रकार स्वाभाविक रूप से चित्रण करना कि कहानी में रोचकता आ जाय परमावश्यक है।"कथावस्तु"के विकास की 5 अवस्थायें मानी

जाती हैं :- 1-प्रारम्भ, 2- आरोह, 3- चरम स्थिति, 4- अवरोह, 5- अन्त या अवरोह, । "कथावस्तु" चुनाव जीवन की किसी भी घटना से किया जा सकता है। आजकल कुछ ऐसी कहानियां लिखी गईं जिनमें कथावस्तु है ही नहीं ।

4.2.1.2 पात्र एवं चरित्र चित्रण

कथावस्तु का विवेचन किन्हीं पात्रों के माध्यम से होता है। इन पात्रों का वर्णन कभी स्वयं कहानीकार स्वयं करता है और कभी कथाविकास और चरित्र चित्रण के लिये उनके वार्तालाप का सहारा लेता है, जिसे कथोपकथन या संवाद कहते हैं। कहानीकार श्रेष्ठ कहानी उसे मानते हैं जो मानवीय जीवन का अंकन करती है । प्रेमचन्द जी तो घटना प्रधान कहानी में भी चरित्रों को महत्व को स्वीकार करते हुये लिखते हैं :-

"घटनाओं का कोई स्वतन्त्र महत्व नहीं होता है। उनका महत्व केवल पात्रों के मनोभावों को व्यक्त करने की दृष्टि से ही है।"[1]

प्रेमचन्द जी ने एक अन्य स्थान पर चरित्र के सम्बन्ध में लिखा है :--

"कहानीकार अपने चरित्रों के मनोभावों की व्याखया करने नहीं बैठता बल्कि उसकी तरफ इशारा भर कर देता है ।"[2]

वस्तुत: कहानी में पात्र एवं चरित्र चित्रण का विशिष्ट महत्व है। कहानी में चरित्र चित्रण के अनेक साधन अपनाये जाति हैं -

1- कहानीकार द्वारा वर्णनों के माध्यम से चरित्र चित्रण ।

2- संकेतों द्वारा इसमें कहानीकार स्पष्ट चरित्रोंघाटन न करके सांकेतिक प्रणाली का सहारा लेता है ।

3- पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा चरित्र चित्रण ।

4- घटना या कार्य व्यापार द्वारा चरित्र चित्रण ।

चरित्र चित्रण विश्लेषण की तीन पद्धतियां हैं :-

1- निरपेक्ष विश्लेषण द्वारा, 2- आत्म विश्लेषण द्वारा, 3- मानसिक उहापोह द्वारा ।

1- उद्धृत-हिन्दी कहानी अंतरंग पहिचान - रामदरश मिश्र - पृष्ठ - 37

2- उद्धृत-हिन्दी कहानी अंतरंग पहिचान - रामदरश मिश्र - पृष्ठ - 39

4.2.1.3 कथोपकथन

कथोपकथन पात्रों के चरित्र चित्रण में सहायक होता है। इससे कहानी में रोचकता एवं सजीवता आ जाती है। कथोपकथनों द्वारा हमें पात्रों के दृष्टिकोण, आदर्श एवं उद्देश्य का पता लगता है। कथोपकथन कहानियों में तीन प्रकार से सहायता करता है। 1- चरित्र चित्रण में, 2- घटनाओं को गतिशील बनाने में, 3- भाषा-शैली का निर्माण करने में। अधिक लम्बे भावुकतापूर्ण और कवित्वमय कथोपकथन कहानी की स्वाभाविक गति को शिथिल बना देते हैं। कहानी के कथोपकथन छोटे चुस्त, पात्रानुकूल, भावानुरूप एवं परिस्थिति अनुरूप होने चाहिये। कथोपकथनों में हास्य विनोद एवं लाक्षणिकता का समावेश भी अपेक्षित है।

4.2.1.4 वातावरण

कहानी में एक विशिष्ट प्रभाव सृष्टि के लिये पात्रों की स्थिति उनकी आन्तरिक मनोदशा, वाह्य परिस्थितियों और प्रकृति व्यापारोंका वातावरण तथा कथा-वस्तु से सम्बंधित चित्रण को ही "वातावरण" कहा जाता है। वातावरण देशकाल और पात्र पारस्परिक अनुरूपता से पाठक के मस्तिष्क में पड़ने वाला प्रभावहै। वातावरण से कहानी प्रभावपूर्ण बन जाती है। डब्ल्यू0 बी0 पिटकिन का कथन है- "The atmosphere is to be repeated the impression which environment makes upon the beholder, and which the beholder in writing seeks to convey to his readers." 1

4.2.1.5 भाषा - शैली

भाषा - शैली का सम्बन्ध कहानी के सम्पूर्ण तत्वों से होता है। इसलिये कहानी की भाषा-शैली को सरल, सरस, सुबोध प्रवाहपूर्ण, धारावाहिक, स्वाभाविक और रोचक होनी चाहिये। कहानी की भाषा ऐसी हो जो वस्तु, पात्र, और चरित्र

1-उद्धृत - हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास - लक्ष्मी नारायण लाल - पृष्ठ - 76

तथा कहानी के लक्ष्य को भली प्रकार अभिव्यक्त कर सके अर्थात प्रयासजन्य न हो। कहानियों की भाषा में मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग भी अपेक्षित होता है। भाषा से कहानी का सौन्दर्य बढ़ जाता है। कहानी की रचना विधान के आधार पर कहानी की निम्नलिखित शैलियां मानी जाती हैं :-

1-ऐतिहासिक शैली या कथात्मक शैली 2- आत्मकथात्मक शैली, 3-संवादात्मक शैली, 4- पात्रात्मक शैली, 5- डायरी शैली, 6- मिश्रित शैली ।

शैली लेखन की प्रौढ़ लेखनी का चमत्कार है। उसकी लेखनी से ज्यों-ज्यों सुन्दर कथानकों का चित्रण होता जाता है त्यों-त्यों उसकी भाषा-शैली परिमार्जित होती जाती है। हृदय कितने ही भव्य भावों से क्यों न भरा हो किन्तु जब तक उन्हें व्यक्त करने के लिये सुन्दर भाषा और सजाने के लिये सुन्दर शैली न होगी तव तक उनका मूल्य आंकना कठिन ही है। भाव तो प्रत्येक प्राणी के पास होते हैं किन्तु उन्हें भलीभांति सुसंस्कृत एवं परिमार्जित शैली में व्यक्त करने वाला ही सार्थक एवं अमर होता है। सरस, सामयिक तथा मुहावरे दार भाषा से युक्त शैली ही कहानी को अमर ले जाती है।

4.2.1.6 उद्देश्य

साहित्य की अन्य विधाओं की भांति कहानी भी सोद्देश्य होती है। कहानी का उद्देश्य क्या है, इस प्रश्न का उत्तर कई तरह से दिया जा सकता है। प्राचीन काल में कहानी का उद्देश्य सिर्फ मनोरंजन मात्र हुआ करता था। लेकिन वास्तव में कहानी का प्रणयन मनोरंजन मात्र नहीं है वल्कि मनोरंजन के साथ किसी सत्यांश का उद्घाटन हुआ करता है। सी० ओ० फाजोलेनकामत है :--

"यदि किसी कहानी में मानव प्रकृति और चरित्र मान--व मूल्यों, मनुष्य-मनुष्य के शाश्वत सम्बन्धों, भावों और अनुभूतियों तथा विविध रूपों की व्याख्या नहीं की गई है तो उसे आधुनिक अर्थ में कहानी नहीं कहा जा सकता ।"[1]

अतएव मानव चरित्र का विश्लेषण निश्चितया कहानी के उद्देश्य का लक्ष्य स्वीकार किया जा सकता है। सोद्देश्य कहानी है उद्देश्यहीन कहानी का तो कोई अस्तित्व नहीं होता । अत: उद्देश्य कहानी का प्राण तत्व है ।

1- उद्धृत - कहानी की रचना विधान - डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - पृष्ठ - 81-82

उद्देश्यहीन निष्प्राण कहानी पढ़नीय कभी नहीं बन सकती ।

4.2.1.7 "कहानी के शीर्षक के सम्बन्ध में चार्ल्स वैरिट का मत है कि पाठक के हृदय में औत्सुक्य कौतूहल और जिज्ञासा उत्पन्न करने के साथ शीर्षक में नवीनता और मौलिकता का समावेश परमावश्यक है ।"[1]

"कहानी का शीर्षक संक्षिप्त, संवेदनशील, भाव संप्रेषण और आकर्षक होना चाहिये ।"[2]

वस्तुत: कहानी का शीर्षक ही वह दर्पण है जिसे पढ़ने मात्र से ही कहानी की श्रेष्ठता का पता लग जाता है। साथ ही साथ कहानीकार की बुद्धिमता एवं निपुणता की भी अभिव्यक्ति हो जाती है ।

शीर्षक का नामकरण कहानी के किसी विशेष-पात्र, अथवा उसकी मनोवृति का नामकरण किसी विशेष घटना या मुहावरों के नाम पर रखा जा सकता है ।

---

1. "A good title is act specific attractive new and short." (A Dictionary of World Lit. P.88)

2. "Keep the title in its proper proportion to the nature and the interest of the story."
— Mekamochy.
(A Dictionary of World Lit. P.88)

4.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव रचित कहानियों का संक्षिप्त वर्णन

अमर साहित्य शिल्पी श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य के प्रतिष्ठापकों, परिष्कारकों एवं सम्वर्धकों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। प्रेमचन्द की धारा में लिखने वाले समकालीन लेखकों में विश्वम्भरनाथ शर्मा "कौशिक" सुदर्शन एवं प्रतापनारायण श्रीवास्तव के नाम उल्लेख्य है। आपकी कहानियां आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की कहानियां हैं ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव की साहित्य के प्रति रूचि तो विद्यार्थी जीवन से ही थी। तभी से आपने लिखना आरम्भ किया था । कहानीकार तो आप 1920 ई0 में वलिदान कहानी के सृजन से हो गये । जो 1922 में "निकुन्ज" कहानी संग्रह में प्रकाशित हुई । आपके निम्न कहानी संग्रह प्रकाशित हुये :-

1- निकुन्ज- सन् 1922, प्र0 हिन्दी गल्पमाला कार्यालय, काशी
2- आशीर्वाद-सन् 1934 प्र0 गंगा पुस्तक माला कार्या0 लखनऊ
3- दो साथी-सन् 1950 प्र0 भीष्म एण्ड ब्रदर्श कानपुर
4- नवयुग - सन् 1953 प्र0 सीता प्रकाशन कानपुर
5- विधाता का विधान-सन् 1961, प्र0 गंगा पुस्तक माला कार्यालय, लखनऊ

इनके अलावा भी आपकी कहानियाँ निम्न पत्र-पत्रिकाओं में पड़ी हैं ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने कुछ कहानियां हिन्दू-मुस्लिम समस्याओं को लेकर लिखी । जिनके कथानक अत्यधिक मार्मिक एवं स्वाभाविक हैं जिससे कहानियां रोचक, हृदयग्राही, एवं मनोरंजक हो गई हैं। देशविभाजन जनित परिणामों का सजीव और यथार्थ चित्रण आपकी कहानियों में देखने को मिलता है :-

"भारत के अप्राकृतिक टुकड़े रात्रि की कालिमा में ही कर दिये गये थे। अंग्रेज जल्लाद ने उसे जहां जहां से काटा था वहाँ-वहाँ से रक्त के श्रोतों का बहना एक स्वाभाविक घटना थी । पाकिस्तान का इतिहास बनने लगा और उसके आरम्भिक पृष्ट रक्त से रंजित अक्षरों से लिखे जाने लगे । x x x x x x x x x x x x मानव जीवन कितना नगण्य

हो सकता है उस कल्पना का साक्षात्कार उसी दिन संसार को प्राप्त हुआ अग्नि विस्फोटक द्रव्यों का भंडार, तलवारकांता, बल्लम, बन्दूक, बम और हथगोलों से सुसज्जित रक्त से स्नान किये हुये ज्ञान शून्य नरपिशाचों की सेना तुमुलवाद से प्रलय का ताण्डव करती हुई अग्रसर हो रही थी और दूसरी ओर बलि के बकरों की भांति महान उद्विग्नता के साथ उन्हीं के अनुरूप जो शताब्दियों से एक ही साथ खले कूदे थे, भाई-भाई की भांति एक साथ हिलमिल कर रहे थे, एक दूसरे की शादी गमी में शरीक हुये थे। उन दोनों में कोई भेद न था और यदि था तो उनके धार्मिक विश्वासों में था जो संसार के आदि से व्यक्तिगत वस्तु रहे है और जो जन्म लेने के पश्चात प्राप्त होते हैं तथा जो नैसर्गिक न होकर कृत्रिम है ।"[1]

कुछ आपकी कहानियों जो सर्वश्रेष्ठ थी उनका यहां पर संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत कर रहे हैं :-

4.3.1 आशीर्वाद[2]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत "आशीर्वाद" सामाजिक कहानी है। जिसका कथानक एक निर्धन परिवार की दर्द भरी करूण गाथा से परिपूर्ण है। जिसे पढ़कर हर सरल हृदय द्रविभूत होने लगता है।

4.3.1.1 अन्नू उर्फ अन्नपूर्णा के पति सिविल सर्जन थे । उन्होंने लखनऊ में एक दिन कुछ बदमाश लड़कों द्वारा एक भिखारिन को सताते देखा । वह उत्तेजित हो उठे और दौड़कर उनमें से एक शरारती लड़के को पकड़ लिया उन्होंने उसको पुलिस को सौंपना चाहा, लेकिन उस भिखारिन ने कहा नहीं-

"संसार मेरा अपमान करता है। अपमान को देखूँ तो खाऊँ क्या ।"[3]

आप इसे छोड़ दें, इसके माँ-बाप को दुःख होगा । मैंने पहले सोचा कि इसके खाने पीने का कहीं इन्तजाम कर दूँ लेकिन फिर सोचा-

---

1- नवयुग कहानी संग्रह-पन्द्रह अगस्त के दिन-प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 113-114

2- आशीर्वाद-आशीर्वाद कहानी संग्रह -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ-9

3- आशीर्वाद-आशीर्वाद कहानी संग्रह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-12

"संसार क्या समझेगा ! संसार क्या जानेगा, मैंयह सब क्यों पूँछता हूँ ! वह तो पाप लगायेगा । पापमय संसार पाप के अतिरिक्त क्या और किसी अन्य वस्तु की आशा की जा सकती है !"[1]

4.3.1.2 मिस्टर कर्मचन्द पुलिश कर्मचारी है। वह उस घटना के दिन वहाँ थे जब कभी मिलते मैं उनसे उस भिखारिन के बारे में पूँछ लेता । एक बार पूँछा तो वह "मेरी ओर हंसती हुई नजरों से देखा । मैं उसका आशय समझ गया ।"[2] इसके बाद फिर कभी मैंने उससे नहीं पूँछा ।

इसके बाद डा० अन्नपूर्णा के पति डा० रायन सिविल सर्जन की जगह पर मथुरा चले गये । वहाँ पर नित्य उन्हें भिखारिन की याद आती । जब कभी वह भिखारिन का किस्सा छेड़ते तो उनकी पत्नी अन्नपूर्णा तरह-तरह के व्यंग्य कसती ।

कुछ दिनों के बाद अरूण (डा० साहब का पुत्र) डाक्टर साहब को बताता कि आज एक भिखारिन जिसके साथ एक अन्धा आदमी और एक लड़का था वह पैसे मांगने आई थी लेकिन मेरे पास पैसा नहीं था। इसलिये मैंने कल देने को कह दिया। आप हमें पैसे देकर जाइयेगा, कल वह आयेगी तब मैं उसे दूँगा ।

अन्नपूर्णा उर्फ अन्नू को एक बार डाक्टर साहब प्यार करने लगे उसने उनसे अलग होते हुये कहा:-

"छोड़ो !छोड़ो यह झूठा जबरदस्ती का प्रेम मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं अब साम्राज्ञी कहाँ रही ! अब तो भिखारिन राजरानी हो गई, और राजरानी भिखारिन । क्यों ! सच कहना, क्या अभी तक उसको नहीं भूल सके हो ।"[3] डाक्टर साहब कहते हैं :-

"अन्नू ! उस भिखारिन की दृष्टि में जो करूणा थी, जो पवित्रता थी, जो सादगी थी, उसे मैं नहीं भुला सका। मुझे मालूम होता है कि संसार की सबसे दुःखी जीव वही है ।"[4]

1-आशीर्वाद-आशीर्वाद कहानी संग्रह -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ-14
2-आशीर्वाद -आशीर्वाद कहानी संग्रह -प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृ०-
3-आशीर्वाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 27
4- आशीर्वाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 28

4.3.1.3 पति पत्नी में आपसी हास्य-व्यंग्य चल रहा था । इतने में बाहर से आवाज सुनाई देती है:-

"ऊधो कर्मन की गति न्यारी ।"[1]

डाक्टर साहब बाहर देखने चले जाते हैं । वह पहचान लेते हैं कि यह वही भिखारिन है। वह अरूण के बारे में पूँछती है डा0 साहब बताते हैं कि यह मेरा लड़का है। उससे पूँछने पर वह बताती है यह मेरे पति देव हैं और यह मेरा लड़का है। वह उसे भीतर ले जाते हैं। दोनों एक दूसरे को पहचान लेती हैं। लिपटकर खूब रोती है अनुसूया {भिखारिन} अन्नपूर्णा की सहेली है। सब को नहलाकर नये-नये कपड़े पहनाये जाते हैं । अनुसूया बताती है कि मेरी शादी के 5 साल बाद इनकी आंखों की रोशनी जाती रही । पैसों के अभाव के कारण मैं उनका इलाज न करा सकी, और फिर मुझे जीवन यापन के लिये भीख के अलावा कोई रास्ता न था । अब मैं अपने पति और पुत्र दोनों को साथ लेकर चलने लगी क्योंकि लड़के वगैरह शैतानी करते थे ।

डा0 साहब ने उसके पति की आंखों का इलाज किया, उसकी आंखों में रोशनी आ गयी । अनुसूया यह देखकर डा0 साहब के पैरों पर अश्रुपूरित नेत्रों से कहने लगी :-

"मैं तुमको क्या दूँ, पथ की भिखारिन हूँ । भिखारिन के पास केवल आर्शीवाद होता है वही देती हूँ । फिर अरूण को गोद में लेकर उसका मुंह चूम लिया और कहा- भगवान से यही प्रार्थना है कि यह मेरा लाल राज राजेश्वर हो । अगर सती के शब्दों में कुछ असर है, तो यह अवश्य होगा ।"[2]

कहानीकार प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने एक छोटी सी घटना को अत्याधिक मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। पाठकगण पढ़ते पढ़ते भाव विभोर हो उठते हैं। कहानी का शीर्षक सटीक है। कहानी का अन्त मार्मिक है और पाठकों के मन में करूणा जगाने में पूर्ण सक्षम है ।

1-आर्शीवाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 32

2- आर्शीवाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव- पृष्ठ - 39

4.3.2 "तीज की साड़ी"[1]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रणीत "तीज की साड़ी" सामाजिक कहानी है। इस कहानी में कथावस्तु के विकास की पाँचों अवस्थाओं का सफल निर्वाह हुआ ।

4.3.2.1 जाह्नवी की माँ गायत्री के घर में दुर्दैव के प्रकोप से केवल दो कमरे बचे थे। एक कमरे में एक टूटी शैय्या थी, उसी पर गायत्री की एक मात्र पुत्री जाह्नवी लेटी हुई थी। वह ज्वर से पीड़ित है। उससे मिलने उसकी सखियाँ आती किन्तु उसकी दशा देखकर चली जाती । जाह्नवी माँ को रोता देखती है तो कहती है :-

"माँ, रोओं नहीं, तुम्हारे रोने से मुझे दुःख होता है।"[2]

"माँ बाबू जी की चिट्ठी आई ।"[3]

गायत्री ने आंखों से आंसू बहाते हुये निषेधात्मक उत्तर दिया:-

"माँ तीज कब है ताकी मैं तो रेशमी साड़ी लूँगी ।"[4]

गायत्री ने कहने को तो हाँ कर दिया मगर वह असमंजस में पड़ गयी कि वह इतना पैसा कहाँ से लायेगी । सोचते ही सोचते सुबह हो गयी । रात्रि में गायत्री एक भयावह स्वप्न देखती है कि एक भीषण काय सन्यासी ने आकर कहा:-

"माँ भीख दो ।"

"गायत्री ने कोई उत्तर न दिया ।"

"उसने फिर कहा - माँ भीख दो ।"

गायत्री ने पूँछा - "क्या दूँ ।"

सन्यासी ने कहा - "जाह्नवी, अपनी कन्या ।"

1-आर्शीर्वाद कहानी संग्रह-तीज की साड़ी- प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ39

2-आर्शीर्वाद कहानी संग्रह-तीज की साड़ी-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ-42

3-आर्शीर्वाद कहानी संग्रह-तीज की साड़ी-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ.-43

4-आर्शीर्वाद कहानी संग्रह-तीज की साड़ी-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ.-43

× × × × × × × × × × × × ×

गायत्री ने कहा कहां लिये जाते हो, कौन हो ?"[1]

4.3.2.2 मां की ममता रो पड़ी गायत्री ने जाह्नवी को सीने से लगा लिया वह रोई किन्तु रो न सकी। जाह्नवी का इलाज मुरारी मोहन कर रहे थे । दवा खाते खाते 10 दिन हो चुके थे, दवा बराबर चल रही थी।

जाह्नवी ने पूँछा — "मां बाबू जी कब तक आयेंगे ?"

मां ने उत्तर दिया —"क्या जानू कब तक आवेंगे ?"

बालिका ने फिर पूँछा -"कहाॅं गये हैं ?"

मां ने अपने आंसुओं को पोंछते हुये कहा - "काले पानी ।"

"काला पानी कहाॅं है ?"

यहाॅं से बहुत दूर ।"[2]

जाह्नवी मां से एक साथ कई प्रश्न करती है-कहां क्यों गये ? कैसे गये? क्या अपराध क्या था ? मां मैं बाबू जी के पास जाऊॅंगी । गायत्री बहाना करती हुई कहती है पहले ठीक हो जाओं फिर जाना ।

गायत्री के पति जाह्नवी के पिता रामकृष्ण जाते समय गायत्री से कह कर गये थे :-

"देखो मेरी यह धरोहर नष्ट न होने पावे । यदि कभी लौट सका, तो इसका विवाह करूंगा ।"[3]

जाह्नवी जब भी "बाबू जी " की याद करती तो गायत्री उसको इधर उधर की बातों से मन बहला देती थी। जाह्नवी के साथ शिवनाथ भी पढ़ता था जिसे वह "भैया" कहकर पुकारा करती थी। दोनों एक दूसरे को बेहद प्यार करते थे ।

- -

1-तीज की साड़ी-आशीर्वाद कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ-43

2-तीज की साड़ी- " " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-47

3- तीज की साड़ी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -48

शिवनाथ जाह्नवी से तबीयत के बारे में पूँछते हैं बातों ही बातों में वह शिवनाथ से साड़ी लाने को कहती है। किन्तु कुछ सोचकर मना कर देती है। एक घण्टे बाद शिवनाथ खाना की थाली एवं एक साड़ी लेकर आया। साड़ी रेशम की थी। जाह्नवी साड़ी पहनने से साफ इन्कार कर देती है। किन्तु गायत्री और शिवनाथ जिद्द करके जाह्नवी को साड़ी पहना देते हैं ।

4.3.2.3 जाह्नवी शिवनाथ से "बाबू जी" के लिये एक चिट्ठी लिखने को कहती है। वह कहती है कि काला पानी कहाँ है, मैं वहाँ जा सकती हूँ। और अन्त में बाबू जी, बाबू जी, कालापानी, कालापानी कहती हुई हमेशा के लिये अचेत हो गयी ।

"रामकृष्ण को वहाँ शिलाओं को खोदना पड़ता था। एक बार वह थक गया तो रूक गया अंग्रेजों ने उस पर कोड़े बरसाने शुरू कर दिये जिससे वह बेहोश होकर गिर पड़ा । कैदी यह सब सहन न कर सके और एक कैदी संतसिंह ने आगे बढ़कर कोड़ा हाथसे छीन लिया । बकाया कैदी रामकृष्ण की सेवा में लग गये ।"[1]

अंग्रेज कमिश्नर साहब को बुलाते हैं उनका न्याय सर्वोच्च होता था। उन्होंने समस्त भारतीयों को हथकड़ियां पहनवा दी । कड़े से कड़े दण्ड देने शुरू हो गये । रामकृष्ण जब होश में आये तो उन्होंने अपने को अभेदपूर्ण अन्धकार पूर्ण निर्जन कोठरी में पाया । वह जाह्नवी की याद में डूबे रोते हैं। दूसरे दिन सब को आजाद कर दिया गया।

रामकृष्ण ने कोठरी में "बन्देमात्रम" का शब्द सुना तो उन्होंने सोचा कि अंग्रेज परिहास कर रहे हैं। लेकिन थोड़ी देर बाद संतसिंह, मोहनलाल, वारीन्द्र ने आकर बताया कि सब आजाद हो गये । फिर सब अपनी अपनी जन्मभूमि को वापिस हो गये । सभी ने "बन्देमात्रम्" किया किन्तु रामकृष्ण के मुख से "हाय जाह्नवी" निकला ।

4.3.2.4 वारीन्द्र ने कहा मेरी बीबी तो मर गई, एक नन्हीं करूणा है। रामकृष्ण वारीन्द्र को जाह्नवी से मिलवाने के लिये घर लाये। घर —

1-तीज की साड़ी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 55

पहुँचकर रामकृष्ण ने पुकारा "जाह्नवी" । गायत्री रोने लगी आपने पूँछा जाह्नवी कहाँ है। रामकृष्ण जाह्नवी की मौत की खबर न सुन सके और और अचेत होने लगे । वारीन्द्र ने उन्हें अन्दर ले जाकर एक कमरे में बैठा-या । होश में आने पर रामकृष्ण ने पोटली खोली और उसमें कलकत्ते से खरीदी एक साड़ी निकाल कर वारीन्द्र को दी और कहा कि "तुम्हारी करूणा ही अब मेरी जाह्नवी है।" वारीन्द्र ने रोते रोते रेशम की साड़ी ले ली ।

विषय के विकास में स्वाभाविकता के साथ साथ गति भी लक्षित होती है । कथा में रामकृष्ण का कालेपानी जाते समय गायत्री से कहे बचन, दूसरा जाह्नवी का पिता की याद में तड़प-तड़प कर पागल हो जाना यहाँ तक कि प्राण पखेरू का उड़ जाना अत्यन्त मार्मिक स्थल है। प्रस्तुत कहानी में प्रतापनारायण श्रीवास्तव एक बालिका का अपने पिता से असीम प्यार दिखाने में सक्षम रहे हैं ।

4.3.3 शेष - संबल [1]

4.3.3.1 बाबू चन्द्रमा प्रसाद "पित ज्वर" से पीड़ित हैं लेकिन वह अपने को "थाइसेस" का रोगी समझ बैठते हैं और अपनी पत्नी सुन्दरी के बारे में सोचा करते हैं कि मेरे मरने के बाद इसका क्या होगा । वह उससे दूसरा विवाह करने के लिये कहते हैं। लेकिन वह तैयार नहीं होती है। चन्द्रमा प्रसाद सोचते हैं :-

"आह! वह मुझे कितना प्यार करती है। मेरे लिये जान तक देने के लिये तैयार है और मैं x x x x x x x x x मैं थोड़े ही दि-नोंका मेहमान हूँ । x x x x x x x x x किन पापकर्मों से ऐसा दंड दे रहा दयामय ! मुझे कुछ दिनों तक और जीवित रहने दो, उसे प्यार का सुख भोग कर लेने दो, फिर मुझे मरने में भी आनन्द मिलेगा ।"[2]

1-शेष-संबल{आशीर्वाद कहानी संग्रह}-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-62

2-शेष-संबल{आशीर्वाद कहानी संग्रह}-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-64

4.3.3.2 चन्द्रमा प्रसाद अपने मित्र रामशंकर से भी "थाइसेस" होने का जिक्र करता है, किन्तु वह मना करता है। चन्द्रमा प्रसाद रामशंकर पर एक महान बोझ रखना चाहते हैं, रामशंकर उस बोझ का नाम पूछता है तो चन्द्रमा प्रसाद कहते हैं अभी समय नहीं आया जब आयेगा तब बता देंगे रामशंकर बोझ लेने को तैयार है। चन्द्रमा प्रसाद ने जब अपने ठीक होने की कोई उम्मीद न देखी तो सुन्दरी से कहने लगे देखो :-

"मेरे नाम को कलंकित न करना, कोई काम ऐसा न करना जिसमें मेरे पिता के और मेरे उज्जवल नाम में कलंक की कालिमा लग जाये तुम नव युवती हो, सुन्दरी हो। संसार के प्रलोभन तुम्हें अपनी ओर खींचेंगे और खींचेंगे इतने जोर से कि शायद तुम अपने को संभाल न सकोगी ।"[1]

इतने में रामशंकर आ जाते हैं चन्द्रमा प्रसाद कहते हैं:-

"मैं थोड़े ही दिनों का मेहमान हूँ। तुम्हारी भाभी अभी नव यौवना हैं, अनभिज्ञ हैं। संसार क्या चीज है नहीं जानती । जानती भी कैसे ये इनके खेलने खाने के दिन हैं। × × × × × × × × × कोई इनको कुमार्ग से बचाये रहे। सदा सत्यपथ पर चलाये रहे ।वह बोझ मैं तुम पर डालता हूँ ।"[2]

रामशंकर ने चन्द्रमा प्रसाद की कसम खाई और सुन्दरी के पैरों पर सिर रखकर कहा आज से तुम मेरी मातुल्य हो और मुझे सन्तानवत समझना । चन्द्रमा प्रसाद चल बसे सुन्दरी के परिवार में भी कोई नहीं था। थीं तो बुढ़ी चन्द्रमा प्रसाद की माँ । अभी चन्द्रमा प्रसाद को मरे सिर्फ 4 महीने हुये । सुन्दरी को उसकी सास तरह-तरह की घुड़कियां, धमकियां और आक्षेप लगाने लगी ।

सुन्दरी सूख-सूख कर कंकाल मात्र रह गई। कभी-कभी वगैर खाने के भी सो जाती । एक दिन वह वगैर खाये रोते रोते सो गई वृद्धा ने उसे जगाया और उस दिन से कभी कुछ न कहा और सुन्दरी अब अति सुन्दर हो गयी ।

1-शेष-संबल (आशीर्वाद कहानी संग्रह)-प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृ0-69.70

2-शेष - संबल - प्रतापनारायर्ण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 72

4.3.3.3 सुन्दरी पड़ोस में अपनी एक सखी गोरी के यहाँ गयी । गोरी के पति स्थानीय बैंक में 125 रू० प्रतिमाह के कर्मचारी हैं। उन्हें अभी रहते-रहते सिर्फ 4 महीने ही हुये थे। गोरी और सुन्दरी में पारस्परिक हास्य परिहास होने लगा । यकायक चन्द्रमा प्रसाद की याद आने पर सुन्दरी रो पड़ी । गोरी उसे समझाती है कि ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है। सुन्दरी ईश्वर में विश्वास नहीं रखती ।

गोरी कहती है कि मेरे पति मुझे बहुत चाहते हैंआफिस से आने पर सदा मेरे पीछे-पीछे टहलते रहते हैं। दोस्तों तक से नहीं मिलते वह मुझे मेरे मायके होने पर रोज चिट्ठी डालते । चिट्ठी के एक दिन न मिलने पर वह तार करते । रामशंकर प्रतिदिन शाम को बैठने आया करते और सुख दुख और तमाम तरह की बातें करते । कभी-कभी सुन्दरी की सास भी बैठती और कभी-कभी वह और सुन्दरी ही बातें करते । सुन्दरी की सास को रामशंकर पर पूरा विश्वास था । एक दिन सुन्दरी ने पूँछा :-

"भैया, ईश्वर और भाग्य क्या चीज है ।"[1] दोनों ने इस पर अपने-अपने विचार प्रकट किये । एक लम्बा चौड़ा भाषण हो गया।

सुन्दरी कहती है कि विधवाओं के नियम समाज ने बनाये हैं और सिर्फ खुदगर्ज पुरूषों ने :-

"पुरूष चाहे हजार विवाह कर ले, एक स्त्री रहते भी जो चाहे सो करें । वह तो ठीक है । लेकिन अगर बेचारी स्त्री एक स्वामी के मरने पर दूसरा विवाह करने के लिये तैयार हो, तो वह पाप है ।"[2]

रामशंकर कहता है कि यह हिन्दू धर्म की स्त्रियों का त्याग है, बलिदान है जो उन्हें ऊँचे उठाये रखता है ।

4.3.3.4 सुन्दरी कहती है ठीक है जो स्त्रियां त्याग नहीं कर सकती हैं वे क्या करें । यह त्याग पुरूषों के लिये क्यों नहीं हैं। सुन्दरी की सास और सुन्दरी उसे शाम का खाना खिलाती हैं। रामशंकर आज सुन्दरी के

1- शेष -संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 86

2- शेष-संबल - प्रताप नारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 91

चेहरे पर एक नई मुस्कान देखता है । वह जब भी रामशंकर की तरफ दे-
खती तो एक अजीव कटाक्ष करती, रामशंकर यह देखकर अपना सिर नी-
चा कर लेता । किन्तु धीरे - धीरे वह भी सुन्दरी की बातों को जा-
नबूझ कर भी अनसुनी कर दिया करता है। एक दिन सुन्दरी ने जीने से
गिरने का बहाना करके गिर पड़ी, रामशंकर ने उठाया और हाथ पकड़े
पकड़े ऊपर ला रहा था वह रामशंकर के हाथ को धीमे-धीमे दवा रही
थी । रामशंकर उसकी कमजोरी को समझ गया था ।

सुन्दरी की सास ने काशीजाने की बात की तो रामशंकर
ने मनाकर दिया कि युवती स्त्री को अकेले कहीं नहीं जाना चाहिये ।
माँ खाना बनाने के लिये पंडितानी के पास चली गयी । सुन्दरी राम-
शंकर के पास बैठकर पूँछने लगी । विधवाओं का क्या कर्तव्य है ? राम-
शंकर ने कहा :-

"ब्रह्मचर्य पालन करना । मृत स्वामी की चिन्ता ही में
जीवन उत्सर्ग कर देना ।"[1]

सुन्दरी कहती है। अगर वह ऐसा नहीं कर सके तो । रा-
मशंकर कहता है:-

"उन विधवाओं को विवाह कर लेना चाहिये जो अपनी
काम वासना का दमन नहीं कर सकती, और जो कर सकती हैं, वे कभी
विवाह करके दुराचारिणी न हों ।"[2]

4.3.3.5 सुन्दरी ने रामशंकर से पूँछा कि तुम हमें प्यार नहीं करते
वह जवाब देता है— मैं तुम्हें अपनी बहिन "कला" के समान ही प्यार
करता हूँ । सुन्दरी कहती है :-

"बहन कितना रूक्ष संबोधन है। कुछ और कह कर पुकारो,
जिससे यह हृदय शीतल हो, इसकी ज्वाला शान्त हो । इस पागल मन
की उन्मन्तता दूर हो। मन की साध पूरी हो ।"[3]

1- शेष - संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 101

2- शेष - संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 102

3- शेष - संबल - प्रतापनारायर्ण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 105

अच्छा-अच्छा मैं तुम्हें मां कहूँगा । सुन्दरी ने घृणा से मुंह फेर लिया, और कहने लगी कि मैं भी तो रोज मां, मां, पुकारती हूँ। कहां है वह मिठास, कुछ और कहो । अच्छा अब जो मैं पूँछती जाऊँ तुम उसका जबाब देते जाना । "मैं कैसी लग रही हूँ।" उत्तर मिलता है मानो मां भवानी स्वर्ग से दर्शन देने के लिये अवतीर्ण हुई हों । कहता है आज तो तुम हमें ग्रीक देश की {वीनस} देवी के समान लग रही हो जी चाहता है कि घुटनों के बल बैठकर प्रणाम करूँ ।

सुन्दरी कहती है कि मेरा रूप सौन्दर्य देखकर तुम्हारे हृदय में दूसरा भाव नहीं उठता । रामशंकर उत्तर देता है - आता है भक्ति का । सुन्दरी कहती है भक्ति का संचार होता है प्रेम का नहीं ?

4.3.3.6 वह उत्तर देता है - मैं तो तुम्हें अपनी मां और बहिन से ज्यादा प्यार करता हूँ। वह कहती है नहीं किसी और प्रकार का । वह कहने लगी :-

"प्रियतम, प्राणनाथ, बोलो क्या प्यार करोगे ? × × × × × × × × × मेरा प्यार समुद्र से भी अधिक गम्भीर, दामिनी से भी अधिक उद्दम, तूफान से भी अधिक उन्मत है। मैं तुमको अपना आराध्य देव मानती हूँ। तुम मेरे प्राणनाथ हो, सबसे अधिक प्यारे हो, मैं तुम्हारे लिये पागल हुई जाती हूँ। सबकुछ तुम्हारे चरणों पर न्योछावर है। × × × × × × × × × × खाली एक दफे कहो प्राणेश्वरी ।"[1]

इतना कहकर उसने रामशंकर को अपने बाहुपाश में बद्ध करके अपनी हृदय की ज्वाला को शान्त कर लेना चाहा । रामशंकर ने उसे दूर झिटकते हुये कहा :-

"भाभी बस तुम्हारा यहाँ तक अन्धःपतन हो चुका । छिः मेरी प्रतिज्ञा झूठी न करवाओ । ओह देखो × × × × × × × × × आंखे खोलकर देखो, कौन है ।"[2]

1- शेष - संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 108

2- शेष - संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 109

कामवासना का नशा उतर जाने पर वह बोली :-

"भैया, आज तुमने एक बड़े भीषण पाप से बचा लिया । मुझ अभागिनी को क्षमा करो मेरे ऊपर दया करो । मैं अभी तक अन्धकार में थी। सच है, "स्वामी की स्मृति" ही विधवा का "शेष-सबल "है।"[1]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत यह कहानी सामाजिक है। जिसमें श्रीवास्तव जी ने एक भारतीय पति का सुन्दर किया है। साथ ही साथ विधवाओं की समस्या को भी उठाया है। काम वासना से पूरित औरत अपना सब कुछ भूल जाती है। इसकी कथा इतनी स्वाभाविक है कि पाठक आनन्दित हो जाता है ।

4.3.4 लालसा [2]

"आशा की मधुर थपेड़ें जीवन को सुखमय कर देती है। निराशा शाप है, और आशा आशीर्वाद; जब तक आशा है, तब तक प्राण हैं, और जहाँ निराशा की भयंकर कालिमा भरी छाया आकर पड़ी, वहीं नाश, मृत्यु और प्रलय है ।"[3]

4.3.4.1 यही हाल महेश बाबू का है वह सुहासिनी से प्रेम करते हैं। वह कभी सोचने लगते कि सुहासिनी उनको चाहती और कभी सोचने लगते कि राजकुमार को । सुहासिनी दोनों की मूर्खता पर खूब हंसती और दोनों का शिकार करती । वह कभी दोनों को रो, रो कर हाथ पैर छू कर कसम खाकर हर तरह उन्हें विश्वास दिलाती कि वह उनकी है किसी दूसरे की नहीं । दोनों के साथ यही व्यवहार करती । एक दिन महेशबाबू कहने लगे राजकुमार के पास न उठा बैठा करो । तुम मेरी पत्नी हो, मेराकहना न मानोगी। सुहासिनी हंसती हुई बोली यह नये तरह की शादी कब से होने लगी । फिर वह रो, रो कर कहने लगी तुम्हें मुझपर विश्वास नहीं है । महेश बाबू कहने लगे :-

---

1- शेष -संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 109

2- लालसा (आशीर्वाद कहानी संग्रह)- प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-110

3- लालसा " " " - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-110

"जिस दिन तुम्हारा अविश्वास करूँगा सुहासिनी, उसदिन मेरे लिये यह संसार शून्य होगा, पृथ्वी पर मेरा शरीर होगा प्राण नहीं। मुझे सूर्य के ताप में विश्वास नहीं है, चन्द्र की शीतलता में विश्वास नहीं है किन्तु तुममें विश्वास है। × × × × × × × × × × × × ×।"[1]

4.3.4.2 सुहासिनी ने उनके पैर छू लिये। महेश बाबू गदगद हो गये और विश्वास कर लिया। प्रेमनाथ महेशबाबू से कहते हैं :-

"स्त्री जाति पर विश्वास करना मूर्खता है। मनुष्य चाहे अग्नि पर विश्वास कर ले कि यह जलावेगी नहीं, सर्प पर विश्वास करले कि यह काटेगा नहीं, किन्तु स्त्री जाति पर विश्वास करना मूर्खता है।[2]

महेशबाबू कहते हैं कि यह भयंकर भूल है मूर्खता है। मनु ने कहा है कि :-

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।" स्त्री से प्रेम करो प्रेम मिलेगा। विश्वास करो विश्वास मिलेगा।"[3]

4.3.4.3 उमाकान्त, महेश और प्रेमनाथ तीनों गहने मित्र हैं। स्त्री जाति में हमेशा एक नई चीज प्राप्त करने की लालसा लगी रहती है। कभी राजकुमार को तो कभी महेशबाबू को और कभी अमुक को यही क्रम बराबर चलता रहता है। सुहासिनी कृष्णचन्द्र बैरिस्टर की पुत्री है। सुहासिनी की माता डिप्टी कलेक्टर की लड़की है। वह दोवार इग्लैण्ड हो आयी है। उसके कपड़े हमेशा इत्रों से तर रहते हैं।

महेशचन्द्र नगर के एक प्रसिद्ध वकील प्रकाशचन्द्र के पुत्र हैं। आपकी माता हिन्दू घर की विदुषी हैं इसीलिये विगड़े हुये नहीं हैं।

राजकुमार नगर के डिप्टी कलेक्टर हैं।

प्रेमनाथ के पिता श्यामाचरण एक व्यवसायी पुरूष हैं नगर के एक कालेज में प्रोफेसर हैं।

1- लालसा (आशीर्वाद कहानी संग्रह)-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-113

2- लालसा " " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृ0-116

3- लालसा " " " - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृ0-118

तीनों अविवाहित हैं तीनों भिन्न-भिन्न जाति के हैं, तीनों बरा-
-बर सुहासिनी के यहाँ जाते हैं । बैरिस्टर कृष्ण चन्द्र चाहते हैं कि सुहा-
सिनी इन्हीं में से किसी को बरे । राजकुमार ने सिर से हैट उतारते
हूये कहा:- "It is out of etiquette,

नारी का मान करना पुरुषों का धर्म है ।"[1]

4.3.4.4 बातों ही बातों में राजकुमार सुहासिनी का मुँह चूम लेते
सुहासिनी के माँ-बाप क्लब गये हुये थे । इसीलिये निश्चिंत होकर दोनों
प्रेम लीला में मस्त थे। प्रेमनाथ ने दोनों को शर्मिन्दा कर दिया, राजकुमा-
र उठकर चले जाते हैं। और प्रेमनाथ बैठ जाते हैं। सुहासिनी कहती है कि
आपने आकर आज मेरी इज्जत बचा ली वरना न मालूम राजकुमार क्या
करते । मैं आपका एहसान जिन्दगी भर न भूलूँगी । प्रेमनाथ चलने को क-
हते तो सुहासिनी जाने से मना करती है। दूसरे दिन सुबह आने का वा-
दा लेकर जाने की अनुमति देती है :-

"For my sake atleast,

कमसे कम मेरे ऊपर अनुग्रह करके जरूर आइयेगा।"[2] जाने पर
वह मन ही मन कहती है :-

"अपने रूपजाल में, प्रेमजालमें आवद्ध न कर सकी तो यह रूप
किस काम का ! प्रेमनाथ! क्या सुहासिनी के जाल सेबच कर चले जाओगे।
दो को तो फांस लिया । वे दोनों मेरे आज्ञाकारी दास है। तुम्हें भी
वैसा ही बना के न छोड़ा तो मेरा नाम सुहासिनी नहीं ।"[3]

4.3.4.5 धीमे - धीमे प्रेमनाथ का खूब आना जाना हो गया ।
सुहासिनी व प्रेमनाथ दोनों का अधरपान कर रहे थे। सहसा पिस्तोल
का शब्द हुआ और दोनों पृथ्वी पर गिर पड़े ।

"पापीयसी, प्रतारणा का फल मिला । विश्वास घात कि-
या था। x x x x x x x x मै राजकुमार इस बात को स्वीकार करता
हूँ कि मैने सुहासिनी और प्रेमनाथ को पिस्तोल से मारा है। इसीलिये

1-लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 123

2- लालसा- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 124

3- लालसा- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 126

मैं भी आत्म हत्या किये लेता हूँ जिससे लज्जित होने से बच जाऊँ ।"[1]

4.3.4.6 राजकुमार नेयह नोटबुक पर लिखकर अपने भी गोली मार ली । पिस्तोल के शब्द सुनते - सुनते सैकड़ों लोग जमा हो गये । उनमें महेश बाबू भी थे । महेशबाबू ने दौड़कर प्रेमनाथ को देखा तो साँस चल रही थी । वह बेहोश थे । उन्हें होश में लाने की कोशिश करने लगे । प्रेमनाथ बोले महेश तुमने हमें गोली मारी :-

"मैने तुमसे कहा था एक दिन सुहासिनी को अपने अंक पास में दिखा दूँगा । वह दिखाने के लिये आज तुमको और राजकुमार दोनों को बुलाया था। तुमने मुझे गोली मारी महेश । तुमने मेरा प्राण ले लिया । मैं अपना प्राण देकर तुम्हारे आगे क्या, संसार के आगे उदाहरण रखता हूँ कि रमणी का प्रेम तृष्णा, लालसा है, और कुछ नहीं । महेश क्षमा करो ।"[2]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "लालसा" सामाजिक कहानी में "सुहासिनी" को ऐसा वासनात्मक नारीसुलभ हृदय दिया कि वह एक नही, तीन-तीन को अपनी लालसा का शिकार बनाती है। कहानी में कहीं भी अत्यधिक अश्लीलता नहीं है। कथा वर्तमान युग में शतांश सत्य घटित उतरती है। दूसरा यह कि इस कहानी के माध्यम से प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने रमणी के प्रेम को तृष्णा और लालसा केसिवा कुछ नहीं माना । भारतीय सभ्यता के अनुसार कुकृत्यों का परिणाम बुरा होता है। वह श्रीवास्तव जी ने सुहासिनी की मृत्यु होने पर पूरा कर दिया । कहानी का शीर्षक सटीक है । समग्रतः "लालसा" कहानी एक सशक्त और सफल रचना है और कहानी कार की साहित्यिक प्रतिभा की सफल परिचायक है ।

1- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 130

2- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 132

4.3.5 "मीठी मुस्कान"[1]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत "मीठी मुस्कान" सामाजिक कहानी है । जिसमें दैनिक जीवन की सामान्य परिस्थितियों के माध्यम से समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है ।

4.3.5.1 शिवनाथ सिन्हा उर्फ मन्ना अपनी पत्नी को साथ लेकर कानपुर से मथुरा तीर्थ करने जाते हैं, वहाँ वह "तुलसी चौरा" में रहने लगते हैं। दोनों पति - पत्नी आमोद प्रमोद, हास्य - परिहास से प्रसन्नता पूर्वक जीवन यापन कर रहे थे । कभी-कभी तो शिवनाथ सिन्हा अपने प्रसन्नमय दाम्पत्य जीवन पर आश्चर्य करते हुये सोचते हैं :-

"क्या यह सुखमय स्वपन सदा यों ही बना रहेगा ? क्या इसी भांति हम दोनों एक दूसरे को यों ही प्यार करते रहेंगे ? क्या इसी तरह से सुख के दिन यों ही कटते जायेंगे ? क्या वह कभी मुझ को छोड़कर चली जायेगी, या मैं कभी उसे छोड़कर × × × × × × × × × आह मन कांप उठता है। शरीर शिथिल हो जाता है । प्राण भयाकुल हो जाते हैं । भगवान जब तक मैं जीऊँ मेरे दिन इसी भांति सुख से कटते जाये । आपसे यही प्रार्थना है कि वह मुझसे कभी अलग न हो, और मैं उससे अलग न होऊँ ।"[2]

एक दिन वह यमुना के किनारे पहुंच गये वहाँ यही सोच रहे थे । वहीं सहसा उन्हें संगीत की ध्वनि सुनाई दी वह ध्वनि संकेत की ओर चल पड़े जहाँ गाना "ऊधो, प्रेम की का यही रीत ?" गाया जा रहा था । वह उसी कमरे के नीचे खड़े होकर सुनने लगे । सुनते - सुनते वह संगीत में तन्मय हो गये ।

4.3.5.2 एक युवती जिसका नाम केतकी है वह इनको ऊपर ले जाती है। वहाँ महारानी राजेश्वरी देवी शिवनाथ सिन्हा का पूरा परिचय लेतीं । राजेश्वरी देवी महारानी का आवरण ओढ़कर सीधी साधी, भोली-भाली नवयुवतियों को पापाचार की ओर अग्रसर करती । यह सब अभी शिवनाथ सिन्हा को मालूम नहीं है। वह सब इनसे गाने का अनुरोध

1-मीठी मुस्कान (आशीर्वाद कहानी संग्रह) प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ-133

2- मीठी मुस्कान " " " - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृ0-138

करती वेवस सुनाना पड़ता । दूसरे दिन फिर आने को केतकी अत्यधिक कहती है ।वह घर जाकर यह प्रतिज्ञा करते हैं कि अब कभी न जायेंगे । लेकिन सुवह होने पर उनके सामने केतकी ही याद एक के वाद एक आने लगी ।शाम को वेवस होकर जाना ही पड़ा । वहां पहुँचे तो पता चला कि केतकी के अलावा कोई नहीं है। केतकी ने उन्हें आज उस कमरे में भी नहीं बैठाया था जहां वह कल महारानी के साथ बैठा था। शिवनाथ ने जब जाने को कहा तो उसने मना किया और कहने लगी :-

"तो जाओगे,चले ही जाओगे, तनिक देर भी नहीं बैठोगे बैठो, मेरे सामने बैठो, मैं कुछ नहीं चाहती, तुम्हें मैं सिर्फ देखना चाहती हूँ । तुम झूठ मानो चाहे, लेकिन मै सत्य कहती हूँ कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ । प्यारे, नाराज मत हो । यों मेरी ओर न देखो । तुम मेरे आराध्य हो, और मैं तुम्हारी दासी ।"[1]

4.3.5.3 इसके बाद वह पैरों पर सिर रख देती । शिवनाथ उसे सप्रेम उठाकर हृदय से लगा लेते हैं वह और जोर से चिपक जाती है।वह उसे दूर करते हुये कहते हैं :-

"मेरे स्त्री है, और मेरे साथ है। मैं उससे कोईबात नहीं छिपाता। वह कहती है। तुम्हें देखकर ही सब कुछ पा जाऊँगी । प्राणेश्वर प्रियतम !"[2] शिवनाथ सिन्हा अब अपने को ही धिक्कारते और सोचते-

"मैं चरित्र के ऊँचे शिखर पर से फिसला,और फिसलकर गिरा, एकदम से उस पाप के भयानक कालिमा मय गड्डे में जहां से अब निकलना असम्भव है ।"[3]

शिवनाथ रात में एक भयानक स्वप्न देखते है कि एक सर्प उनका पीछा कर रहा है। वह अपनी पत्नी को जगाते हैं,मगर जब वह नहीं उठती तो आप उससे नाराज हो जाते हैं। उसके दूसरे दिन ही अपने छोटे भाई रामनाथ के साथ कानपुर भेज दिया। जाते समय वह एक पर्चा रामनाथ के हाथों देती गयी थी जिसमें लिखा था :-

---

1- मीठी-मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 149

2- मीठी-मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 150

3- मीठी-मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 155

"अगर आपको कभी किसी ऐसे की आवश्यकता आ पड़े जो आपको सांत्वना दे सके, अगर आपको कभी अपने किये पर पश्चा-ताप हो, अगर कभी आपका यह मोह टूट जाय, और आपको किसी ऐसे की आवश्यकता हो, जो आपको सुपथ की ओर ले जाय, तो मुझे एक बार याद कीजियेगा। यदि जीवित रही, तो आपको सहायता दूँगी, नहीं तो × × × × × × × × × × × बस ।"[1]

रानी जी ने यह सब देखते हुये भी कभी आपत्ति नहीं की । एक तो दूर दूर दो दो लड़कियां यहां पढ़ने आने लगी । एक दिन केतकी बोली - कि आज चपला रानी यहां आयी थी उसका यह हार है आप भी हमें ऐसा ही खरीद दे ।

4.3.5.4 केतकी और शिवनाथ सिंह में चपला को लेकर काफी देर तक वार्तालाप चलता रहा। शिवनाथ अपनी पत्नी का जेवर बेचते हैं जो करीब 1500/- रू0 का होता हैऔर अपने पास जो भी थे यानी 500/- रू0 इसके अलावा शिवनाथ को लेने आये हुये मामा से 300/-रू0 लिये कुलमिलाकर 2300/- रू0 लेकर वह केतकी को देते हैं और कहा कि बाकी 200/- रू0 तुम अपने मिला लेना बादमें इन्तजाम होने पर दे दूँगा ।

मामा ने शिवनाथसे कानपुर चलने के लिये बहुत कहा कि बहु बीमार है तुमसे मिलना चाहती है। वह मना कर देता है तो मामा चले जाते हैं और कहते हैं :-

"भगवान तूने मनुष्य को इतना अपहार्य क्यों बनाया । मनुष्य बड़ा कमजोर है। अबूझ है,और है अंधा ।"[2]

शिवनाथ केतकी को एक युवक के साथ बात करते देख लेते हैं। दूसरे दिन केतकी से उस लड़के के बारे में पूँछते हैं। पहले तो वह बताती है कि वह आप ही जैसा गाने का शौकीन है। गाना सुनने आया था। उसका नाम परमानन्द है मैंने उसके यहां नौकरी कर ली । क्योंकि तुमसे तो कुछ हो-ने का नहीं था ।

1- मीठी - मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 161

2- मीठी - मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 170

पारस्परिक वार्तालाप बढ़ते - बढ़ते यहाँ तक पहुंच जाता है कि केतकी उसे बताती है कि चपला मेरी बहिन है । जो कलकत्ते की सबसे बड़ी मशहूर रन्डी है। शिवनाथ आँखे लाल पीली करने लगे तो वह बोली-

"जनाव, यहाँ पर लाल,पीली आँखे न कीजिये । मैं नहीं सह सकती । दिखाइये जाकर अपनी उस साध्वी घर की लक्ष्मी को,जिसको मेरे लिये ठुकरा दिया । जो आदमी तुच्छ रूप के लिये अपनी परिणीता को छोड़ सकता है, भला कब संभव है कि वह मेरा सहारा सदा बना रहेगा । × × × × × × × × × × × × × अब आप अपना रास्ता देखिये और मैं अपना ।"[1]

4.3.5.5 शिवनाथ अब समझ गया कि यह रानी नहीं तवायफ का अड्डा है यह रानी ही इनकी माँ है । शिवनाथ अपना सब कुछ केतकी की मुस्कान पर लुटा चुके थे । अब वह परेशान सा रहने लगा । एक दिन तार मिलता है जिसमें उसे शीघ्रातिशीघ्र कानपुर बुलाया गया था। वह कानपुर के लिये चल देता है रास्ते में भगवान से प्रार्थना करता है कि भगवान उसकी रक्षा करना । घर सबसे पहले माँ से मुलाकात होती है जो देखते ही देखते रो पड़ती है। वह पूँछते हैं माँ तवीयत कैसी है । माँ अन्दर जाने को इशारा कर देती है किन्तु मामा अन्दर जाने से मना कर देते हैं :-

"बहु सो रही है तुम्हारे जाने से जाग पड़ेगी,तवीयत फिर खराब हो जायेगी ।"[2]

शिवनाथ खाना खा पीकर लेट जाते हैं। तो देखते हैं कि वह उनके पैर दवा रही है। शिवनाथ ने उससे माफी माँगी चाही लेकिन उसने उनसे पहले उसके पैरों पर सिर रखकर क्षमा माँगी ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस कहानी के माध्यम से यह बताया है कि दुनिया प्रलोभन की जगह है। जहाँ पर हमें प्रलोभनों में नहीं फसना चाहिये क्योंकि सांसारिक प्रलोभन झूठे झूठे और क्षणिक एवं स्वार्थ से पूरित हैं। इनमें फंसकर ही लोग अपने चरित्र का पतन कर बैठते हैं शिवनाथ मथुरा गये थे पुण्य कमाने लेकिन कमाया पाप वह भी सिर्फ केतकी की एक "मीठी-मुस्कान"पर । कहानी का शीर्षक सटीक है ।

1- मीठी-मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 174
2- मीठी-मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 175

4.3.6 "आजादी का पहला दिन"[1]

4.3.6.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रणीत "आजादी का पहला दिन" राष्ट्रीय कहानी है। कल्पनातीत नर संहार काजिसने कितनी माताओं की गोदों को, कितनी प्रेयसियों के जीवनाधार अमर स्वरों को, कितनी सधवाओं के सिन्दूर को, कितनी बहनों की राखियों को अपने क्रूर हाथों से छीन लिया। कितने ही परिवारों के दीपक बुझ गये और कितने बच्चे अनाथ होकर दर-दर की ठोकरें खाने लगे। इसी कावर्णन इस कहानी में हुआ है। जो अत्याधिक हृदयस्पर्शी एवं मार्मिक है।

जितनी आतुरता से बिल्ली चूहे की ओर नहीं झपटती और उतनी आतुरता से बच्चे पंतग की ओर भी नहीं दौड़ते उससे भी अधिक वेग गति से ये दुर्दान्त रक्तरंजित भयावह आततायी भारतीयों पर झपटते और उनके घरों को लूटते और जवान स्त्रियों को अपनी घर ले जाकर वेइज्जत करते।[2]

ऐसा ही हाल अमा के परिवार का हुआ। उसके पति लहरचन्द्र को काटे और बल्लमों से घायल करके गिरा दिया तथा उसके सास, ससुर की लाठियों से मार मार कर हत्या कर दीगयी। कासिम अमा को उठाकर अपने घर ले आया। घर पर अब्दुल्ला ने उसकी देखभाल की। अमा को कासिम वेहोश लाया था यहां जब उसको होश आया तो उसने अपने पास एक व्यक्ति (अब्दुल्ला) को देखा, देखकर वह परेशान सी होने लगी। अब्दुल्ला ने कहा :-

"बहिन तुम बेखौफ होकर मेरे यहां रहो यह तुम्हांरे भाई का घर है। भाई के घर में बहिन का भी हक है। उसी हक से तुम मेरे यहाँ उस समय तक रहोगी, जब तक मैं तुम्हारे घर। या ससुराल वालों का पता नहीं लगा पाता, और जब वे मिल जायेंगे तव मेरी बहिन यहाँ से उसी धूम-धाम से जायेगी, जैसे कोई लड़की अपने विवाह के बाद जाती है।"[3]

1-आजादी का पहला दिन-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव

2- आजादी का पहला दिन - " " "-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ-

3- आजादी का पहला दिन - " " "-प्रतापनारायर्ण श्रीवास्तव-पृ0-

4.3.6.2 इसी समय कासिम एक मूर्छित युवक को लेकर आता है। अब्दुल्ला उसका प्राथमिक उपचार करने लगा ।इसी बीच वह उसे पहचान लेता है कि वह उसका बचपन का मित्र दिलीपसिंह है। इतने प्रसंग पर दोनों में काफी देर तक बात-चीत चलती रहती है। इतने में किसी ने दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खोला तो सामने काला झण्डा लिये हुये जिस पर अर्ध चक्र बना हुआ था और उनकी तलवारें खून से लथपथ थी ।

"एक आततायी ने कड़क कर कहा-तुम मुसलमान हो, ।
कासिम और अब्दुल्ला ने एक साथ कहा - "हाँ",
हम सच्चे मुसलमान है ।"
जो पाकिस्तानी झण्डा लिये हुये था उसने कहा-तो क्या तुम
हमको काफिर कहते हो ?
अब्दुल्ला ने तेजी के साथ कहा - "बेशक,
बल्कि उससे भी ज्यादा हकीर। काफिर तो आखिर में इन्सान है, मगर तुम लोग तो शैतान हो गये । खुदा के बन्दों को गुम-राह करते हो ।"[1]

4.3.6.3 उनलोगों ने घर की तलाशी लेनी शुरू कर दी कासिम औ-र अब्दुल्ला को इन लोगों ने नंगी तलवारों से घेर लिया अमा पहले से ही खंजर लिये हुये खड़ी थी। उसने उस युवक के सीने में उसे भोंक दिया जो उसे पकड़ने के लिये आगे बढ़ा था। जमीन पर गिरते-गिरते उस युवक ने एक ऐसा वार किया कि वह भी आहत होकर जमीन पर गिर पड़ी युवक के जमीन पर गिरते ही उसके साथियों ने कासिम और अब्दुल्ला प-र वार कर दिया जिससे वह भी धराशायी हो गये ।

" x x x x x खून से लथपथ आजादी का पहला दिन रक्तांम्बर ओढ़े हुये सूर्य के साथ अन्धकार में मुँह छिपाने के लिये आतुर-ता के साथ डूब गया ।"[2]

1-आजादी का पहला दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ-10-11

2- आजादी का पहला दिन-प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ- 15

4.3.7 "बीती बातें "।

4.3.7.1 इस कहानी की पृष्ट भूमि भारत पाक युद्ध पर आधारित है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस कहानी के माध्यम से ऐसे मानव रूप-धारी दैत्यों का वर्णन किया है। जो अपने कुकृत्यों से जमीन तो दूर आ-समान तक को हिला देते हैं। जिसकी ध्वनि से वातावरण वीहण, डरावना और शून्य हो जाता है अथार्थ शमशान का रूप धारण कर लेता है।

हाजी खुरशीदअहमद पाकिस्तान की एक टुकड़ी का नेतृत्व कर रहे थे। शाम को उन्होंने एक सुन्दर युवती को देखा जिसे देखते ही वे अपनी सुधबुध खो बैठे थे। उसे अपनी वेगम बनाने का इरादा कर लेते हैं। लेकिन उस वक्त तक अंग्रेजों का राज्य था । इसलिये उस शाम वह कु-छ न कर सके । फिर भी वह पूरी तरह सजग थे कि जैसे ही छूट मिलेगी हम इसे हथया लेगें । आज उन्हें वह दिन प्राप्त हो गया । उन्होंने सै-निकों को दरवाजा तोड़ने का आदेश दिया । और पाकिस्तान जिन्दा-बाद !अल्ला हो अकबर कहते हुये अन्दर घुस गये । हाजी खुरशीद उस युवती को देखकर कहते हैं :-

"यही है दोस्तो, यही है। पाकिस्तान जिन्दावाद ! खवरदार इसका बालबाका न होने पावे, और उस काफिर जवान के टु-कड़े-टुकड़े करके चीलों और गिद्धों को खाने के लिये छोड़ दो ।"[2]

4.3.7.2 हाजी खुरशीद जैसे ही उसे पकड़ना चाहते हैं किन्तु वह अपनी कटार से आत्म हत्या कर लेती है। उस अमुक ने उसी कटार से खुरशीद का काम तमाम कर दिया । खुरशीद के धराशायी होते ही एक पाकिस्तानी सैनिक ने उस जवान पर प्रहार कर दिया । जिससे युवक भी बाहुहीन होकर गिर पड़ा ।

प्यार से खुरशीद और युवक दोनों केकण्ठ सूख रहे थे। दो-नों पानी मांगते है। किन्तु वहां पानी देने वाला कोई भी नहीं था । खुरशीद घड़े के पास था उसने पानी पिया और उस युवक को भी पिला-

---

1-बीती-बातें-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-17

2-बीती-बातें - " " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-19

-था इसी बीच दोनों एक दूसरे को पहचान लेते हैं। युवक ख़ुरशीद का सहपाठी गुरूवचन सिंह था। गुरूवचन सिंह ने कहा:-

"अप्रैल के उस दिन की क्या याद है, जब हम दोनों अपने साथ अपनी छोटी बहन अमृतकुंवर को गोद में लिये जलियान वाला बाग में होने वाली एक मीटिंग में गये थे, जो रौलट एक्ट के विरोध में हो रही थी। x x x x x x x x जन्मभूमि की सेवा के लिये तमाम तरह के बांधनू बांधा करते थे, और कुछ कर गुजरने के लिये किसी विद्रोही दलकी खोज में भी थे।"[1]

4.3.7.3 खुरशीद ने गुरूवचन और उसकी सहोदरा अमृतकुंवर के प्राणों की जालियान वाले बाग काण्ड के दिन रक्षा की थी। गुरूवचन और अमृत खुरशीद को बहुत प्यार करते थे। जबसे खुरशीद डी.ए.वी. कालेज लाहौर पढ़ने चला गया था, तब से दोनों में विच्छेद हो गया था। खुरशीद आज अपने से स्वयं ही घृणा करने लगा और गुरूवचन से कहने लगा :-

"वह ख़ुरशीद जिसे तुम जानते थे वह मर चुका था। वह कांटों की राह पर चलने की कसम खाने वाला खुरशीद नहीं था। वह अपने प्राणों की तरह गुरूवचन और उसकी प्यारी बहिन अमृत को प्यार करने वाला खुरशीद नहीं था। खुरशीद ने अपने को रोटी के चन्द टुकड़ों के लिये उन्हीं के हाथ बेच दिया था, जिनको नेस्तनाबूद करने की उसने पहले कसम खाई थी। खुरशीद अपने वतन का दुश्मन था। वह इंसान से हैवान हो गया था, और अब तो आगे बढ़ते-बढ़ते शैतान हो गया है, x x x x x x x x x x x और शायद अब शैतान भी उसके सामने शरमा जायेगा।"[2]

4.3.7.4 खुरशीद ने अमृत कुंवर के बारे में गुरूवचन से पूछा। गुरूवचन ने बताया कि मैंने कल लाहौर से भाग चलने के बारे में उससे कहा था। लेकिन वह कहने लगी :-

"जान देने के बाद ही कोई भी मेरी लाश ले जा सकता है जिन्दा मुझे कोई ले नहीं जा सकता। हिन्दू स्त्रियाँ अपनी जान सदा हथेली पर लिये रहती हैं। वह मरना जानती हैं उनको अपनी अस्मत जान से भी ज्यादा प्यारी होती है।"[3]

1-बीती बातें - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 23
2- " " " " - 26-27
3- " " " " " - पृष्ठ - 28

वही हुआ भी :- "जिसको तुमने पकड़ा था और जिसने कटार अपने कलेजे में भोंग ली थी, वही अमृत ही तो थी ।"[1]

4.3.7.5 खुरशीद आत्मग्लानि में डूब गया और उसके प्राण पखेरू उसके निस्तेज शरीर को छोड़कर चल बसे । उसकी आंखे खुली थी मानों जैसे बीती बातों की स्मृति में सलग्न हो ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस धार्मिकता प्रधान राजनैतिक कहानी में खुरशीद द्वारा पश्चाताप एवं आत्मग्लानि द्वारा आदर्श की स्थापना की है ।

4.3.8 "स्नेह - बन्धन "[2]

4.3.8.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस कहानी में पाक सनिकों की भीषणता, कठोरता, नग्नता, भयावहता, वासनात्मकता का यथार्थ चित्रण किया है। वह हिन्दू स्त्रियों को पकड़-पकड़ कर उनकी इज्जत-आबरू से खेलते इन पिशाच आताताइयों, रक्तरंजित पाक सनिकों से छोटे बड़े स्त्री बच्चे अपाहिज बुजुर्ग कोई भी न बच सका । लेकिन स्नेह एक ऐसी चीज है कि वह ऊँच-नीच, छोटा-बड़ा, काला-गोरा के बन्धन से दूर होते हैं। असम्भव कार्य भी स्नेह के कारण सम्भव हो जाते हैं।

जुलेखा ने खिड़की से देखा कि एक पाक सैनिक टुकड़ी उसकी सहेली यमुना के घर का दरवाजा तोड़ने में संलग्न है। कुछ लोग फव्वारे से मिट्टी का तेल छिड़क रहे हैं और मशाल से आग लगा रहे हैं। उसके देखते ही देखते भीड़ अन्दर घुस गई। एक युवक एक बालिका को घसीटता हुआ बाहर लाया। उसने बहुत कोशिश के बाद पहचान लिया कि वह युवक उसका भाई अब्दुल्ला और वह लड़की यमुना थी ।

4.3.8.2 जुलेखा यमुना के बारे में सोचने लगी । धीमे-धीमे उसके मस्तिष्क में एक के बाद एक घटना आने लगी । पिछली साल जब मुझे चेचक निकली थी तब यमुना ने कहा था :-

---

1-बीती-बातें - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 29

2-स्नेह बन्धन-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-33

"जुलेखा तेरी पीड़ा तो मेरी पीड़ा है। दोस्त क्या छूत अछूत का विचार करते है। तेरे लिये अम्मा ने निर्माल्य भेजा है।जब से तू बीमार पड़ी है तव से वे देवी की पूजा कर रहीं है और आज यह निर्माल्य भेजा है कि मैं जाकर तेरे शरीर पर लगा आऊँ। इससे तुझे शान्ति मिलेगी।"[1]

यमुना ने उसी दिन अब्दुल्ला से कहा था:-

"भैया, क्या बहिन जुलेखा अकेले तुम्हारी ही है, तुम तो शाम को आते हो, अगर उसका सारा दिन तो हमारे घर में बीतता है। xx x x x x x x x भैया बहिन को तो भाई का आशीर्वाद चाहिये अहसान नहीं।"[2]

जुलेखा को इन यादों ने इतना बेसुध बना दिया कि वह और अधिक देर तक इन्तजार करती। उसने अपने मन को ही कोसा:-

"जुलेखा तेरा भाई शैतान हो गया है।"[3]

शर्मिन्दगी एवं आत्मग्लानि ने उसकी आँखे बन्द कर दीं। बाहर खड़े जवानों ने देखते ही कहा — "नहीं यह काफिर है, यह

"यह नजिस है, सुअर की तरह नापाक है। मेरी तलवार ठंडी हो गई है, इसके गर्म लहू में उसे नहलाने दो।"[4]

अब्दुल्ला अब भी उसे घसीटता जा रहा था। जुलेखा ने कहा :-

"जिसे तुम पकड़े हो वह यमुना नहीं वह मैं हूँ।"[5]

जुलेखा ने फिर कहा :-

"भैया यमुना को मेरे पास ले आओ नहीं तो x x x x x x x x x x x x x x x x।"[6]

1-स्नेह बन्धन-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-36
2-स्नेह बन्धन- " " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-37
3-स्नेह बन्धन - -प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृ0-37
4-स्नेह बन्धन - -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-37-38
5-स्नेह बन्धन - " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृ0-38
6-स्नेह बन्धन - " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-38

4.3.8.3 जुलेखा से अब ज्यादा न देखा गया उसने सोचा यमुना मेरी सहेली नहीं बहिन है बहिन की रक्षा करना मेरा धर्म है। उसकी नजर कमरे में रखे भाले पर पड़ी उसने उसे उठा लिया। सोच रही थी :-

"यमुना भी मेरी तरह इंसान है और वह भी तेरी ही भांति एक अवला है। तेरी बीमारी में तेरी रक्षा के लिये यमुना ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी। उसका बदला तेरा भाई इस प्रकार दे रहा है।"[1]

जुलेखा ने भाला फेंक ही दिया जिसने अब्दुल्ला को भेद कर धराशायी कर दिया। भाले के साथ-साथ वह भी खिड़की से कूंद पड़ी जमीन पर गिरते ही बेहोश हो गई। तीनों एक ही जगह पड़े थे।

4.3.8.4 जुलेखा की बेहोशी दूर हुई तो उसने यमुना को बहुत हिला-या डुलाया लेकिन उसने फिर भी आंखें न खोली। जुलेखा ने भाई की ओर देखा जो कह रहा था- जुलेखा :-

"यमुना महफूज तो है। मुझे अपने मरने का कोई गम नहीं है। मगर गम है तो बस यही कि तूने भी मेरा अविश्वास किया। उन शैतानों के पुंजे से छुड़ाने का और कोई रास्ता नहीं था। मैं उसको अपनी बीबी बनाने के बहाने से अपने घर ला रहा था। आखिर मैं भी तो इंसान हूँ। अगर तुझको भूल जाता तो यमुना को भी भूल जाता।"[2]

फौजी जवानों के एक दस्ते ने तीनों की लाशों को उठाकर निर्ममता से आग में फेंक दिया।

श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस राजनैतिक कहानी के माध्यम से शुद्ध प्रेम का चित्रण दिया है। जुलेखा अपनी सहेली की इज्जत को बचाने के लिये अपने ही सगे भाई की हत्या कर देती है। जबकि उसका भाई भी आदर्श मानव का पाठ पूरा करने जा रहा था लेकिन वह पूरा न हो सका। यह राजनैतिक कहानी है इसे अगर सामाजिक कहें तो अतिशयोक्तिम होगा।

- -

1- स्नेह बन्धन -प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 39

2- स्नेह बन्धन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -40-41

4.3.9 " उद्योग "।

4.3.9.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस कहानी में उद्योग पतियों के स्वार्थ पूर्ण विचार धाराओं को चित्रित किया है। जो अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिये सीधे साधे भारतीयों को कभी देश हित और कभी भोगविलास का रंग चढ़ा कर अपना कार्य पूरा करते है।

औद्योगिक संघ के नेता सर जगदम्बा प्रसाद, सदस्य पशुपति प्रसिद्ध उद्योगी श्री रामप्रसाद और मोती लाल (मिल मालिक) सभी पूँजीपति हैं। फिर भी अगर पूँजी का अभाव पड़ता तो अमेरिका और इंग्लैण्ड के पूँजीपति इनका साथ देने को तैयार रहते । यह लोग हर कीमत पर चुनाव जीतना चाहते हैं। चुनाव जीतने के लिये सर जगदम्बा प्रसाद "सर" उपाधि को बाधक समझते हैं इसलिये वह इसे छोड़ना चाहते हैं। क्योंकि उनके मतानुसार इसमें विदेशीपन व पूँजीपति की बू आती है

सर पशुपति के मतानुसार "सर" उपाधि संसार के पूँजीपतियों से मेल जोल बढ़ाने में सहायक है।[2]

मोतीलाल कहते हैं कि अंग्रेजी शासन में "रायबहादुर" या "सर" की उपाधि के लिये मैंने स्वदेशी होने का स्वांग भरा, जनता का विश्वास पाने के लिये तरह तरह के कार्य किये । कपड़ों के मूल्यों तक में कमी की थी ।

4.3.9.2 रामप्रसाद को "रायबहादुरी" का खिताब अंग्रेजों के शासन काल से ही मिल गया था चुनाव जीतने के लिये आपस में परस्पर विचार विमर्श चल रहा था। रामप्रसाद ने कहा :-

"इसमें कौन बड़ी बुद्धि सूक्ष्मता की जरूरत है। दुनियाँ में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो खरीदी न जा सकती हो । अंग्रेजीमें भी एक कहावत है कि हर एक व्यक्ति का कोई न कोई मूल्य होता ही है ।

1-उद्योग-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-47

2-उद्योग-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ - 48

अथार्थ पूँजी के द्वारा आप सब मनुष्यों को खरीद सकते हैं ।"[1]

मोती लाल इसके बारे में कहते है :-

"परन्तु यह तो कोई बुद्धिमत्ता का हल नहीं है। शतप्रतिशत गवारू है। × × × × × × यह तो शेख चिल्ली का प्रस्ताव है।"[2]

सर जगदम्बा प्रसाद सेठ रामप्रसाद की तरकीब को चुनाव जीतने के लिये अकाट्य मानते हैं :-

" हमको अपनी पूँजी के वल से कुछ ऐसे देश भक्तों को खरीद लेना चाहिये, जिनको लेकर हम चुनाव संग्राम में कूँद पड़ें और उनकी आड़ में हम यथार्थ युद्ध करें ।"[3]

4.3.9.3 इन पूँजीपतियों का मुख्य उद्देश्य कांग्रेस को विफल करना था। क्योंकि कांग्रेस इनकी दुश्मन थी जो इन्हें आगे नहीं बढ़ने दे रही थी । इतने में कांग्रेस के नौजवान आ जाते है और लेकतन्त्र जिन्दावाद, कांग्रेस जिन्दावाद, पूँजीपति का नाश हो आदि नारे लगाते हैं।

यह राजनैतिक कहानी है जिसकी कथावस्तु सामान्य है। इसमें पूँजीपतियों के स्वार्थ लिप्सा का वर्णन किया है । जो लोकतन्त्र की दुश्मन है । प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस कहानी के माध्यम से पूँजीपतियों के विलासमय, ऐश्वर्यपूर्ण जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं पूँजी के अभाव में निर्दोष व्यक्ति भी दोषी बन जाता है और दोषी निरपराधी हो जाता है । श्रीवास्तव जी ने यह समस्या अपने उपन्यास "विकास"[4] और "विसर्जन"[5] में भी उठाई है ।

1- उद्योग - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 48

2-उद्योग - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 48

3- उद्योग - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 49

4- विकास - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 126,33

5- विसर्जन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 68

4.3.10 "कांग्रेस जिन्दाबाद" ।

प्रस्तुत कहानी "कांग्रेस जिन्दाबाद" प्रतापनारायण श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत राजनैतिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से कहानीकार ने कांग्रेस की उपलब्धियाँ एवं कार्य कलापों का सम्यक वर्णन किया है।

4.3.10.1 रामप्रसाद का राशन की दूकान पर रोज-रोज जाना और वहाँ हर चीज का एक साथ उपलब्ध न होने से वह परेशान हो जाता है और वह इस परेशानी का कारण मात्र कांग्रेस को समझता है। रास्ते में काशीनाथ से मिलन होता है पारस्परिक वार्तालाप होने लगते हैं। बातों ही बातों में रामप्रसाद कहने लगते हैं कि जब से कांग्रेस की सरकार बनी है तब से देश में हर चीज का अभाव होने लगा है। इसी कांग्रेस ने देश का बटवारा किया है और पूँजीपतियों को बढ़ावा दिया हैं।

4.3.10.2 काशीनाथ कांग्रेस के भक्त है वह कहते हैं-नहीं, कांग्रेस ने तो देश को स्वतन्त्र कराया, राजा, महाराजाओं, जमींदारों का अन्त किया भारत का बहुमुखी विकास किया भुखमरी और अभाव को खत्म करने का कांग्रेस का संकल्प है, छुआ, छूत को दूर कांग्रेस ने किया । काशीनाथ कहते हैं :-

"साम्प्रदायिकता, धर्म, जाति, वर्ग के विचार, छुआछूत का आडम्बर, बड़े-छोटे का भेद देश को रसातल पहुँचाने वाले हैं। ये एकता के मार्ग के रोड़े हैं। इनको नष्ट करना ही कांग्रेस का ध्येय है, उसके कंठ की आवाज है, उसके हृदय का संकल्प है। कांग्रेस का साथ देना देश को प्रगतिशील बनाना है ।"[2]

रामप्रसाद अपनी भूल पर पश्चाताप करता हुआ कहता है :-

- -

1-कांग्रेस जिन्दाबाद-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ० - -57

2-कांग्रेस जिन्दाबाद- " " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ०- — 65

"सत्य है भाई बिल्कुल सत्य है। छोटी-छोटी कठिनाइयों से हमें घबड़ाना नहीं चाहिये हमको अपने ऊपर अपने परिश्रम पर विश्वास रखना चाहिये। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह मेरी भूल थी जो अपने थोड़े से आराम के लिये × × × × × × × × ।"[1]

4.3.10.3 कांग्रेस के कार्यों से अवगत होने पर काशीनाथ और राम प्रसाद दोनों एक साथ कांग्रेस जिन्दाबाद ! की ध्वनि करते हैं। "कांग्रेस जिन्दाबाद" कहानी की कथावस्तु सरल एवं सामान्य है। कथा की गति क्षिप्र है और उसका विकास सरल है ।

4.3.11 "लाल किला"[2]

4.3.11.1 अंग्रेजों ने भारत से जाते-जाते ऐसे विष बीज का विपन करके गये थे। जिसका प्याला भारत और पाक की भोली भाली जनता को पीना पड़ा । पाकिस्तान में हिन्दुओं को और भारत में मुसलमानों को दुश्मन समझा जाता था। इसीलिये उनको मौत के घाट उतार दिया जाता था । और उनकी सम्पत्ति को लूट लिया जाता था। मुसलमान भारत से पाकिस्तान और हिन्दू पाकिस्तान से भारत भाग रहे थे ।

यह कहानी भारत के उन मुसलमानों की है जो अमृतसर से लाहौर भाग रहे थे। उन्हीं में एक वृद्धा और उसका पुत्र इब्राहीम भी था रास्ते में सिक्खों ने गाड़ी पर आक्रमण कर दिया । इतने में ही एक फौजी दस्ता वहाँ पहुँच जाता है और वह यात्रियों की मदद करता है। इनको लाहौर न भेजकर दिल्ली भेज दिया जाता है ।

4.3.11.2 वृद्धा सिखों द्वारा खून खराबे को देखकर बेहोश हो गयी थी दिल्ली पहुँचने पर होश आया । इब्राहीम ने कहा माँ यह दिल्ली है :- "जिसे तुम हमेशा याद करती थी ।"[3]

1- कांग्रेस जिन्दाबाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 65

2-लालकिला-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-71

3-लालकिला - " " " -प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृ0-74

वृद्धा ने कहा :--

"बेटा ! अब मेरा आखिरी वक्त नजदीक है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं कुछही लमहों की मेहमान हूँ ।"[1]

और कहती है :-

"बेटा देखो यही लाल किला है। तुम्हारे नाना बहादुरशाह का किला है, जहाँ से वे गदर में निकले और फिर वापिस नहीं जा पाये । यह देखों जहाँ अंग्रेजी झण्डा फहरा रहा है वहाँ कभी मुगलों का झण्डा बड़ी शान शौकत से झूम-झूम कर हवा की हिलोरों से हिला करता था ।"[2]

4.3.11.3 इब्राहीम कहता है अम्मा अब अंग्रेज भारत छोड़कर चले गये हैं। लेकिन वह हिन्दू और मुसलमानों को एक दूसरे का दुश्मन बना गये है।वृद्धा भी अंग्रेजों के बारे में बुरा भला कहती है। वृद्धा इब्राहीम को उसके जीवन इतिहास के बारे में बताती है :-

"बेटा जीनत महल तुम्हारी सगी नानी थी।बादशाह सलामत ने जब भागकर हुमायूं के मकबरे में आकर पनाह ली थी। उस वक्त मैं दुनिया की तमाम कमबख्तियों लिये हुये पैदा हुई थी। ××××× ×××× मेरी इस बच्ची को ले जाओ और पाल-पोष कर बड़ा करो अगर हमारे दिन फिरे और लाल किले में दुबारा आने का मौका मिला तो तू इसको मेरे पास ले आना । ××××× वह नमक हलाल बांदी मुझको अपनी छाती से चिपकाये हुये जंगल की ओर निकल भागी ।"[3]

बस तब से उस कनीज ने हमे पाल पोसकर बड़ा किया बड़ा होने पर मेरा निकाह एक अभागे तैमूरी खानदान के युवक से कर दिया ।तुम्हारे वालिद रिक्शा चलाते थे। वृद्धा ने अपने अभागे भाग्य की पूरी कहानी इब्राहीम को रोते-रोते सुना दी। इब्राहीम कहता है कि अम्मा मैं अंग्रेजों से बदला लूँगा। वृद्धा कहती है कि अंग्रेजों से बदले का सिर्फ एक ही रास्ता है कि उनकी लगाई हुई आग को बुझादों ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रणीत यह कहानी राजनैतिक कहानी है । कथावस्तु इतिहास सम्मत है ।

1-लाल किला - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 74

2-लाल किला - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 75

3-लाल किला - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 76-77

4.3.12 " सन्ध्या के अन्धकार में ".[1]

4.3.12.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव की "सन्ध्या के अन्धकार में" कहानी प्रेम और वलिदान की कथा है। कहानी में प्रिय के प्रति असीम प्यार लिये प्रेमी हृदय की विवस कथा है। पति प्राणा पत्नी के प्रति सात्त्विक भक्ति भी यहां प्रखरता से व्यक्त हुई है।

कश्मीर के सघन वनों में एक युवती काले बुरके को ओ-ढ़कर रात्रि के अन्धकार में अपने पति की याद में उनकी कब्र पर दीपक जलाने जाती है। और उनकी आत्मा की शान्ति के लिये फात्हा पढ़ती है

4.3.12.2 अचानक एक दिन उसे एक सैनिक दिखाई देता है जिसे देखते ही देखते वह रिवाल्वर निकाल लेती है। और उसे आगे बढ़ने से रो-कती है। बन्दूक हमें दे दो - "मैं दुश्मन नहीं दोस्त हूँ।"[2]

सैनिक ने कहा जब तक मैं जिन्दा हूँ तव तक मैं किसी को बन्दूक नहीं दे सकता। युवती धीरे-धीरे उसके पास पहुँच जाती है। और सीने पर रिवाल्वर तान देती है। युवक एक ऐसा झटका देता है कि उसकी रिवाल्वर नीचे गिर जाती है, सैनिक उसे उठा लेता है। जैसे ही युवक उसको पकड़ता है तो उसे लगता है कि वह युवक नहीं युवती है।

युवती कहती है - "कौन! उसमान भाई।"

प्रहरी ने भी विस्मित कंठ से कहा -"हां, मेरा नाम रहमान किन्तु आप

× × × × × × × × × × × × × × × × × ×

× ×

"मैं समरया हूँ, उसमान भाई।"[3]

1-संध्या के अनधकार में -प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 85

2- संध्या के अन्धकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 87

3- संध्या के अन्धकार में - नवयुग कहानी संग्रह -प्रतापनारायण श्रीवास्त-व -पृष्ठ - 88-89

पारस्परिक वार्तालाप के दौरान युवती उसे बताती है कि — "भाईजान तुम सोचते होगे कि सूरया पागल हो गई है। ऐसी परि-स्थिति में मुझे जो कोई भी देखेगा, उसका यही ख्याल होगा । जानपर खेलकर सबसे छिपकर आने का एक सबब है।

सैनिक सूरया से कहता है कि यह सब आज तक मुझे क्यों नहीं बताया । सूरया कहती है :-

"इन अफ़्रीदियों ने मेरा सब कुछ बरबाद कर दिया । इधर वालिद के घर को बुझा दिया और उधर मेरी जिन्दगी पाभाल कर दी है ।"[1]

4.3.12.3 सूरया ने उसमान को अपने खाविंद की कब्र बताई और उससे सगाई का पूरा किस्सा बयान किया । वह कहती है कि :-

"हिन्दुस्तान की आजादी लूट, खसोट, खुरेंजी, कहर और जिना का तूफान लिये हुये आयेगी, जिसमें इन्सान एक बारगी शैतान से भी ज्यादा खूँखार, बेदर्द और खौफनाक हो जायेगा। जिसमें इन्सान शैतान से भी बढ़ जायेगा । इन्सान खुदा को भूल गया । दीन और ईमान को भूल गया । यहां तक अपने आप को भूल गया था। और अपनी ही बहु-बेटियों के साथ किये गये वर्ताव से शैतान को शरमा रहा था ।"[2]

सूरया का मंत है कि हिन्दू और मुसलमान खुदा के दो अंग हैं उन्हें आपस में नहीं लड़ना चाहिये । उसी समय मेरे घर में कुछ हि-न्दू थे । हमारे वालिद साहब बीमार थे मेरे भाई स्वस्थ थे। कुछ जवा-नों ने आकर मेरे घर को घेर लिया । मैं, मेरा भाई उन से भिड़ गये । लेकिन एक सैनिक ने चम्पी को उठा लिया और भाग निकला । मैने उसका पीछा किया और इसी रिवाल्वर से उसके घोड़े को घायल कर दिया । चम्पी घोड़े से गिरते ही बेहोश हो गई और वह लुटेरा तलवार लेकर मेरी ओर झपटा मैंने उस पर रिवाल्वर चला दी । घोड़े से उतरकर देखा तो पता चला कि वह मेरा मंगनी शुदा खाविन्द था। कहते -कहते रोने लगी । आज इनका चालीसमां था इसलिये फात्हा पढ़ने के लिये आयीथी ।

1- सन्ध्या के अन्धकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-90

2- सन्ध्या के अन्धकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 94

उसमान ने गम्भीर स्वर में कहा :-

"बहिन मैं भी तेरा साथ दूँगा । उसकी रूह को बख्श-ने के लिये खुदा से दुआ माँगूगा । "[1]

"संध्या के अन्धकार में" एक ओर तो हिन्दू मुस्लिम एकता दूसरी ओर "नारी सुलभ हृदय" तीसरी ओर "असीम पति प्रेम" ये सब ऐसे त्रिकोणात्मक तथ्य हैं जो एक दूसरे के विपरीत होकर भी मिले हुये हैं। यह राजनैतिक पृष्टि भूमि पर वर्णित कहानी है। कहानी में कहीं भी नीरसता और अस्थिरता नहीं आने पायी है।

4.3.13 "पन्द्रह अगस्त के दिन" [2]

4.3.13.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत "पन्द्रह अगस्त के दिन" कहानी की कथा दो खण्डों में विभक्त है, एक नूरी उर्फ नूरून्निसा का जीवन इतिहास और दूसरा हिन्दू और मुसलमानों का देश के बटवारे को लेकर आपसी झगड़ा दोनों ही घटनायें अत्याधिक मार्मिक एवं हृदय स्पर्शी बन पड़ी हैं। जिससे पूरी कहानी रोचक एवं सन्तुलित है ।

नूरी उर्फ नूरून्निसा अपने पिता के पास बैठी । वृद्ध जो नूरी का पिता है वह उसे उसके बारे में बताता है। कि वह कौन है-

"आज से 90 वर्ष पूर्व तैमूर वंश के आखिरी बादशाह शहन्शाह बहादुरशाह थे। जिस दिन मैं पैदा हुआ था उस दिन मेरे दादा बहादुरशाहनेदोनों हाथों से इतना धन बाँटा कि गरीब अमीर हो गये और भिखमंगे और कंगाल निहाल हो गये । लेकिन उन्हें क्या पता था कि उनका पोता उनके खानदान के लिये तकलीफ और मौत, हैरानी और परेशानी का पैगाम लाया है।

"हिन्दू और मुसलमान दोनों कन्धे से कन्धा भिड़ाकर आजादी के लिये लड़ाई के मैदान में कूँद पड़े। मेरे बूढ़े दादा बहादुरशाह

1-संध्या के अन्धकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 100
2-पन्द्रह अगस्त के दिन -नवयुग कहानी संग्रह - प्रतापनारायण श्रीवास्त-व -पृष्ठ - 103

भी अपनी तलवार सूंतकर आजादी के रण वाकुरों के नेता बन कर अंग्रेजों को ललकार कर उनसे लोहा लेने लगे । एकवार फिर तैमूर तलवार अपनी तवारीख बनाने लगी और उसके साये के नीचे एक वार फिर पूरब, पश्चिम उत्तर, दक्षिण के नौजवान सिमट कर आ गये और उन्होंने अंग्रेजो की हुकूमत खत्म करदी । हिन्दू और मुसलमान उन दिनों बेटी, दो जिस्म और एक जान थे ।"1

4.3.13.2 अंग्रेजों ने हिन्दू और मुसलमानों को एक दूसरे का दुश्मन बना दिया। लेकिन एकवार फिर अंग्रेजी भाग्य का सितारा चमका और इन्होंने लाल किले पर अधिकार कर लिया । उसी समय मेरी माँ ने भागकर लाहौर की शरण ली । वहीं पर मेरी परवरिश हुई। जब मैं 14 साल का था तब दुनिया से मेरी माँ चल बसी । तबसे मैं बराबर लोगों के द्वारा तिरस्कृत और अपमानित होता रहा । 40 वर्ष के वाद मैने अपना विवाह किया और एक छोटी सी दुकान कर ली ।जिस साल तूने जन्म लिया उसी साल तेरी माता का स्वर्गवास हो गया और अन्त में मन्सूर अली से तेरी शादी कर दी अब पता चला कि तू किसकी बेटी है।

4.3.13.3 नूरी के पिता वृद्ध उर्फ वुलन्द अखतर कब्रिस्तान पर एक झोपड़ी में रहते थे । वहां आज नूरी भी थी । मंसूर अली पाकिस्तान गये हुये थे । नूरी हाहाकार, मारकाट की पैशाचिक ललकार, अवलाओं का चीत्कार, अभागे बच्चों पर बज्र प्रहार इस कल्पनातीत नर संहार को देखते वह बेहोश हो गयी ।

वृद्ध इसभंयकर मानव संघर्ष को रोकने को उद्धृत होते हैं :—

"मुझे जाने दे जितनी जल्दी इस मार काट को, शैतान के नाच को, रोक सकूँ उतना ही अच्छा है। xxxxxxxxx मैं दर-दर का मोहताज हूँ, बूढ़ा हूँ, ताज और ताकत और फौज से महरूम हूँ मगर ~~फिर~~

1-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 105-106

भी बहादुरशाह का पोता तख्ते मुगलिया का वारिस, हिन्दुस्तान का रहवर और हिन्दू मुसलमानों के इतिहास की जड़ सींचने वालों का आखिरी निशान हूँ। भाई-भाई का खून करते मैं हरगिज बदराश्त नहीं कर सकता।[1]

4.3.13.4 वृद्ध ने मुसलमानों की एक भीड़ को देखा । और उन्हें ऐसा करने से रोका तो एक ने सहास्य कहा:-

"शाह साहब पागल हो गये, बुढ़ापे में आदमी को जनून हो जाता है ।"[2] ---- दूसरे ने कहा -

"मारो हटाओ, वक्त बरबाद करने मत करो। काफिरों का खून करो और उनकी दौलत पर कब्जा करो ।"[3]

तीसरे ने कहा :--

"हिन्दू औरतों को बेचने से गहरी रकम हाथ लगेगी।"[4]

इस टुकड़ी का सरदार वृद्ध का जमाता यानी नूरी का पति मंसूर अली था । मन्सूर अली ने वृद्ध और नूरी को घर जाने को कहा । किन्तु वह न माने ।

4.3.13.5 मौलवी ताज मुहम्मद ने चिल्लाकर कहा:-

"हदीस में मर्द और आका की मुखालफत करने वाली औरतों को सूली पर चढ़ाने का हुक्म है। मन्सूर अभी इसी वक्त इसको तलाक देकर अपना पल्ला पाक करो ।"[5]

वृद्ध ने कहा अगर तुमको अपने मन की करनी है तो पहले मेरे ऊपर तलवार चलाओ। मौलवी ताज मुहम्मद ने गरज कर कहा:--

"मन्सूर क्यों देर करता है, मार इस दगावाज को पहले औलिया और पीर बना और आज बहादुरशाह का पोता बनता है। अगर गिरोह की सरदारी तुम करना चाहते हो तो पहले अपनी तलवार से

1-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 113

2-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 113

3-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 118

4-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 118

5-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 118

इन्हीं काफिरों के कुत्तों को रास्ते से साफ करों जो भौंक कर हमें डराते है ।"[1]

4.3.13.6 इसके वाद अल्ला हो अकवर ! पाकिस्तान जिन्दा-वाद !! का नारा लगाया और विगुल के वजते ही मन्सूर ने उस वृद्ध के सिर को धड़ से अलग कर दिया । वृद्ध के गिरते ही नूरी अचेत होकर उसी शव पर गिर पड़ी । जिसे सैनिकों की भीड़ रौंदती हुई आगे बढ़ गई ।

"पन्द्रह अगस्त के दिन " कहानी 15 अगस्त 1947 की एक मर्मस्पर्शी घटना का चित्रण है। जिसे पढ़कर पाठक में देश हित की भावना का प्रादुर्भाव होता है। अमर कथा शिल्पी प्रतापनारायण श्रीवा-स्तव जी ने इस कहानी के माध्यम से अंग्रेजों के कुकृत्यों को भी प्रकाशित किया है वल्कि एक देश भक्त का भी उचित और सम्यक चित्रण किया है। वास्तव में देश भक्त तो वह है जो देश के लिये अपने प्राणों तक की आहुति हंसते हुये देते हैं। ऐसे लोग देश हित के लिये ही जीते हैं और देश हित के लिये ही मरते हैं। बुलन्द अखतर का चरित्र एक सुन्दर देशभक्त का उदाह-रण है ।

समग्रतः "पन्द्रह अगस्त के दिन" कहानी एक सशक्त और सफल रचना है और कहानीकार प्रतापनारायण श्रीवास्तव की साहि-त्यक प्रतिभा का सफल परिचायक है ।

4.3.14 "शासन का वरदान"[2]

4.3.14.1 अधुनातन सामाजिक यथार्थ का चित्रण करके प्रताप-नारायण श्रीवास्तव ने "शासन का वरदान" नामक कहानी के उद्देश्य में जान डाल दी है। यद्यपि भले ही कहानी का वातावरण नया नहीं है, पर "शासन का वरदान" शीर्षक पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप ने उद्देश्य में नितान्त मौलिकता का समावेश कर दिया है ।

1- पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 120

2-शासन का वरदान-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-121

इन्हीं काफिरों के कुत्तों को रास्ते से साफ करों जो भौंक कर हमें डराते है ।"[1]

4.3.13.6 इसके बाद अल्ला हो अकवर ! पाकिस्तान जिन्दा-वाद !! का नारा लगाया और विगुल के वजते ही मन्सूर ने उस वृद्ध के सिर को धड़ से अलग कर दिया । वृद्ध के गिरते ही नूरी अचेत होकर उसी शव पर गिर पड़ी । जिसे सैनिकों की भीड़ रौदती हुई आगे बढ़ गई ।

"पन्द्रह अगस्त के दिन " कहानी 15 अगस्त 1947 की एक मर्मस्पर्शी घटना का चित्रण है। जिसे पढ़कर पाठक में देश हित की भावना का प्रादुर्भाव होता है। अमर कथा शिल्पी प्रतापनारायण श्रीवा-स्तव जी ने इस कहानी के माध्यम से अंग्रेजों के कुकृत्यों को भी प्रकाशित किया है वल्कि एक देश भक्त का भी उचित और सम्यक चित्रण किया है। वास्तव में देश भक्त तो वह है जो देश के लिये अपने प्राणों तक की आहुति हंसते हुये देते हैं। ऐसे लोग देश हित के लिये ही जीते हैं और देश हित के लिये ही मरते हैं। बुलन्द अखतर का चरित्र एक सुन्दर देशभक्त का उदाह-रण है ।

समग्रतः "पन्द्रह अगस्त के दिन" कहानी एक सशक्त और सफल रचना है और कहानीकार प्रतापनारायण श्रीवास्तव की साहि-त्यक प्रतिभा का सफल परिचायक है ।

4.3.14 "शासन का वरदान"[2]

4.3.14.1 अधुनातन सामाजिक यथार्थ का चित्रण करके प्रताप-नारायण श्रीवास्तव ने "शासन का वरदान" नामक कहानी के उद्देश्य में जान डाल दी है। यद्यपि भले ही कहानी का वातावरण नया नहीं है, पर "शासन का वरदान" शीर्षक पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप ने उद्देश्य में नितान्त मौलिकता का समावेश कर दिया है ।

1- पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 120
2-शासन का वरदान-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-121

"जुम्मन का मां" नसीवन अर्थात मौलवी नसीरखां की पत्नी और फातिया तीनों पड़ोसिन है। "जुम्मन की अम्मा" की मुर्गी नसीवन के घर घुस जाती है वह उसका उलाहना देने उसके घर जाती है। इन दोनों की बातों को सुनकर फातिमा भी आ जाती है और दोनों को अलग-अलग कर देती है।

फातिमा बताती कि जुम्मन अम्मा चुनाव होने वाले है। नसीवन कहती है कि जुम्मन की अम्मा को दुनिया से कुछ मतलब ही नहीं, यह तो सिर्फ दूकान के बारे में जानती है। "जुम्मन की अम्मा" को वोट का मतलब ही नहीं जानती वह सीधी साधी सब्जी बेचनी जानती हैं।

4.3.14.2 फातिमा उन्हें बताती है कि वोट के द्वारा हम अपने मन का नेता चुन लेते हैं। जो हमें जुल्मों से बचाये और हमारे लिये रोटी, कपड़ा दे सके।

"जब तक कांग्रेस जिन्दा है, तब तक कोई किसी पर जुल्म नहीं कर सकता। हिन्दू और मुसलमान दोनों उनकी आंखें है। × × × × × × × × × × × × × × × हम लोग तो एक चने की दो दालें हैं। × × × × × × × × × × × × × चाहे हिन्दू हो चाहे मुसलमान दोनों एक ही कुनबे के भाई-भाई की तरह रहेंगे और दोनों ही हुकूमत करेंगे।"[1]

जुम्मन की मां कहती है :-

"मैं भी अपना वोट कांग्रेस को दूंगी। मियां से भी उन्हीं को वोट दिलवाऊँगी।"[2]

4.3.14.3 फातिमा कहती है मेरा तो मन इन जुलूस वालों के साथ घूमने का होता है। मगर क्या करूं परदे से मजबूर हूँ। नसीवन भी परदा प्रथा का विरोध करती है :-

"मुझे भी कहाँ अच्छा लगता है। मगर क्या करूँ खानदानी रिवाज की वजह से मजबूर हूँ।"[3]

इसी समय कांग्रेस का जुलूस आ जाता है।

1-शासन का वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -127-128
2-शासन का वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 129

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इस राजनैतिककहानी में जिसकी कथा सामान्य है। जिसमें किसी विशेष घटना, स्थान या भाव का चित्रण भले ही न किया हो किन्तु अन्त में परदा प्रथा का विरोध मौलवी साहब की वीवी नसीवन और फात्मा से कराकर आपने स्त्री स्वतन्त्रता को बल दिया है। जो समाज में स्वच्छन्द होकर भ्रमण करना चाहती है मगर पुराने बन्धन उसे ऐसा करने से मना करते हैं।

4.3.15 " पूर्वजन्म का प्रेम " ।

4.3.15.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रणीत "पूर्वजन्म का प्रेम" सामाजिक राजनैतिक कहानी है।कहानी का संक्षिप्त सार इस प्रकार है --

सिद्धेश्वर मेरठ के जमीदार बाबू सुरजन सिंह का पुत्र है । एक बार पुलिस ने उसे अपने जाल में फांस कर राजविद्रोह की 124 वीं0 धारा में गिरफ्तार कर जेल भेज देती है । बाबू मथुरासिंह उस जेल के सुपरिन्टेन्डेण्ट है। सुपरिन्टेन्डेण्ट साहब के यहां कैदी ही घर की सफाई करते और कूड़ा कर्कट फेंकते । एक दिन यह कार्य सिद्धेश्वर को करने को कहा जाता है। जिसे वह अस्वीकार कर देता है। जमादार अब्दुल्ला उसे बहुत पीटता है। कभी हाथों से और कभी बूटों से । वह वेहोश होकर जमीन पर गिर जाता है मगर झाडू देने को तैयार नहीं होता ।

4.3.15.2 सुपरिन्टेन्डेण्ट साहब की पुत्री यमुना अब्दुल्ला इस कुकृत्य को देखकर उसे मना करती है। और अपनी मां से कहती है क्या आज कूड़े का उठना बहुत जरूरी है, कल उठ जायेगा । फिर भी अगर आप नहीं मानती तो आज मैं बुहारी दे दूँगी । लेकिन उस कैदी को जाने दो । यमुना की मां ने जब सिद्धेश्वर की तरफ देखा तो सकपका कर रह गयी और अब्दुल्ला को चले जाने को कहा । अब्दुल्ला के जाने के वाद यमुना की मां ने उसे चौकी पर जाने को कहा । लेकिन वह नीचे ही बैठ गया वहीं यमुना और उसकी मां भी बैठ गयी यमुना की मां ने सिद्धेश्वर से उसकी शिक्षा-दीक्षा, माता-पिता,

---

1-पूर्वजन्म का प्रेम-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-हिन्दी मनोरंजन, "अप्रैल1925 ई0" — पृष्ठ - 352

भाई-बहिन आदि के बारे में पूर्ण जानकारी की । अब सिद्धेश्वर को सुपरिन्टेन्डेण्ट साहब और उनके परिवार की ओर से इतना आराम दिये गये कि जैसे किसी अतिथि का सत्कार, वैसा ही सिद्धेश्वर का होने लगा । अब आराम-दायक बिस्तर, अच्छा भोजन और किताबें आदि पढ़ने को मिलने लगी । यमुना सिद्धेश्वर को प्रेम करने लगती है । यमुना की माँ और बाबू मथुरासिंह ने सिद्धेश्वर को यमुना के उपयुक्त वर समझा । बाबू मथुरा सिंह ने मथुरा जाकर सिद्धेश्वर के पिता और परिवार जनों से सिद्धेश्वर की शादी पक्की कर ली।और जेल से रिहा होने पर दोनों की शादी कर दी गयी । सिद्धेश्वर ने यमुना से कहा कि तुम ने हमें पिटते देखकर बचाने की कोशिश क्यों की थी। तब उसने कहा :-

"मैं एक हिन्दू नारी हूँ, कि उस जन्म में भी तुम ही मेरे स्वामी थे और मैं तुम्हारी दासी थी, पुराने प्रेम ने जोश मारा था।"[1]

4.3.15.3 "पूर्वजन्म का प्रेम" अंश की कहानी का चरम बिन्दु है। अस्तु कहानी का शीर्षक सर्वथा उपयुक्त और प्रभावपूर्ण है। भाषा और शैली सरल, सुबोध और पात्रानुकूल है। समग्रत: "पूर्वजन्म का प्रेम" कहानी वस्तु और शिल्प की दृष्टि से पूर्ण सफल है ।

4.3.16 " स्वदेशिनी "[2]

4.3.16.1 बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने घटनाओं के आधार पर कहानियों के कथानकों का निर्माण किया है । कहानियों के माध्यम से प्रगतिशील विचार धारा को अभिव्यक्ति मिली है। "स्वदेशिनी" सामाजिक कहानी है। जिसके माध्यम से प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने ऐसी विधवाओं के पुनः विवाह को ही उचित उदोहराया है, जो अपने वैधव्य को संसर्ग ही न हुआ हो । इस कहानी का कथानक ऐसा ही है।

रामनाथ न्यूयार्क में पढ़ता है। वहाँ उसका प्रेम न्यूयार्क के बड़े सम्भ्रान्त और धनी मिस्टर जेम्स बेडसा की इकलौती बेटी मिस एलिनर से हो जाता है। मिस एलिनर और रामनाथ में खूब पटती है।लेकिन एक बार

1- पूर्वजन्म से प्रेम - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 365

2-स्वदेशिनी-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-हिन्दी मनोरंजन, फरवरी-1926-पृष्ठ-274

दोनों में केसूडर और सारसेन राजकुमारी की पोशाक को लेकर वार्तालाप होता है। अन्त में बात बढ़ते-बढ़ते शादी तक पहुँच जाती है वह रामनाथ के साथ शादी करने से इन्कार कर देती है ।

"क्या आप स्वप्न में भी अनुमान कर सकते हैं कि एक अमेरिकन बाला एक इण्डियन के साथ विवाह करेगी ।"

यह कहकर वह वायु वेग से कमरे सेकनिकल जाती है। एलिनर कई वार नाराज हुई थी। लेकिन इस तरह कभी नहीं । रामनाथ हताश होकर देखते रह जाते हैं ।

4.3.16.2 उमानाथ रामनाथ का मित्र है। उमानाथ की बहिन प्रियम्वदा का राधाकान्त के साथ विवाह हुआ था। राधाकान्त की विवाह के बाद कालरा से मृत्यु हो जाती है। प्रियम्वदा ने अपने स्वामी को प्रथम सम्मिलन की रात को ही देखा था इसके वाद वह अपने माता पिता के घर आकर रहने लगी । प्रियम्वदा के पिता उसका पुर्नः विवाह करना चाहते थे किन्तु वह काल कलवित हो गये । यह कार्य वह अपने पुत्र उमानाथ को सौंपकर गये थे ।

उमानाथ की पत्नी करूणा प्रियम्वदा को बाहर आने, जाने और लोगों से मिलना जुलना सब बन्द कर रखा था । वह कहती थी कि विधवा को यह कार्य नहीं करना चाहिये । जबकि उमानाथ का विचार इसके विपरीत थे । उमानाथ नई रोशनी के प्राणी थे । प्रियम्वदा और उमानाथ के मत एक थे इसीलिये भाई बहिन में प्रेम भी ह्रित था।

4.3.16.3 मिस एलिनर के रूष्ट हो जाने से रामनाथ को न्यूयार्क में अच्छा नहीं लगता है और वह भारत वापिस आ जाता है उमानाथ कि मिलने के लिये रामनाथ उसके घर जाता है। वहांउमानाथ की बहिन प्रियम्वदा जलपान लेकर आती है। प्रियम्वदा को देखकर रामनाथ उसमें मिस एलिनर को पाते हैं। और वह उस पर आसिक्त हो जातेहैं। घर जाकर रामनाथ अपने मित्र वृजकिशोर को प्रियम्वदा के वारे में वताते है और उसके साथ शादी करने का प्रस्ताव भी प्रस्तुत करते हैं/वृजकिशोर के प्रयास से प्रियम्वदा और रामनाथ की शादी हो जाती है। एक दिन रामनाथ प्रियम्वदा से कहता है कि मैने शादी तुमसे इसलिये नहीं की, कि तुम मेरी प्रेमिका एलिनर जैसी हो वल्कि इसलिये की कि तुम्हारा हृदय उसके समान कलुषित नहीं है।

उसका हृदय विदेशी था और तुम्हारा स्वदेशी है इसीलिये तुम उससे बहुत अच्छी हो ।

संक्षेप में कह सकते है कि "स्वदेशिनी" कहानी अत्यन्त सरल औत्सुक्यपूर्ण सोदेश्य, प्रभावपूर्ण मनोरंजक है । प्रस्तुत कहानी श्रीवास्तव जी की कहानियों में प्रमुख स्थान की अधिकारिणी है।

4.3.17 "रक्त अर्ध "[1]

4.3.17.1 "रक्त अर्ध" प्रतापनारायण श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत राजनैतिक सामाजिक कहानी है। कहानी का कथानक सीधे-सादे ढंग से विकसित हुआ है साथ ही कहानी का मनुष्य के मनोभावों और मनोवृत्तियों के सूक्ष्म प्रकाशन का भी प्रयास किया गया है।

गंगाधर उर्फ पंडित जी मां काली के पुजारी है। जो भीरू प्रवृति के होने के कारण मन्दिर का दरवाजा बन्द रखते है कि कहीं आतताई (मुसलमान) आकर देवी की दुर्गति न कर दें। एक पगली जिसका नाम पद्मा था वह आकर पंडित जी से कहती है कि आप भीरू हैं। जोइस तरह छिप कर बैठे हैं। प्रतियोत्तर में पंडित जी कहते हैं कि हम भीरू नहीं हैं, हम ब्राहमण हैं लड़ नहीं सकते पद्मा कहती है :-

"जो पुजारी अपने इष्ट देव की रक्षा नहीं कर सकता वह यथार्थ पुजारी नहीं है। ब्राहमण पुजारी होने की अपेक्षा पासी या चमार पुजारी होते तो इससे कहीं अच्छा था, क्योंकि उनकी भुजाओं में बल तो होता, जिससे के उनकी रक्षा कर सकते ।"[2]

4.3.17.2 पुजारी एवं पुजारी के मित्रगण नन्दराम, रामकृष्ण एवं मुरलीधर पद्मा को दुर्दिनों में भी पूजा करते देखकर उसके साहस की व्यंग्य भरी प्रशंसा करते हैं। लोगों ने उसे पगली की संज्ञा देदी थी । वह दिन भर गाती और अपनी रक्षा के लिये कटार अपने पास रखती थी ।

1-रक्त अर्ध-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-हिन्दी मनोरंजन, अप्रैल- 1926-पृ0-389
2-रक्त अर्ध-प्रतापनारायण श्रीवास्तव- " " " " -पृ0 -390

पद्मा देवी की शक्ति में विश्वास रखती थी । एक बार पंडित जी के मित्रगण नन्दराम और रामकृष्ण के सामने उसने देवी माँ के मन्दिर में प्रतिज्ञा की, कि मैं किसी आताताई के वक्षस्थल का रक्त और मुण्डलेकर ही मन्दिर में प्रवेश करूंगी ।

4.3.17.3 पंडित गंगाधर का घर मन्दिर में हीथा। पंडित जी की धर्मपत्नी का नाम चण्डी था । चण्डी चण्डिका की तरह ही तेजोमय थी। एक दिन पंडित जी के यह कहने पर कि देवी, देवताओं की ये पत्थर की मूर्तियाँ वास्तव में पत्थर की ही हैं।:- "इनमें शक्ति नाम को नहीं है ।"[1]

वह कहती है ऐसा नहीं हुआ है"हमनिर्वीय हो गये हैं ।"[2]

पंडित भीरू नहीं थे लेकिन उन्हें रत्नाकर और विनोद नन्हे-नन्हे बच्चों का प्रेम और पत्नी का मोह ही उन्हें भीरू और कायर पुरूष बनाये हुये था। एक दिन चण्डी को पंडित जी के भीरूपन के कारण का पता लगता है। तो वह उनके रास्ते के इन अवरोधकों को हटाने के लिये तत्पर हो जाती है किन्तु इसी बीच बरामदे से रत्नाकर के चिल्लाने की आवाज सुनायी पड़ती है।दोनों जाकर देखते हैं कि रत्नाकर के कलेजे में छुरा घुसा हुआ है तथा वह पूरी तरह लहुलुहान चित पड़ा है यह देखकर उनकी आँखे पथरा गईं। चण्डी ने पंडित जी से कहा कि अगर अब और अधिक हिचकोगे तो विनोद का भी अन्त समझो । पंडित जी आताताइयों का सामना करने के लिये झपटने लगे और फिर क्या था वह पागलों की तरह आताइयों पर आक्रमण करने लगे और उनके सिरों को काट-काटकर मन्दिर में एकत्र करने लगे । तब पूरे 109 हो गये तव पंडित जी ने चण्डी पाठ किया और नर मुण्डमाला देवी को चढ़ाई। पगली (पद्मा) ने रक्त अर्ध चढ़ाया।

इस कहानी के माध्यम से प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने यह स्वीकार किया है कि धर्म के मार्ग में अग्रसर होने के लिये हमें कितनी ही बहुमूल्य वस्तु की आहुति देनी पड़े देना चाहिये लेकिन धर्म से न तो विलग होना चाहिये और न जीते जी उस पर आंच आनी चाहिये । पंडित और चण्डी के मनोभावों की मार्मिक अभिव्यक्ति कहानी का विषय है ।

1- रक्त अर्ध - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 393

2- रक्त अर्ध - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 394

4.4 प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियों का वर्गीकरण

प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियों को निम्न रूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है - 1- सामाजिक कहानियाँ 2- राजनैतिक कहानियाँ 3- मनोवैज्ञानिक कहानियाँ 4- ऐतिहासिक कहानियाँ ।

4.4.1 सामाजिक कहानियाँ

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपनी अधिकांश कहानियों के माध्यम से मध्यम वर्ग की अभावग्रस्तता, संवेदनाओं एवं विसंगतियों का चित्रण किया है इस सन्दर्भ में कुछ विशिष्ट कहानियों की चर्चा की जा सकती है। ये कहानियाँ हैं-लालसा आशीर्वाद, लाल किला, स्नेह बन्धन, तीज की साड़ी, शेष-संबल, कलंक, पूर्वजन्म से प्रेम, रक्त अर्ध, स्वदेशिनी आदि । आशीर्वाद कहानी का कथानक एक निर्धन परिवार की दर्द भरी करूण कथा से परिपूर्ण है। मध्यमवर्ग अपनी सफेदपोशी के नीचे आर्थिक दृष्टि से परिपूर्ण खोखला है। उसी खोखलेपन का परदाफाश अन्नपूर्णा उर्फ अन्नू करती है -"संसार मेरा अपमान करता है तो करने दो ।अपमान को देखू तो खाऊँ क्या ।"

4.4.1.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने सामाजिक के अन्तर्गत मध्यमवर्ग में व्याप्त अनेकों कुप्रथाओं को भी उठाया है। शेष-संबल में बाबू चन्द्रमा प्रसाद की मृत्यु के बाद उनकी पत्नी सुन्दरी वैधव्य जीवन बिताने में अपने को असमर्थ पाती है। इसीलिये वह पुर्नः विवाह कराना चाहती है किन्तु सामाजिक बन्धन उसे यह कार्य नहीं करने देते । जिसका दोषारोपण वह पुरूषवर्ग पर करती हुई कहती है --

"पुरूष चाहे हजार विवाह करले, एक स्त्री रहते भी जो चाहे सो करे । वह तो ठीक है। लेकिन अगर बेचारी एक स्त्री एक स्वामी के मरने पर दूसरा विवाह करने के लिये तैयार हो तो वह पाप है ।"[1]

4.4.1.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने विधवा विवाह का समर्थन किया है सिर्फ उन विधवाओं के लिये जो सात्त्विक विधवा जीवन को आदर्श रूप में गुजारने में सक्षम न हो । उन्हीं के शब्दों में -- "

1- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 99

"उन विधवाओं को तो विवाह करलेना चाहिये जो अपनी काम - वासना का दमन नहीं कर सकती, और जो कर सकती है, वे कभी विवाह करके दुराचारिणी न बनें।"[1]

काम वासना से आच्छादित (पूरित) औरत आन-मान सम्मान सब कुछ भूल जाती है। उसे छोटे बड़े अपने-पराये सगे - सम्बन्धियों का कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। सुन्दरी ऐसी ही विधवा औरत है जो रामशंकर को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिये कोई कमी नहीं छोड़ती। अन्ततोगत्वा हर तरह की सीमा का उल्लघन करती हुई कहती है-- "क्या मुझे कहना ही पड़ेगा। क्या मेरे मुँह से कहलवा कर ही मानोगे ? क्या तुम्हें इतना भय है ? इतनी लज्जा ? प्रियतम, प्राणनाथ बोलो, क्या प्यार करोगे है, है चौंकते क्यों हो ? चौंको नहीं, मैं तुम्हें प्यार करती हूँ। जीवन से भी अधिक प्यार करती हूँ। मेरा प्यार समुद्र से भी अधिक गम्भीर, दामिनी से भीअधिक उद्दम, तूफान से भी उन्मत है। मैं तुमको अपना आराध्य देव मानती हूँ, तुम मेरे प्राणनाथ हो, सबसे अधिक प्यारे हो। मैं तुम्हारे लिये पागल हुई जा रही हूँ। तुम मुझे प्यार करो। सब कुछ तुम्हारे चरणों पर न्यौछावर है मान, संभ्रय, ऐश्वर्य, स्वर्ग, नरक, भाई-बन्धु, मां-बाप सभी तुम्हारे ऊपर न्यौछावर है। खाली एक दफे कह दो मुझे --प्राणेश्वरी xxxxxxxxxxx सुन्दरी ने उन्मादिनी की भांति राम - शंकर को अपने बाहुपाश में बद्ध करके अपनी हृदय की ज्वाला को शान्त कर लेना चाहा।"[2]

4.4.1.4 "मीठी मुस्कान" और "लालसा" में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने यह उद्घोषित किया है कि रमणी का प्रेम तृष्णा है, लालसा है और कुछ नहीं। "मीठी मुस्कान" में केतकी कहती है :- "हम लोगों में क्या कभी प्रेम होता है। अगर कभी प्रेम की सी भावना होती है तो वह मोह होता है, तृष्णा होती है, लालसा होती है, क्षणिक आसक्ति होती है।"[3]

लालसा में सुहासिनी भी इसी तरह की रमणी है जो एक नहीं तीन-तीन पुरुषों को अपनी वासनात्मक लालसा का शिकार बनाती है। प्रेम-नाथ को एक ही बार में देखकर उसे अपने प्रेमजाल में फँसाने के लिये कहती है--

---

1-शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 102

2- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 108

3- मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 172

"क्या सुन्दर गोल मुँह है। गालों पर लालाई। कैसी आँखें है। क्या सुन्दर मन है। क्या पुष्ट शरीर है हाथों में शक्ति होते हुये भी कठोरता नाम को नहीं है। कैसा गोरा रंग है, मानों European है। सुहासिनी अगर तू प्रेमनाथ को अपने रूपजाल में प्रेमजाल में आबद्ध न कर सकी, तो यह रूप किस काम का ? प्रेमनाथ ! क्या सुहासिनी के जाल से बचकर चले जाओगे। दो को तो फांस लिया। ये दोनों मेरे आज्ञाकारी दास हैं। तुम्हें भी वैसा बनाके न छोड़ा तो मरा नाम सुहासिनी नहीं।"[1]

4.4.1.5 इन कहानियों के माध्यम से प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने यह स्पष्ट कर दिया कि संसार प्रलोभन की जगह है। यहाँ के प्रलोभन झूठे, क्षणिक एवं स्वार्थपूरित होते हैं। इनमें फंसकर लोग अपने चरित्र का पतन कर बैठते हैं। शिवनाथ के पास जबतक पैसा रहा केतकी उस को प्रेम करती रही, लेकिन जिस दिन शिवनाथ के पास पैसा नहीं रहा उसक दिन केतकी ने उसे अपमानित कर घर से निकाल दिया। लाल पीली आँखें करती हुई बोली :- "जनाब यहाँ पर लाल, पीली आंखे न कीजिये। मैं नहीं सह सकती दिखाई जाकर अपनी उस साध्वी घर लक्ष्मी को, जिसको मेरे लिये ठुकरा दिया। जो आदमी तुच्छ रूप के लिये अपनी परिणीता को छोड़ सकता है। भला कब सम्भव है कि वह मेरा सहारा सदा बना रहेगा xxxxxxxxxxxx अब आप अपना रास्ता देखिये और मैं अपना।"[2]

4.4.1.6 "कलंक" कहानी के माध्यम से सामाजिक एकता को बल दिया तथा "शासन का वरदान" कहानी में प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने परदा प्रथा का विरोध किया है। नसीबन की माँ कहती है :-"परदा वरदा का झंझट छोड़ो ! अपने घरवालों से कहीं परदा होता है ? मेरे मुल्ला साहब तो परदे के बड़े हिमायती हैं मगर मैं क्या करूँ। मुझे तो फूटी आँखों नही सुहाता।"[3]

फात्मा भी उसकी हाँ में हाँ मिलाती है -"मुझे भी कहाँ अच्छा लगता है ? मगर क्या करूँ खानदानी रिवाज की वजह से मजबूर हूँ।[4] इनके अलावा भी आपने अनेक सामाजिक समस्याओं को उभारा है, और उनका

1- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 126

2- मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 174

3-शासन का वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 128-129

4-शासन का वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 130

आदर्शोन्मुख समाधान भी ढूंढ निकाला है ।

4.4.2 राजनैतिक कहानियाँ

4.4.2.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने राजनैतिक कहानियों का भी प्रणयन किया । इन कहानियों में "आजादी कापहला दिन"बीती बातें, उद्योग, कांग्रेस जिन्दावाद, शासन का वददान, सन्ध्या के अन्धकार आदि हैं। यह कहानियां राजनीतिक विसंगतियों का शासकीय विद्रूपताओं का, यौन केन्द्रित राजनीति का, सांस्कृतिक विभीषिकाओं का, साम्प्रदायिकतों का, अंग्रेजी शासन का एवं आर्थिक अभावों का यथार्थ चित्रण करती है। पूँजीपतियों के अमानवीय क्रूरताओं के मिले जुले रूप को इन कहानियों में देखा जा सकता है।

4.4.2.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने देश विभाजन जनित कुपरिणामों का सजीव एवं यथार्थ चित्रण किया है, एक झाँकी प्रस्तुत है।-

"भारत के अप्राकृतिक टुकड़े रात्रि की कालिमा में ही कर दिये गये। अंग्रेज जल्लादों ने उसे जहां-जहां से काटा था वहाँ-वहाँ से रक्त स्रोतों का बहना एक स्वाभाविक घटना थी। पाकिस्तान का इतिहास बनने लगा और उसके प्रारम्भिक पृष्ट रक्त से रंजित अक्षरों से लिखे जाने लगे। xxxxxx xx मानव जीवन कितना नगण्य हो सकता है। उस कल्पना का साक्षात्कार उसी संसार को प्राप्त हुआ है। अग्नि विस्फोटक का भण्डार, तलवार, कांता, बल्लम, बन्दूक, बम और हथगोलों से सुसज्जित रक्त से स्नान किये ज्ञान शून्य नर पिशाचों की सेना तुमुल नाद से प्रलय का ताण्डव करती हुई अग्रसर हो रही थी और दूसरी ओर बलि के बकारों की भांति महान उद्विग्नता के साथ उन्हीं के अनुरूप शताब्दियों से एक ही साथ खेले, कूदे थे। एक दूसरे की शादी, गमों में शरीक हुये थे । अवाक तथा भयभीत होकर मरने की तैयारी कर रहे थे, उन दोनों में कोई भेद न था, अगर था तो उनके धार्मिक विश्वासों में था । जो संसार के आदि से व्यक्तिगत वस्तु रहे हैं और जो जन्म लेने के पश्चात प्राप्त होते है, तथा जो नैसर्गिक न होकर कृत्रिम हैं।"[1]

4.4.2.3 भारत विभाजन एक ऐसी घटना है जिसने अनेक अमानवीय कुकृत्यों को जन्म दिया, जिसने बड़े स्तर पर नर संहार किया, मानवीय सम्बन्धों और मूल्यों को तोड़ा और असंख्य लोगों को बे घर कर अजनवी-

---

1- पन्द्रह अगस्त के दिन-नवयुग कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ-114-115

असुरक्षित रास्तों पर फेंक दिया। और सबसे दारूण दृश्य तो यह था कि लोगों के सामने उनकी बहू-बेटियों की इज्जत लूटी जाती थी, परिवार के लोगों को एक दूसरे के सामने कत्ल किया जाता था यह समस्या देश विभाजन से ही पनपी थी इसके अलावा यही स्थिति कहीं राजनीतिक दोगलेपन से कहीं अवसरशाही से, कहीं पूंजीवादी व्यवस्था से, और कहीं अमीर-गरीब से उत्पन्न हो गयी थी।

4.4.2.4 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने एक ओर जहाँ पाक सैनिकों की भीषणता[1], कठोरता[2], नग्नता[3], भयावहता[4], एवं वासनात्मक[5], का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है। वहीं दूसरी ओर प्रेम, अहिंसा और बन्धुत्व के विशालतम रूप के दर्शन होते हैं। यथा - "यमुना महफूज तो है। मुझे अपने मरने का कोई गम नहीं है।अगर गम है तो बस यही कि तूने भी मेरा विश्वास नहीं किया। उन शैतानों के पंजे से छुड़ाने का और कोईदूसरा रास्ता नहीं था। मैं उसको अपनी बीबी बनाने के बहाने से अपने घर ला रहा था। आखिर मैं भी तो इंसान हूँ अगर तुमको भूल जाता तो यमुना को भी भूल जाता।"[5]

4.4.3 मनोवैज्ञानिक कहानियाँ*

जिन कहानियों में वैचारिक संघर्ष या भावात्मक अन्तर्द्वन्द्व को प्रमुखता दी जाती है वे मनोवैज्ञानिक कहानियाँ की कोटि में आती हैं।प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी की शेष-संबल कहानी भी इसी कोटि में आती है। बाबू चन्द्रमा प्रसाद एवं उनकी पत्नी सुन्दरी के मानसिक एवं भावात्मक परिवर्तन श्रीवास्तव जी ने इस कहानी में बड़े ही कुशल ढंग से प्रस्तुत किया है। श्रीवास्तव जी ने इस प्रकार की बहुत कम कहानियाँ लिखी हैं।

---

*-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 120

1- सन्ध्या के अंधकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 98

2- आजादी का पहला दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 40

3-स्नेह बन्धन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 40

5- बीती बातें - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 21-22

6-स्नेह बन्धन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 40-41

4.4.4 इतिहास प्रधान ऐतिहासिक कहानियाँ

ऐतिहासिक घटना अथवा ऐतिहासिक चरित्र को आधार बनाकर जिस कहानी का प्रणयन किया जाता है वह ऐतिहासिक कहानी होती है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत लाल किला, आजादी का पहला दिन, एवं पन्द्रह अगस्त के दिन इसी कोटि की कहानियाँ हैं। जिनमें लाल किला बहुत ही प्रसिद्ध ऐतिहासिक कहानी है। श्रीवास्तव जी ने मुगल कालीन वातावरण की सृष्टि करके हिन्दू और मुसलमानों के पारस्परिक प्रेम, देश प्रेम सदव्यवहार, के द्वारा वृद्धा (लाल किला), अब्दुल्ला व कासिम (आजादी का पहला दिन), बुलन्द अखतर (पन्द्रह अगस्त के दिन) एवं उनकी पुत्री नूरून्निसा आदि के प्रेम और बलिदान की कथा कही है। श्रीवास्तव जी को इस प्रकार की कहानियों के सृजन में पर्याप्त सफलता मिली है ।

4.4.5 तात्त्विक दृष्टि से अगर प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियों को वर्गीकृत करना चाहें तो इन्हें कथानक प्रधान, चरित्र प्रधान, एवं वातावरण प्रधान तीन वर्गों में वर्गीकृत कर सकते हैं ।

4.4.5.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव कृत शासन का वरदान, उद्योग, कांग्रेस जिन्दाबाद, आदि कथा प्रधान कहानियां हैं। इस बात को स्वीकार नहीं किया जा सकता कि अगर यह कहानियाँ कथा प्रधान हैं तो इनमें कहानी के अन्य तत्वों की पूर्ण रूप से उपेक्षा की गई है हां प्रमुखता कथा की होती है और अन्य तत्व न्यूनाधिक मात्रा में अवश्य होते हैं।

4.4.5.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने आशीर्वाद में अरूण और उसके पिता अर्थात अन्नपूर्णा के पति डा० सिविल सर्जन के कार्य स्नेह बन्धन में जुलेखा और उसके भाई अब्दुल्ला के आत्मोत्सर्गी कार्य, लालसा में प्रेमनाथ के वक्तव्य और तीज की साड़ी में रामकृष्ण और उनकी पत्नी गायत्री देवी और पुत्री जाह्नवी के आदर्श कार्यों को यथार्थवाद की पृष्ठभूमि पर सफलतापूर्वकचित्रित किया है।

श्रीवास्तव जी ने लालसा में सुहासिनी के चरित्र कोऐसा दिखाया हैकि वह महेशबाबू, राजकुमार, और प्रेमनाथ को अपने रूपजाल और प्रेमजाल में फांसने में कामयाब हो जाती है। ऐसा ही चरित्र मीठी मुस्कान में केतकी आदि का है जिसको श्रीवास्तव जी ने बड़े ही महत्वपूर्ण ढंग से व्यक्त किया है। मीठी मुस्कान, सन्ध्या के अन्धकार आदि कहानियां वातावरण प्रधान कहानी की श्रेणी में रखी जा सकती हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है। कि प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियाँ चाहे वह राजनैतिक हो, सामाजिक हों, मनोवैज्ञानिक हों, अथवा ऐतिहासिककहों, वे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कुछ न कुछ संदेश देती हैं। इनकी ये कहानियाँ भाव, भाषा एवं कला की दृष्टि से उत्कृष्ट बन पड़ी हैं।

4.5 "कहानी कला के निकष पर प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियाँ"

प्रेम चन्द की धारा में लिखने वाले :-हिन्दी कहानी कारों में प्रतापनाराय-ण श्रीवास्तव का अप्रतिम स्थान है । कहानी साहित्य के उन्नायकों में आप बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न कथाकार हैं। आप जहाँ उपन्यासकार हैं, नाटक कार, और अनुवादक हैं वहाँ आप शक्तिशाली भावनाओं वाले कहानीकार भी हैं। आपका कहानी साहित्य, आलोचना, राष्ट्रीय जागरण तथा सांस्कृतिक पुन-रूत्थान से सम्बंधित है विषय वैविध्य की दृष्टि से इनकी कहानियों में सा-माजिक चेतना के प्रति जागरूकता और अैतिहास का समीकरण महान है। विर-ले ही कहानी कार इतनी गहराई से समाज, अैतिहास और जीवन का दर्शन कर सके ।

भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने कहानी के प्रमुख तत्व 1- कथावस्तु, 2- पात्र, 3- चरित्र चित्रण, 4- कथोपकथन , 5-देशकाल तथा वातावरण 6- उद्देश्य , माने हैं। विद्वानों का मत है कि शीर्षक भी कहानी का आधारभूत तत्व है। इन्हीं तत्वों के निकष पर प्रतापनारा-यण श्रीवास्तव की कहानियों का समीक्षात्मक अनुशीलन प्रस्तुत है।

4.5.1 कथानक

4.5.1.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव किस कोटि के कथाकार हैं इससे हिन्दी संसार अपरिचित नहीं है। उनके कथानकों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे सामयिक है उनकी सामयिकता का भी सबसे बड़ा गुण यह है कि वह स्थायी तथा व्यापक होती हैं। "कलंक", "बलिदान", "आशीर्वाद", "शेष-संबल", "तीज की साड़ी", "लालसा", "मीठी मुस्कान" आदि सामाजि-क है। जिनका शिल्प उनके सामाजिक जीवन मूलक विषय के अनुरूप ही है इस-के साथ ही उनमें सामाजिकता की भावना भी है जिसे वे मनोवैज्ञानिक व्या-ख्या या मंथन के साथ चिपका कर अपनी कृति को सामाजिक मनोविज्ञान वादी रूप देना चाहते हैं, इसी लिये वे अहं को केन्द्रित करते हुये भी उसे सामाजिक दृष्टि से अश्रेयस्कर मानते हैं और का उदात्तीकरण करके उसे सा-

-माजिक रूप प्रदान करना चाहते हैं ।"[1]

4.5.1.2 "तीज की साड़ी" में एक अबोध बालिका जाह्नवी की बीमार एवं "बाबूजी" (पिताजी) के दर्शन के लिये मनः स्थितियों का उसकी ग्रन्थियों का बड़ा सूक्ष्म अंकन है। वह अपनी असामान्यस्थिति में भी सामान्य है । जाह्नवी की माँ गायत्री और पिता रामकृष्ण को व्यक्तित्व की उलझनें उनको सहज लगने लगी ।"[2]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने वर्तमान सामाजिक समस्याओं को समेटते हुये आर्थिक विषमता का मूल्यांकन किया । तथा सामाजिक कुरीतियों का भी यत्र-तत्र चित्रण मिलता है ।"[3]

आशीर्वाद में भिखारिन उर्फ अनुसूयाको देखकर कामुक युवक मंडली का उसके पीछे-पीछे फिरना तथा शेष संबल में चन्द्रमा प्रसाद की पत्नी सुन्दरी का रामशंकर पर डोरे डालना अन्ततः यहाँ तक पहुँच जाना -

" क्या मुझे कहना ही पड़ेगा । क्या मेरे मुंह से कहलवा ही मानोगे ? क्या तुम्हें इतना भय है ? इतनी लज्जा है ? प्रियतम, प्राणनाथ, बोलो क्या प्यार करोगे ? हैं - हैं चौंकते क्यों हो ? चौंको नहीं, मैं तुम्हें प्यार करती हूँ । मेरा प्यार समुद्र से भी अधिक गंभीर दामिनी से भी उद्दाम, तूफान से भी उन्नमत है। मैं तुमको अपना आराध्य देव मानती हूँ। तुम मेरे प्राणनाथ हो, सबसे अधिक प्यारेहो । मैं तुम्हारे लिये पागल हुई जा रही हूँ। तुम मुझे प्यार करो। सब कुछ तुम्हारे चरणों पर न्यौछावर है। मान, सम्भ्रम, ऐश्वर्य, स्वर्ग, नरक , भाई-बन्धु, माँ बाप सभी तुम्हारे ऊपर न्यौछावर हैं। खाली एक दफे कहो प्राणेश्वरी ।"[4]

1-कलंक - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -265 (मनोरंजन पत्रिका, फरवरी 1926)
2-तीज की साड़ी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृ0-47, 59, 61
3-मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ - 17।
4- आशीर्वाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 9
5- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 108

"लालसा" में बैरिस्टर कृष्णचन्द्र की पुत्री सुहासिनी का महेशचन्द्र, राजकुमार, व प्रेमनाथ तीनों के साथ अवैध सम्बन्धों का होना।"[1]

"मीठी मुस्कान" में सज्जनता का आवरण ओढ़े हुई "महारानी" जी की उपाधि से चर्चित चपला, केतकी आदि वेश्याओं की माँ सीधे-साधे तीर्थयात्रियों, नवयुवतियोंद्वारा आदर सत्कार देकर और नवयुवतियों (वेश्याओं) का प्रेम का ढोंग रचकर सम्पति का हड़पना आदि।"[2]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपनी कहानियों में पुर्नः विवाह पर सर्वथा नई दृष्टि से विचार किया है। चन्द्रमा प्रसाद की विधवा सुन्दरी विधवा विवाह के पक्ष में है। इसका दोषारोपण वह पुरूष समाज को मानती है

"यह खुद गरजी नहीं है तो क्या! पुरूष चाहे हजार विवाह कर ले एक स्त्री रहते भी जो चाहे सो करे। वह तो ठीक है, लेकिन अगर बेचारी स्त्री एक स्वामी के मरने पर दूसरा विवाह करने के लिये तैयार हो तो वह पाप है।"[3]

"बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियों का चित्रांकन भी श्रीवास्तव की कहानियों में उपलब्ध होता है समाजवाद को बढ़ावा भी आपकी कहानियों से मिलता है।"[4]

4.5.1. हिन्दू मुस्लिम समस्या को लेकर जो आपने कहानियां लिखी है इनमें आजादी का पहला दिन, बीती बातें, स्नेह बन्धन, लालकिला, संध्या के अन्धकार, पन्द्रह अगस्त के दिन, शासन का वरदान आदि प्रमुख हैं।

इनकी राजनैतिक कहानियों में देश-विभाजन-जनित कुपरिणामों का सजीव और यथार्थ चित्रण मिलता है। अपनी "पन्द्रह अगस्त के दिन" कहानी में देश के बटवारे के अभिशापको मार्मिक शब्दों में चित्रित करते हुये कहानीकार कहता है :-

भारत के अप्राकृतिक टुकड़े रात्रि की कालिमा में ही कर दिये गये हैं। अंग्रेज जल्लादों ने उसे जहां जहां से काटा था वहाँ-

---

1-लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -111, 124, 127
2- मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-148, 149, 164
3- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 93
4- कलंक - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -

वहाँ से रक्त के स्रोतों का बहना एक स्वाभाविक घटना थी । पाकिस्तान का इतिहास बनने लगा और उसके प्रारम्भिक पृष्ट रक्त से रंजित अक्षरों से लिखे जाने लगे । xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx मानव जीवन कितना नगण्य हो सकता है उस कल्पना का साक्षात्कार उसी संसार को प्राप्त हुआ। अग्नि विस्फोटक द्रव्यों का भंडार, तलवार, कांता, बल्लम, बन्दूक, बम, और हथ गोलों से सुसज्जित रक्त से स्नान किये हुये ज्ञान शून्य नर-पिशाचों की सेना तुमुल नाद से प्रलय का ताण्डव करती हुई अग्रसर हो रही थी और दूसरी ओर बलि के बकरों की भाँति महान उद्विग्नता के साथ उन्हीं के अनुरूप जो शताब्दियों से एक हीसाथ खेले-कूदे थे, भाई-भाई की भाँति एक ही साथ हिलमिल कर रहे थे, एक दूसरे की शादी-गमी में शरीक हुये थे, अवाक तथा भयभीत होकर मरने की तैयारी कर रहे थे। उन दोनों में कोई भेद न थाऔर यदि था तो उनके धार्मिक विश्वासों में था जो संसार के आदि से व्यक्तिगत वस्तु रहे हैं और जोजन्म लेने के पश्चात प्राप्त होते हैं तथा जो नैसर्गिक न होकर कृत्रिम हैं ।"[1]

4.5.1.54 "आजादी का पहला दिन", बीती बातें, स्नेह बन्धन, उद्योग, कांग्रेस जिन्दावाद, लालकिला, सन्ध्या के अन्धकार , पन्द्रह अगस्त के दिन, शासन का वरदान आदि कहानियां इसी प्रकार की हैं । वे निश्चित रूप से युग विशेष की प्रतीक हैं तथा कथाकार की व्यक्तिगत राष्ट्रवादिता का स्पष्टीकरण है। अपने काल की राजनैतिक परिस्थितियों पर श्रीवास्तव जी ने अपनी कृतियों द्वारा प्रकाश डाला ।

कुछ कहानियां ऐसी है जिनके कथानक सामान्य हैं ।[2] लेकिन रोचक और यथार्थ है और यथार्थता ही इनकी कहानियों की एक विशेषता है ।

1-पन्द्रह अगस्त के दिन -नवयुग कहानी संग्रह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0 --114-115

2- कांग्रेस जिन्दावाद !!! , शासन का वरदान -

4.5.1.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने कुछेक कहानियों में पाक सैनिकों की भीषणता, कठोरता, नग्नता, भयावहता, वासनात्मक का यथार्थ चित्रण किया है जो हिन्दूओं की स्त्रियों को माताओंको, बहिनों को पकड़-पकड़ कर उनकी इज्जत आबरू से खेलते थे। इन पिशाच आततायी रक्तरंजित पाक शैतानो से छोटे बड़े-बड़े स्त्री बच्चे, पुरूष, बच्चे, बच्चियां, अपाहिज, बुजुर्ग कोई भी न बचे थे। जिन्होंने अपने क्रूर हाथों से सैकड़ों परिवारों के दीपक बुझा दिये थे। वही पर कुछ ऐसे भी मुसलमान थे जो अपनी जान पर खेलकर हिन्दू भाइयों की रक्षा करते थे।[1]--सूरया ने चंम्पी को बचाने में अपनी पति को रिवाल्वर का निशाना बनाया, तथा उसका भाई पाक सैनिको द्वारा मारा गया।[1]

"अम्रा की रक्षा में कासिम और अब्दुल्ला मारे जाते हैं।"[2]

"जुलेखा अपनी सहेली को बचाने के लिये अपने भाई के सीने में भाला घुसेड़ देती है।"[3]

मुगल सम्राट बहादुर शाह के पौत्र बुलन्द अख्तर और नूरी उर्फ नूरून्निसा का हिन्दुओं पर किये जा रहे अत्याचारों से अपने पति मन्सूर अली द्वारा मारा जाना आदि।[4]

भले ही प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने कहानियों का सृजन प्रेमचन्द, कौशिक, विश्वम्भरनाथ शर्मा आदि कहानीकारों के बराबर नहीं लिखीं हैं। लेकिन जितनी लिखी है वह महत्वपूर्ण हैं।।

इनके कथानकों का पहला गुण यह कि रोचक हैं।। दूसरा सबसे बड़ा गुंण यह हैकि वे बड़े मार्मिक होते हैं। इनके कथानक कोरे शब्द जालों के ताने-बाने पर ही आधारित नहीं है। उनकी स्वाभाविकता कहानी को रोचक हृदयग्राही तथा मनोरंजक बना देती है।

1-सन्ध्या के अन्धकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ - 98

2-आजादी का पहला दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ- 14

3-स्नेह बन्धन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 40

4-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 120

4.5.2 पात्र और चरित्र चित्रण

4.5.2.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने पात्रों का चयन समाज के उच्च मध्यम वर्ग से किया है। वे आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न, सभ्य और अधिकांशत: उच्च शिक्षा प्राप्त है। उनके जीवन में किसी प्रकार का अभाव नहीं है।

आपके पात्र मानव धर्म एवं परोपकार के लिये अपना सब कुछ त्याग देते हैं। "आजादी का पहला दिन" में अब्दुल्ला और कासिम "स्नेह बन्धन" में जुलेखा और अब्दुल्ला । अब्दुल्ला यमुना को बचाना चाहता है लेकिन पाक सैनिकों के सामने वह उनके अफसरों को ठंडक पहुँचाने के लिये यमुना को घसीटता हुआ अपने मकान की ओर ले आ रहा था । लेकिन अब्दुल्ला की बहन जुलेखा उसका गलत अर्थ लगा बैठी और अपनी सहेली के बचाने के लिये उसने अपने भाई के सीने में भाला घुसेड़ दिया । अब्दुल्ला जुलेखा से कहता है कि :-

"यमुना महफूज तो है। मुझे अपने मरने का कोई गम नहीं है अगर गम है तो बस यही कि तूने भी मेरा अविश्वास किया । उन शैतानों के पंजे से छुड़ाने का और कोई रास्ता नहीं था । मैं उसको अपनी बीबी बनाने के बहाने से अपने घर ला रहा था । आखिर मैं भी तो इंसान हूँ। अगर तुझको भूल जाता तो यमुना को भी भूल जाता । "[1]

"सन्ध्या के अन्धकार में " सुरया चम्पी की रक्षा के लिये अपने पति की हत्या कर देती है। "पन्द्रह अगस्त के दिन में " सम्राट बहादुरशाह के पौत्र बहादुर शाह और उनकी पुत्री का अपने ही जमाता द्वारा वध।

4.5.2.2 "आशीर्वाद" में अनुसूया उर्फ भिखारिनी की दीन दशा को देखकर डा० सिविल सर्जन का हृदय दु:खी होने लगा।उन्होंने सोचा:-

"उसके रहने का प्रबन्ध कर दूँ, लेकिन वह वक्त पूँछने का नहीं था । संसार क्या समझेगा । संसार क्या जानेगा, मैंयह सब क्यों पूँछता हूँ ।

1- स्नेह बन्धन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 40

वह तो पाप लगावेगा । पापमय संसार में पाप के अतिरिक्त किसी और वस्तु की आशा की जा सकती है। "[1]

शेष संबल में चन्द्रमाप्रसाद की मृत्यु के बाद उसकी विधवा पत्नी सुन्दरी उसे अपनी ओर आकृष्ट ही नहीं करती वल्कि जबरदस्ती भी करती हैलेकिन रामशंकर अपने दोस्त चन्द्रमा प्रसाद के साथ विश्वासघात नहीं करना चाहता था इसलिये वह सुन्दरी को उसकी भूल का एहसास कराता है । मीठी मुस्कान में शिवनाथ की पत्नी का त्याग जो अपने पति के लिये करती है।

4.5.2.3 श्रीवास्तव जी ने कुछेक ऐसे पात्रों को भी मानव मन की कुण्ठाओं, दमित वासनाओं , सैक्स और प्रेम का वर्णन सैद्धान्तिक धरातल पर न कर व्यावहारिक आधार पर किया है। आपके पात्र मानसिक कुण्ठाओं और वासनाओं से ग्रस्त हो सकते थे किन्तु प्रेम को सैक्स की अपेक्षा अधिक उद्दात एवं पवित्र मानने के कारण ही श्रीवास्तव जी नग्न यथार्थ एवं सैद्धान्तिक वर्णनों से दूर रहे हैं। उन्होंने यौन विकृतियों का वर्णन भी आचार और व्यवहार स्तर पर ही किया । प्रेम, काम, सैक्स आदि का निरूपण करते हुये भी वे भारतीय कौटुम्बिक या गार्हस्थिक मर्यादाओं के भीतर रहना ही उचित समझते हैं ।

मीठी मुस्कान में केतकी और लालसा में सुहासिनी ऐसी नव युवतियां है जो अपने प्रेमी केतकी, शिवनाथ सिन्हा और सुहासिनी अपने प्रेमी महेशचन्द्र, प्रेमनाथ और राजकुमार को अपने प्रेम जाल में फांसकर उनके तन, मन, धन की स्वामिनी बन जाती है। इनकी आतुरता और अश्रु झूठे थे । उनका प्रेम आडम्बर पूर्ण और वाह्य प्रदर्शन मात्र था । इनमें आत्मिकता, सात्विकता और पवित्रता के स्थान में हृदय की कलुषता और शारीरिकता का ही प्राधान्य था ।[2]

1- आशीर्वाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 16

2- शेष -संबल में सुन्दरी, लालसा में सुहासिनी, मीठी मुस्कान में केतकी

इसी कारण उनका प्रेम यौन विकृतियों का ही उदाहरण बनकर रह गया है। सुहासिनी प्रेमनाथ की सुन्दरता को देखकर उस पर आसिक्त हो गई और सोचने लगी :—

"सुहासिनी अगर तू प्रेमनाथ को अपने रूप जाल में, प्रेमजाल में आबद्ध न कर सकी, तो रूप किस काम का ? प्रेमनाथ ! क्या सुहासिनी के जाल से बचकर चले जाओगे । दो को तो फांस लिया । वे दोनों मेरे आज्ञाकारी दास हैं। तुम्हें भी वैसा बना के न छोड़ा तो मेरा नाम सुहासिनी नहीं ।"[1]

4.5.2.4 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने पात्रों के वैचारिक संघर्ष और भावात्मक द्वन्द्व द्वारा चरित्र का वास्तविक स्वरूप उद्घाटन किया है । "आशीर्वाद" में डा० का भिखारिन को देखकर उसकी मदद करने के बारे में सोचना लेकिन फिर सोचना कि लोग इसका गलत अर्थ लगायेंगे ।"[2] "मीठी मुस्कान" में शिवनाथ सिन्हा और केतकी के मिलने के बारे में सोचते हैं कि उससे मिले या न मिले । सोचते हैं :-

"केतकी का रूप मुझे घसीट रहा था, और इधर कर्तव्य और धर्म उधर तृष्णा और इधर प्रेम ! उधर लालसा और इधर अनुराग ! उधर आसक्ति और इधर स्नेह ! कहाँ जाऊ ? "[3]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने पात्रों के मनोभावों का बड़ी स्पष्टता से वर्णन किया है। प्रकृति के रूप मानवों के द्वारा मानव मन की प्रवृत्तियों का विश्लेषण भी आपकी सफलता का एक अंग है। शिवनाथ सिन्हा यमुना का नील सलिल देखते हुए कहते हैं :-

क्या यह सुख स्वप्न सदा यों ही बना रहेगा ? क्या इसी भांति हम दोनों एक दूसरे को यों ही प्यार करते रहेंगे ? क्या इसी तरह ये सुख के दिन हमेशा कटते जायेंगे । क्या वह कभी मुझे छोड़कर चली जायेगी × × × × × × × × × × × ।"[4]

1-लालसा-प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 127
2- आशीर्वाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 16
3- मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 153
4- मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 138

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने महेश बाबू की स्थिति बताते हुये लिखा है :-

"आशा की मधुर थपेड़े जीवन को सुखमय कर देती हैं। निराशा पाप है, और आशा आशीर्वाद। जब तक आशा है, तब तक प्राण हैं, और जहां निराशा की भयंकर कालिमा मयी छाया आकर पड़ी वहीं नाश मृत्यु और प्रलय है।"[1]

श्रीवास्तव जी ने कुछ ऐसे पात्रों का भी चयन किया है जो समाजवादी है। भले ही श्रीवास्तव जी ने निम्न वर्ग के पात्रों को अपनी कहानियों में कम स्थान दिया लेकिन जितना दिया वह यथोचित है।"[2]

4.5.2.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने कुछ ऐसे अद्योगपत्तियों के स्वार्थपूर्ण विचार धाराओं को भी चित्रित किया हैजो अपने स्वार्थों के लिये सीधे भारत वासियों को कभी देशहित और कभी भोग विलास का रंग चढ़ाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। उनमें उद्योगिक संघ के नेता सर जगदम्बा प्रसाद, सदस्य पशुपति, प्रसिद्ध उद्योगी श्री राम प्रसाद और मिलमालिक मोती लाल हैं। जिनके पास पूँजी का अम्बार लगा हुआ है। और विदेशी उद्योगपतियों से संबन्ध है।"[3] इन लोगो का मत है कि दुनिया की कोई भी चीज ऐसी नहीं है जिसे पैसों से खरीदा न जा सके।

"तीज की साड़ी" में रामकृष्ण, गायत्री (पत्नी रामकृष्ण) जाह्नवी (पुत्री रामकृष्ण) वारींद्र (मित्र रामकृष्ण), शिवनाथ (जाह्नवी का सहपाठी) सभी पात्र भावुक एवं सतपथ के अनुयायी है। इनमें न किसी के प्रति वैर, न ईर्ष्या और न ग्लानि है। जाह्नवी अपने बाबूजी उर्फ रामकृष्ण को असीम प्यार करती है/ रामकृष्ण के विछोह को वह सहन नहीं कर पाती, यहां तक कि पागल होकर मृत्यु का वरण करती है।

लालसा में - बैरिस्टर कृष्णचन्द्र, सुहासिनी (पुत्री रामकृष्ण), महेशबाबू, उमाकान्त, प्रेमनाथ, राजकुमार (सुहासिनीके मित्र) हैं। श्रीवास्तव जी ने "कांग्रेस जिन्दाबाद !!! में रामप्रसाद और काशीनाथ मुख्यतः दो ही पात्र है। जिनमें रामप्रसाद कांग्रेस की नीतियों कार्यों की आलोचना करते है किन्तु काशीनाथ जो कांग्रेस के भक्त है वह कांग्रेस के

1-लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 110
2- कलंक - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -
3- उद्योग - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 45-46

कार्यों की विशद व्याखया रामप्रसाद के समक्ष प्रस्तुत करते हैं जिससे रामप्रसाद भी कांग्रेस के पक्षधर हो जाते है।

4.5.2.6 "लाल किला" में वृद्धा और उसका पुत्र इब्राहीम दो ही पात्र हैं। वृद्धा अपने जीवन के बारे में इब्राहीम को बताती है। वृद्धा अंग्रेजों का विरोध करती है इब्राहीम भावुक युवक है वह वृद्धा की बातों से जानकारी होने से अंग्रेजों के खिलाफ बदला लेने को तैयार होता है तो वृद्ध कहती है :--

"बदला लेना अगर तू चाहता है तो उसका सिर्फ एक ही रास्ता है, वह है उनकी लगाई हुई आग को बुझाना । तआस्सुब, महजबी फर्क और एक इसके खिलाफ शक, शबहा का पहाड़ जो इन्होंने इस सरजमी के दो फिरकों, हिन्दुओं और मुसलमानों के दरम्यान खड़ा कर दिया है उसको ढहा देना, उनमें इत्तिहास पैदा करना और दोनों को मिलाकर एक मजबूत रस्सी में बट देना । xxxxxxxxxxxxx बादशाह बहादुर शाह के सच्चेमानी में नवासे बन उसी तर तैमूरी खून की ताकत दिखाओं । जैसे तुम्हारे पैगम्बर के नवासों हजरत हसन और हजरत हुसैन ने इस्लाम की खिदमत में अपनी जान निछावर कर दी थी ।"[1]

वृद्धा का चरित्र अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया है। "संध्या के अन्धकार " में सूरया, सूरया का मंगनी शुदा खाविन्द, सूरया का भाई, प्रहरी, उस्मान आदि पात्र हैं। लेकिन सूरया का चरित्र ही अतिमहत्वपूर्ण है क्योंकि उसने अपनी एक हिन्दू सहेली की इज्जत को बचाने के लिये अपने पति को रिवाल्वर का निशाना बनाया ।

4.5.2.7 "पन्द्रह अगस्त के दिन" में नूरी उर्फ नूरून्निसा और उसका पिता {वृद्ध} मन्सूर अली {पति व पाक सेना का सरदार} मौलवी ताज मोहम्मद आदि है। मौलवी कट्टर मुसलमान है वह मन्सूर को प्रेरित करता है कि अपनी बीवी को तलाक और अगर न माने तो वृद्धा और नूरी दोनों को रास्ते से साफ कर दो । इस कहानी में वृद्ध का चरित्र चित्रण अत्याधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि वह हिन्दू मुस्लिम सब का समर्थक है। नूरी उनको पकड़ती है लेकिन वह कहते है :-

"मुझे जाने दो, जितनी जल्दी इस मार काट को रोक सकूँ उतना ही अच्छा है। xxxxxxxxxxxxxx मैं दर-दर का मोहताज हूँ, बूढ़ा हूँ

ताज और ताकत और फौज से महरूम हूँ मगर फिर भी बहादुरशाह का पोता तख्ते मुगलिया का वारिस हिन्दुस्तान का रहबर और हिन्दू मुसलमान के इतिहास की हड़ सींचने वालों का आखिरी निशान हूँ। भाई-भाई का खून करते मैं हरगिज बरदाश्त नहीं कर सकता ।"[1]

4.5.2.8 "शासन का वरदान कहानी में जुम्मन की अम्मा नसीवन मौलवी नसीर खाँ की पत्नी और फात्मा तीन ही प्रमुख पात्र हैं। "जुम्मन की अम्मा" सीधी साधी सब्जी बेचने वाली औरत है जिसे सिर्फ पैसों से मतलब है दुनिया की किसी और चीज से नहीं । वह अपढ़ और चंचलता से रहित नसीवन की माँ परदा प्रथा का विरोध करती है और स्त्री स्वतन्त्रता की समर्थक हैं :-

"परदा वरदा का झंझट छोड़ो । अपने घर वालों से कहीं परदा होता है ? मेरे मुल्ला साहब तो परदे के बड़े हिमायती हैं मगर मैं क्या करूँ । मुझे तो बुरका फूटी आँखों नहीं सुहाता ।"

फॉतिमा - "मुझे भी कहाँ अच्छा लगता है ? मगर क्या करूँ खानदानी रिवाज की वजह से मजबूर हूँ ।"[2]

सुखमय दामपत्य जीवन में जिनमें पत्नी अपना आराध्य पति को मानती है और दोनों एक दूसरे से किसी भी प्रकार शंका नहीं करते हैं - तीज की साड़ी में -रामकृष्ण और गायत्री, शेष संबल में -चन्द्रमा प्रसाद और सुन्दरी, मीठी मुस्कान में -शिवनाथ सिन्हा और उनकी पत्नी (आरम्भिक जीवन) आजादी का पहला दिन में - उषा और लहरचन्द्र शासन का वरदान में - नसीवन और मौलवी नसीर खाँ, आशीर्वाद में -डा० सिविल सर्जन और अन्नपूर्णा का दामपत्य जीवन सुखी, हास्य, परिहास और आन्नदमय था ।

1-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 113

2- शासन का वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 130

दूसरी ओर मीठी मुस्कान में ही शिवनाथ सिन्हा और उनकी पत्नी का उस समय काजीवन जब शिवनाथ का केतकी से प्रेम हो गया था उस समय का जीवन कष्टमय एवं दुखी जीवन था जिसमें नीरसता एवं सूनापन था ।

दूसरी ओर श्रीवास्तव ने ऐसे पाक पात्रों का चयन किया है जो अपनी भीषणता, कठोरता, नग्नता, भयावहता वासनात्मक ता का जीता जागता सबूत है। वह हिन्दू स्त्रियों को पकड़-पकड़कर उनकी इज्जत आबरू लेते इन पिशाच आताताई रक्त रंजित शैतानों से छोटे-बड़े स्त्री, पुरूष, बालिग-नाबालिग अपाहिज बुजुर्ग कोई भी न बचा था। जिन्होंने हिन्दुओं के खून को बहाना उनके घरों को जलाना उन्हें बरबाद कर देना ही अपना धर्म समझ लिया था। ये थे मुल्ला मौलवियों द्वारा प्रेरित भारतीय मुसलमान जो लाहौर और उसके आस पास बस गये थे ।

अतः पात्रों का चरित्र चित्रण संयम एवं सुव्यवस्थित होने के कारण जीवन्त, सार्थक और अनुकरणीय बन पड़ा है ।

4.5.3 "कथोपकथन"

कथोपकथन कहानी का महत्वपूर्ण तत्व है जिसके माध्यम से कथाकार कथोपकथन के माध्यम से कथा विकास, पात्र, चरित्र-चित्रण, उद्देश्य प्राप्ति और देशकाल-चित्रण में सफलता मिलती है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव को चरित्र चित्रण की भांति ही कथोपकथन में भी पर्याप्त सफलता मिली है। आपके कथोपकथन सजीव, स्वाभाविक, संक्षिप्त, रोचक, सार्थक, सारगर्भित हैं। इसका कारण यह है कि आपकी भाषा पात्रानुकूल एवं विषयानुकूल है। तभी यह विशेषतायें सुरक्षित रह सकी हैं। आपने कहानियाँ सदैव इस बात का ध्यान रखा है। आपकी कहानियों के अधिकांश पात्र मध्यमवर्गीय है। सामान्यत: सभी पात्र उच्चशिक्षा प्राप्त हैं परन्तु कुछ अशिक्षित भी हैं।

4.5.3.1 स्वाभाविकता

तीज की साड़ी में जाह्नवी और उसकी माँ गायत्री के कथोपकथनों में स्वाभाविकता का परिचय मिलता है :-

"जाह्नवी ने पूँछा-"माँ, बाबू जी कब तक आवेंगे ?"

माँ ने उत्तर दिया -"क्या जानूँ कब तक आवेंगे ?"

बालिका ने फिर पूँछा - "कहाँ गये हैं ?"

माँ ने अपने आसुँओं को रोकते हुये कहा - "कालापानी ।"

"कालापानी कहाँ है ?"

"यहाँ से बहुत दूर ।"

"बाबू जी वहाँ क्या करने गये हैं ? "

वह अपने मन से वहाँ नहीं गये हैं, सरकार ने उन्हें भेजा है ।

"सरकार ने क्यों भेजा है ?"[1]

आशीर्वाद में डा० सिविल सर्जन और उनके पुत्र अरूण के कथोपकथों से उनमें स्वाभाविकता का परिचय मिलता है । यथा --

"अरूण - "अम्मा रोज मेरे कपड़ों को देखती है। परसों जो तुमने रूपया दिया था, वह मेरी जेब से निकाल लिया था, फिर नहीं दिया ।"

मैं - "तुमने उसे क्यों लेने दिया ?"

अरूण - -"मैं रो रहा था, तभी उसने निकाल लिया था । बाबू जी अम्मा बड़ी चोर है।"

मैंने अरूण का मुँख चूमते हुये कहा - "अपने से बड़ों को ऐसा नहीं कहते। तुम्हारी अम्मा चोर नहीं हैं। वह तुम्हारे लिये ही जमा करती है । तुम्हें कपड़ा बना देती है, तुम्हें मिठाई ले देती है ।"

अरूण - "वह कहाँ मिठाई ले देती है। मिठाईतो तुम लाते हो ।" मैं - "जब वह पैसे देती है, तभी तो लाता हूँ ।"

अरूण - "अपने पैसे तुम अपने पास क्यों नहीं रखते ? क्या तुमको भी पैसे अम्मा देती है ।"[2]

1- तीज की साड़ी - "आशीर्वाद" - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-47

2-आशीर्वाद कहानी संग्रह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - - पृष्ठ- 25

शासन का वरदान में जुम्मन की अम्मा और फातिमा के कथोपकथ :---

"जुम्मन की अम्मा" - "यह वोट क्या चीज है ?"

फातिमा - "वोट का मतलब है अपनी मंशा बताना, कि मैं फला आदमी या औरत को अपनी तरफ से हुकूमत में शिरकत करने के लिये चुनती हूँ ।"

जुम्मन की मां-"अच्छा मैं तुमको अपनी तरफ से चुनूँगी ।"[1]

शेष संबल में चन्द्रमा प्रसाद और उनकी पत्नी सुन्दरी, सुन्दरी और उसकी सास, रामशंकर और सुन्दरी के कथोपकथन लालसा में सुहासिनी और महेशबाबू, सुहासिनी और प्रेमनाथ, सुहासिनी और राजकुमार के कथोपकथनों में स्वाभाविकता भी स्पष्ट देखने को मिलती है ।

4.5.3.2 सजीवता

प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियों में कथोपकथन प्रसंगानुकूल भाषा कर्कषता और तीव्रता लिये हुये है। पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। जिसमें हास्य का पुट भी देखने को मिलता है :—

सुन्दरी को देखकर गोरी उठती हुई बोली -"अरे आज न मालूम किसका मुँह देखकर उठी थी, जो आप तशरीफ लाई ।"

सुन्दरी ने हँसते हुये कहा - "अपने उन्हीं का मुँह देखकर उठी होगी ।"

गोरी ने एक लज्जा भरी मुस्कान सहित कहा -"उनका मुँह तो रोज ही मैं देखकर उठती हूँ। आओ बैठो ।"

सुन्दरी जाकर पलंग पर, गोरी की बगल में बैठ गई ।

गोरी ने कहा -"बहन, कहो अच्छी तो हो ?"

सुन्दरी ने एक ठंडी सांस लेकर कहा-"विधवाओं की भली चलाई ।"अच्छी रहें तो बला से, न अच्छी रहें, तो बला से । अभागा कई भी तो नहीं पूँछता ।"[2]

1- शासन का वरदान - प्रताप नारायण श्रीवास्तव - -पृष्ठ-125

2- शेष - संबल - प्रताप नारायण श्रीवास्तव - -पृष्ठ-79

शेष-संबल में ही सुन्दरी और रामशंकर के सजीव वार्तालाप में सजीवता:-

रामशंकर — "मुझे खाने में कुछ इनकार नहीं, लेकिन घर का खाना खराब होगा ।"

सुन्दरी ने हँसते हुये धीरे से कहा-- "हाँ और घर में मालकिन खफा होंगी । यह कहकर उसने एक बंकिम कटाक्ष किया और मुस्करा दी।[1]

मीठी मुस्कान में रामनाथ और शिवनाथ सिन्हा, शिवनाथ सिन्हा और केतकी आदि के कथोपकथनों में सजीवता है। शिवनाथ सिन्हा और माँ का कथोपकथन — देखिये---

"कौन ! मन्ना !"

मैंने प्रणाम करते हुये कहा हाँ मैं ही हूँ । माँ मुझे देखकर रो पड़ी । मेरे प्राण और सूख गए ।

मैंने व्यग्रता से पूँछा - कैसी तबियत है !"

माँ ने कुछ उत्तर न दिया । मैंने फिर पूँछा - "सब लोग तो अच्छे हैं।"

माँ ने कहा -- तुम्हीं जाकर देखो ।"[2]

4.5.3.3 "सार्थकता"

कथोपकथन की सार्थकता इसमें है कि वह कथावस्तु को गति प्रदान करने, पात्रों के चरित्र उद्घाटन में अथवा भावों को प्रकट करने में सफल है, अन्यथा नहीं । प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियों में अनेक स्थान ऐसे हैं, जहाँ पर कथोपकथनों के द्वारा कथावस्तु विकसित हुई है।

4.5.3.4 " अ " - कथावस्तु के विकास में कथोपकथन का योगदान

कथा विकास बहुत कुछ कथोपकथन पर निर्भर करता है। गति शील कथोपकथनों से कथा-प्रवाह तीव्र बना रहता है। जैसे :-

---

1- शेष-संबल - प्रताप नारायण श्रीवास्तव - -पृष्ठ-94

2- मीठी मुस्कान - प्रताप नारायण श्रीवास्तव - -पृष्ठ -175

"आजादी का पहला दिन" में अब्दुल्ला और अम्मा और अब्दुल्ला और कासिम के संवाद[1], "स्नेह बन्धन" में जुलेखा और अब्दुल्ला के संवाद[2], "उद्योग" में रामप्रसाद और सर जगदम्बा प्रसाद के कथोपकथन[3], "कांग्रेस जिन्दाबाद" में काशीनाथ और रामप्रसाद के कथोपकथन "लाल किला"[4]में वृद्धा और इब्राहीम के पारस्परिक संवाद, बीती बाते में :—

खुरशीद ने पानी को घड़े से उड़ेलते हुये कहा —"भाई, पानी तुम भी पीलो ।

युवक ने मन ही मन सोचा—- "यह तो परिचित कण्ठ है।"

युवक ने कहा—"कौन खुरशीद ।"

खुरशीद भी चौंका । वह भी उस युवक की आंखों में अपनी आंखे डालते हुये सहसा बोल पड़ा — "कौन, गुरूवचन सिंह ।"

" हाँ मैं गुरूवचन हूँ ।"[5]

आशीर्वाद में डा० साहब और उनकी पत्नी अन्नपूर्णा और डा० साहब और अरूण के कथोपकथन[6], "तीज की साड़ी में" गायत्री और जाह्नवी तथा जाह्नवी और शिवनाथ के संवाद "[7] । शिवनाथ सिन्हा के संवाद देखिए :-

"केतकी ।"

"क्या है ।"

"कल कौन आया था। वह सज्जन कौन थे ।

यहाँ के बड़े धनी हैं। नाम है उनका परमानंद। कल से उनकी नौकर हो गई हूँ । "[8]

1-आजादी का पहला दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - —पृष्ठ—5,9

2- स्नेह बन्धन - " " —पृष्ठ—38

3- उद्योग - " " —पृष्ठ—49

4- लाल किला - " " —पृष्ठ—74

5- बीती बातें - " " —पृष्ठ—22

6- आशीर्वाद - " " —पृष्ठ—23,30

7- तीज की साड़ी - " " —पृष्ठ—43,50

8- मीठी मुस्कान - " " —पृष्ठ— 171

"लालसा" में सुहासिनी और प्रेमनाथ का कथोपकथन कथा-वस्तु के विकास में सहायक है :--

"अब चलूँगा ।"

"यह क्या अभी से ! थोड़ी देर और बैठिये ।"

"नहीं जाना ही पड़ेगा ।"

"फिर कल आइयेगा ! सबेरे ।"

"शायद न आ सकूँ ।"

कम से कम मेरे ऊपर अनुग्रह करके अवश्य आइएगा ।"

"अच्छा, आऊँगा ।"[1]

इसके अलावा लालसा में सुहासिनी और महेशबाबू, सुहासिनी और राजकुमार, के कथोपकथन भी कथावस्तु के विकास में सहायक हैं ।

4.5.3.5 "ब"- पात्रों के चरित्र चित्रण में कथोपकथन का योगदान

कहानी में कथोपकथन कथानक को गति देने में सहायक होते हैं साथ ही कहानी में इनके द्वारा पात्रों के चरित्र में निखार आता है और कहानीकार की उद्देश्यपूर्ति भी होती है। कथोपकथन द्वारा चरित्र-चित्रण पर प्रकाश दो प्रकार से सम्भव है :--

1- पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा चरित्र का उद्घाटन करना ।

2- कथोपकथन द्वारा अन्य पात्र के चरित्र का उद्घाटन करना ।

अब्दुल्ला और कासिम का पाक सैनिकों से सम्वाद दोनों के चारित्रिक गुणों का उद्घाटन करते हैं :-

---

1- "लालसा"- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 123

कासिम —"अच्छा है कि यह आपना पुराना साथी और दोस्त है, अब इसकी जान बचाने की फिक्र कीजिए ।"

अब्दुल्ला ने तत्परता के साथ कहा :-

"जरूर । मैं पानी गरम करता हूँ, तुम जरा × × × × × ।"

× ×

"दरवाजा सीधी तरह खोल दो, नहीं तो तोड़ दिया जायेगा ।"

(सभी भीतर घुस जाते हैं और कहते हैं × × × × × ×)

"तुम मुसलमान हो ?"

कासिम और अब्दुल्ला ने जबाब दिया –

"हाँ । हम सच्चे मुसलमान हैं ।"

"और हम क्या झूठे मुसलमान हैं ।"

बेशक कम से कम मैं तुम लोगों को सच्चा मुसलमान नहीं समझता ।

× × × × × × × × × × × ×

"इस घर में मेरी बहिन के सिवा और कोई नहीं ।"

हम उसी को देखना चाहते हैं। दोस्तों इन दोनों को पकड़ लो, और अगर ये लोग कोई सीधी तरह न माने तो इनको भी फिर तलवार के धार उतार दो ।"[1]

अब्दुल्ला और कासिम के देश प्रेम, प्रेमबन्धुत्व और एकत्व सर्व भावन्तु सुखिनः का भाव व्यक्त होता है ।

कथोपकथन द्वारा अन्य पात्र के चरित्र का उद्घाटन होता है

लालसा में सुहासिनी के विषय में प्रेमनाथ और महेश का वार्तालाप इसी प्रकार का है :-

महेश निरूत्तर रहे ।

प्रेमनाथ – "बोलो, निरूत्तर क्यों हो ?"

महेश – "तुमने मुझे बड़ी विकट समस्या में डाल दिया ।"

1-आजादी का पहला दिन – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – पृ0-10, 11, 12

प्रेमनाथ – "समस्या कैसी, सीधी बात है। पुरूष स्त्री के भाई का विश्वास करता है, न कि स्त्री का।"

महेश –– "शायद ऐसा ही हो।"

प्रेमनाथ – "अच्छा महेश, तुम्हारा मुझ पर विश्वास है।"

महेश – "अगर तुमपर मेरा आंतरिक श्रद्धा–विश्वास न होता, तो मैं कभी जीवन की ये गुप्त घटनाएँ तुम पर प्रकट न करता।"[1]

सुहासिनी के बारे में दोनों का वार्तालाप सुहासिनी के चरित्रय की ओर इंगित करता है।–।

पात्र वैचित्य की अभिव्यक्ति जब कथोपकथन द्वारा होती है तब कथोपकथन अत्यन्त मार्मिक और सजीव बन जाते हैं। चरित्रयों की उन सूक्ष्म विशेषताओं की उद्घाटन होता है। जिनके स्पष्ट रूप से कहने में पात्र संकोच का अनुभव करता है।

"शेष–संबल में" रामशंकर और चन्द्रमा प्रसादकी विधवा सुन्दरी के कथोपकथन इसी प्रकार का है।"[2]

"आशीर्वाद" में डा० साहब का और भिखारिन का पहला परिचय इसी तरह का है।"[3]

4.5.3.6 "भाषा शैली के निर्धारण में कथोपकथन का योगदान"

कथोपकथन द्वारा कहानियों में प्रयुक्त भाषा और शैली का परिचय प्राप्त होता है। पात्रानुकूल भाषा और शैली की भिन्नता कथोपकथनों पर ही अवलंबित होती है।

- -

1– लालसा – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – –पृष्ठ –119

2– शेष–संबल – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – –पृष्ठ –105, 107

3– आशीर्वाद – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – – पृष्ठ – 16

रामनाथ – कल मैं उमानाथ से मिलने गया था ।

ब्रजकिशोर – फिर ?

रामनाथ – उनकी बहन है प्रेमा ।

ब्रजकिशोर मुस्कराकर बोले – हाँ है तो ।

रामनाथ – तुम मुस्कराते क्यों हो ? जाओ हम नहींबताते।"[1]

4.5.3.7 उद्देश्य कीअभिव्यक्ति में कथोपकथन का योगदान

यों तो उद्देश्य कृति में आद्योपान्त व्यस्त रहता है किन्तु हिन्दी पात्रों के कथोपकथन में उद्देश्य उपेक्षाकृत अधिक मुखरित हो उठता है –

मीठी मुस्कान में शिवनाथ सिन्हा व केतकी का वार्तालाप (संवाद) इसी कोटि का है ः–

मैंने कहा – "तो तुम मुझसे अपना सब सम्बन्ध तोड़ रही हो ।"

केतकी ने कहा–"वह तो तुम्हीं समझ सकते हो । जब मैंने दूसरें की नौकरी करली है तब भला कैसे किसी दूसरे की हो सकती हूँ ।"

मैंने कुछ व्यंग्य से कहा– "तो यही तुम्हारा प्रेम था ।"

केतकी ने हँसते हुये कहा – "हम लोगों में क्या कभी प्रेम होता है । अगर कभी प्रेम की भी कुछ भावना होती है, तो वह मोह होता है, तृष्णा होती है, लालसा होती है, क्षणिक आसक्ति होती है। हम लोग नहीं जानती कि प्रेम किस चिड़िया का नाम है। प्रेम का ढोंग जरूर जानती हैं, लेकिन प्रेम नहीं ।"[2]

1– स्वदेशिनी–प्रतापनारायण श्रीवास्तव–हिन्दी मनोरंजन, फरवरी–1926 – पृष्ठ – 286

2– मीठी मुस्कान – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – पृष्ठ – 172

"कांग्रेस जिन्दाबाद " में काशीनाथ और रामप्रसाद के कथोपकथन[1], "कलंक" में गांव वालों के कथोपकथन,[2] "आशीर्वाद" में भिखारिनी और अन्नपूर्णा के कथोपकथन,[3] "शेष-संबल" में रामशंकर और सुन्दरी का कथोपकथन इसी प्रकार का है।"[4]"तीज की साड़ी"में रामकृष्ण और वारीन्द्र का कथोपकथन ।"[5]

4.5.3.8 वातावरण के निर्माण में कथोपकथन का योगदान

सामान्यतया वातावरण की सृष्टि लेखक स्वकथन द्वारा ही करता है किन्तु कभी-कभी कथोपकथन द्वारा भी देशकाल और वातावरण का निर्माण होता है "लालसा" में राजकुमार और सुहासिनी का कथोपकथन :-

राजकुमार ने अपनी हैट टेबुल पर रखते हुये कहा-"उफ ! आज बड़ी सर्दी है ।"

सुहासिनी ने मुस्कराते हुये उत्तर दिया - "कार्तिक मास समाप्त होने आया, सर्दी के दिन हैं ही । आपने हैट क्यों उतार दी !"

राजकुमार ने मुस्कराते हुये उत्तर दिया -

नारी का मान करना पुरुषों का धर्म है ।"

सुहासिनी ने कहा - "हाँ-हाँ ठीक है ।"

राजकुमार ने हंसी छिपाते हुये कहा - "महेश बाबू आते तो हैं !"

सुहासिनी ने कहा - "आते होंगे, हमें क्या पड़ी है। जभी आते हैं जलाने ही आते हैं। उनको देखकर मेरा रक्त उबल उठता है। उनको देखकर घृणा उत्पन्न हो जाती है ।"

1-कांग्रेस जिन्दाबाद-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-61, 62, 63, 65, 66

2- कलंक - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -

3- आशीर्वाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 39

4- शेष - संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 109

5- तीज की साड़ी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 61

× × × ×   × ×   × ×   × ×   × ×

× × × ×   ×   ×   ×   ×   ×   ×

"जाओ अभी कोई देख लेता, तो क्या होता ?"

"अरे, होता क्या ? लोग कहते, विवाह के पहले दीवार ने वधू का मुख चूम लिया । यह कोई आज नया तो नहीं किया । पहले भी तो कई वार × ×   ×   ×   ×   ×   ×   × ।"

संक्षेप में प्रतापनारायण श्रीवास्तव की सभी कहानियाँ चाहे वह सामाजिक हो, या राजनैतिक कथोपकथन की दृष्टि से सफल रचनायें हैं। उपर्युक्त निर्देशित विशेषताओं के अतिरिक्त उनमें औत्सुक्य, सरसता और सरलता आदि विशेषतायें भी उपलब्ध है। इसीलिये आपकी कहानियाँ संवाद प्रधान हैं । कहानियों में कथाकार ने अपने सम्वादों द्वारा ही वर्णित विषय को इतना सुस्पष्ट, उपादेय तथा मनोरंजक बना देता है कि सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं का हल पाठकों के सामने मूर्तिरूप हो जाता है। श्रीवास्तव जी अपने सम्वादों में ही सब कुछ उड़ेलकर रख देते हैं। यही कारण है कि यथार्थवादिता उनकी कहानियों की एक विशेषता हो गयी है ।

4.5.4 देशकाल अथवा वातावरण

4.5.4.1 श्रीवास्तव जी वातावरण के प्रति पर्याप्त सजग रहे हैं । वे कथानक अथवा पात्रों के अनुकूल वातावरण में सिद्ध हस्त थे। "कांग्रेस जिन्दाबाद" में कुछ नव युवकों का एक हाथ में कांग्रेस का झण्डा लिये हुये प्रवेश दिखा कर वातावरण को सजीवता एवं स्वाभाविकता प्रदान की है:–

नवयुवक :- भारत जिन्दाबाद, आजादी जिन्दाबाद, कांग्रेस जिन्दाबाद ।

एक युवक:- देश की आजादी के लिये कौन लड़ा ?

शेष युवक :- कांग्रेस ।

वही युवक :- राजाओं और जमीदारों का किसने नाश किया ?

शेष युवक :- कांग्रेस ने ।

वही युवक :- संसार में भारत का किसने सिर ऊँचा किया ?

शेष युवक :- कांग्रेस ने ।

वही युवक :- भुखमरी अभाव को मिटाने का संकल्प किसका है ?

शेष युवक :- कांग्रेस का ।

वही युवक :- पूँजीवाद को मिटाने के लिये कौन कटिबद्ध है ?

शेष युवक :- कांग्रेस का

वही युवक :- असांप्रदायिकता, छुआछूत, छोटे-बड़े का भेदभाव मिटाने के लिये कौन अग्रसर है ?

शेष युवक :- कांग्रेस । कांग्रेस । कांग्रेस ।[1]

"पन्द्रह अगस्त के दिन" कहानी का वातावरण कथानक के ही अनुकूल है ।"तुमुल हाहाकार, मारकाट की पैशाचिक ललकार मरने वालों की आर्त पुकार, अबलाओं का चीत्कार, अभागे बच्चों पर बज्रप्रहार, वह कल्पनातीत नर-संहार और महाकाल की प्रत्यक्ष हुंकार सभी मिश्रित और सम्मिलित होकर दिशाओं को कम्पित करते हुये कभी स्पष्ट और कभी अस्पष्ट रूप से आकाश में समाविष्ट हो जाने के लिये आकुल होकर गूंजने लगे ।"[2]

4.5.4.2 "सन्ध्या के अन्धकार में" सुरया अपनी सहेली चम्पा को पाक आतातार्इयों से मुक्त कराने के लिये अपने घोड़े पर सवार होकर रिवाल्वर लेकर आताताइयों का पीछा करती है और उस टुकड़ी के सरदार जो चम्पा को पकड़े हुये था उसे रिवाल्वर का निशाना बनाती है, जो उसका मंगनी शुदा खाविन्द था । उस समय का वातावरण देखिये :-

"मैं पथराई आंखों से उसकी ओर देखने लगी । दर्द से भरी हुई एक चीख निकली, और उसके सिरहाने बैठकर उसके सिर को अपनी गोद में ले लिया । दम तोड़ते हुये, उसकी आंखे मेरे चेहरे पर ठहर गयी । वह मुझे पहचानने की कोशिश करने लगा । मैं उसकी आंखों के सवाल को समझ गई और कहा, हाँ सुरया ही हूँ मैं ।"[3]

1- कांग्रेस जिन्दाबाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-66

2-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 112

3- सन्ध्या के अन्धकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 99

4.5.4.3 कहानी "आशीर्वाद" के समग्रत वातावरण में लगाव, अपनाऽ-पन, ममता, "शेष संबल" में चन्द्रमाप्रसाद के कथोपकथन से उत्पन्न गम्भीर वातावरण कथोपकथन में हास्य परिहास्य, व्यंग्य एवं वासनात्मकता भी चित्रित होती है, किन्तु अन्त में वातावरण में गम्भीरता आ जाती है।

"लालसा" में आदियान्त तक प्रेम, ईष्या, वासना, कामुकता एवं अन्त में गम्भीरता का वातवरण की छाया हुआ है। "मीठी मुस्कान" के प्रारम्भ वातावरण हास्य परिहास, आमोद प्रमोद भरा है। किन्तु शिवनाथ सिंन्हा का केतकी से अवैध सम्बन्ध होने से वातावरण में कलुषता, प्रलोभन, विडम्वना, शारीरिक वासना का पुट आ गया है। शिवनाथ का केतकी से सम्बन्ध विच्छेद होने पर कहानी फिर से आनन्दमय, रसमय हो जाती है ।

" शासन का वरदान" कहानी में वातावरण सामान्य परिवार का है ।

"लाल किला" कहानी के वातावरण में जागरूकता भातीय-ता, लोकप्रियता अर्थात "वसुधैव्य कुटुम्वकार" की भावना से परिपूर्ण है।

"उद्योग" कहानी का वातावरण उच्चमध्यम वर्गीय लोगों की उच्चाशयता लिये हुये है जिनके पास किसी भी तरह का आभाव नहीं है । जो सर्वशक्ति सम्पन्न और राजनैतिक वातावरण से युक्त है ।

कलंक कहानी का वातावरण निम्न वर्ग के परिवार का है जो गम्भीर एवं समाजवाद लिये हुये है ।

4.5.5 भाषा – शैली

4.5.5.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रेमचन्द कालीन कथाकारों में से हैं। आपने प्रेमचन्द काल में वहुचर्चित उर्दू मिश्रित मुहावरेदार हिन्दी का ही अनुसरण किया । गूढ़ से गूढ़ भावों और दार्शनिक विचारों को भी आप बड़ी ही सामान्य बोलचाल की भाषा में व्यक्त कर देते हैं :-

"मनुष्य के दिन चले ही जाते हैं। चाहे वे दिन सुख हो, चाहे दुख के । सुख के दिन बड़ी आसानी से जल की तरह जाते हैं और

दुःख के दिन बड़ी कठिनता से , यही भेद है ।"[1]

"आशा की मधुर थपेड़ें जीवन को सुखमय कर देती है। निराशा शाप है और आशा आशीर्वाद । जब तक आशा है, तब तक प्राणी है, और जहाँ निराशा की भंयकर कालिमामयी छाया आकर पड़ी वहीं नाश, मृत्यु और प्रलय है ।"[2]

4.5.5.1.1 अशिक्षित अथार्थ पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग आपकी कहानियों में देखने को मिलता है। प्रयासजन्य भाषा में आपका विश्वास नहीं है। उर्दू, फारसी, संस्कृत एवं अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग किया है। शब्दों के चयन और उनका समुचित प्रयोग करने में आप सफल थे एक एक शब्द साँचे में ढला हुआ सा मालूम पड़ता है। — Rigorous imprisonment,[3] simple imprisonment,[4] Conscience,[5] Conscience God given,[6] Cannibal,[7] Instinct,[8] Cannibals,[9] for my sake atleast,[10] It is out of etiquette,[11] Arch Bishop,[12] —

अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग आपने अपनी कहानियों में किया

1-शेष संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 68
2- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 110
3- शेष संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 87
4- " " " - पृष्ठ - 87
5- " " " - पृष्ठ - 88
6- " " " - पृष्ठ - 89
7- " " " - पृष्ठ - 89
8- " " " - पृष्ठ - 89
9-शेष संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 89
10-लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 127
11- लालसा- प्रतपानारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 123
12-आशीर्वाद - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 16

4.5.5.1.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव की भाषा पात्रानुकूल, विषयानुकूल अपना रूप संवारती चलती है। यही कारण है कि आपकी भाषा कहीं अस्वाभाविक नहीं होने पायी है। "आशीर्वाद" कहानी में अरूण और "तीज की साड़ी " में जाह्नवी की भाषा बाल सुलभ तोतली प्यारी मधुर भाषा है।

4.5.5.1.3 "शेष संबल " में चन्द्रमा प्रसाद व रामशंकर "कांग्रेस जिन्दाबाद !!! " में रामप्रसाद व काशीनाथ, "लालसा" में सुहासिनी, बैरिस्टर कृष्णचन्द्र, राजकुमार, प्रेमनाथ व महेश बाबू की , "उद्योग" में सर जगदम्बा प्रसाद, पशुपति, प्रसिद्ध उद्योगी श्री रामप्रसाद व मिलमालिक मोती लाल, "लाल किला" में वृद्धा, " सन्ध्या के अन्धकार में" सूरया और अब्दुल्ला , "आजादी का पहला दिन" में अब्दुल्ला और कासिम की भाषा, "बीती बातें" में गुरूवचन सिंह और खुरशीद आदि की भाषा पूर्ण परिपक्व है। जिसमें सरसता, सूक्ष्मता, भावप्रवीणता, प्रवाहमयता, भावाभिव्यंजकता आदि गुण हैं।

हिन्दु मुस्लिम समस्या को लेकर लिखी गई कहानियों में "आजादी का पहला दिन", बीती बातें, स्नेह बन्धन , लालकिला, सन्ध्या के अन्धकार में, पन्द्रह अगस्त का दिन, शासन का वरदान, में मुस्लिम पात्रों की भाषा ठोस उर्दू और हिन्दु पात्रों की भाषा हिन्दी दिखाकर कहानियों में स्वाभाविकता और सजीवता का समावेश किया गया है ।

4.5.5.2 श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव भाषा के कुशल शिल्पी हैं वहीं वह एक कुशल शिल्पी कथाकार भी हैं। आपकी शैली पर 'Style is the man himself'[1] का कथन पूर्णतया खरा उतरता है। विषयानुकूल शैली का निर्माण करने में आप चतुर है । सामान्यता श्रीवास्तव की शैली में विचित्र रूप देखने को मिलते हैं :-

1-विश्लेषणात्मक शैली

2-वर्णनात्मक शैली

3-विवेचनात्मक शैली

4- भावात्मक शैली

5-उद्धरण शैली

4.5.5.2.1 विश्लेषणात्मक शैली

प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियों में विश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग उन स्थलों पर मिलता है, जहां वृकीं बात पात्रों की मनोभावनाओं का विश्लेषण करने लगते हैं। "शेष संबल" ,"मीठी मुस्कान","आशीर्वाद", "लालसा", "लाल किला", कलंक", आदि कहानियों में ऐसे स्थलों की कमी नहीं है। "मीठी मुस्कान" में शिवनाथ सिन्हा को अपने कार्यों पर आत्म ग्लानि होती है।

"मैं चरित्र के ऊंचे शिखर से फिसला, और फिसल करगि--र पड़ा एकदम से उस पाप के भयानक कालिमामय गड्डे में जहां से अब निकलना असम्भव है। पाप कर चुकने के बाद मेरी सदबुद्धि वापिस आई, मैं मन ही मन पछताने लगा । मैं वहां से भागा। इस आशा से भागा कि यहां आकर शांति मिलेगी । तुमसे निष्कपट सब हाल कह दूंगा, तुम मुझे क्षमा करोगी । अपने प्रेम की प्रगाढ़ छाया से , अपने प्रेम के दृढ़ कवच से ढक कर मेरी रक्षा करोगी । लेकिन अब वह आशा निराशा में परिणत होगई । सोचा था, अब पाप न करूँगा । लेकिन अब मुझे बरबस ही अपनी इच्छा के विरूद्ध पाप मार्ग कि ओर अग्रसर होना पड़ा ।"[1]

लालसा में महेश बाबू और सुहासिनी के सम्बन्ध को लेकर जब इष्ट मित्रों को जब आशंका होने लगती है तो प्रेमनाथ स्त्रियों का विवेचन इस प्रकार करता है :-

"तुम्हें मालूम है कि लता वृक्ष के सहारे बढ़ती है। अगर वृक्ष सीधा होता है, तो लता भी सीधी ही चढ़ती है । अगर वृक्ष तने से सीधा हो, और ऊपर नीचे की ओर झुका ना रहा हो , तो लता भी उतनी दूर सीधी ही चढ़ेगी, और फिर वह वृक्ष के साथ ही भूमि पर ही झुकेगी । यह है प्राकृतिक नियम । यदि पुरूष सच्चारित है, तो स्त्री भी- -

1-मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 155

भी अवश्य साध्वी होगी, और अगर पुरूष खराब है, तो स्त्रियां भी खराब होंगी । पैसे देकर गिन्नी की आशा करनामूर्खता नहीं तो क्या बुद्धिमानी है ।"[1]

"शेष-संबल" में बाबूचन्द्रमा प्रसाद की विधवा सुन्दरी विधवा विवाह के पक्ष में है किन्तु रामशंकर इसका विरोध करता है उसका मत है कि विधवा विवाह में काम वासना अधिक होती है, प्रेम कम, इतना कह कर चला जाता है। सुन्दरी सोचती है :-

"हाय, मैं क्या करूँ, अब मैं अपनी इच्छा को रोक नहीं सकती । लेकिन तुमको जीतना भी बड़ा मुश्किल जान पड़ता है। मैं जानती हूँ कि यह पाप है, लेकिन क्या करूँ । मैं अपने को नहीं रोक सकती मेरा पतन निश्चित है। अब तो हो ही रहा है, होने दो ।"[2]

अस्तु विश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपनी कहानियों में यत्र-तत्र बड़ी कुशलता से किया है ।

4.5.5.2.2 वर्णनात्मक शैली

इस शैली का प्रयोग प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उन स्थलों पर किया है । जहां पर वह पात्र की मन: स्थिति अथवा पात्र का व्यक्ति के रूप में चित्रण करते हैं। किसी स्थान व दृश्य का वर्णन करते समय भी वह इस शैली का प्रयोग किया है। जब कभी वह किसी पात्र की मन:स्थिति का चित्रण करते हैं, उनकी शैली में अद्भुत आकर्षण उत्पन्न हो जाता है ।

"स्नेह बन्धन" में अब्दुल्ला अपनी बहिन जुलेखा से कहता है :-

"यमुना महफूज तो है। मुझे अपने मरने का कोई गम नहीं है। अगर गम है तो बस यही कि तू ने मेरा विश्वास किया । उन शैतानों के पंजे से छुड़ाने का और कोई दूसरा रास्ता नहीं था। मैं उसको अपनी बीवी बनाने के बहाने से अपने घर ला रहा था आखिर मैं भी तो इन्सान हूँ। अगर तुझको भूल जाता तो यमुना को भी भूल जाता ।"[3]

1-लालसा- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 117

2- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 104

3- स्नेह बन्धन में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 40

"पन्द्रह अगस्त के दिन" कहानी में वृद्ध अपने जमाता मन्सूर अली को समझाता है कि तुम पाकिस्तान की ओर से न लड़ो वह कहता है :-

"जिसने तुम्हें महजबी जोश दिलाया है क्या तुमने उसे पहचानने की कोशिश की है, पता लगाओगे तो तुम्हें मालूम होगा कि वह शख्स कौम का सबसे बड़ा गद्दार और अंग्रेजी से तनख्वाह इसी बात की पा रहा है। उसको मजहब से उन्सियत नहीं है, मुसलमान कौम से उन्सियत नहीं है, दीन और ईमान से उन्सियत नहीं है, और अगर उसे कुछ उन्सियत है तो अपने ऐश से और आराम से और अपनी तनख्वाह से ।"[1]

"आजादी का पहला दिन", "बीती बातें", "कलंक", "उद्योग", "कांग्रेस जिन्दाबाद", "लाल किला", "सन्ध्या के अन्धकार में", "पन्द्रह अगस्त के दिन", "स्नेह बन्धन", "तीज की साड़ी", "शासन का वरदान", "शेष - संबल", "मीठी मुस्कान", "आशीर्वाद", "लालसा", आदि कहानियों में वर्णनात्मक शैली के स्थल अन्य शैलियों से अधिक है । जहाँ कहीं वह पात्र का वर्णन करने लगते हैं, वहीं उनकी भाषा-शैली में सरलता, संक्षिप्तता व प्रभावात्मकता का कौशल देखते बनता है। सुहासिनी का चित्रण देखिये :-

"सुहासिनी ने अपने नन्हे-नन्हे हाथों से राजकुमार का मुख बन्द कर दिया । राजकुमार ने इसबाद उसकी हथेली चूम ली ।राजकुमार के मुँह पर से सुहासिनी ने झट से अपना हाथ भी खींच लिया । राजकुमार ने खड़े होकर जबरदस्ती सुहासिनी को उठाकर अपने आलिंगन पाश में बद्ध कर लिया । सुहासिनी ने भी आत्म समर्पण कर दिया। राजकुमार बार-बार उसके सुन्दर मुख को चूमने लगा ।"[2]

1-पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 117

2- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 124

4.5.5.2.3 विवेचनात्मक शैली

विवेचनात्मक शैली का प्रयोग उन स्थलों पर मिलता है, जहां पर पात्र किसी विषय पर गम्भीरता से चिन्तन - मनन करते हैं। शेष संबल में रामशंकर और सुन्दरी के संवाद देखिये - "हो सकता है, वह कुसंस्कार हो, लेकिन मैं यह नहीं मानने को तैयार हूँ कि Conscience God given (ईश्वर दत्त है) यह तो समाज का ही प्रभाव है। आप मनुष्य को मारने के बारे में कहते हैं देखिये Cannibal .x. मनुष्यों को, मारने को कौन कहे, खा तक जाते हैं। क्या उनमें Conscience नहीं है। अगर है तो क्यों ऐसा करते हैं। चोरी के बारे में देखिये। चोरी करना पाप है। श्याम देश में यह पाप नहीं गिना जाता, बल्कि एक चालाकी समझी जाती है। क्या वहां के आदमियों को Conscience देना ईश्वर भूल गया था।"[1]

आगे कहती है :- "यह मैं कब कहती हूँ कि बगैर Conscience के कोई आदमी है, लेकिन यह ईश्वर दत्त नहीं है। आप यह कहिये कि श्याम के लोग भी क्या Cannibals की तरह हैं। वे तो शिक्षित हैं।"[2]

बहुत स्पष्ट कहती हुई सुन्दरी कहती है :-

"मैं तो बुद्धि को ईश्वर दत्त पदार्थ नहीं मानती। यह आदमी में स्वयं पैदा होती है। उसे ईश्वर दत्त तो मैं तब मानती, जब आदमी मां के पेट से ही विद्वान पैदा होता है।"[3]

1- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 89-90

2- शेष - संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ - 90

3- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ - 91

.x.- Cannibals एक अफ्रीका में रहने वाली जाति है, जो अभी तक मनुष्य का मास खाती है, और जो अब धीरे धीरे लोप हो रही है।

"सन्ध्या के अन्धकार में" सुरया हिन्दु मुस्लिम युद्ध का कारण अंग्रेजों को मानती है :-

"लोग यह भूल जाते हैं कि हिन्दू और मुसलमान खुदा के दाहिने और बांए सिरों पर संतरी की तरह डटे हुये हैं। मगरिव या पश्चिम में मुसलमानों का निशान चांद जहां आसमान का अंधेरा दूर करता है, उसी तरह मशरिक या पूरब हिन्दुओं के निशान सूरज से चकाचौंध होती है। × × × × × × × × × गरजे दोनों एक दूसरे के अधूरे पन को पूरा करते हैं, और जब दोनों एक होंगे तभी दुनिया की तस्वीर मुकम्मिल होगी ।"[1]

"पन्द्रह अगस्त के दिन", "तीज की साड़ी", "कलंक", "मीठी मुस्कान", "आशीर्वाद", "शासन का वरदान", "उद्योग", "बीती बातें", "पन्द्रह अगस्त के दिन", "स्नेह बन्धन" आदि कहानियों में यत्र-तत्र ऐसे स्थिल भरे पड़े हुये हैं जहाँ पर विवेचनात्मक शैली का अनूप और अनोखा बर्णन किया है।

"लालसा" में सुहासिनी प्रेमनाथ के विषय में बहुत गम्भीरता से सोच रही है :-

"राजकुमार, उन्हें जाने दो । डिप्टी कलेक्टर हैं । रूपया नहीं है। सुन्दर भी नहीं हैं। महेशचन्द्र सुन्दर है। शान्त है, किन्तु भोले हैं। यह भी ठीक नहीं । प्रेमनाथ ! सर्वगुण सम्पन्न है क्या सुन्दर गोल मुँह है। गालों पर ललाई है। कैसी आँखें है। क्या सुन्दर मन है। क्या पुष्ट शरीर है। हाथों में शक्ति होते हुये भी कठोरता नाम को भी नहीं है। कैसा गोरा रंग है, मानो European हैं। सुहासिनी, अगर तू प्रेमनाथ को अपने रूप जाल में, प्रेम जाल में, आबद्ध न कर सकी, तो यह रूप किस काम का ! प्रेमनाथ ! क्या सुहासिनी के जाल से बचकर चले जाओगे । दो को तो फांस लिया । वे दोनों मेरे आज्ञाकारी दास हैं। तुम्हें भी वैसा बना के न छोड़ा, तो मेरा नाम सुहासिनी नहीं ।"[2]

1- सन्ध्या के अन्धकार में - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 96

2- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 126

4.5.5.2.4 भावात्मक शैली

भावात्मक शैली का चित्रण उन स्थलों पर मिलता है, जहाँ पर पात्र भाव दशा में पहुँचकर कवित्वमय प्रवाह में बहने लगते हैं। इस शैली में सरल प्रवाह मयता सर्वत्र लक्षित होती है ।

"लालसा" में महेशबाबू ने सुहासिनी को अश्रुप्लावित देखकर कहा :-

"मैंने आज तक क्या कभी तुम्हारा अविश्वास किया है ? जिस दिन तुम्हारा अविश्वास करूँगा, सुहासिनी, उस दिन मेरे लिये संसार शून्य होगा, पृथ्वी पर मेरा शरीर ही होगा, प्राण नहीं । मुझे सूर्य के ताप में विश्वास नहीं है, चन्द्र की शीतलता में विश्वास नहीं है, किन्तु तुम में विश्वास है, तुम मेरी प्राणेश्वरी हो । मेरी सब कुछ हो । मैं तुम्हें प्यार करता हूँ । मनुष्य जिसे प्यार करता है, क्या कभी उसका अविश्वास कर सकता है ?"[1]

इतना सुनना था कि भावुकता के प्रवाह में सुहासिनी के अन्तर्मन की बात स्वतः निसृत हो ने लगती है :--

"तुम अविश्वास न करते होते, तो कभी मुझसे ये बातें न करते । मैं तुम्हें देखने के लिये कितनी आकुल रहती हूँ, तुम नहीं जानते । मेरे कान तुम्हारे ही शब्द सुनने के लिये आकुल रहते हैं, तुम्हारे सुन्दर मुख देखने को नेत्र सदा रोया करते हैं, तुम क्या जानो ? तुम पुरूष हो, रमणी का हृदय कैसे जान सकते हो ? × × × × × × × × × × × × × तुम क्या जानो, मैं तुम्हें कितना चाहती हूँ ।"[2]

"शेष - संबल " में चन्द्रमा प्रसाद दीर्घ कालिक बीमारी से पीड़ित है और जब उन्हें अपनी मृत्यु के आसार नजर आने लगे । तो वह नवोढ़ा पत्नी सुन्दरी से कहते हैं --"मेरे मरने के बाद तो तुम ××××?" कहते हैं कि सुन्दरी और चन्द्रमा प्रसाद दोनों की भावुकता चरमसीमा पर जब पहुँच जाती है तो सुन्दरी अपने नन्हे-नन्हे हाथों से उनका मुँह बन्द कर देती है और फिर आँखों में आंसू भर कर कहने लगती है -

1- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 113

2- लालसा - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 114

" क्यों ऐसी बातें कहकर मेरा दुःख बढ़ाते हो । मैने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है। मुझसे ऐसी बातें न कहा करो ।"[1]

"तीज की साड़ी" कहानी में जाह्नवी अपनी मां से रेशमी साड़ी खरीद देने को कहती । जाह्नवी अपने मां-बाप की इकलौती लाड़ली पुत्री है जिसके पिता को काले पानी की सजा है। और विचारी पैसों से हीन है। वह जाह्नवी की बात को टाल न सकी उसकी स्थिति ऐसी थी --

"मां की आंखों में आंसू भरे हुये थे । आंसू गायत्री के दूत बनकर निकले थे, किन्तु वे भी न कह सके । शोक से, दुःख से वे मुरझा गये, और आंचल पर गिर कर उसी में कहीं छिप गये । मेहिनी ने उन्हें अपने अंक में छिपा लिया, ठीक उसी भांति, जिस तरह उसने अतीत में जनक-नंदिनी सीता को छिपा लिया था, जब वह शोक और दुःख से पागल हुई जा रही थी ।"[2]

अतः भावात्मक शैली के माध्यम से प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी को अपने पात्रों की भावुकता का उदघाटन करने में पूर्ण सफलता मिली है । एक स्थल पर और देखिये ---

"पन्द्रह अगस्त के दिन" में देश प्रेम की भावना से ओत-प्रोत भारत पाक युद्ध को देखकर वृद्ध के वचन --

"मुझे जाने दे । जितनी जल्दी मैं इस मार काट को, शैतान के नाच को रोक सकूं उतना ही अच्छा है। अंग्रेजों ने इन्सान को शैता-- न बना दिया है। माना कि आज मैं दर-दर का मोहताज हूँ, बूढ़ा हूँ, ताज और ताकत और फौज से महरूम हूँ, मगर फिर भी बहादुर शाह का पोता, तख्ते मुगलिया का वारिश, हिन्दुस्तान का रहबर और हिन्दू - मुसलमानों के इतिहास की जड़ सीचने वालों का आखिरी निशान हूँ। भाई भाई का खून बहते मैं हरगिज नहीं देख सकता । एकबार उन पागलों को

1- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 63

2- तीज की साड़ी - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 46

रोकूँगा और अगर वे न मानेगे तो मेरी लाश पर चढ़कर ही वे जुल्म करेंगे, सितम ढायेंगे । उनकी शर्मनाक हरकतों को देखने और सुनने के लिये में जिन्दा न रहूँगा ।"[1]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियों में ऐसे अनेकानेक तथ्य हैं जिन सबको यहां नहीं लिखा जा सकता ।

उपर्युक्त वर्णित विभिन्न शैलियों के अतिरिक्त अन्य अनेक शैलियों का प्रयोग विषयानुकूल पाया जाता है। वस्तुतः श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी यथा स्थान मनोकूल शैलियों का निर्माण करते चलते हैं। अस्तु उनके सम्बन्ध में यह कथन –

"शैली निजी व्यक्तित्व का प्रकाशन है सर्वांशतः सत्य है ।"

4.5.6 उद्देश्य

4.5.6.1 बाबू प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने अपने सम्पूर्ण साहित्य की रचना सोद्देश्य की है। इन्होंने अपनी प्रत्येक रचना के द्वारा समाज को कोई न कोई उद्देश्य अवश्य दिया है। सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, धार्मिक कहानियों का अपना – अपना महत्वपूर्ण उद्देश्य है। उद्देश्य प्राप्ति में कहानीकार अपनी समस्यायें प्रस्तुत करता है। इन समस्याओं को अधुनातन रूप में समाज के सामने प्रस्तुत किया है ।

4.5.5.2 "विधवा विवाह के बारे में आपने रामशंकर के विचार इस तरह व्यक्त किये :-

"मेरी राय में तो उन विधवाओं का विवाह हो जाना ठीक ही है, जो अपनी वासना को दमन नहीं कर सकती, और जो कर सकती हैं, वे कभी विवाह करके दुराचारिणी न हों। उनको उचितहै कि एक स्वामी की, जिसके चरणों में कभी उन्होंने अपना सर्वस्व भेंट कर दिया था, जिसको ईश्वर के तुल्य माना था, उसी को चिंता में, आराधना में, अपना जीवन उत्सर्ग कर दें। यह तपस्या तो पहले कठिन है, लेकिन बाद में बड़ी सुख प्रद है ।"[2]

1–पन्द्रह अगस्त के दिन – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – पृष्ठ – 113

2– शेष-संबल – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – पृष्ठ – 102–103

श्रीवास्तव जी का कथन है और अगर ऐसी काम वासना की प्यासी विधवाओं का विवाह नहीं होता तो वह फिर पतन के उस गर्त तक पहुँच जाती है कि जिसकी कल्पना करना भी मुश्किल है :-

"हाय, मैं क्या करूँ, अब मैं अपनी इच्छा को रोक नहीं सकती । लेकिन तुमको जीतना भी मुश्किल जान पड़ता है। मैं जानती हूँ कि यह पाप है, लेकिन क्या करूँ । मैं अपने को नहीं रोक सकती, नहीं रोक सकती । मेरा पतन निश्चय है। अब तो हो ही रहा है, होने दो।"[1]
इतना ही नहीं :-

"क्या मुझे कहना ही पड़ेगा । क्या मेरे मुँह से ही कहलवा कर ही मानोगे ? क्या तुम्हें इतना भय है ? इतनी लज्जा है ? प्रियतम, प्राणनाथ बोलो क्या प्यार करोगे ? हैं, हैं, चौंकते क्यों हो ? चौंको नहीं, मैं तुम्हें प्यार करती हूँ । जीवन से भी अधिक प्यार करती हूँ। मेरा प्यार समुद्र से भी अधिक गम्भीर, दामिनी से भी उद्दाम , तूफान से भी उन्मत है। मैं तुमको अपना आराध्य देव मानती हूँ । तुम मेरे प्राणनाथ हो, सबसे अधिक प्यारे हो । मैं तुम्हारे लिये पागल हुई जाती हूँ । तुम मुझे प्यार करो । सब कुछ तुम्हारे चरणों पर न्योछावर है। मान संभ्रम, ऐश्वर्य, स्वर्ग-नरक, भाई-बन्धु, मां-बाप सभी तुम्हारे ऊपर न्योछा- - वर हैं। खाली एक दफे तुम कहो -- प्राणेश्वरी ।"[2]

4.5.6.3 अतः ऐसी विधवाओं का विवाह होना ही अतिश्रेष्ठ- त्तम है ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने प्रायः समस्त कहानियों में समाज में व्याप्त विभिन्न समस्याओं का यथार्थ एवं वास्तविक चित्रण करते हुये अन्त में आदर्श की स्थापना की है। "आशीर्वाद " कहानी में डा० सिविल सर्जन अर्थात् अन्नपूर्णा के पति का भिखारिनी उर्फ अनुसुया की मदद करना, तीज की साड़ी में रामकृष्ण और उनकी पत्नी गायत्री का चरित्र चित्रण, मीठी मुस्कान में शिवनाथ सिन्हा का चरित्र चित्रण, "आजादी का पहला दिन " में अब्दुल्ला और कासिम का उमा कीएवं अन्य भारतीयों की जान

1- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 104

2- शेष-संबल - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 108

को बचाना तथा अपनी जान की बाजी लगा देना , "बीती-बातें" में अमृत, खुरशीदएवं गुरूवचन तीनों के चरित्र चित्रण जो अपने देश के लिये जान देते हैं। "स्नेह बन्धन " में जुलेखा का चरित्र चित्रण जो अपने ही भाई को अपनी सहेली यमुना की रक्षा के निमित अपने भाई के सीने में भाला घुसेड़ देती है। लेकिन वास्तव में यह इसकी भूल थी उसका भाई भी उसकी रक्षा कर रहा था। अतः जुलेखा, यमुना, अब्दुल्ला का चरित्र चित्रण, "लाल किला" में वृद्धा और इब्राहीम के चरित्र, "सन्ध्या के अन्धकार में" सूरया और उसके परिवार वालों के चरित्र चित्रण जिसमें सूरया का ही अधिक प्रशंसनीय है वह अपने ही खाविन्द (पति) को अपनी सहेली चम्पा की इज्जत बचाने के लिये उसे पिस्तौल का निशाना बनाती है।

4.5.6.4 "पन्द्रह अगस्त के दिन" में मुगलसम्राट बहादुरशाह के पौत्र बुलन्द अख्तर उर्फ वृद्ध जो अपने जमायां मन्सूर को अपने ही देशवासियों को मारे जाने से मना करता है तो मन्सूर मौलवी ताज मुहम्मद के कहने से उसकी हत्या कर देता है। अतः वृद्ध एवं नूरून्निसा का चरित्र चित्रण आदर्श की स्थापना करता है। जो उनका लक्ष्य रहा है।

श्रीवास्तव जी का ध्यान अधिकाशतः तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक प्रवृत्तियों और उन्मुख रहा है। श्रीवास्तव जी ने अपने चतुर्दिक व्याप्त सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक वातावरण को प्रकट करने के उद्देश्य से ही कहानियों की सृष्टि की है। न कि मनोरंजन या "जानी, सुनी, देखी घटना को प्रस्तुत करने के निमित साहित्य सृजन का उद्देश्य रहा है।

श्रीवास्तव जी ने "मीठी मुस्कान " में केतकी, महारानी, चम्पा, "लालसा" में सुहासिनी, "शेष-संबल" में सुन्दरी के पतन द्वारा पाश्चात्य संस्कृति की वासना एवं निम्न वृत्तियों के प्रति विरोध प्रकट किया है और अन्त में हिन्दू धर्म और संस्कृति की विजय दिखाई है। हिन्दू धर्म में उनकी अटूट आस्था है वह उसे एक सृष्टि का अनादि सत्य और वास्तविक धर्म समझते हैं। किन्तु धर्म के क्षेत्र में वह पाखण्ड और वाह्य आडम्बरों के कभी समर्थक नहीं रहे हैं। मूर्ति पूजा, तीर्थयात्रा और अन्य

वाह्य आडम्बरों का उन्होंने खण्डन किया है। उनकी धार्मिकता में हृदय की पवित्रता और शुद्धता तथा मानव-कल्याण, परोपकार, सत्य के प्रति आस्था तथा सर्वभूत-जन हिताय की भावना प्रधान है। उनका धर्म साम्प्र- -दायिकता की भावना से अछूता है। उनकी दृष्टि में हिन्दू धर्म और इस्लाम एक ही हैं दोनों एक ही शक्ति के हैं ।

"हम लोग तो एक ही चने की दो दालें हैं ।"[1]

"हिन्दू और मुसलमान उन दिनों बेटी, दो जिस्म और एक जाने थे ।"[2]

"इन दोनों को एक करना ही तुम्हारा फर्ज है, और बादशाह बहादुरशाह के सच्चे मानी में नवासे बनकर उसी तरह तैमूरी खून की ताकत दिखाओ । जैसे तुम्हारे पैगम्बर के नवासे हजरत हसन और हुसैन ने इस्लाम की खिदमत में अपनी जान निछावर कर दी थी ।"[3]

अतः स्पष्ट है कि श्रीवास्तव जी ने अपनी कहानियों में मानव समर्थक नैतिक मूल्यों का समर्थन करने के साथ- साथ मानव विरोधी मूल्यों का खण्डन भी किया है।

4.5.6.5 प्रेम मानव मन की कोमलतम वृत्ति है, जो जीवन पर्यन्त उससे सुसम्बद्ध रहती है। काल क्रमानुसार इसका स्वरूप उसका स्वरूप भले ही बदलता रहता है, परन्तु उससे कभी पृथक नहीं होती ।

प्रेम दो रूपों में मिलता है वासना जनित प्रेम और दूसरा आदर्श प्रेम । परन्तु वासना जनित प्रेम की अपेक्षा आदर्श प्रेम अधिक उत्कर्षता को प्राप्त हुआ है। वासना जनित प्रेम समाज में निन्दनीय है । जबकि आदर्श प्रेम वन्दनीय होता है । प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने वासनात्मक प्रेम को केतकी के माध्यम से "मीठी मुस्कान" में इस तरह व्यक्त किया :-

---

1- शासन का वरदान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 128

2- पन्द्रह अगस्त के दिन - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 106

3- लाल किला - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 80

"हम लोगों में क्या कभी प्रेम होता है । अगर कभी प्रेम की भी कुछ भावना होती है तो वह मोह होता है, तृष्णा होती है, लालसा होती है, क्षणिक आसक्ति होती है। हम लोग नहीं जानती कि प्रेम किस चिड़िया का नाम है। प्रेम का ढोंग जरूर जानती हैं, लेकिन प्रेम नहीं।[1]

"आशीर्वाद", "कलंक", "तीज की साड़ी", "मीठी मुस्कान", "लालसा", "कांग्रेस जिन्दाबाद", "अधुनातन सामाजिक यथार्थ का चित्रण करके लेखक ने कहानी में जान डाल दी है।

"पन्द्रह अगस्त के दिन", "आजादी का पहला दिन", "लाल किला", "बीती बातें", "सन्ध्या के अन्धकार में", "कहानियां हिन्दू मुसलमानों की समस्याओं को लेकर लिखी हैं। ये स्वाभाविक, मार्मिक रोचक एवं हृदयग्राही एवं मनोरंजक हैं। उद्योग और कांग्रेस जिन्दाबाद भी महात्त्वपूर्ण कहानियां है।

समग्रतः प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कहानियां सोद्देश्य सफल एवं सशक्त रचनायें है। और कहानीकार की साहित्यिक प्रतिभा की सफल परिचायक हैं ।

- -

1- मीठी मुस्कान - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 172

4.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और उनके समकालीन कहानीकारों का तुलनात्मक अध्ययन

आधुनिक युग का द्वितीय चरण प्रेमचन्द जी के आविर्भाव से आरम्भ होता है। इस युग में कहानी कला के विभिन्न प्रयोग किये गये । इन प्रयोगों ने कहानी साहित्य को विकसित ही नहीं किया बल्कि शिल्प की दृष्टि से वह निखार उत्पन्न किया जिसके आधार पर भावी कहानी का शिल्प प्रौढ़ बन सका । इसी काल की उपज हैं प्रतापनारायण श्रीवास्तव । इस काल के कहानीकारों में सर्व श्री प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, बेचन शर्मा, उग्र, श्री भगवती प्रसाद बाजपेयी, वृन्दावनलाल वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, कौशिक एवं प्रतापनारायण श्रीवास्तव आदि के नाम उल्लेखनीय है। इन सभी कहानीकारों की आदर्शोन्मुख यथार्थवादी परम्परा में गणना की जाती है। इस परम्परा के प्रमुख कहानीकार हैं - मुंशी प्रेमचन्द जी ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के सहवर्ती लेखकों में प्रेमचन्द, चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, विश्वम्भर नाथ शर्मा, कौशिक, सियारामशरण गुप्त, भगवती प्रसाद वाजपेयी, भगवती चरण वर्मा, राधिकारमण प्रसाद सिंह आदि ।

4.6.1. "प्रतापनारायण श्रीवास्तव और प्रेमचन्द"

4.6.1.1 प्रेमचन्द ने कब से रचना करना आरम्भ किया इस बारे में अनेक भ्रांतियां है, जिनका आधार अधिकांशतः प्रेमचन्द के अपने ही विरोधाभासी कथन हैं। जिनपर उनके जीवनीकारों तथा समालोचकों ने एक पक्षीय धारणाएँ बना लीं । साथ ही प्रेमचन्द के विषय में लिखने वाले अनेक विद्वान हिन्दी तथा उर्दू में एक ही भाषा से परिचित हैं। अपनी असमर्थता के कारण वे विभिन्न प्रकार के संदर्भों से लाभान्वित नहीं हो पाते और इस प्रकार उपलब्ध सामग्री को देखने और परखने से वंचित रह जाते हैं । इसलिये उनके वक्तव्यों में परस्पर विरोध पाया जाता है । देखिये :-

1- "1915 में प्रेमचन्द की पहली हिन्दी मौलिक कहानी "पंच परमेश्वर" प्रकाशित हुई ।" [1]

2- "पंच परमेश्वर (सरस्वती, 1916) उनकी पहली कहानी है जो हिन्दी में प्रकाशित हुई ।"[2]

3- "उनकी पहली कहानी रचना "पंच परमेश्वर" ही नये युग की सूचना देने में समर्थ हुई ।"[3]

4- "हिन्दी में उनकी कहानी "सौत" (पहली कहानी) मानी जातीहै।" [4]

5- "प्रेमचन्द की पहली कहानी हिन्दी रचना "ममता" ही है ।"[5]

4.6.1.2 उपर्युक्त मंतव्यों में दोकहानियों को प्रेमचन्द ही की पहली हिन्दी रचना किया गया है। "पंचपरमेश्वर " हिन्दी की मौलिक रचना नहीं है और न वह 1915 में हिन्दी में प्रकाशित हुई। यह कहानी पहलीवार उर्दू मासिक "जमाना" में मई जून 1916 ई० के अंक में प्रकाशित हुई थी । प्रेम चन्द की आरम्भिक कहानियों के विषय में उनका ही कथन उल्लेखनीय है:-

"पहले-पहल 1907 ई० में मैने कहानियॉं लिखना आरम्भ किया । x x x x x x x x x मेरी पहली कहानी का नाम था-"दुनिया का सबसे अनमोल रतन" वह 1907 ई० में मासिक "जमाना" में प्रकाशित हुई।[6]

शीला गुप्त ने इसका समर्थन करते हुये लिखा है :-

"उर्दू में 1907 ई० से लेखन का कार्य आरम्भ किया ।"[7]

और डा० रामरतन लिखते हैं :- "संसार का सबसे अनमोल रतन 1900 में "जमाना" में प्रकाशित हुई ।"[8]

1-सुरेश सिन्हा-हिन्दी कहानी उद्भव और विकास, - पृष्ठ - 326

2- रामरतन भटनागर- कलाकार प्रेमचन्द - पृष्ठ - 31

3- जितेन्द्र नाथ पाठक - कथाकार प्रेमचन्द - पृष्ठ - 36

4- शीला गुप्त - प्रेमचन्द और उनका साहित्य - पृष्ठ - 134

5- राजेश्वर गुरू - प्रेमचन्द - एक अध्ययन - पृष्ठ - 203

6- प्रेमचन्द - जीवनसार, हंस, फरवरी 1932

7- शीला गुप्त - प्रेमचन्द और उनका साहित्य - पृष्ठ - 124

8- रामरतन भटनागर - प्रेमचन्द - पृष्ठ - 254

यहाँ इसके विस्तृत अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं लेकिन इतना जरूर सत्य है कि प्रेमचन्द जी उर्दू से हिन्दी में आये । जबकि प्रतापनारायण श्रीवास्तव के बारे में स्पष्ट है कि उनकी पहली कहानी "बलिदान" 1918 में लिखी और 1920 में "निकुंज" कहानी संग्रह में प्रकाशित हुई ।

4.6.1.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने छात्र जीवन से ही साहित्य सृजन आरम्भ कर दिया था। आपकी "बलिदान" नामक कहानी सबसे पहली कहानी है जो सन 1920 में "हिन्दी मनोरंजन" नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई, जिसका अनुवाद गुजराती में हुआ । जो आपके पहले कहानी संग्रह "निकुज" में 1922 में प्रकाशित हुई । प्रेमचन्द की कहानियों पर हिन्दी में अनेकानेक शोध किये जा चुके है। परंत उनकी संख्या निर्धारण में परस्पर विरोधी सूचनाएँ उपलब्ध हैं, जिनमें से कुछेक की चर्चा निम्नवत है :-

1- प्रेमचन्द का अपना मत है - "मेरी कहानियों की कुल संख्या लगभग ढाई सौ है ।"[1]

2- आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी लिखते हैं — "प्रेमचन्द जी की कहानियों की संख्या 300 के लगभग है। इसके अतिरिक्त उनकी उर्दू कहानियों की संख्या भी 100 से ऊपर है। इनके मत से प्रेमचन्द की कहानियों की संख्या 400 है।"[2]

3- डा० जितेन्द्र पाठक लिखते हैं -- "प्रेमचन्द ने हिन्दी साहित्य को ढाई-तीन सौ कहानियाँ दी हैं।"[3]

4- डा० रामरतन भटनागर के मतानुसार -"प्रेमचन्द्र ने हिन्दी साहित्य को 300 सौ कहानियाँ लिखी हैं ।"[4]

5- डा० लक्ष्मी नारायण लिखते हैं - "संख्या करने पर इनकी कुल उर्दू कहानियां 178 है ।"[5]

- -

1- प्रेमचन्द - चिट्ठी-पत्री, भाग - 2 — पृष्ठ - 236

2- नंद दुलारे वाजपेयी - प्रेमचन्द साहित्यिक विवेचन - पृष्ठ - 155

3- जितेन्द्र पाठक - कथाकर प्रेमचन्द - पृष्ठ - 36

4- रामरतन भटनागर - प्रेमचन्द्र - पृष्ठ - 217

5- लक्ष्मीनारायण लाल -हिन्दी कहानियों की शिल्पी विधि का विकास — पृष्ठ - 97

6- डा० इन्द्रनाथ मदान का मत है - "प्रेमचन्द ने 250 के लगभग कहानियाँ लिखी ।"[1]

7- डा० देवराज उपाध्याय लिखते हैं - "करीब 400 कहानियां हिन्दी साहित्य को प्राप्त हुई ।"[2]

8- डा० केदार नाथ अग्रवाल के अनुसार - "कहा जाता है, उन्होंने लगभग 250 कहानियाँ लिखी हैं।"[3]

अत: प्रेमचन्द की कहानियों की संख्या बताना कठिन ही नहीं वरन् असंभव हो जाता है। सत्य है कि जितनी कहानियों का सृजन प्रेमचन्द जी ने किया उसका चौथा भाग (1/4) भी प्रतापनारायण श्रीवास्तव नहीं लिख सके । प्रेमचन्द की कहानियों में मूल चेतना बिंदु है कोई सामाजिक आदर्श जो सामाजिक समस्याओं और यथार्थ के तनावों के भीतर से गुजरता हुआ स्थापित होना चाहता है। इसीलिये आपकी कहानियों का परिवेश सामाजिक या पारिवारिक यथार्थ है जो संबंधों, मूल्यों और अभावों के जटिल सूत्रों से बुना गया होता है। इसका अनुकरण प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपनी कहानियों में किया है।

4.6.4 प्रेमचन्द जी की लगभग सभी सामाजिक कहानियों में अर्थ का दवाब है। "पंच परमेश्वर" में अर्थ दो मित्रों के सम्बन्धों में तथा जुम्मन और उसकी खाला के सम्बन्धों में तनाव पैदा करता है, भावात्मक मूल्यों को आहत करता है। अर्थ ही "आत्माराम", "पूसकी रात", "कफन-," "बड़े घर की बेटी", "ईदगाह", "नमक का दरोगा", "मन्त्र" आदि सभी कहानियों में परिवार और समाज के व्यक्तियों और वर्गों के भावात्मक और मानवीय सम्बन्धों को आहत कर एक सुविधावादी भौतिक संबन्ध निर्मित करने का काम करता है। श्रीवास्तव जी के पात्र अर्थ के भाव से पूर्ण उच्च मध्यम वर्ग से मुक्त है। वह आधुनिकता से परिपूर्ण मध्यमवर्गीय हैं।

1- इन्द्र नाथ मदान - प्रेम चन्द एक विवेचन - पृष्ठ - 138

2- डा० देवराज उपाध्याय-आधुनिक हिन्दी कथासाहित्य और मनोविज्ञान - पृष्ठ -188

3- केदारनाथ अग्रवाल - प्रेमचन्द की कहानियां, प्रेमचन्द और गोर्की-पृ0-228

प्रेमचन्द और प्रतापनारायण श्रीवास्तव दोनों ही कहानीकारों की कहानियों की इस अर्थमूलक दुनियां में अनेक तरह की समस्याएं हैं। इस दुनियाँ में पूँजीवादी हैं, सरकारी अमले हैं, वकील हैं, जज है, जमीदार हैं, टूटते हुये रइस हैं, तरह-तरह की स्त्रियाँ हैं, मातायें हैं, बहिनें हैं, बेटियां हैं, प्रेमिकायें हैं, विधवायें हैं, एवं सामाजिक अन्याय से उत्पन्न वेश्यायें हैं। इतनी समता होने पर भी प्रेमचन्द की दुनियां प्रतापनारायण श्रीवास्तव की दुनियां से अधिक वैविध्यपूर्ण है और जीवंत है ।

4.6.1.5 प्रेमचन्द की कहानियां घटनाश्रयी कहानियां हैं किन्तु उनका मुख्य उपजीव्य तो मनुष्य ही है। प्रेमचन्द ने अपने मानव पात्रों की परिस्थितियों और घटनाओं की टकराहट के बीच खड़ा कर उनके आंतरिक रहस्यों को खोलना चाहा है। इसीलिये उनकी लगभग सभी कहानियों में मनोवैज्ञानिक तथ्यों का उद्घाटन होता चला है। किन्तु इन कहानियों का मनोविज्ञान प्राय: चेतन स्तर का मनोविज्ञान है जो परिस्थिति और घटना-सापेक्ष है। आज के अनेक आलोचक प्रेमचन्दमें अचेतन मन के परिस्थिति निरपेक्ष सत्य की तलाश करना चाहते हैं और निराश होते हैं। फिर भी आपकी ऐसी छटा, जो काफी दूर तक इस प्रकार के मनोवैज्ञानिक सत्य की ओर संकेत करती है। अंतर्द्वन्द्व तो उनकी सभी कहानियों में है।

4.6.1.6 प्रेमचन्द और प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी दो की कहानियों का शिल्प उनके सामाजिक जीवन मूलक विषय के अनुरूप ही है — अपनी शक्ति और अशक्ति दोनों में, सामाजिक जीवन का ग्रहण शिल्प को अपनी ऊर्जा से प्राणवान बनाता है। उसके तत्त्वों को समाज की मिट्टी से गढ़ता है और यह अहसास कराता है कि यह शिल्प कृत्रिम नहीं है, सहज भाव से जन-जीवन के बीच से उठाया गया है। जिसकी भाषा उसके शब्द, प्रतीक, मुहावरे, वाक्य विन्यास, व्यंग्यवक्रता, कथन-भंगिमा सभी हमारे परिचित समाज के बीच के हैं। दोनों कहानीकारों में एक विशिष्टता परिलक्षित होती है कि चाहे कथा हो, चाहे देशकाल इन दोनों में अनावश्यक विस्तार नहीं दीखता । प्रेमचन्द की शैली व प्रतापनारायण श्रीवास्तव की शैली में काफी भिन्नता है । प्रेमचन्द की शैली अपना निज महत्त्व रखती है। जो अधिक स्वाभाविक और स्पर्शीय लगती है। तब भी न्यूनाधिक रूप में साम्य अवश्यमिलता है । दोनों ही कहानीकारों के समस्या-चित्रण और समाधान में समानता ---------

के साथ विभिन्नता भी लक्षित होती है । समानताकेकारण है युग की परि-स्थितियाँ और विभिन्नता का कारण है व्यक्तिगत दृष्टि कोण से अन्तर होना । प्रेमचन्द ने समस्याओं को अधिक व्यापक एवं पैनी दृष्टि से देखा है जबकि श्रीवास्तव का दृष्टि कोण इतना सूक्ष्म नहीं है। दोनों की चित्रण कला और आधार भूमि में अन्तर है । प्रेमचन्द में सूक्ष्मता और गहनता के साथ व्यापकता है जबकि श्रीवास्तव जी में केवल व्यापकता ही है। प्रेमचन्द के कृतित्व का समय1901 से 1936 तक रहा जबकि श्रीवास्तव जी का 1920 से माना जाता है।

अन्त में हम यह निःसंकोच स्वीकार करेंगे कि गहरी एवं व्यापक अंतर्दृष्टि, जीवन्त एवं सहज कला कारिता तथा अमोघ भाषाशक्ति आदि से सम्पन्न प्रेमचन्द का कथासाहित्य केवल हिन्दी का ही नहीं समूचे भारत की बहुमूल्य संपत्ति है। दूसरी ओर श्रीवास्तव जी की कहानियों का महत्त्व उस परम्परा को जीवित रखने और अग्रसर करने में ही स्वीकार करना होगा ।

4.6.2 "प्रतापनारायण श्रीवास्तव और जयशंकर प्रसाद"

4.6.2.1 कहानी के विकास काल के केवल दो ही मुख्य चरण हैं। प्रसाद और प्रेमचन्द तथा समूचे विकास - युग का प्रतिनिधित्व इनकी विभिन्न शिल्पविधियों और कलागत मान्यताओं ने किया । प्रसाद जी मूलतः कवि थे । ऐसे तो वे सर्वतोमुखी प्रतिभा से सम्पन्न भी थे, इससे सभी सहमत हैं। इसीलिये उनकी कहानियाँ एक श्रेष्ठ रोमांटिक कवि की कहानियाँ हैं। इसीलिये उनका शिल्प काव्यात्मक और नाटकीय है। प्रसाद के वर्णनों में भी एक काव्यात्मक चित्रात्मकता और संक्षिप्त है। और कथाविन्यास तथा संवाद योजना में नाटकीय वक्रता और सांकेतिकता है। ऐसा ही उनकी भाषा में काव्यात्मक सांकेतिकता और संक्षिप्तता तो है ही उसमें प्रासंगिकता भी है। श्रीवास्तव जी की भाषा सरल, स्वाभाविक, उर्दू अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी है।

4.6.2.2 प्रसाद जी की प्रवृत्ति भावमूलक थी, प्रतापनारायण श्रीवास्तव की यथार्थनिष्ठ, आदर्शमूलक । प्रसाद की प्रवृत्तियों में भारतीय संस्कृति और अतीत की प्रेरणा मुख्य है और उसमें कल्पना की तीव्रता है। श्रीवास्तव

जी सामाजिक धरातल के समाज से रूढ़िग्रस्त रीति रिवाजों और नारी धर्म की परम्पराओं के कलाकार हैं। श्रीवास्तव जी यथार्थ की ओर झुके हुए हैं । यद्यपि उनका यथार्थवादी आदर्शोन्मुख है।

4.6.2.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और प्रसाद की शैली बिल्कुल भिन्न है। श्रीवास्तव जी की शैली स्वाभाविक और रमणीय है। प्रसाद की शैली श्रीवास्तव की शैली से अधिक स्पर्शीय और प्रभावोत्पादक है अर्थात उच्च शैक्षिक स्तर की शैली है। प्रसाद जी की शैली में आधुनिकता और गम्भीर्य के साथ ही साथ पाठक को प्रभावित करने की क्षमता है। इस प्रकार की शैली उनकी अपनी है और यह कहना अनुचित न होगा कि अभीतक कोई कहानीकार उनका अनुकरण और अनुसरण नहीं कर सका है।

प्रसाद के छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आंधी, इन्द्र - जाल, पांच प्रमुख कहानी संग्रह प्रकाशित हुये हैं। श्रीवास्तव के भी पांच कहानी संग्रह का सृजन किया है जो इस प्रकार है - "निकुंज", "आशीर्वाद", "दो साथी", "नवयुग", "विधाता का विधान" । संग्रहों की संख्या की दृष्टि से दोनों कहानीकार समतुल्य हैं। लेकिन जितनी सफलता प्रसाद को मिली उतनी प्रतापनारायण श्रीवास्तव को नहीं ।

4.6.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और चतुरसेन शास्त्री

4.6.3.1 हिन्दी कहानीकारों में प्रतापनारायण श्रीवास्तव और चतुरसेन शास्त्री दोनों का ही महत्वपूर्ण स्थान है। दोनों ही लेखकों ने युगीन समस्याओं का विश्लेषण यथार्थवादी दृष्टिकोण से किया है। इन्होंने जीवन की विकृतियों, विषमताओं, खण्डित मानव की परिस्थितियों तथा अनेक सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं की आलोचनात्मक व्याख्या अपनी कहायों में प्रस्तुत की है । जो यथार्थ की ~~पृष्ठ पर~~ भूमि पर आधारित हैं, पर इन लेखकों में आदर्श के प्रति एक आकर्षण भाव है जो कि युगीन प्रभाव के ही कारण है। समस्याओं के वास्तविक कटुस्वरूप का यथा तथ्य अंकन करते हुये ये अन्त में यथार्थ को ठोकर मार कर पूर्णतया आदर्शवादी बन जाते हैं और उपन्यास की मूल समस्याओं का समाधान आदर्शवाद में खोजने का प्रयत्न करते हैं, जिससे कि मानवात्मा का विकास करके वे मानवता के उत्थान की दशा

में प्राणी को प्रेरणा दे सकें । श्रीवास्तव जी में तो आदर्शवाद इतना प्रबल हो उठा है कि वे यथार्थ तक का भी कहीं कहीं अवहेलना कर गये हैं। इनके आदर्शमय समाधान सम्भव न होते हुये भी आकर्षक है मोहक है ।

4.6.3.2 शास्त्री जी का दृष्टि कोण यथार्थवाद के उग्र रूप की ओर झुकता हुआ सा है। यहां तक कि कहीं कहीं अस्वाभाविकता और अश्लीलता भी समाविष्ट हो गई है। किन्तु इस घोर यथार्थ का पर्यवसान भी अन्ततः आदर्श में हुआ है। उनका यथार्थवाद सप्रयत्न नहीं है, वरन् स्वभावतः प्रसंगवश चित्रित यथार्थ है, जिस पर आदर्शवाद आरोपित है। इसी कारण कहीं-कहीं उनकी कहानियां जीवन से दूर प्रतीत होती हैं।आचार्य चतुरसेन शास्त्री की "दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी" कहानी प्रेम और बलिदान की कथा है । कहानी में प्रिय के प्रति असीम प्यार लिये प्रेमी हृदय की विवश कथा है। पति प्राणा पत्नी की पति के प्रति सात्विक भक्ति भी यहां प्रखरता से व्यक्त हुई है। आपकी भाषा सरल परन्तु आलंकारिक है। वातावरण कथा के अनुकूल उर्दू का प्रयोग भी मिलता है :-

"हाय ! बादशाहों की बेगम होना भी बद नसीबी है । इन्तजारी करते-करते आँखें फूट जायें, मिन्नतें करते-करते जबान घिस जाये, अदब करते-करते जिस्म के टुकड़े-टुकड़े हो जाय, फिर भी इतनी सी बात पर कि मैं जरा सो गई, उनके आने पर जाग न सकी, इतनी सजा ! इतनी बेइज्जती ! "।

4.6.3.3 प्रतापनारायण श्रीवास्तव का भाषा शैली के प्रति आपका न तो कोई विशेष आग्रह है और न दृष्टि कोण ही क्योंकि इस विषय में आपकी मान्यता है कि विषय और पात्र के अनुकूल भाषा शैली का जन्म स्वतः होता है। फिर भी जहां तक सम्भव होता है बोलचाल की भाषा का आप प्रयोग करते हैं जिसमें हिन्दी के तत्सम और तद्भव शब्दों का ही प्रयोग नहीं मिलता है। वरन् उर्दू,फारसी और अंग्रेजी शब्दों का निःसंकोच प्रयोग भी देखने को आता है। जहाँ वैचारिक गम्भीरता होती है वहां भाषा का

1- दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी - चतुरसेन शास्त्री -

संस्कृतनिष्ठ स्वरूप ही देखने को मिलता है। भाषा, पात्र, वातावरण तथा विषय के अनुकूल सर्वत्र देखने को मिलती है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव और चतुरसेन शास्त्री दोनों ही कहानीकारों को अपने-अपने क्षेत्र में सफलता प्राप्त हुई है। चतुरसेन शास्त्री ने श्रीवास्तव जी की अपेक्षा अधिक संख्या में साहित्य रचना की है। किन्तु फिर भी साहित्य-गुण की दृष्टि से वह भी उतने ही श्रेय के भागी हैं जितने कि चतुर सेन शास्त्री ।

4.6.4 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और भगवती चरण वर्मा

4.6.4.1 प्रेमचन्द परवर्ती कथा साहित्य में बहुत से ऐसे कथाकार हैं। जो किसी प्रकार की विचार परिपाटी के अन्तर्गत नहीं आते । उनमें सामाजिक चेतना की पहचान है किन्तु वे मार्क्सवादी नहीं हैं। उन्हें मनोविज्ञान से गहरा लगाव है किन्तु वे मनोविज्ञानवादी नहीं कहे जा सकते । उनके अपने अपने अनुभवों के आधार पर सामाजिक चेतना और मनोवैज्ञानिक चेतना का एक मिला जुला रूप उनकी कहानियों में लक्षित होता है। इस धारा में लिखने वालों में भगवतीचरण वर्माका नाम विशेष उल्लेखनीय है। वे प्रेमचन्द से जैनेन्द्र और यशपाल तक की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं।

4.6.4.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने प्रेमचन्द युग से ही कहानी लिखना आरम्भ किया और उनकी लेखनी निरन्तर ही प्रौढ़तर होती गयी है। तथा विकसनशील सम्भावनाओं को उन्होंने आत्मसात करने का प्रशंसनीय प्रयास किया। श्रीवास्तव जी ने प्रेमचन्द के आदर्शवाद को ही अपनायेरखा जबकि वर्मा ने आदर्शवाद से मुक्त होकर स्वतन्त्र कहानीधारा को जीवन दिया । श्रीवास्तव जी व वर्मा जी दोनों ने ही उच्च मध्यम वर्ग का चित्रण अपनी कहानियों में किया । उच्च मध्यमवर्गीय पात्रों के माध्यम से ही उन्होंने जीवन और समाज की विभिन्न समस्याओं एवं विषमताओं पर अपने विचार प्रकट किये हैं। उच्चमध्यम वर्गीय जीवन के खोखलेपन, उसके सामाजिक एवं पारिवारिक परिवेश व वासना के नग्न नृत्य , विलासिता एवं नग्नता प्रदर्शन, टूटती मर्यादाओं एवं खंडित होती हर अवस्थाओं और नवीन, स्थापित जीवन-विश्वासों का इन कहानियों में यथार्थ वादी चित्रण हुआ है ।

श्रीवास्तव जी के पात्र वर्ग भावना से मुक्त हैं। उनका एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व है, वैयक्तिक भावनाएँ और विचार हैं, आदर्श है जिनकी स्था--पना में ही वे रत रहते हैं।इसी कारण उनके पात्रों में जीवन्तता है, गति है और विविधता है। इसके विपरीत वर्मा जी के अधिकांश पात्र वर्ग भावना वर्गों के प्रतीक हैं। और "भूले बिसरे" होने पर भी हमारे जाने पहचाने हैं। कहानियों में युग, वर्ग, स्वभाव एवं संस्कार के व्यक्ति है और उनकी वर्गीय एवं वैयक्तिक वि-शेषताओं का बड़े सूक्ष्म स्पर्शों में वर्णन किया है।

4.6.4.3 वर्मा जी यथार्थवादी कलाकार हैं। उन्होंने कथानक और पात्रों का चित्रण यथार्थ के धरातल पर ही किया है। उन्होंने अपने यथार्थवादी घोषित किया है। इन्हीं के शब्दों में :-

"मैं यथार्थवाद को वह आदर्शवाद समझता हूँ जो काल और परिस्थिति से अनुशासित है। साहित्य और कला का भाग होने के कारण आदर्श वाद और यथार्थवाद दोनों में ही कुरूपता का कोई स्थान नहीं है असद् और अ-कल्याण से दोनों ही परे हैं। परन्तु प्रत्येक यथार्थवाद में मानव की उदात भावना का समावेश होना चाहिये, क्योंकि इसी उदात भावना में सद् और कल्याण है, और प्रत्येक आदर्शवाद में सहनशीलता होनी चाहिये। शाश्वत सत्य और मान्य-ताओं पर ही उसकी स्थापना होनी चाहिये ।"[1]

प्रतापनारायण श्रीवास्तव यथार्थवादी न होकर आदर्शवादी है। यथार्थ चित्रण करते हुये अन्तत: आदर्श की स्थापना करना उनका लक्ष्य रहा है। समस्या की विभीषिकता और वास्तविकता का चित्रण करते हुये आदर्शमय समाधा-न की स्थापना ही उनकी कहानियों में दृष्टिगत होती हैं। प्रेमचन्द के आदर्श से प्रेरित होकर ही इन्होंने आदर्श को अपनाया और उसका निर्वाह भी आपने अ-न्ततोगत्वा किया । भगवती चरण वर्मा की कहानियों का अपना ठाट है। उनमें एक व्यंग्य भरी मस्ती रहती है। इनके व्यंग्य का क्षेत्र बहुविध है - कहीं धर्म, कहीं समाज, कहीं राजनीति, कहीं इतिहास का कोई प्रसंग, कहीं वर्तमान का एक टुकड़ा, कहीं कोई चरित्र, कहीं कोई व्यवस्था इनके व्यंग्य का निशाना बनते

1- साहित्य की मान्यताएँ - भगवतीचरण वर्मा - पृष्ठ - 55 -- 56

हैं। "प्रायश्चित", "मुगलों ने सल्तनत वख्श दी", "दो बाँके", इंस्टालमेन्ट" आदि वर्मा जी की उत्कृष्ट कहानियां हैं। भगवती चरण वर्मा मूलत: किस्सागो हैं, अत: इनकी कहानियों का ढांचा सर्वथा पारम्परिक ही है किन्तु इनकी व्यंग्य विनोद की प्रवृत्ति उस ढांचे मेंएक तरह की मस्ती और आत्मीयता भर देती है। वे इसी आत्मीयता और मस्ती भरी शैली में किस्सा कहते – कहते विसंगति मय यथार्थ का बड़ा गहरा स्तर खोल देते हैं और पाठक अंत में हंसने के साथ-साथ भीतर-भीतर एक यथार्थ बोध का दबाव अनुभव करने लगता है।

दोनों ही लेखकों ने साथ-साथ लिखना आरम्भ किया था। किन्तु दोनों की अपनी सीमाएँ हैं। श्रीवास्तव की कहानियां सामाजिक एवं राजनैतिक हैं वर्मा जी ने भी सामाजिक एवं राजनैतिक कहानियों का सर्जन किया है। राजनैतिक कहानियों का वाहुल्य है भगवती चरण वर्मा एवं प्रतापनारायण श्रीवास्तव दोनों को ही अपनी – अपनी जगह पर्याप्त सफलता मिली है।

4.6.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक

4.6.5.1 प्रेमचन्द की धारा में लिखने वाले उनके लगभग समकालीन लेखकों में विश्वम्भरनाथ शर्मा "कौशिक" प्रतापनारायण श्रीवास्तव के नाम उल्लेखनीय हैं। दोनों ही लेखकों की कहानियां आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की कहानियां हैं। दोनों ही लेखकों ने सामाजिक और पारिवारिक विषमताओं और समस्याओं का उद्घाटन करते हुये मनुष्य के भीतर निहित सहाशयता को उजागर किया है और उसीसहाशयता से विषमता या समस्या का समाधान प्रस्तुत होता हुआ दीखता है। इनका कथा विन्यास भी प्रेमचन्द के कथा विन्यास की तरह है – घटना श्रयी और वर्णनात्मक । किन्तु ऐसा लगता है कि इनकी कहानियों में कथानक अधिक गठित है। इन दोनों ही कहानीकारों की कहानियां प्राय: मध्यमवर्ग से संबन्धित हैं और अधिकांशत: इनमें पारिवारिक जीवन का यथार्थ उद्घाटित किया गया है। किन्तु ये लेखक प्रेमचन्द की वह यथार्थवादी नहीं पा सके हैं जो समाज को उसकी समग्रता में पहचान लेती है, जो समाज के अनेक वर्गों और चरित्रों के पारस्परिक संबन्धों और उनके मूल में काम करने वाली बुनियादी आर्थिक चेतनाओं को एक साथ समझ लेती है।

4.6.5.2 कौशिक की "ताई", "रक्षा-बन्धन", "कृतज्ञता", "माता का हृदय", आदि अत्यन्त प्रसिद्ध और सशक्त कहानियाँ हैं। "ताई" एक चरित्र प्रधान कहानी है जिसमें निःसंतान स्त्री रामेश्वरी को उसके पारिवारिक परि--वेश में रखकर उसके कुंठित मातृत्व की कथा कही गयी है। रामेश्वरी स्नेह औ-र ईर्ष्या के द्वन्द्व से गुजरती है और अंत में मनोहर के गिर पड़ने वाली मर्मस्प-र्शी घटना से उसके भीतर का वात्सल्य भाव अपनी पूरी मार्मिकता और समग्र-ता से फूट पड़ता है और ईर्ष्या का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। एक मार्मि--क घटना से चरित्र का यह मोड़ मात्र चरित्र तक ही सम्बन्धित नहीं रहता बल्कि वह उस समस्या का भी समाधान करता है जो केवल ताई को ही नहीं वल्कि उसके पति और परिवार को भी अपने में लपेटे थी । प्रेमचन्द की कहा-नियों के समान ही इसमें घटनाओं के बीच-बीच में उनसे जुड़ी हुई सूक्तियाँ दर्शनीय हैं — "ममत्व से प्रेम उत्पन्न होता है, प्रेम से ममत्व । इन दोनों का साथ चोली दामन का-सा है ।

श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव की शैली प्रेमचन्द या कौशिक की शैली कही जा सकती हैकिन्तु वे प्रेमचन्द की अपेक्षा कौशिक के अधिक निकट हैं। कौशिक की भाँति उनकी कहानियाँ भी संवाद प्रधान होती हैं। इस प्रकार की कहानियों में कथाकार अपने संवादों द्वारा ही वर्णित विषय को इतना सु-स्पष्ट, उपादेय तथा मनोरंजक बना देता है कि सामाजिक तथा राजनैतिक समस्याओं का हल पाठकों के आगे नाचने लगता है। श्रीवास्तव जी अपने सम्वा-दों में ही प्रायः सब कुछ उड़ेल कर रख देते हैं। इतना होते हुये भी इनकी कहा--नी इतनी ग्रिपिंग करती हैं कि पाठक उनकी कहानी बिना समाप्त किये उठ नहीं सकता । यही कारण है कि यथार्थवादिता उनकी कहानियों की एक वि-शेषता हो जाती है ।

4.6.5.3 श्रीवास्तव जी के पात्रों और वर्णनों में विविधता है। पात्र सजग हैं, सचेष्ट हैं। उनमें गति है, जीवन है। उनका चरित्र स्वयमेव विकसित होता जाता है। श्रीवास्तव जी के कुछेक पात्र यद्यपि वर्गीय हैं किन्तु अधिकांश-तः वैयक्तिक है, लेखक ने उनकी मनोभूमि और विचारों का भी सुन्दर विश्ले-षण किया है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी के विपरीत कौशिक जी के पात्र वर्गीय भावनाओं से युक्त हैं। इनके पात्रों के चरित्र चित्रण में मनोविज्ञान का कोई आश्रय नहीं लिया है और न ही उनकी अंतः चेतना तक पहुँचने का उद्योग किया है। कहानी रचना के क्षेत्र में कौशिक को प्रतापनारायण श्रीवास्तव की अपेक्षा अधिक सफलता मिली ।

4.6.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और सियारामशरण गुप्त

4.6.6.1 प्रेमचन्द के सामाजिक यथार्थ और कथा विन्यास को आदर्श मान कर लिखने वाले लेखकों में सियारामशरण गुप्त व श्रीवास्तव का नाम उल्लेखनीय है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव और सियारामशरण गुप्त दोनों की ही रचनाओं का मूल मानवतावादी है। मानव कल्याण के लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर देना ही उनके पात्रों का लक्ष्य रहा है। वे नैतिकता के समर्थक हैं, यही कारण है कि उनके पात्रों का कहीं भी नैतिक पतन चित्रित नहीं हुआ है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के समर्थक एवं पोषक हैं। उनकी कहानियों में हिन्दू धर्म और भारतीय सभ्यता और संस्कृति का समर्थन तथा पाश्चात्य संस्कृति का विरोध प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों रूपों में अंकित हुआ है। भारतीय संस्कृति के प्रगतिशील तत्वों एवं रूढ़िहीन परम्पराओं को पुनःजीवित कर वे ऐसा सामाजिक रूप विद्यमान चाहते हैं जिनमें नारियों का शोषण न हो,उनका सम्मान हो ।

4.6.6.2 सियारामशरण गुप्त जी भी भारतीय आर्य सभ्यता के सच्चे प्रतिनिधि हैं। उनकी प्रत्येक पंक्ति में उनके सात्त्विक और आस्तिक हृदय का प्रतिविम्ब मिलता है। गुप्त जी की कहानियों में एक सरलता है। कथा स्वाभाविक गति से आगे बढ़ती जाती है उसमें कहीं भी विरोध, क्रान्ति अथवा आरोह-अवरोह नहीं जबकि श्रीवास्तव जी के कथानकों में आकस्मिक परिवर्तन और घटनाओं की विविधता गति, चमत्कार और आकर्षण का समावेश कर देती है। गुप्त जी के समान ही श्रीवास्तव जी आदर्शोन्मुख यथार्थवादी हैं । श्रीवास्तव जी के समान ही गुप्त जी ने भी बाह्य आडम्बरों में विश्वास नहीं रखते है। गुप्त जी के कथानक सामाजिक हैं। उनमें तत्कालीन राजनीतिक,आर्थिक आदि समस्याओं का चित्रण नहीं किया है।

उनमें विविधता में एकता है। जबकि श्रीवास्तव जी की कहानियों में तत्कालीन समस्त राजनीतिक घटनाओं, क्रान्तियों और समस्याओं का समावेश हुआ है। इसी कारण उनकी कहानियों में विविधता है, गति है और पाठकों के लिये आकर्षण है।

गान्धीवादी विचारधारा का दोनों ही लेखकों पर प्रभाव दृष्टिगत होता है। वे व्यक्ति का चारित्रिक विकास चाहते थे और हिंसा पर अहिंसा की विजय। उन्होंने व्यक्ति मात्र के प्रति घृणा न कर उसके प्रति सहानुभूति पर इसलिये बल दिया है क्योंकि मूल रूप से व्यक्ति अपने में बुरा नहीं है। वह बुरा बनता है उन परिस्थितियों एवं वातावरण के कारण जिसमें जीवित रहने के लिये उसे समाज विवश करता है।

4.6.6.3 अनेकानेक समानताओं के होने पर भी दोनों कहानीकारों की कहानियों में पर्याप्त अन्तर देखने को मिलता है। जहाँ श्रीवास्तव जी के कथानकों का आधार सभी प्रकार की सुख सुविधाओं एवं ऐश्वर्यमय साधनों से परिपूर्ण उच्चमध्यम वर्गीय जीवन है वहाँ गुप्त जी ने समाज के निम्न वर्गीय साधारण पात्रों के जीवन को कथानक का आधार बनाया है। सियारामशरण गुप्त की "बैल की बिक्री" कहानी और प्रतापनारायण श्रीवास्तव की "आशीर्वाद", "कलंक", "बलिदान", "पन्द्रह अगस्त के दिन", "शेष-संबल", "मीठी मुस्कान", आदि अत्यन्त कहानियाँ अत्यन्त ख्याति पा चुकी हैं।

सियाराम शरण गुप्त जी की अपेक्षा प्रतापनारायण श्रीवास्तव अधिक ख्याति लब्ध रहे हैं।

4.6.7 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और भगवती प्रसाद वाजपेयी

4.6.7.1 अमर कथा शिल्पी भगवती प्रसाद वाजपेयी भी प्रेमचन्द युगीन कहानीकारों की श्रृंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं। साहित्य यात्रा आपकी और प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी की एक साथ आरम्भ हुई थी। दोनों ही समकालीन कहानीकार और एक ही परम्परा के अनुवर्ती हैं। लेकिन डा० राजेन्द्र सिंह गौड़ ने उन्हें एक नई परम्परा के कलाकारों में उनका चयन किया है :-

"वाजपेयी जी प्रेमचन्द और प्रसाद के समकालीन हैं, पर उन्होंने न तो प्रेमचन्द का अनुकरण किया है और न प्रसाद जी का। इन

महान कलाकारों की विचारधारा के समन्वय से जो एक तीसरे प्रकार की धरा बनती है। उसी का प्रतिनिधित्व वाजपेयी जी ने अपनी रचनाओं में किया है।"[1]

वाजपेयी जी के कथा साहित्य में सामाजिक प्रवृत्तियों का अंकन बड़ी सफलता के साथ हुआ है। उन्होने वास्तविक जगत से अपनी कथावस्तु की सामग्री एकत्र की है। जीवन में जहाँ दुःख है, प्रेम है, कष्ट है, छटपटाहट और तड़पन है वहीं से वह अपनी सामग्री बटोरते हैं। उन्होंने जो कुछ देखा सुना है, उसी का सफल चित्रण किया है। वह मानवतावादी है और साथ ही व्यक्तिवादी भी है। वाजपेयी की लगभग सभी कहानियों में पात्र मध्यम वर्ग के हैं, जो प्रेम और उससे उत्पन्न निराशा से ग्रस्त रहते हैं। उनके पात्र योजना का उज्जवल पक्ष भी है। उनके सभी पात्र मानव हृदय के सामूहिक भाव का उदवोधन करते हैं। आपने पात्रों के माध्यम से नयी पुरानी मान्यताओं का सफल समन्वय स्थापित करने में समर्थ हैं ।

4.6.7.2 श्रीवास्तव जी ने पात्रों का चयन मध्यमवर्गीय समाज से किया है जो शिक्षित एवं आधुनिक वैभव से पूर्ण है । श्रीवास्तव के समान वाजपेयी जी का आशीर्वाद उनकी आदर्शवादी मान्यताओं से कभी भी विलग नहीं हो पाया है। प्रेम का सदा आदर्श-समन्वित रूप ही प्रस्तुत हुआ है । अस्तु जीवन में संघर्ष करना वाजपेयी जी के मतानुसार यथार्थ है और आगे बढ़ते जाना आदर्श । वाजपेयी का आदर्शवाद यथार्थ की अनुभूति से अनुप्राणित है। यथार्थ से आगे भी उन्हें आदर्श के ही दर्शन होते हैं।

4.6.7.3 श्रीवास्तव जी के समान ही वाजपेयी के साहित्य में गांधीवादी विचारधारा का प्रतिफलन हुआ है। क्रान्ति में उनको विश्वास नहीं, शान्ति का मार्ग उन्हें भी प्रिय है। वाजपेयी की पहली कहानी "यमुना" जबलपुर की प्रख्यात पत्रिका "श्रीशारदा" में प्रकाशित हुई। वाजपेयी जी ने उपन्यास नाटक, कविता, निबन्ध आदि की भाँति ही कहानी लेखन में आपको सफलता मिली । आपके प्रकाशित कहानी संग्रह की सूची इस प्रकार है :-

---

1- हमारे लेखक - राजेन्द्र सिंह गौड़ - पृष्ठ - 388

मधु पर्क - 1929, हिलोर- 1929, दीपमालिका- 1931, पुष्पकारिणी - 1929, खाली बोतल - 1940, मेरे सपने - 1940, ज्वार भाटा - 1940, कला की दृष्टि - 1940, उपहार - 1943, अंगारे - 1944, उतार चढ़ाव - 1950, आदान प्रदान, स्नेह, बाती और लौ, मेरी श्रेष्ठ कहानियां- 1966, मेरी लोकप्रिय कहानियां - 1966 ।

आपने लगभग 300 कहानियों का सृजन किया । श्रीवास्तव जी ने अत्यधिक कहानियों का सृजन तो किया है जिससे संख्या के आधार पर आपको वाजपेयी जी के समकक्ष रखा जा सके लेकिन जितनी भी कहानियों का सृजन आपने किया है, वो सब महत्वपूर्ण हैं। श्रीवास्तव जी के प्रकाशित कहानी संग्रह निम्न प्रकार हैं :-

निकुंज- 1922, आशीर्वाद - 1934, दोसाथी - 1950, नवयुग - 1953, विधाता का विधान - 1961, इसके अलावा भी आपकी बहुत सी कहानियां पत्र पत्रिकाओं में पड़ी हैं।

4.6.7.4 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और भगवती प्रसाद वाजपेयी दोनों ही कहानीकारों ने अपने युगानुरूप समस्याओं का समाधान आदर्शात्मक ही प्रस्तुत किया है ये दोनों ही आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानीकार हैं। श्रीवास्तव जी भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रबल समर्थक और प्रबुद्ध आख्याता हैं। भारतीय विचारकों द्वारा प्राप्त आदर्शों की स्थापना ही उनका उद्देश्य रहा है।

भगवती प्रसाद वाजपेयी दुनिया के उन मुक्त भोगी, संतप्त एवं संत्रस्त महान लेखकों की परम्परा में हैं जो गरीबी में पैदा हुये और गरीबी की सारी कठिनाइयाँ झेली और धरती की मिट्टी से निर्मित मानव मूर्तियों को जीवन दिया, वाणी दी, बल दिया ।वाजपेयी और श्रीवा- - स्तव ने एक साथ ही लिखना आरम्भ किया था किन्तु फिर भी रचनाओं की मात्रा में पर्याप्त अन्तर दृष्टिगत होता है श्रीवास्तव जी के 5 कहानी संग्रह प्रकाशित ही हुये हैं जबकि वाजपेयी जी के 13-14 कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। दोनों ही कहानीकारों ने हिन्दी कहानी साहित्य में अभूतपूर्व (अक्षय) वृद्धि की जिसके लिये कहानी साहित्य और हिन्दी साहित्य जगत आपकी सेवा का हमेशा आभारी रहेगा ।

4.6.8 प्रतापनारायण श्रीवास्तव और अन्य समकालीन कहानीकार

प्रेमचन्द, भगवती चरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, सियारामशरण गुप्त, एवं गुप्त आदि कहानीकारों और श्रीवास्तव जी में तुलनीय तत्व अधिक पाये जाने के कारण ही उनका विवेचन पीछे किया गया है। इनके अतिरिक्त ऐसे साहित्यकार भी हुये हैं जिन्होंने भिन्न प्रवृत्तियों को लेकर कहानियों की रचना की ।

मनोविज्ञान का आश्रय लेते हुये पात्रों के मनोविश्लेषण पर अधिक बल देने वाले जैनेन्द्र और इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय मार्क्स के सिद्धान्तनुकूल कहानियों का सृजन करने वाले यशपाल, मन्मथनाथ गुप्त, रांगेय राघव, नागार्जुन, भैरव प्रसाद गुप्त के नाम उल्लेखनीय है। श्रीवास्तव जीने इन विविध विचार धाराओं के मध्य साहित्य रचना की । किन्तु उनमें किसी भी प्रवृत्ति विशेष के चिन्ह दृष्टिगत नहीं होते हैं। वह इन सबसे असम्पृक्त रहकर अपने आदर्शानुकूल कहानियों का सृजन किया । इसी कारण इनमें और जैनेन्द्र जोशी आदि साहित्यकारों में तुलनीय तत्व का अभाव पाकर उनका विस्तृत विवेचन करके एक संक्षिप्त वर्णन मात्र, इन विभिन्न प्रवृत्तियों का परिचय मात्र देने के निमित, यहाँ किया जा रहा है ।

4.6.8.1 जैनेन्द्र ने प्रेमचन्द की परम्परा को आगे बढ़ाने के स्थान पर उससे टकराहट अनुभव की । उन्होंने कहानी की एक सीधी रेखा को आगे बढ़ाने के स्थान पर उसे एक नया मोड़ दिया। इस मोड़ से आरम्भ होने वाली कहानी अपनी चेतना और संरचना दोनों में नयी थी । जैनेन्द्र ने एक दार्शनिक मुद्रा के साथ व्यक्ति की संक्रांत मनः स्थिति को उजागर करना चाहा, इसके लिये उन्होंने हल्का-हल्का बाहरी परिवेश के मनोवैज्ञानिक सत्यों की पहचान करना कराना ही इनकी कहानियों का उद्देश्य है। पत्नी, जाह्नवी, समाप्ति, इनाम, खेल, चोर आदि इनकी महत्वपूवर्ण कहानियां हैं।

"पत्नी" में एक अत्यन्त घरेलू वातावरण में मध्यम वर्गीय पत्नी का सहज चित्रण है। "जाह्नवी" में एक प्रेम में टूटी हुई स्त्री की मानसिक दशा की अभिव्यक्ति है किन्तु यह सारी अभिव्यक्ति एक अनुकूलपरिवेश-विम्ब के माध्यम से है। "[1] "चोर" कहानी में बच्चे के मन में अंकित

भंय और उसे उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों का बड़ा ही सुन्दर चित्र-ण है। वास्तविक चोर से बच्चे का साक्षात्कार उस भय को समाप्त कर देता है इस सत्य की प्रतीति से कहानी समाप्त होती है।"[1]

जैनेन्द्र ने मनोवैज्ञानिक कहानियों के संदर्भ में सामाजिक विसंगतियों का सांकेतिक चित्रण किया है। किन्तु कुछ कहानियां ऐसी हैं। जो सामाजिक विसंगतियों को ही लक्ष्य बनाकर चलती हैं। "अपना-अपना भाग्य" एक ऐसी ही कहानी है।

4.6.8.1.1 जैनेन्द्र की कहानियों में संवाद और भाषा के क्षेत्र में भी एक नवीनता लक्षित होती है। सांकेतिकता और क्षिप्रता से भरे घरेलू परि-वेश के छोट-छोटे सहज संवाद दर्शनीय हैं। भाषा पढ़े लिखे मध्यमवर्गीय परि--वार की बोलचाल की भाषा है। भाषा में बोल चाल की सहजता के साथ सांकेतिकता है और अनुभूत अर्थ की मूर्तता है। आपके कहानी संग्रह निम्न हैं "फांसी", "दो चिड़ियां", "वातायन", "एक रात", "जय संधि", जैनेन्द्र की कहानियां शीर्षक से इनकी कहानियां दस भागों में प्रकाशिताहो गयी है। जैनेन्द्र के जीवन दर्शन के मूल में भेद के भीतर अभेद का शाश्वत भारतीय भाव है।

4.6.8.1.2 आपके पात्रों में मानवतावादी दृष्टिकोण प्रतिफलित हुआ है। आत्म पीड़न एवं आत्मोत्सर्ग ही उनके जीवन का लक्ष्य है। उनमें त्याग, स्नेह, सहिष्णुता आदि गुण हैं। "परख" की कट्टों तथा "तपोभूमि" के नवी-न धरणी तथा शशि में "पर" के लिये"स्व" का बलिदान लक्षित होता है।

4.6.8.2 इलाचन्द्र जोशी जी का नाम मनोवैज्ञानिक कथा लेखन के साथ अपरिहार्य भाव से जुड़ गया है। एक प्रकार से जैनेन्द्र अज्ञेय और इलाच-न्द्रजोशी की त्रयी एक साथ आती है। लेकिन इलाचन्द्र जोशी इन दोनों क-थाकारों के साथ अपनी उपस्थिति सिद्ध करने में असफल रहते हैं। इसकाकारण

1-जाह्नवी - "कागा चुन, चुन खाइयो ....

दो नैना मत खाइयो,

पीउ मिलन की आस ।"

यह है कि एक तो इनका मनोविज्ञान आवश्यकता से अधिक किताबी मालूम पड़ता है, दूसरा इनका शिल्प भी पारम्परिक है। ऐसा मालूम पड़ता है। जैसे इन्होंने फ्राइड के सिद्धान्तों की व्याख्या की हो। जहाँ सिद्धान्तों की व्याख्या नहीं होती वहाँ उनका मनोविज्ञान पुराने प्रकार के पात्र का आ--त्म मंथन हो जाता है। जो घटनाओं और प्रसंगों की सापेक्षता में उभरता चलता है। इसके साथ ही उनमें सामाजिकता की भावना भी है जिसे वे म-नोवैज्ञानिक व्याख्या या मंथन के साथ चिपका कर अपनी कृति को सामा-जिक मनोविज्ञानवादी रूप देना चाहते हैं, इसीलिये वे अहम् को केन्द्रित कर--ते हुये भी उसे सामाजिक दृष्टि से अश्रेयस्कर मानते हैं और अहम् को उदा-त्तीकरण करके उसे सामाजिकरूप प्रदान करना चाहते हैं।

4.6.8.2.1 जोशी जी का कथा शिल्प पारम्परिक है। मनोवैज्ञानिक कथाकारों ने जो घटनाओं को स्वत: घटित होते देने चलने की, चित्रणकी, प्रतीकों और प्रतिबिम्बों के माध्यम से अनाटकीय अभिव्यक्ति की जो प्रणा--ली अपनायी थी, इलाचन्द्र जोशी उसे नहीं अपना सके। वे पुरानी किस्सा गोई की परम्परा में ही कथा का वर्णन करते हुये चलते हैं। उनकी कथा में घटनाओं की स्फीति और सघनता भी वर्तमान है। भगवती प्रसाद वाजपेयी इनकी अपेक्षा अधिक मनोवैज्ञानिक कहानी क्षेत्र में प्रासंगिक और सशक्त हैं।

4.6.8.2.2 श्रीवास्तव जी और जोशी जी की मूल प्रवृत्तियों में प-र्याप्त अन्तर है। जोशी जी ने मानव मन की कुण्ठाओं, दमित वासनाओं, सैक्स और प्रेम का चित्रण स्पष्ट रूप से विस्तार पूर्वक किया है। इसके वि-परीत श्रीवास्तव जी ने समस्याओं का चित्रण सैद्धान्तिक धरातल पर न कर व्यवहारिक आधार पर किया है। प्रेम, काम, सैक्स आदि का निरूपण करते हुये भी वे भारतीय कौटुम्बिक या गार्हस्थिक मार्यादाओं के भीतर रहना ही उचित समझते हैं। जोशी जी की भांति मन के अचेतन में लुप्तप्राय काम कुण्ठाओं के अप्राकृतिक अथवा विलक्षण रूपों का निरूपण करने में श्रीवास्तव जी की वृत्ति नहीं रमी है।

4.6.8.3 अज्ञेय की कहानियां अज्ञेय की संवेदनाओं की ही नहीं उनके अध्ययन मनन और एक वैदिक दृष्टि का भी परिचय देती चलती हैं। जहां जैनेन्द्र की कहानियां एक अत्यन्त सावधान कहानीकार की सावधानी और आभास की प्रतीति को भी आभासित करती चलती हैं। जहां पर

जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों को अपनी बौद्धिकता को संवेदना में, आयासको सहजता में, सावधानी को लापरवाहवाही में घुला मिलाकर अपनी कहानियां अत्याधिक घरेलु बना देते हैं। वहाँ अज्ञेय की कहानियां वैदिक अभिजात व्य--क्ति की तरह एक कसी हुई बौद्धिक दृष्टि, अनुभव वैशिष्ट्य, अध्ययन संपन्न--ता और मितभाषित में सतत आवधान दि,ाई पड़ती हैं। इन कहानियों में न तो प्रेमचन्द और यशपाल की घटनाश्रयी कहानियों का वेग और बहा--व है, न जैनेन्द्र की कहानियों कोवातावरण में घुली हुई सहज द्रवणशीलता है बल्कि एक अंहकेन्द्रित व्यक्तित्व के विचारों और भावों का कसाव है।

4.6.8.3.। अज्ञेय जी के कहानीसंग्रह निम्न हैं :- जयदौल, परम्परा, विपथगा, कोठरी की बात, और कहानियां -खितीन बाबू, रोज, लेटर ब--क्स, हजामत का साबुन, देवी सिंह, शरण दाता, शत्रु, बदला, मुसलिम-मुस--लिम भाई-भाई, कड़ियां, पुलिस की सीटी , छाया, पठार का धीरज, कलाकार की मुक्ति आदि आपकी प्रसिद्ध कहानियां हैं।

अज्ञेय जी का व्यक्तित्व उनकी कहानियों में निजता प्र--दान करता है। इस निजता की बनावट बड़ी जटिल है। अज्ञेय जी अपनी सारी सजगता के बाबजुद कहानी के क्षेत्र में प्रेमचन्द, प्रतापनारायण श्रीवास्तव जैनेन्द्र और यशपाल की प्रभाव शक्ति नहीं अर्जित कर सके हैं। इसीलिये इस क्षेत्र में इनके समान ये प्रासंगिकता भी नहीं प्राप्त कर सके ।

4.6.8.3.2 अज्ञेय व्यक्तिवादी कहानीकार हैं और श्रीवास्तव जी समाजिक । श्रीवास्तव जी की कहानियों में वर्णित घटनाएं व्यवहारिक हैं, यथार्थ जीवन में घटित हो चुकी हैं। इसके विपरीत अज्ञेय की रचनाओं में अंकित घटनाएं, परिस्थितियां, वास्तविक न होकर सम्भाव्य हैं। यथार्थ जीवन में उनकी निष्पति के विषय में शंका हो सकती है। जीवन दर्शन की विभिन्नता के कारण ही अज्ञेय और श्रीवास्तव जी की रचनाओं में भिन्नता है, अन्तर है । जहाँ जैनेन्द्र और अज्ञेय ने प्रेमचन्द से एक टकराहट अनुभव कर हिन्दी की कथा परम्परा को एक नया मोड़ दिया वहां यशपाल ने अपने ढ़ंग से प्रेमचन्द की परम्परा को ही आगे बढ़ाया है ।

4.6.8.4 यशपाल ने प्रतापनारायण श्रीवास्तव के समान ही सामा--जिक जीवन यथार्थ को कहानियों का विषय बनाया और कौतुहल तथा जि--जिज्ञासा उत्पन्न करने वाली वेग के साथ वहां ले जाने वाली कथावस्तु की

रचना की और अंत के बिंदु पर वेग के साथ कहानी के मर्म का उदघाटन किया । यशपाल ने विशेषतया मध्यमवर्गीय समाज के यथार्थ से अपनी कहानियों का संसार सर्जित किया है मार्क्सवादी दृष्टिकोण धारी यशपाल में सामाजिक राजनैतिक चेतना का बड़ा ही प्रखर और परिवर्तित रूप लक्षित होता है। जो एक ओर तो देश और समाज की वास्तविकता से जुड़ी है । तो दूसरी ओर कहानीकार की मार्क्सवादी दृष्टि से ।

4.6.8.4.1 यशपाल की कहानियों में मध्यमवर्गीय समाज की विसंगतियों का बड़ा तीखा अहसास उजाया है। "फूलों का कुर्ता" में यशपाल जी ने बड़े ही कलात्मक ढंग से यह व्यक्त किया है कि हमारा मध्यमवर्ग अपने को ढकने के प्रयास में नंगा हो जाता है। यशपाल जी ने हमारी सारी नैतिक मूल्यगत मान्यताओं को विसंगतियों का बड़ी निर्ममता के साथ उदघाटित किया है। "पतिव्रता", "प्रतिष्ठा का बोझ", "ज्ञानदान", "धर्मरक्षा", "परदा", "काला आदमी", चार आना" आदि अनेक सुन्दर कहानियां इस सन्दर्भ में प्रस्तुत की जा सकती हैं। "पिजड़े की उड़ान", "ज्ञान दान",;"अभिशप्त", "उत्तराधिकारी", "चित्र का शीर्षक", "तुमने क्यों कहा था कि मैं सुन्दर हूँ" आदि कहानी संग्रह प्रकाशित हुये ।

यशपाल जी का साहित्य उनके क्रान्ति कारी जीवन से अत्याधिक प्रभावित है। उनकी कहानियों में या तो क्रान्तिकारी के जीवन की रोमांटिक घटना का निरूपण विषमताओं पर प्रहार किया गया है, या फिर समाजिक कुरीतियों एवं रूणियों का चित्रण किया गया है। अतः कहानियां प्रायः सुगठित हैं। कहानियों की शैली तथा भाषा सर्वत्र ही विषयानुरूप है ।

4.6.8.4.2 यशपाल की कहानियां अपने स्वरूप में अत्यन्त कलात्मक एवं उद्देश्य परक हैं। आपका उद्देश्य है समाजवादी एवं यथार्थवाद का चित्रण करना जिससे सामाजिक वैमन्य दूर हो, समाज में परस्पर समानता स्थापित हो, शोषण और पूंजीवाद का नाश हो, आर्थिक आय का सम वितरण हो तथा उत्पादन पर सबका समान अधिकार हो यही मार्क्सवाद की स्थापना है। श्रीवास्तव जी के समान यशपाल की कहानियां बड़ी कटी, छटीं, साफ सुथरी और वेगवान होती हैं। उनमें न तो अनावश्यक परिवेश चित्रण होता है न फालतू विवरण होता है।

4.6.8.5 मार्क्सवादी दृष्टिकोण को लेकर कहानियों का सृजन करने वालों में यशपाल के बाद उपेन्द्रनाथ अश्क का नाम विशेष महत्वपूर्ण है। अश्क जी के कथानक सशक्त और उनमें जिज्ञासा उत्सुकता तथा कल्पना का पर्याप्त समावेश होने के कारण पग-पग पर गतिमयता है। अश्क का कथा संसार भी मूलत: मध्यमवर्गीय जीवन यथार्थ से निर्मित है। इसमें तरह - तरह के मानव संबंधों और भावात्मक धरातल है। निम्न वर्गीय यथार्थवादी घटनाओं के आधार पर भी आपने अपनी कहानी के कथानकों का निर्माण किया है। किन्तु मध्यमवर्गीय जीवन विसंगतियाँ मुख्य रूप से चित्रित की गयी हैं। निम्न वर्गीय जीवन की आर्थिक रिक्तताग्रस्त मानसिकता की मा--र्मिक कथा "डाची", "कांकड़ा" का तेली" आदि कहानियों में है। गरीब आदमी की सारी भावात्मक दुनिया किस प्रकार शोषक के हाथों एकाएक छिन्न भिन्न हो जाती है और वह मौन भाव से हुये देखता रहता है, इसे "डाची" कहानी बड़ी सुन्दरता से उभरती है।

"कांकडा का तेली" कहानी के माध्यम से अश्क जी ने गांव के निम्न वर्गीय दरिद्र लोगों का चित्रण किया है जो दिनरात मेहन-त करके भी भरपेट भोजन नहीं कर पाते । मौलू इस प्रकार के लोगों का प्रतिनिधि बनकर सामने आया है। उसकी कल्पनायें तथा योजनाये लंगड़े द्वारा पर्वत पर चढ़ने के समान दीखती है। पर वह इनमें मस्त रहता है । और छोटे से छोटे सुख को पाने के लिये अनेक कर्ण के कार्यक्रम बनाता है। लेकिन आर्थिक विषमतायें पुन: उसे पीछे खींच लेती हैं ।

उपेन्द्रनाथ अश्क जी की कहानियां घटना प्रधान, समीक्षा प्रधान एवं सेक्स सम्वन्धी हैं। सेक्स सम्बन्धी कहानियों में मनोविज्ञान की आधुनिक प्रणालियों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। "कांकड़ा का तेली", "डाची", "चट्टान", "डालिये", "बच्चे", "कैप्टन रसीन", "आका-श चारी", "काले साहब", "अंकुर", "नासूर", "खाली डिब्बा", "एक उदा-सीन शाम " में आदि आपकी महत्वपूर्ण कहानियां हैं।

4.6.8.6 अमृतलाल नागर मुख्यत: उपन्यासकार हैं किन्तु कुछ ऐसी कहानियां भी लिखी हैं जिनमें आज के जीवन के असन्तुलन, आर्थिक अभाव, शोषण आदि को विषय बनाया गया हैऔर कहीं व्यंग्य, कहीं आक्रोश, कहीं व्यथा के साथ इस यथार्थ को देखा गया है। दो अवस्थाऐं, गरीब की

हाय, गोरख धंधा, निर्धन, मयाभत कादिन आदि इनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

4.6.8.7 प्रेम चन्दोत्तर हिन्दी कहानी कारों में पांडेय बेचन शर्मा उग्र का अपना अलग व्यक्तित्व हैं। यह अलगाव उनकी शैली का है। उग्र जी स्वाभाव से बड़े ही स्वच्छन्द और व्यवस्था विरोधी रहे हैं। इसलिये उनकी शैली में एक मस्ती है, अल्हड़ आत्मीयता है। श्रीवास्तव जी के समान ही उग्र जी की कहानियां भी राजनीतिक और सामाजिक हैं। राजनीतिक कहानियों में अंग्रेजी शासन की विसंगतियों और उनसे युद्ध करती भारतीय उर्जा का बहुत सुन्दर चित्रण किया है। श्रीवास्तव जी की राजनीतिक कहा--नियों में अधिकतर हिन्दू मुस्लिम झगड़ों को दिखाया गया है तथा विदिशी सभ्यता और संस्कृति का विरोध किया गया है।

"जल्लाद", "चांदनी", "उसकी मां", "कला का पुरस्कार" "बुदाराम", "कुमुदनी" आदि की श्रेष्ठ कहानियां हैं। सामाजिक कहानियों में उग्रजी ने बड़ी उग्रता के साथ सामाजिक विसंगतियों का अमानवीय रीति रिवाजों का घिसे-पिटे मूल्यों का, पाखण्डों का और मिथ्याचारों का विरोध किया गया है।

4.6.8.8 विष्णु प्रभाकर ने सम सामयिक, पारिवारिक और सामाजिक जीवन यथार्थ का अच्छा चित्रण किया है। "अब धरती भी घूमती है" "गृहस्थी ", "रहमान" का बेटा", "ठेका", "जज का फैसला", "मेरा बेटा" "मेरा वतन", "अगम प्रवाह" आदि इनकी प्रसिद्ध महत्वपूर्ण कहानियां हैं।

4.6.8.9 राधाकृष्ण मूलत: व्यंग्यकार हैं लेकिन इनका व्यंग्य हलका फुलका मनोरंजक नहीं है, वह हमारी गहन सामाजिक विषमताओं का बड़ा ही कलात्मक उदघाटन है। बड़ी से बड़ी बात को सादगी से व्यक्त कर देना आपकी कहानियों की विशषता है। "रामलीला" आपकी अत्यन्त महत्वपूर्ण कहानी हैं।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ठ हो गया कि हिन्दी कहानी ने इस युग में पर्याप्ति उन्नति की है। भाव और ~~और~~ शिल्प दोनों ही क्षेत्रों में अनेकानेक परिवर्तन हुये हैं। फ्रायड और मार्क्स के सिद्धान्तों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार के परिवेश में रहते हुये भी श्रीवास्तव जी इनसे अछूते रहे है। वे अन्ततोगत्वा आदर्शवाद

के ही पुजारी रहे हैं। भले ही उन्होंने राजनैतिक कहानियों का सृजन किया लेकिन उनमें राजनैतिक कहानियों की वह परम्परा, प्रवृत्तियाँ नहीं मिलती हैं । जो अन्य राजनीतिक घटनाओं के आधार पर लिखने वाले कहानीकारों में दृष्टिगोचर होती हैं ।

पंचम अध्याय

हिन्दी एकांकी-नाटकार प्रताप नारायण श्रीवास्तव

5.1 हिन्दी एकांकी स्वरूप, परिभाषा, उद्भव - विकास

प्रचीन भारतीय मनीषियों ने काव्य के विषय या रचना पद्धति या इन्द्रियों को प्रभावित करने की दृष्टि से दो भेद किये हैं— श्रव्य काव्य और दृश्य काव्य । जिसे सुनकर आनन्द प्राप्ति हो उसे श्रव्य काव्य कहते हैं। जैसे- कविता, कहानी आदि और जिस काव्य को अभिनीत देखकर आनन्द की प्राप्ति हो उसे दृश्य काव्य कहते हैं। जैसे - नाटक, एकांकी आदि श्रव्य काव्य में भाषा की कमी को अभिनय द्वारा पूरा कर दिया जाता है। यही कारण है कि श्रव्य काव्य की अपेक्षा दृश्य काव्य में प्रभावोत्पादक शक्ति का आधिक्य होता है। यह सच है कि मृत्यु समाचार पत्र या किसी घटना विशेष या किसी की मृत्यु आदि को सुनकर हमारा हृदय उतना उद्वेलित नहीं होता जितना प्रत्यक्ष देखने पर । दूसरा यह कि हर आदमी पढ़ा लिखा नहीं होता अतः संस्कृत में सच ही कहा गया है - "काव्येषु नाटकं रम्यम् "।

आज के यंत्रवत जीवन की व्यस्तता के बीच मानव अपने अवकाश के कुछ क्षणों मेंअधिकतम आनन्द की उपलब्धि प्रदान कर सके, इस युग सत्य को स्वीकार कर एकांकी विधा ने साहित्य के परिवार में अपना विशिष्ट, मौलिक और स्वतन्त्र अस्तित्व बना लिया है। अब एकांकी हमारे सम्मुख नित नवीन स्वरूप धारण कर उपस्थित हो रहा है। अनवरत परिवर्तित स्वरूप इसके अक्षुण्णं सौंदर्य का प्रतीक है। ऐसी विविध रूप धारणी एकांकी कला को एक निश्चित परिभाषा की सीमा में बांधना कठिन है। जैसे कोई चतुर चितेरा विहारी की नायिका के क्षण-क्षण परिवर्तन शील सौन्दर्य का छवि अंकन नहीं कर सकता, फिर भी साहित्य के पंडितों ने अपनी परिभाषाओं द्वारा एकांकी के स्वरूप निर्धारण, का प्रयत्न किया है

5.1.1 अपने शाब्दिक अर्थ में एकांकी एक अंक का नाट्य रूपक है। यह एक अंक एक दृश्य लिये भी हो सकता है और अनेक दृश्यों के समन्वित भी । परन्तु यह एक अंग वाला तथ्य एकांकी के कलेवर से सम्बन्धित है, उसके स्वरूप का दिग्दर्शन नहीं । एक अंक का नाटक कहने मात्र से एकांकी की विशिष्टता और उसके मौलिक रूप की प्रतीत नहीं होती । एकांकी नाटक की अपनी निजी विशेषतायें हैं। जो उसे हिन्दी साहित्य की अन्य विधाओं से पृथक करती हैं।

एकांकी के विषय में अनेकानेक मतभेदों के कारण ही एकांकी की कोई एक परिभाषा नहीं हो सकी है। इस विधि में नित्यनवीन प्रयोग होने के कारण यह किसी परिभाषा की सीमा में आबद्ध नहीं रही। फिर भी प्रबुद्ध भातीय एवं पाश्चात्य समीक्षकों ने अपने-अपने मत व्यक्त किये । जो एकांकी के स्वरूप व लक्षणों को समझने में पर्याप्त सहायता प्रदान करेंगे ।

5.1.1.1 भारतीय विद्वानों के मतानुसार

5.1.1.1.1 डा० राम कुमार वर्मा के अनुसार - "एकांकी में एक ही घटना होती है, और वह नाटकीय कौशल से ही कौतूहल का संचय करते हुये चरम सीमा तक पहुँच जाती है। उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं होता । विस्तार के अभाव में प्रत्येक घटना कली की भाँति खिलकर विकसित होती है, उसमें लता के समान फैलनेकी उच्छृंखलता नहीं होती xxxxxx ।"[1]

5.1.1.1.2 डा० वर्मा पुनः लिखते हैं :- "उसके प्रारम्भिक वाक्य में ही कुतूहल व जिज्ञासा की अपरिमित शक्ति भरी रहती है। कथानक क्षिप्र गति से आगे बढ़ता है, और एक-एक घटना भावना को धनीभूत करते हुये कौतूहल के साथ चरम सीमा में चमक उठती है। इसी धनीभूत घटनावरोह में चरम सीमा में चमक उठती है । इसी घनीभूत घटनावरोह में चरम सीमा विद्युत की भाँति गतिशील होकर आलोक उत्पन्न करती है और नाटककार समस्त वेग से बादल की भाँति गर्जन करता हुआ नीचे आता है। प्रवेश कुतूहल की वक्र गति से होता है। घटनाओं की व्यंजना उत्सुकता से लम्बी हो जाती है। फिर घटना में धनीभूत तरंगे आती हैं, जो कुतूहल से खिंचकर चरम सीमा में परिणत होती हैं। यहीं एकांकी की समाप्ति हो जानी चाहिये ।"[2]

5.1.1.1.3 श्री उदय शंकर भट्ट के मतानुसार - "एकांकी नाटक में जीवन का एक अंश, परिवर्तन का एक लक्षण सब प्रकार के वातावरण से प्रेरित एक झोंका दिन में एक घण्टे की तरह, मेघ में बिजली की तरह, बसंत में फूल के हास की तरह व्यक्त होता है ।"[3]

1-हिन्दी एकांकी के सन्दर्भ में रामकुमार वर्मा का विशेष अध्ययन-पुष्पलता श्रीवास्तव - पृष्ठ -12 (अप्रकाशित)

2-हिन्दी एकांकी के सन्दर्भ में रामकुमार वर्मा का विशेष अध्ययन -पुष्पलता श्रीवास्तव - पृष्ठ - 13 (अप्रकाशित)

3-हिन्दी एकांकी उद्भव विकास-डा० रामचरण महेन्द्र- पृष्ठ - 366

5.1.1.1.4 श्री सेठ गोविन्द दास के शब्दों में :- "एक ही विचार पर एकांकी नाटक की रचना हो सकती है। विचार के विकास के लिये जो संघर्ष अनिवार्य है, उस संघर्ष के पूरे नाटक में कई पहलू दिखाए जा सकते हैं, परन्तु एकांकी में केवल एक ही पहलू । एकांकी में मुख्य और गौण दोनों ही पात्रों की संख्या बहुत परिमित होनी चाहिये ।"[1]

5.1.1.1.5 सेठ जी आगे लिखते हैं :- "एकांकी नाटक छोटे ही हों, यह जरूरी नहीं , वे बड़े भी हो सकते हैं-एकांकी में एक से अधिक दृश्य भी हो सकते हैं। स्थल संकलन जरूरी नहीं है, पर "काल- संकलन"होना ही चाहिये । ऐसी अवस्था में उपक्रम या उपसंहार की योजना होनी चाहिये।"[2]

5.1.1.1.6 डा० नगेन्द्र के मतानुसार :- "स्पष्टतया एकांकी एक अंक में समाप्त होने वाला नाटक है। और यद्यपि एक अंक के विस्तार के लिये कोई विशेष नियम नहीं हैं, फिर भी छोटी कहानी की तरह उसकी सीमा तो है ही। -- एकांकी में हमें जीवन का क्रमबद्ध विवेचन न मिलकर उसके एक पहलू, एक महत्वपूर्ण घटना, एक विशेष परिस्थिति अथवा एक उद्दीप्त क्षणतक का चित्र मिलेगा। उसके लिये एकता एवं एकाग्रता अनिवार्य है। - एकाग्रता में आकस्मिकता अपने आप आ जाती है। -- स्थान और काल की एकता का निर्वाह किए बिना भी सफल एकांकी की रचना हो सकती है ।[3]

5.1.1.1.7 डा० सत्येन्द्र के अनुसार :- "एकांकी में एक ही अंग होना चाहिए और एक ही दृश्य । उसमें स्थल व काल का संकलन होना चाहिये। एकांकी स्वतन्त्र टेकनीक वाला साहित्य का भेद है। उसमें स्थल, काल और व्यापार के संकलन मिलने चाहिये ।"[4]

1-सेठ गोविन्द दास और उनकी एकांकी कला-कृष्ण कुमार भार्गव -पृ०- 63

2-सेठ गोविन्द दास और उनकी एकांकी कला-कृष्ण कुमार भार्गव-पृ०-72-73

3-हिन्दी एकांकी के शिल्प विधि का विकास-सिद्धनाथ कुमार सिन्हा - - पृष्ठ - 113

4- हिन्दी एकांकी के शिल्प विधि का विकास - सिद्धनाथ कुमार सिन्हा - पृष्ठ - 123-124

5.1.1.1.8 प्रो० रामचरण महेन्द्र के मतानुसार :- "एकांकी मानव जीवन के एक पहलू या उद्दीप्त क्षण का चित्र है। प्रत्येक एकांकी एक मूल विचार (Idea) समस्या (Problem) (एक सुकल्पित लक्ष्य) (Aim) एक ही महत्वपूर्ण घटना और विशेष परिस्थिति पर निर्मित हो सकता है।[1]

5.1.1.1.9 श्री सद्गुरु शरण अवस्थी के शब्दों में :-"एकाँकी नाटक का सुनिश्चित और सुकल्पित एक लक्ष्य होता है। उसमें केवल एक ही घटना, परिस्थिति अथवा प्रबल समस्या होती है। वेग सम्पन्न प्रभाव में किसी प्रकार के अन्तर प्रवाह के लिये अवकाश नहीं होता ।"[2]

5.1.1.1.10 डा० दशरथ ओझा का कथन है :- "यद्यपि एकांकी का लक्षण बताते हुए अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार से अपने प्रकार से अपने मत प्रकट किये हैं, तथापि सब इस बात से सहमत हैं कि एकांकी में एक घटना एक परिस्थिति या एक समस्या की प्रधानता आवश्यक है। कथावस्तु, परिस्थिति, व्यक्तित्व इन सबके निदर्शन में मितव्ययता और चातुरी का जो रूप अच्छे एकांकी नाटकों में मिलता है। वह साहित्य कला की अद्वितीय निधि है ।"[3]

5.1.1.1.11 हिन्दी साहित्य कोष में एकांकी के स्वरूप की विवेचना इस प्रकार है :- "आवश्यकता और प्रयोग की दृष्टि से स्पष्ट है कि एकांकी नाटक साहित्य का वह नाट्य प्रधान रूप है जिसके माध्यम से मानव जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य, एक परिपार्श्व, एक भाव की ऐसी कलात्मक व्यंजना की जाती है कि ये एक अविकल भाव से अनेक की सहानुभूति और आत्मीयता प्राप्त कर लेते हैं ।"[4]

- -

1-हिन्दी एकांकी उद्भव विकास- डा० रामचरण महेन्द्र - पृष्ठ - 368

2-आलोचनात्मक अध्ययन एकांकी सप्तक -डा० जयकिशन प्रसाद -पृ०-3

3-आलोचनात्मक अध्ययन एकांकी सप्तक - डा० जयकिशन प्रसाद -पृ०-2

4- आलोचनात्मक अध्ययन एकांकी सप्तक-डा० जयकिशन प्रसाद -पृ०- 2

5.1.1.1.12 श्री उपेन्द्र नाथ अश्क के मतानुसार:- "संक्षेप में बड़े नाटक की तुलना में एकांकी जीवन के एक अंश का पृथक निर्विघ्न चित्र उपस्थित करता है। जीवन की एक झाँकी मात्र देता है। विभिन्नता के बदले एकीकरण, विश्रृंखलता के बदले एकाग्रता, पूर्णता के बदले अपूर्णता, फैलाव के बदले सिमटाव, विस्तार के बदले संक्षिप्तता इसके गुण हैं। एकांकी लेखक किसी मूलभूत विस्तार को उसकी समस्त भावनाओं के साथ व्यक्त नहीं करता, उसका संकेत मात्र करता है।"[1]

5.1.1.2 पाश्चात्य विचारकों की एकांकी परिभाषा

भारतीय विचारकों की तरह पाश्चात्य विचारकों ने भी एकांकी के स्वरूप पर विचार करते समय विभिन्न मत व्यक्त किये।

5.1.1.2.1 पर्सिवल वाइल्ड के मतानुसार :- "नाटक एकांकी जीवन का ऐसा सुव्यवस्थित प्रस्तुतीकरण है जो दर्शकों में संवेग उपस्थित करता है। एकांकी नाटक की विशेषता उच्चकोटि की मितव्ययिता और अन्विति में है। यह अपेक्षाकृत कम अवधि में अभिनीत होता है।"[2]

5.1.1.2.2 वाटर प्रिचर्ड एटन ने एकांकी की परिभाषा इस प्रकार से की है :- "The one act play, to its nature and the rigid restriction of medium, has to confine itself to a single episode or situation and this situation, in turn, has to grow and develop out of itself."[3]

अर्थात् एकांकी में एक ही घटना अथवा प्रसंग फैलाकर दर्शकों के मन पर एक विशेष प्रभाव डालता है। उनके अनुसार एकांकी जीवन अथवा समाज के एक पहलू, घटना या क्षण को प्रस्तुत करता है।

5.1.1.2.3 सिडनी बाक्स के शब्दों में :- "It should aim at making a single impression, should possess singleness of situation and should concentrate

1-आलोचनात्मक अध्ययन एकांकी सप्तक-डा० जयकिशन प्रसाद - पृष्ठ- 2-3

2-उद्धृत-हिन्दी नाटक : सिद्धान्त और समीक्षा डा० रामगोपाल सिंह चौहान - पृष्ठ - 146

3-उद्धृत-हिन्दी नाटक-सिद्धान्त और समीक्षाडा०रामगोपाल चौहान-पृ०-147

'its interest on a single character or a group of characters'" ।

अथार्थ एकांकी का लक्ष्य यह है कि वह एक विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न करे उसमें एक स्थिति होनी चाहिये और उसका ध्यान किसी एक पात्र अथवा विशिष्ट पात्र-समूह के कार्यकलापों पर केन्द्रित होना चाहिये उसमें न तो अप्रधान घटनाएँ हो, न गौण प्रसंग और न पात्रों का व्यर्थ जमघट ही हो ।

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर एकांकी कला के स्वरूप और विशेषताओं को लेकर निम्न महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते :-

1- एकांकी की मूल आत्मा उसकी संक्षिप्तता है। उसमें मानव जीवन की केवल एक घटना, एक विचार, एकअनुभूति, एक परिस्थिति, एक समस्या का ही चित्रण होता है। सम्पूर्ण मानव जीवन की घटनावली उसमें नहीं होती है । फलत: एकांकी में विस्तार नहीं होता, फैलाव नहीं होता, अपितु गहनता और सीमितपन का भाव होता है।

2- एकांकी एक सुनिश्चित, सुकल्पित लक्ष्य लिये रहती है। इस लक्ष्य की ओर उसकी गति बड़ी क्षिप्र होती है। निर्झर के प्रच्छन्न वेग की तरह वह फूटती है। गति में बड़ी एकता, एकाग्रता और आकस्मिकता होती है ।

3- एकांकी का कथानक सुगठित, सन्तुलित, सरल वेग पूर्ण, आकर्षक और कसा हुआ होता है । वह घटनाओं का ऐसा गुठित रूप होता है, जिससे किसी प्रकार का विखराव नहीं होता ।

4- एकांकी के प्रारम्भ के लिये किसी प्रकार की भूमिका का निर्माण नहीं किया जाता है। उसका आरम्भ तुरन्त होता है। एकांकी के शिल्प विधान का यही सबसे बड़ा आकर्षण है।

5- एकांकी को कौतूहल वर्धक एवं जिज्ञासापूर्ण होना चाहिये ।

1- उद्धृत - हिन्दी एकांकी उद्भव और विकास - डा० राम चरण महेन्द्र- -- पृष्ठ - 346

6- एकांकी के लिये संकलन त्रय कीअनिवार्यता आवश्यक नहीं। वैसे कार्य की एकता, एकांकी कला के प्रभावान्विति के विशेष आकर्षण के लिये अपेक्षित है, यदि स्थान और समय एक ही हो तो एकांकी अधिक उत्कृष्टता को प्राप्त होगा ।

7- संघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व पात्रों एवं घटनाओं में आवश्यक है।

8- एकांकी की भाषा स्वाभाविक, पात्रानुकूल सरल और संक्षिप्त हो । अलंकारों के बोझ से दबी भाषा पाठक को आकर्षित कर सकती है, दर्शकों को नहीं ।

9- कथोपकथन एकांकी के प्राण हैं। उनमें मार्मिकता एवं स्वाभाविकता हो तथा यथासम्भव वे पात्रानुकूल हों । लम्बे-लम्बे कथोपकथन और जटिल वाक्य विन्यास के लिये एकांकियों में स्थान ही रहता ।

10- दार्शनिक विचारों का समावेश एकांकी के लिये उचित नहीं है ।

11- एकांकी के लिये आवश्यक नहीं कि उसमें नायक प्रतिनायक, खलनायक, नायिका, प्रतिनायिका की अवतारणा की जाए, एक पात्र प्रमुखहो, दूसरे पात्र गौण । पर पात्रों की संख्या अधिक न हो । एकांकी तो एक पात्रीय भी होते हैं ।

12- एकांकीकार को चाहिये कि वह अपनी अनुभूति और अभिव्यक्ति में समन्वय सम्पूर्ण एकांकी में एकता का होना आवश्यक है ।

13- एकांकी मूलतः मानव जीवन के मार्ग का उद्घाटन करने वाली नवीनतम विधा है। वह साहित्य की ऐसी विधा है जहां मानव चरित्र की अनुभूति, युग की चेतना, जीवन की भावधारा एक विन्दु पर केन्द्रित होकर अभिव्यक्त होती है। मनोरंजन मात्र ही एकांकी का लक्ष्य नहीं होता । मानव जीवन की भावभूमि को दृढ़ और सफल बनाने का प्रबल आग्रह भी उसमें निहित रहता है । श्री उदयशंकर भट्ट ने बड़े ही सुन्दर ढंग से इसे अभिव्यक्त किया है:—

"वह निशानाकरने के लिये दुर्योधन और युधिष्ठिर की तरह सिर और पंख नहीं देखता । वह वाण से चिड़िया की आंख बेधने वाले अर्जुन की तरह एकाग्रता, तन्मयता का ध्येय लेकर चलता है।"[1]

1- आलोचनात्मक अध्ययन - एकांकी सप्तक - डा० जय किशन प्रसाद - — पृष्ठ - 3

निष्कर्षत: :- कहा जा सकता है कि एकांकी वह नाट्य विधा है जो किसी मूल, विचार, भावना अथवा घटना से सम्बद्ध अभिनेय कथा होती है। उसमें संक्षिप्तता तथा संकलन - त्रय पर विशेष ध्यान दिया जाता है और एकांकी-कार की प्रमुख दृष्टि प्रमुख पात्र अथवा घटना पर ही रहती है।

5.1.2 उद्भव - विकास

एकांकी हिन्दी साहित्य की नवीनतम साहित्य विधा है। परन्तु जन्मते ही इसने इतना अधिक प्रभाव जमा लिया तथा यह विधा इतनी लोक प्रिय हुई कि पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों को उसके उद्भाव विकास स्वरूप परिभाषा एवं तत्वों को एक समोचित रूप देने के लिये बाध्य होना पड़ा । अत: इसके उद्भव के विषय में विद्वानों के दो वर्ग हैं :—संस्कृत नाटकों द्वारा । पश्चिम नाटकों द्वारा ।

5.1.2.1 संस्कृत नाटकों द्वारा हिन्दी एकांकी का उद्भव

एकांकी नाटक का उद्भव संस्कृत नाटकों से मानने वाले विचारकों में डा० सरनाम सिंह शर्मा, प्रो० ललित प्रसाद शुक्ल, प्रो० सद्गुरूशरण अवस्थी आदि प्रमुख हैं। हमारा प्राचीन भारतीय साहित्य बहुत समृद्ध रहा है। संस्कृत साहि-
- त्य में बहुत से एकांकी भी हैं ।

आचार्य धनंजय ने "दशरूपक" में रूपक के दस भेद गिनाए हैं- नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोम, समवकार, वीथी, अंक औरइहामृग । इनमें से भाण, प्रहसन, व्यायोम, वीथी, अंक निश्चित रूप से एकांकी है। जिनका रंगमंच पर अभिनय होता । इसके अलावा महाकवि भाष का "उरूभंग" और नीलकंठ का"कल्याण सौगर्धिक" संस्कृत के महत्वपूर्ण एकांकी समझे जाते हैं। "साहित्य दर्पण" में आचार्य विश्वनाथ ने संकेत किया है कि "ईहामृग" एक अंक का होने लगा था ।

डा० सरनाम सिंह का विचार है-- "यह मानना नितान्त भ्रामक होगा कि हिन्दी एकांकी के सामने कोई भारतीय आदर्श न था ।"[1]

1- हिन्दी एकांकी उद्भव विकास -डा० रामचरण महेन्द्र - पृष्ठ - 163

2- हिन्दी एकांकी उद्भव विकास-डा० रामचरण महेन्द्र - पृष्ठ - 167

इसी प्रकार प्रो० सदगुरूशरण सिंह का मत है :-- "यह नहीं समझना चाहिये कि भारत में एकांकी थे ही नहीं ।"[1]

प्रो० डा० रामचरण महेन्द्र लिखते हैं :-- "हमारे साहित्य में एकांकी नाटकों की परम्परा प्राचीन है। संस्कृत एकांकियों की शिल्पविधि पर्याप्त जटिल थी और नाट्यकारों ने उपभेदों का अन्तर स्पष्ट किया था । आधुनिक हिन्दी एकांकी सभी प्रचलित शैलियाँ थोड़े से परिवर्तन के साथ इन्हीं में समा सकती हैं।पात्रों के चरित्र, अभिनय, प्रणाली, रस, कथानक, वृत्ति, संधि और नृत्यादि के आधार पर इनकी पृथम-पृथक मर्यादायें निर्धारित हो चुकी थीं । इनके उदाहरण भी मिलते हैं।"उनके मतानुसार हिन्दी एकांकी पर संस्कृत की नाट्य परम्परा का हिन्दी एकांकी पर यथेष्ठ प्रभाव पड़ा । संस्कृत में प्रयुक्त काव्यपूर्ण सम्वादों की परम्परा भारतेन्दु युग तक चली आयी । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने प्राचीन संस्कृत और प्राकृतिक नाटकों के हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किये । साथ ही संस्कृत प्रणाली के रूपक-उपरूपकों के अनेक भेद प्रस्तुत किये । इसमें कईएक एकांकी भी थे। आधुनिक एकांकी का रूप आज कुछ परिवर्तित अवश्य हो गया है, किन्तु यह कहना भ्रामक है कि भारत में एकांकी नाटक थे ही नहीं । प्राचीन नाटक-साहित्य में उनके नाम, रूप और उदाहरण बराबर मिलते हैं। कुछ आलोचकों की तो यहां तक धारणा है कि उपरूपकों की संख्या सर्वांगपूर्ण नाटको की अपेक्षा अधिक ही है ।"[2]

5.1.2.2 "पश्चिमी नाटकों द्वारा हिन्दी एकांकी का उद्भव

दूसरा वर्ग उन विद्वानों का है जो एकांकी का उद्भव पाश्चात्य काव्य साहित्य से मानता है — अर्थात् इसे पश्चिम आई काव्य-विधा मानता है । इस वर्ग के विचारकों में प्रो० अमरनाथ गुप्त, प्रो० प्रकाश चन्द्र गुप्त, डा० एस. पी. खत्री, डा० हरदेव बाहरी, डा० रामकुमारवर्मा, अश्क, उदय शंकर भट्ट, विष्णु प्रभाकर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

1- उद्धृत- साहित्या लोचन - प्रो० भारत भूषण सरोज - पृष्ठ - 156-157

2- हिन्दी एकांकी उद्भव विकास - डा० रामचरण महेन्द्र - पृष्ठ - 367

पाश्चात्य देशों में नाटकों को जन्म धार्मिक नृत्यों और गीतों ने दिया है। यूनान नाटकों का जन्म स्थान माना जाता है। यूनान में अपने इष्टदेव डाइयोनिसस को प्रसन्न करने के लिये यूनानी नाचते गाते थें । उनके नृत्य और गीत भी करूण रस प्रधान होते थे । मनोरंजनार्थ भी कुछ गीत और नृत्य हास्य प्रधान होते थे। यही परम्परा रोम ने ग्रहण की किन्तु रोम निवासियों ने हास्य प्रधान नाटकों को अपनाया किन्तु इन देशों में नाट्य कला विशेष विकसित न हो सकी । इसका कारण, एक तो अभिनेयता "दास" होते थे और दर्शकों के पास समयाभाव भी था । हास्य प्रधान नाटकों को वहाँ "करटेन-रेजर" कहा जाता था । ये उन दर्शकों के मनोरंजनार्थ अभिनीत किये जाते थे जो मूल नाटक के आरम्भ होने से पहले प्रेक्षागृह में आ जाते थें । बस, यहीं से एकांकी नाटकों का आरम्भ माना जाता है। शनैः, शनैः इनका विकास क्षेत्र बढ़ता गया और स्वतन्त्र विधा का रूप धारण किया ।

1903 में, लन्दन में लुई एन0 पार्कर्स ने श्री जैकब की कहानी "बन्दर का पंजा" को कर्टेन रेजर्स के रूप में प्रस्तुत किया, तो उपस्थित दर्शक इतने अधिक आनन्द-विभोर हो उठे कि वे प्रधान नाटक को देखे विना ही रंगशाला से बाहर निकल गये ।इस घटना का इतना अधिक प्रभाव हुआ कि छोटे नाटकों (एकांकी) की कला स्वतन्त्र रूप से विकसित होने लगी ।

कुछ समय के वाद जब भारतीय मनीषियों ने पश्चिमी साहित्य का अध्ययन मनन किया और ईसाई मिशनरियों ने धार्मिक शिक्षा के प्रचार प्रसार के लिये एक विशेष नाट्य शैली का प्रयोग किया जो एकांकी की नाट्य शैली में ढल गई ।

डा0 हरदेव बाहरी उपरोक्त मत का समर्थन करते हुये लिखते हैं :- "हिन्दी में आधुनिक एकांकी नाटक पश्चिम से आया एकांकी संस्कृत रीति से नहीं, पाश्चात्य साहित्य से प्रभावित हुआ ।"[1]

- -

1-उद्धृत-हिन्दी एकांकी उद्भव विकास - डा0 रामचरण महेन्द्र-पृ0-354-
— 355

डा० राम कुमार वर्मा लिखते हैं :- "मैक्सिम गोर्की, चैखब, टाल्सटाय, आस्कर वाइल्ड, मटर लिंक सिंज आदि नाटककारों की रचनाओं से प्रभावित होकर उन्होंने हिन्दी को अनेक श्रेष्ठ एकांकी प्रदान किये ।"[1]

डा० उपेन्द्र नाथ"अश्क" ने भी पाश्चात्य प्रभाव को स्वीकार किया हैं:- " मैंने शुरू में टैगोर के नाटक पढ़े । फिर पहले मैंने पश्चिम के लगभग सभी एकांकीकारों को पढ़ा और ओनील, इब्सन, स्टिंडबर्ग, पिरन्देली, शा, प्रीस्टले, मैतालिंक और चेखव के बड़े नाटक पढ़े । शा बड़ा विटी है और पढ़ने में भी अच्छा और रूचिकर लगता है। पर कदाचितयह मेरी रूचि से मेल नहीं खाता उसकी अपेक्षा चेखब, ओनील, पीस्टले मेत्रलिंक, मुझे सदा नाटक लिखने की प्रेरणा देते हैं। शिल्प मैंने उनसे सीखा है, अनुभूतियाँ अपनी ही हैं ।"[2]

श्री उदयशंकर भट्ट ने हिन्दी एकांकी कला का उद्भव पाश्चात्य साहित्य को स्वीकार करते है :-"वर्तमान एकांकी नाटकों की मूल प्रेरणा हमें संस्कृत से नहीं पाश्चात्य नाटक साहित्य से मिली है, ऐसा मानने में हमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। उसका कारण यह है कि हिन्दी में एकांकी जिस रूप में आया है, उसमें संस्कृत नाटक की छाया नहीं दिखायी देती । वैसे हमारा विश्वास है कि हिन्दी का एकांकी नाटक एक-दम नये ढंग से भारत के रंगमंच में प्रविष्ट हुआ है और उसका वह भारतीय रूप होते हुये भी पश्चिमीय अनुकरण, प्राण, स्फूर्ति लेकर आया है। फलत: हमारे हिन्दी नाटक पाश्चात्य साहित्य की प्रेरण हैं ।"[3]

इनके अलावा प्रो० अमरनाथ गुप्त भी एकांकी को पाश्चात्य साहित्य से आगत हिन्दी में नवीन विधा मानते हैं :- "एकांकी नाटक हिन्दी से सर्वथा नवीनतम कृति है । इसका जन्म हिन्दी साहित्य में अंग्रेजी के प्रभाव से कुछ ही वर्ष पूर्व हुआ है ।"[4]

1-हिन्दी एकांकी के सन्दर्भ में डा० राम कुमार वर्मा का विशेष अध्ययन- - डा० पुष्पलता श्रीवास्तव - पृष्ठ - 213

2- आलोचनात्मक अध्ययन एकांकी सप्तक -डा० जयकिशन प्रसाद -पृष्ठ-3

3-उद्धृत-हिन्दी एकांकी उद्भव विकास-डा० रामचरण महेन्द्र-पृ०- 356

4-उद्धृत-हिन्दी साहित्य का इतिहास-डा० राजनाथ शर्मा -पृष्ठ -697

डा० एस० पी० खत्री लिखते हैं, एकांकी पर --"अंग्रेजी का प्रभाव है न कि संस्कृत का ।"[1]

उपरोक्त विद्वानों के मत यह सिद्ध करते हैं कि हिन्दी एकांकी पश्चिमी नाटक की देन है। किन्तु अक्षरशः इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि हिन्दी एकांकी पश्चिमी साहित्य की देन है। हाँ, यह जरूर सच है कि आज का एकांकी साहित्य पूर्णतः पश्चिमी कला से प्रभावित है। फैंटेसी, स्टिक, मोनोलॉग, रेडियो नाटक, ओपेरा आदि एकांकी नाटक पश्चिमी नाट्य शैली की ही देन है। इसी प्रकार एकांकी का घटना वैचिन्त्य संकलन का प्राधान्य, संकलन त्रय की अनिवार्यता एवं मनोवैज्ञानिकता पश्चिमी नाट्य साहित्य की ही देन है ।

यदि निष्पक्ष दृष्टि से देखा जाय तो ये दोनों ही मत अतिवादी हैं। यद्यपि आज के एकांकी लेखन की प्रेरणा पाश्चात्य साहित्य से मिली है, तो भी भारतीय लेखक अपनी परम्परा को एकदम छोड़ नहीं सकता । अतः एकांकी पर संस्कृत की भी छाया है। इस प्रकार वर्तमान एकांकी साहित्य का ऋणी है ।

5.1.3 "हिन्दी एकांकी का क्रमिक विकास"

हिन्दी एकांकी की अद्यतन प्रगति को इतिहास की दृष्टि से चार कालों में विभक्त कर सकते हैं। 1- भारतेन्दु युग 2- द्विवेदी युग 3- प्रसाद युग 4- आधुनिक युग ।

5.1.3.1 भारतेन्दु युग

आधुनिक हिन्दी एकांकियों का इतिहास बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से आरम्भ होता है। आपका सर्व प्रथम एकांकी "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" । इस रचना में हास्य रस का प्राधान्य है। इसके बाद आपने "भारत जननी", "प्रेम जोगिनी", "भारत दुर्दशा", "नील देवी" आदि कई रचनायें की, किन्तु आपके द्वारा रचित एकांकियों के प्रमुख विषय भारत के स्वर्णिम अतीत का चित्रण, उसकी दुर्दशा पर चिन्ता, राष्ट्रीयता

1- उद्धृत - हिन्दी साहित्य का इतिहास [illegible]० राजनाथ शर्मा

की भावना, समाज सुधार, राजनीति व्यंग्य आदि थे। आपने न केवल इस ओर लेखनी चलाई वरन अन्य साहित्यकारों को भी प्रेरित किया -जिनमें राधाचरण गोस्वामी, देवकी नन्दन खत्री, बालकृष्ण भट्ट, श्रीनिवास दास, पं० जी. एस. उपाध्याय, प्रेमधन आदि प्रमुख हैं, जिन्होंने सामाजिक ऐतिहासिक, पौराणिक, राष्ट्रीय तथा हास्य व्यंग्य प्रधान अनेक एकांकियों की रचना की जिनका मूल स्वर राष्ट्रीयता व सामाजिकता से परिपूर्ण था। किन्तु भारतेन्दु युग के एकांकी आधुनिक युग के एकांकियों से भिन्न थे। वह पठनीय अधिक रहे, दर्शन के योग्य कम। अन्तत: ये एकांकी संस्कृत नाट्यानु- -वर्ती ही थे, तथापि इनमें आधुनिक हिन्दी एकांकियों का बीजारोपण हो गया था।

भारतेन्दु और इनकी परम्परा के बारे में डा० रामचरण महेन्द्र लिखते हैं :- "भारतेन्दु तक उक्त नाटकों की परम्परा (संस्कृत के नाटकों की परम्परा) चली आती थी। स्वयं अंग्रेजी से प्रभावित होते हुये भी भारतेन्दु तथा उनके समकालीन एकांकी लेखकों में संस्कृत शैली का अनुकरण मिलता है। प्राचीन संस्कृत और प्राकृत नाटकों में हिन्दी अनुवादों के रूप में उन्होंने एक नहीं अनेक उच्चकोटि के नाटक हिन्दी के कोष में संजोये हैं। अपनी मौलिक रचनाओं में भी रूपकों तथा उपरूपकों के अनेक भेद उन्होंने प्रस्तुत किये हैं। इन्हीं की संस्कृत नाट्य शास्त्र की पद्धति का अनुकरण इस स्कूल के अन्य एकांकी कारों ने किया है। एकांकी की प्रथा उन्हीं से चली।"

इसकाल की रचनाओं में हिन्दी एकांकी की अपनी कोई परंम्परा एवं अपनी निजी कोई प्रणाली नहीं थी। प्रत्येक लेखक अपनी इच्छा -नुसार रचना करने के लिये स्वतन्त्र था लेखक को रचना में अंको एवं दृश्यों के लिये भी कोई नियम नहीं था। लेखक अपनी इच्छानुसार अपनी रचनाओं को अंको या दृश्यों में विभाजित करता था। अर्थात इस समय के साहित्य- कारों का ध्यान कला की उत्कृष्टता और उसकी परिपक्वता की अपेक्षा साहित्य के विभिन्न अंगों की पूर्ति करने की ओर था।

5.1.3.2 द्विवेदी युग

भारतेन्दु युग के पश्चात द्विवेदी युग का प्रादुर्भाव हुआ भारतेन्दु जी ने जिस एकांकी धारा को आरम्भ किया था वह द्विवेदी युग में भी बहती रही।

इस युग में कोई ऐसा प्रतिभावान कलाकार इस क्षेत्र में न हुआ जिसके कारण एकांकी कला को नया मोड़ मिला हो । इस युग में अंग्रेजी और बंगला के हिन्दी में अनुवादित हुये । इस युग के सामाजिक एकांकियों में समाज का नग्न चित्र उपस्थित किया गया है। इस काल के लखकों ने कुछ नवीन विषयों की ओर भी अपना ध्यान आकर्षित किया। जे0 पी0 श्रीवास्तव ने "दुमदार आदमी" में यूनीवर्सिटी शिक्षा की पोल खोली है। "स्त्रियों की कौसिंल " में भारतीय नारी की मानसिक हीनता एवं कलहप्रियता का एक सुन्दर चित्र उपस्थित किया है। "चार बेचारे" में अध्यापक, नेता सम्पादक आदि की कहानियाँ व्यक्त की गई हैं। शेष तीनों धाराओं में भारतेन्दु क काल का ही उद्देश्य रहा है ।इस युग के लेखक और उनकी प्रमुख कृतियाँ निम्न प्रकार हैं :-

सुदर्शन -- राजपूत की हार, प्रताप प्रतिज्ञा, आनरेरी मजिस्ट्रेट प्रथम दो में देश की मर्यादा, कर्तव्य पालन, राजपूती आनबान आदि मान्यताओं पर प्रका--श डाला है ।

रामनरेश त्रिपाठी --- स्वपनों के चित्र, दिमागी, ऐयासी आदि ।

उग्र -- चार बेचारे, अफजल बध, भाई मियां आदि

द्विवेदी युग विशेष रूप से भाषा परिमार्जन व्याकरणक, संशोधन एवं खड़ी बोली को उत्थान कायुग था। साथ ही साथ इस युग में हिन्दी एकांकी नाटकों केविकास की एक स्पष्ट रेखा स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ने लगी थी ।

5.1.3.3 प्रसाद युग

द्विवेदी युग के पश्चात प्रसाद युग का आगमन होता है। इस युग के प्रर्वतक जयशंकर प्रसाद थे । भारतेन्दु युग पूव एवं पश्चिम के संघर्ष का युग था । यह युग "अपनी ढपली अपना-अपना राग"का युग था प्रसाद जी ने साहित्य में फैली इन्हीं सब बातों का अन्त करके हिन्दी एकांकी साहित्य को स्थिर एवं कलात्मक रूप प्रदान किया। 1929 में प्रसाद ने"एक घूँट" एकांकी की रचना की । इस एकांकी की सभी आलोचकों ने मुक्त कण्ठ प्रशंसा की ।इस एकांकी के विषय में डा0 सत्येन्द्र का अभिमत है —"प्रसाद जी का "एक घूँट" हिन्दी एकांकियों के विकास की अद्वितीय अवस्था का अग्रणी है।यह अवस्था सन 1929 से आरम्भ होकर 1932 तक मानी जानी चाहिये । प्रसाद

का "एक घूँट" सन 1929 में प्रकाशित हुआ था। प्रथम अवस्था "एक घूँट" लिखे जाने तक मानी जानी चाहिये ।"

डा० नगेन्द्र का मत है :- "एकांकी की टेकनीक का "एक घूँट" में पूरा निर्वाह है xxxxx हाँ उसमें प्रसादत्व का गहरा रंग अवश्य है। हिन्दी एकांकी साहित्य में इसके स्थान और ममत्व पर विद्वानों में काफी मतभेद हैं। चूँकि इस पर संस्कृत का प्रभाव अधिक है इसलिये "एक घूँट" आधुनिक एकांकी की कला से काफी दुर हटा हुआ है।"[1]

प्रो० सदगुरूशरण अवस्थी का मत है :- ""एक घूँट" एक साहित्यक पुष्प है। जिसका रसास्वादन विद्वान, तर्कशील और गम्भीर पाठक ही कर सकते हैं। चूँकि प्रसाद के नाटक विद्वानोंके लिये रचे गये ज्ञात होते हैं। उन पर दुरूहता का आरोप लगाना व्यर्थ सा प्रतीत होता है। अभिनय के अनुपयुक्त होने पर भी स्थान-स्थान पर अभिनय का पूर्ण आयोजन "एक घूँट" में है।"[2]

रामचरण महेन्द्र के शब्दों में :- "नई शैली के वास्तविक हिन्दी एकांकी का आरम्भ श्री जयशंकर प्रसाद के "एक घूँट" से होता है। वर्तमान एकांकी टेकनीक का इसमें पूर्ण निर्वाह हुआ है। इसीकारण यह एक सफल एकांकी है xxxxx "एक घूँट" ने हिन्दी एकांकी की नई परम्परा को जन्म दिया और पथ प्रदर्शन किया ।"[3]

प्रो० प्रकाश चन्द्र गुप्त ने तो यहां तक कहा है कि :- "प्रसाद जी ने इस नाटक को हिन्दी के उच्च आसन पर बैठाया है। इसमें हमें जीवन की विनोद और काव्यपूर्ण झांकी मिलती है।"[4]

परन्तु डा० रामकुमार वर्मा ठीक इसके विपरीत है और लिखते हैं :- "प्रसाद जी का "एक घूँट" एकांकी तो अवश्य है, लेकिन यह आधुनिक एकांकी के विधान से निर्मित नहीं है। यह संस्कृत के दसरूपकों में

1-उद्धृत-साहित्यक निबन्ध - डा० राजनाथ शर्मा -पृष्ठ - 602

2-उद्धृत-आलोचनात्मक अध्ययन एकांकी सप्तक -डा० जयकिशन प्रसाद-पृष्ठ-3

3-हिन्दी एकांकी उद्भव - विकास - डा० रामचरण महेन्द्र -पृ०- 362

4-उद्धृत-हिन्दी नाटक सिद्धान्त और समीक्षा - रामगोपाल सिंह चौहान - पृष्ठ - 165-166

एक अंक का एक परिष्कृत और आधुनिक समान्तर मात्र है xxxxxx उसमें चन्दुला नामक प्राचीन कालीन एक विदूषक भी है और स्वगत कथन और अलग कहने की मान्यता भी । इस प्रकार "एक घूँट" आधुनिक एकांकी कला से काफी दूर हटा हुआ है ।"[1]

यदि हम इस विवाद से परेतटस्थ विचार करें तो "एक घूँट" प्राचीन नाट्य परम्परा से अधिक निकट है। प्रसाद जी में पाश्चात्य और भारतीय नाट्य कला का समन्वय मिलता है ।

विकास की इसी अवस्था में रामकुमार वर्मा का "पृथ्वी राज", की आँखें एकांकी संग्रह प्रकाशित हुआ । डा० राम कुमार वर्मा का सर्व प्रथम एकांकी "बादल की मृत्यु" सन 1929 में प्रकाशित हुआ । भुवनेश्वर प्रसाद का "कारवां" एकांकी संग्रह सन 1934 में और लगभग इसी समय डा० सत्येन्द्र का "कुणाल" प्रकाशित हुआ । इसी अवधि में श्री गोविन्द वल्लभ पन्त और सुदर्शन के भी एकांकी लिखे गये । इस काल के एकांकी कारों को हम तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं ।

1- बंगला से प्रभावित एकांकीकार 2- पाश्चात्य पद्धति से प्रभावित एकांकीकार 3- स्वतन्त्र एकांकीकार

5.1.3.4 आधुनिक काल

आधुनिक युग में आकर हिन्दी एकांकियों ने भाषा, भाव, शिल्प आदि सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण प्रगति करते हुये तथा पाश्चात्य एकांकी साहित्य की विशेषताओं को ग्रहण करते हुये हिन्दी जगत में अपना स्वतन्त्र मौलिक और पुष्ट अस्तित्व बना लिया है ।

इस समय सामयिक व स्थूल समस्याओं की ओर ध्यान अधिकआकर्षित किया है, और लेखकों ने समसामयिक व ज्वलन्त समस्याओं को आधार बनाकर अपनी लेखनी चलाई। वे भुखमरी, युद्ध की विभीषिका, लोकतन्त्र, समाजवाद, आदि विविध विषय लेकर सामने आये । इस युग के प्रमुख एकांकीकारों में श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव, श्री उपेन्द्रनाथ अश्क

1-उद्धृत - हिन्दी एकांकी के संदर्भ में राम कुमार वर्मा का विशेष अध्ययन (अप्रकाशित) -पुष्प लता श्रीवास्तव - पृष्ठ - 2।

उदयशंकर भट्ट, जगदीश चन्द्र माथुर, सेठ गोविन्द दास, लक्ष्मी नारायण मिश्र, भगवती चरण वर्मा, विष्णु प्रभाकर, सदगुरु शरण अवस्थी आदि विद्वानों के नाम सादर स्मरण किये जाते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद एकांकी रचना का क्षेत्र और भी विस्तृत होने लगा । कुछ पुराने एकांकी कारों के साथ - साथ नये एकांकीकारों ने इस क्षेत्र में प्रवेश किया और इस दिशा में कुछ नये प्रयोग भी किये । स्कूल कालेजों के स्नेह सम्मेलनों में एकांकी ने नाटकों को पीछे छोड़ दिया । प्राय: सभी शिक्षण संस्थाओं की नाट्य प्रतियोगिताओं में एकांकियों का भी समावेश होने लगा है। आकार में छोटे, कम समय में मंच-स्थ, अभिनेय, नवीन विषयों से युक्त ये एकांकी काफी लोक प्रियता प्राप्त करने लगे हैं। विषय वैविध्य की दृष्टि से आज एकांकी का क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हो गया है। आज सामाजिक, पौराणिक, देशभक्तिपूर्ण, यथार्थ, नैतिक, ऐतिहासिक, हास्य व्यंग्य प्रधान, मनोरंजक , सामयिक, समस्याओं से युक्त जीवन के विभिन्न पक्षों को स्पर्श करने वाले एकांकी प्रकाश में आ रहे हैं।

डा० धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, अज्ञेय, डा० लक्ष्मी नारायण लाल, विष्णु प्रभाकर, सत्येन्द्र एवं कृष्ण किशोर श्रीवास्तव आदि अनेक एकांकी कार इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। फिर भी यह तो नि:सन्देह मानना पड़ेगा कि साहित्य की अन्य विधाओं की तुलना में एकांकी का विकास उतनी द्रुति गति से नहीं हो पा रहा है, इस ओर भी अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

हिन्दी एकांकी के विकास में प्रतापनारायण श्रीवास्तव जीका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आपने एकांकी साहित्य को जो कुछ भी दिया है वह उनके सतत परिश्रम और अटूट लगन का सुफल है। "विवाह-विभ्राट" 1948, और विजय का व्यामोह 1965 आपके उल्लेखनीय एकांकी संग्रह हैं। अन्य एकांकीकारों की अपेक्षा आपका एकांकीकार सर्वथा मौलिक है। श्रीवास्तव जी का सोचने विचारने का ढंग सब अपना है । वह कहीं से भी उतार लिया हुआ नहीं जान पड़ता है। आपको जो कुछ भी मिला है। वह समाज के मध्यम वर्ग की देन है। मध्यमवर्गीय पात्रों की पीड़ा और घुं-टन उनके अन्तस को झकझोर देती है। और उनका लेखक लिखने बैठ जाता है। और यही आपकी मौलिकता का मूल मन्त्र है।

श्रीवास्तव जी यथार्थ की ठोस धरती पर खड़े होकर आदर्श का स्वरूप देखने के पक्षपाती हैं। यही उनके लेखन की विशिष्टता है यही कारण है कि उपन्यासों की इस भीड़-भाड़ में श्रीवास्तव जी का उपन्यासकार सर्वथा अलग चमकता है। एकांकीकार के रूप में आपको उतनी सफलता नहीं मिली जितनी उपन्यासकार के रूप में मिली है। फिर भी एकांकीकार के रूप में आपको भुलाया नहीं जा सकता ।

5.2 "प्रतापनारायण श्रीवास्तव रचित एकांकी-नाटकों का संक्षिप्त परिचय"

प्रतापनारायण श्रीवास्तव एक प्रतिभाशाली सशक्त उपन्यासकार, कहानीकार होने के साथ आधुनिक हिन्दी एकांकी कला की नई पीढ़ी के सबसे समर्थ और जागरूक कलाकार है। आपके निम्न दो कहानी संग्रह प्रकाशित हुये हैं :-

1-विवाह-विभ्राट - सन् 1948, पृ0 हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली

2- विजय का व्यामोह - सन् 1965, पृ0 प्रत्यूष प्रकाशन कानपुर

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने मध्यमवर्गीय जीवन को अपनी आलोचनाओं का केन्द्र बनाया। अपने एकांकियों में उन्होंने मध्यमवर्गीय विसंगतियों विद्रूपताओं को अपूर्ण संप्रेषणीयता से प्रस्तुत किया है। समाज की रूग्णियों और विकातियों का यथार्थ परक रेखांकन पाठकों में एक विद्रोह भावना को जन्म देता है।आपके एकांकियों में जीवनगत उमंग और उल्लास के चित्रों के साथ - साथ जीवन में व्याप्त हताशा, निराशा और उदासी के चित्र मिलते हैं और जीवन के यथार्थ धरातल से एकांकियों की कथावस्तु का चयन किये जाने तथा बुद्धिवादी ढंग से उनका विश्लेषण किये जाने केकारण श्रीवास्तव जी के एकांकियों में अनोखी मर्म स्पर्शिता आ गयी है। स्त्री पुरूष के पारस्परिक सम्बन्धों की सहजता समाज की नैतिकता और सदाचार के कठोर नियमों के फलस्वरूप उत्पन्न कुण्ठाओं से किस प्रकार व्यक्ति को रूग्ण और विकृत बना देती हैं। श्रीवास्तव जी ने अपनी एकांकियों में इस का सुन्दर चित्रण किया है। आपकी कुछ प्रमुख एकांकियों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है :-

5.2.1 "अथ से इति"[1]

"अथ से इति" ऐतिहासिक सांस्कृतिक एकांकी है। इसमें चीनी तानाशाह जो अपने अभिमान दर्प और अंहकार के मद से ईश्वर और सत्य को भूल चुका है। छल प्रपंच उसकी नीति और विश्वासघात उसका जीवन है। सत्य और धर्म उसके अहंकार को खा जाते हैं और उसे जगत की वास्तविकता से अवगत कराते हैं। अर्थात असत्य पर

1- अथ से इति - विजय का व्यामोह एकांकी संग्रह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 11

सत्य की विजय होती है यही इस एकांकी का मूल सन्देश है। एकांकी का कथासार इस प्रकार है –

5.2.1.1 अभिमान दर्प और अहंकार से पूरित चीनी तानाशाह का भयंकरता सूचक ध्वनि के साथ प्रवेश होता है वह अपने बारे में बताता है :–

"मेरे नथुनों से दीप्त अग्नि कीलपटें निकलती हैं। आंखे शोले उगलती हैं। मेरे दांत और जबड़े वज्र के बने हैं जो पत्थर और लोहेको पीसने की शक्ति रखते हैं । मेरी भुजाओं की फड़कन से दिग्दिगंत कांपते हैं, सुमेरु डगमगाता है और हिमालय पीपल के पत्ते की भांति कांपता है मेरी तलवार झुलसती अग्नि शलाका है। इसके प्रहार से चर–अचर टूट कर टुकड़े हो जाते हैं, मेरी एक वक्र दृष्टि से विश्व में भूचाल उठता है और मेरी हुंकार से आकाश गूँजता है ।"[1]

सत्य कहता है यह सब झूठ है दुनिया में एक से बढ़कर एक कितने ही तानाशाह आये लेकिन उनमें से एक भी न रहे वह सब समय की भंयकर चपेट में आ गये । यह संसार तानाशाहों के भोग विलास के लिये नहीं है यह तो प्रेम, सौहादर्य और शान्ति का घर है। आगे कहता है :–

"कांपते थे उनके डंको से जमीनों–ओ आसमां ।
चुप पड़े हैं कब्र में अब हूँ, हां कुछ भी नहीं ।"[2]

धर्म कहता है मैं समय चक्र की गति हूँ । मैं सत्य के संकेत पर काम करता हूँ मैं अडिग, अजर और अमर हूँ। और कहता है अपने सत्य चक्र के बल पर ब्रह्माण्ड को गतिशील करता हूँ।

5.2.1.2 इस दृश्य में सहास्य तानाशाह का प्रवेश होता है। वह कहता है कि आजतक यह भारत दूसरों का था किन्तु अब हमारा है। वह उस पर अपना अधिकार पूर्वजों यानी शकों, हूणों और मंगोलों से मानता है। वह हिमालय को लक्ष्य कर के कहता है अपने को अपराजेय समझने वाले मैं ने आज तेरा दर्प चकना चूर कर दिया।

1– अथ से अति – विजय का व्यामोह एकांकी संग्रह–प्रतापनारायण श्रीवास्तव – –पृष्ठ – 12

2– अथ से इति–विजय का व्यामोह एकांकी संग्रह–प्रतापनारायण श्रीवास्तव – –पृष्ठ – 12–13

"नहीं पहले छल से, बन्धुत्व और भाई चार स्थापित करूंगा, फिर उसके प्रदर्शन से तुझे अपना पैरोकार बनाऊँगा। सांस्कृतिक शिष्ट मण्डलों के आदान-प्रदा-न से तुझे मोहित करूंगा और जो मुझे हथियाना है उसे प्राप्त करूंगा, फिर मैं अपना नग्न भयंकर रूप प्रदर्शित करूंगा । तेरे पंचशील को तो लियेपंन्चशूल बना दूगा"[1]

5.2.1.3 इस दृश्य का आरम्भ भारत माता की बन्दना से होता है। भारत माता का प्रवेश होता है और बन्दना बन्द करने को कहती हैं उनके मत से यह सब दिखावा, झूठ और प्रवन्चना है। वह कहती है मैं परेशान हूँ विकल हूँ लेकिन तुम लोग चुपचाप देख रहे हो वह कहती है :-

"मेरी सन्तानों, क्या तुममेरी अहिंसा को पाशविक हिंसा से परास्त होते देखोगे ।"[2]

सत्य का प्रवेश होता है वह कहता है ऐसा कभी भी न-हीं होगा क्योंकि अहिंसा तो अजर अमर और सास्वत है। स्वयंमेव नष्ट होने वाली हिंसा कभी विजयिनी नहीं होती । सत्य आगे कहता है हमे धोखा, छल कपट, प्रवन्चना और दुरभि सन्धियों के माध्यम से खूब सताया गया है। दूसरी ओर से सत्य के सैनिकों का गाते हुये प्रवेश होता है ।वीरबहादुर सत्य का सेना-पति व सैनिक, मां भारत माता से आशीर्वाद लेकर रणभूमि की ओर प्रस्थान कर देते हैं।

तानाशाह प्रवेश करता है और भारत माता से अपना लोहा मानने को कहता है भारत को जीतने के वाद में वर्मा, थाइलैण्ड, इण्डो, चा-यना, मलय, पाकिस्तान, इण्डोनेशिया, आस्ट्रेलिया और द0 अमेरिका पर विजय प्राप्त करूंगा । इसी धर्म का प्रवेश होता है। वह उसे समझाता है कि तू मदान्ध है, मूर्ख है, अत्याचारी है, दुराचारी है, जिसकी वजह से आज तेरे ही भाई बन्धु तुझसे घृणा करने लगे हैं। तानाशाह को नेपथ्य में अपने पाखण्डी, धूर्त, दगावाज औ-र धिक्कार की आवाज सुनाई देती है। वह यह कहता हुआ चला जाता है :-

"यदि यही है तो समझ लो मैं हिम खण्ड हूँ, जो स्वयं नष्ट हो जाने के साथ दूसरों को भी आहत करता है। मैंएक ~~वार~~ समस्थ विश्व

1-अथ से इति- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 13

2- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 14

से लोहा लूँगा, या तो जय या फिर पराजय और विनाश।"[1]

सत्य तानाशाह से कहते है कि तू मदान्ध है, तुझे अपने देश की स्थिति से अवगत नहीं है। नेपथ्य में भूखों और नंगों की पुकार गूँज उठती है वह कहते हैं इस तानाशाह ने हमारे घरों और भूमि को वरवाद किया, जीवन में अशान्ति, कलह को पैदा किया। पुरुषों को गुलाम और नारियों को वेश्याएं बनाया है। यह सुनकर तानाशाह बकते झकते प्रस्थान करता है और यवनिका का पतन हो जाता है।

5.2.1.4 यह एकांकी काअन्तिम दृश्य है। सत्य के सैनिक तानाशाह को बन्दी बनाकर ला रहे है। नेपथ्य में पदध्वनि और ललकार की आवाज होती है। तानाशाह छुड़ाने का प्रयत्न करता है किन्तु सत्य के सैनिक उसके हाथ पैर जकड़े हुये। सत्य उससे कहता है अब तुम्हारा अपने बल का अंहकार नष्ट हो गया है। जब तू अपने पद पर प्रतिष्ठित था तूने जाति भेद, वर्ण भेद, फैलाया तूने मानवता के विरूद्ध आचरण किया अब भी समय है तू विचार कर सोच क्या उचित और क्या अनुचित है।

तानाशाह स्वीकार करता है कि मेरा अहंकार मेरी शक्ति, सब क्षणिक थे। अब मैं जीना चाहता हूँ सबको सुखसम्पन्न और हंसते खेलते देखना चाहता हूँ। धर्म का प्रवेश होता है वह कहता है कि अब तुझे भी गति मालूम हुई। इसलिये तुझे क्षमा किया जाता है और सत्य वैसा ही करता है यवनिका का पतन हो जाता है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने "अथ से इति" एकांकी के सम्वाद पात्रोचित गंभरता, शील से सयुंक्तहै। पात्र के स्वभाव के अनुकूल होने से संवाद मार्मिक हो गये हैं। इनमें पात्रों की मानसिक स्थिति का भी परिचय मिलता है। ये कथावस्तु को रोचकता प्रदान करते हैं।

इस एकांकी की कथावस्तु मनोहर है। पूरा एकांकी 4 दृश्यों में समाप्त हुआ है। चारों दृश्यों के समय में थोड़ा अन्तर है। अतः देश और काल का चुस्त संकलन नहीं है किन्तु अभिनय की दृष्टि से यह एकांकी पर्याप्त सफल रहा है। इसके सम्वाद काव्यात्मक और कथावस्तु प्रेरणा दायक है ।

1- अर्थ से इति - प्रतापनररायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 13-14

5.2.2 "स्वराज की तस्वीर"[1]

स्वराज की तस्वीर एकांकी राजनैतिक एकांकी है । एकांकी की कथा शीर्षक के अनुसार है। कथा छः दृश्यों में विभक्त है ।

5.2.2.1 कुछ कांग्रेस जन तिरंगा झंडा लिये और राष्ट्रीय सहगान गाते हुये प्रवेश करते हैं। पहला कांग्रेस मैन कहता है अब तो पौ बारह है। दूसरा कहता हैअब तो पांचों अंगुलियां घी में हैं खूब गहरी छनेगी चौथा कहता है यह हमारे कष्टों का परिणाम हैं। किन्तु उन सबसे भिन्न है वह कहता है स्वराज की रक्षा करना और उसको राज राज्य में परिणित करना ही मेराप्रमुख ध्येय है । यह सब उसे बुरा भला कहते हैं। प्रथम महामन्त्री दूसरा मालमन्त्री बनना चाहते हैं, चौथा कहता हैकि सलाह गरने पर बताऊँगा । तीसरेसे जब यह पूँछते तो कहता है :-

"ये ओहदे, पद और पोर्टफोलियों तुम्हीं को मुबारक हों। अपने राम का रास्ता दूसरा है, वह है त्याग तपस्या और गरीबी का आप लोग जिस पेड़ पर बैठे हैं उसी की डालें काटने जा रहे हैं। आप लोग जिस दिशा में जा रहे हैं, उसमें आपको घृणा, दुत्कार और तिरस्कार मिलेगा आपके धवल वस्त्र और टोपी पुलिस वालों की वर्दी और पगड़ी की भांति धृण्य होंगे । x x x x x x x x x x x x x तब यह स्वराज्य नष्ट होकर अभिशाप हो जायेगा ।"[2]

यह सुनकर तीनों बोखला उठे और उसे मिलकर मारने लगे । लड़ते-झगड़ते हुये सबका प्रस्थान हो जाता है ।

5.2.2.2 एक सेक्रेटरियेट कमरे में तीन आई.सी.एस. अफसर शोकाकुल गम्भीर अवस्था में बैठे हैं। अभी तक इन लोगों की मौज थी। लाखों रूपये कमा लिये थे लेकिन जब से कांग्रेस ने देश की बागडोर अपने हाथ में संभाली तब से यह परेशान थे। हालांकि कांग्रेस जन भी खूब एक दूसरे के बारे में जानते हैं मगर एक दूसरे पर आरोप लगाने से डरते हैं। अंग्रेजों के शासन काल

1- स्वराज की तस्वीर- विजय का व्यामोहसंग्रह -प्रतापनारायण श्रीवास्तव- -पृष्ठ - 26

2- स्वराज की तस्वीर-विजय का व्यामोह संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव - -पृष्ठ - 27-28

में दूसरे और तीसरे आइ0 सी0 एस0 अफसरों ने खूब पैसे एकत्र कर लिये थे। लेकिन प्रथम आई0 सी0 एस0 अफसर न कुछ कर सके थे। अब वह भी कमाना चाहते हैं। इसलिये ये तीनों कांग्रेस जनों और मिनिस्टरों को भी पैसे देकर अपना काम कराने की सोचते हैं। हमें मिनिस्टर से मिलना चाहिये उनसे मुह-ब्बत करनी चाहिये और उनकी भेंट पूजा करनी चाहिये।

दूसरा कहता है— मिनिस्टर साहब रिश्वत नहीं लेते तो हम उनकी पुत्रवधु को भेंट, लड़की की शादी में उनके दामाद की पूँजा में, लड़के के जनेऊ में 2 लाख की टिकाबन करने से अपना कार्य पूरा हो जायेगा। यह लोग यह चाहते हैं कि किसी भी तरह अगर हमने मिनिस्टर को अपने अधिकार में कर लिया तो फिर कोई भी काम अधूरा नहीं रह सकता। प्रथम और दूसरा सो--डे की बोतलें मगाते हैं। तीसरा कहता है कि कांग्रेस सरकार ने शराब बन्द कर दी है। प्रथम कहता है कि हाथी के दांत खाने के और दिखाने के और होते हैं। दूसरा कहता है शराब बन्द इसलिये नहीं हो सकती कि कांग्रेसी लोग भी तो पीते हैं। बस फर्क इतना है कि वह छिपकर पीते हैं। एक अलमा-री से शराब की बोतल और 3 गिलास निकालता है और चपरासी को सोडे की बोतल खोलने का आदेश देता है। बोतलों के आने पर दरवाजा बन्द करके तीनों का शराब पीना शुरू हो जाता है। यहीं पर पटाक्षेप होता है।

5.2.2.3 रंगमंच पर दोनों ओर से एक एक नागरिक का प्रवे-श होता है जो अपने हाथों में अनाज के लिये बोरे झोले आदि लिये हैं। पह-ला कहता है कि स्वराज्य मिलने पर आराम होगा दुख दूर हो जायेंगे। लेकिन यह सब झूठ था। दूसरा भी उसी का समर्थन करते हुये कहता है :-

"अरे भैया, राज्य उनका है हुकूमत उनकी है, पुलिस खुफिया और वर्दीधारी दोनों उनकी हैं, फौज उनकी है, बन्दूके, तोपे, हवाई जहाज सब उनके हैं। वे वक्त के राजा हैं। जो चाहे कर डाले। काले को गोरा और गोरे को काला कर सकते हैं। जनाब, वे अंग्रेजों के उत्तराधिकारी हैं। वे उसी प्रकार से लाठी गोली चलाना जानते हैं जिस प्रकार अवसर मिलने पर कभी वे चूकते नहीं थे। अंग्रेज तो स्कूली लड़कों पर गोलियां चलाते हिचकिचा-ते थे। परन्तु इनके लिये तो सब धान बाइस पसेरी हैं। लड़के चाहे जवान, बूढ़े

हों, चाहे स्त्री, कम्यूनिष्ट हो चाहे सोशलिस्ट, इससे कोई मतलब नहीं ।"[1]

दोनों कहते है कि लोग कहते थे कि जनता का राज्य होगा । परेशानियां हट जायेंगी । लेकिन यह सब उनके लिये हुआ जो कांग्रेस के नेता हैं हमारे साथ मन्थरा की उक्ति पूर्णतया लागू होती है।

"चेरी छांड़ि न होउब रानी" ।

गल्ला में आधी मिट्टी वह भी तौल कम, कर्मचारी नेता सब लूट ही लूट मचा रहे हैं। अपना-अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। पारस्परिक वार्तालाप करते हुये दोनों राशन की दुकान के लिये प्रस्थान करते हैं। यहीं पर दृश्य खत्म हो जाता है।

5.2.2.4 यह दृश्य पुलिस थाने के एक कमरे में घटित होता है। सब-इन्सपेक्टर पुलिस कुछ फाइलों को पढ़ने में तल्लीन है और मुहर्रिर और हैड कांस्टेबिल कुछ दूर बैठे लिख रहे हैं। कांग्रेसी नेता का प्रवेश होता है। नेता जी को देखकर सभी थाने के कर्मचारी खड़े हो जाते हैं।

सब-इन्सपेक्टर और नेता जी में वार्तालाप होने लगता है। नेता जी सर्व प्रथम कुशल मंगल पूछते हैं। और कहने लगते हैं कि काम हिन्दी में हो रहा या नहीं । सब-इन्सपेक्टर उन्हें बताता है कि काम तो उसी दिन से हिन्दी में होने लगा था जबसे आप लोगों का आदेश मिला था घुमा फिरा कर नेता जी कहने लगे मैं कल लखनऊ गया था वहां पर बड़े-बड़े नेताओं, केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारोंके मन्त्रियों से मिला । ऐसे ही बातों बातों में पुलिस प्रबन्धक के विषय में बात छिड़ गई मैंने तुम्हारी कर्तव्य परायणता, ईमानदारी, मेहनत, वफादारी आदि गुणों की चर्चा की । तुम्हारा नाम पुलिस विभाग के मिनिस्टर ने नोट कर लिया ।

इतना सुनते ही सब इन्सपेक्टर ने उनके चरणों को छू लिया । नेता जी ने उसे सप्रेम उठा लिया और कहा यह तो मैंने अपने कर्तव्य का पालन किया । धीमे-धीमे नेता जी ने सब-इन्सपेक्टर के समक्ष उसकी खूब तारीफ की । फिर लाला जी के बारे में बताया कि वह पुराने कांग्रेसी व्यक्ति हैं आज उनके भतीजे की बहु अकस्मात जल मरी है जरा चलकर उसका पंचनामा कर लीजिये ।

1-स्वराज्य की तस्वीर - विजय का व्यामोह - पृ0-37

सब-इन्सपेक्टर पूँछते हैं कि कैसे जली ? डाक्टर को क्यों नहीं बुलाया ? अस्पताल क्यों नहीं ले गये ? आदि ।

नेता जी कहते हैं कि - लाला जी घर पर नहीं थे, आज सबेरे जब वह आये तो उन्होंने उसे जली और मरी हुई पाया । पतानहीं क्यों उसने खुदकसी कर ली । सब-इन्सपेक्टर कहता है कि - इसका भी कुछ न कुछ कारण जरूर होगा नेता जी 10 हजार नोट देते हैं और कहते हैं कि कारण जानकर क्या करेंगे । इन्सपेक्टर लेने से मना करता है तो 10 हजार और देता है तो इन्सपेक्टर मान जाते हैं और चलते समय कहने लगते हैं कि मेरे थाने में 10-11 आदमी सबको 1-1 हजार देना पड़ेगा इसलिये बारह हजार की रकम और दीजिये । नेता जी और पैसे लेने के लिये चले जाते हैं। कहते जाते हैं-1 लाख थे 30 हजार ही तो गये 70 हजार मेरे हैं।

सब-इन्सपेक्टर दीवान जी से कहता है कि आप कहते थे आमदनी के रास्ते बन्द हो गये देखो नेता जी 20 हजार देकर गये हैं। और 12 हजार और लेने गये हैं। तुम लोग 50-60 हजार से कम पर राजी न होना दीवान जी वैसा ही करने को कहते हैं । सब-इन्सपेक्टर पैसों को लेकर चल देते हैं।

5.2.2.5 एक प्रतिष्ठित नागरिक "पंडित जी" जो अगले चुनाव में नेता बनने के बहुत उत्सुक हैं। लोग उनके यहाँ आते और वह उनका काम सिर्फ इस उद्देश्य से करा देते कि चुनाव जीत जाये । उनके यहां मुंशी जी आते हैं और कांग्रेस की बुराई करने लगते हैंकहते हैं कि - कांग्रेस के घरवालियों के पास कुछ काम तो होता नहीं बस लड़कियों को लाठी, डन्डा, तलवार चलाना, दौड़ाना, तैराना आदि काम सिखाते हैं। पंडित जी कहते हैं स्वराज्य आया सबको अधिकार मिले हैं। मुंशी जीअब और अधिक बोलना पड़ते हैं - किसको स्वराज्य नहीं मिला है भंगी, नाई, धोबी, कहार, मजदूर, किसान, किसको स्वराज्य नहीं मिला ? न कोई अब अदब-आदब है, न कोई हुकूमत, न कोई पूँछतांछ, मनमानी कीजिये । काफी बात बढ़ जाती है। इतने में नेपथ्य से पंडित जी पंडित जी की आवाज आती है। पंडित जी अन्दर आने की अनुमति देते है। एक किसान और एक मजदूर का रोते हुये प्रवेश ।

यह दोनों बताते हैं कि भूख, महामारी, बीमारी, से हमारी स्त्रियाँ और बच्चे मरे जा रहे हैं । चारों ओर तबाही फैली है देहातों में अन्न ढूंढे नहीं मिल

रहा है। पंडित जी कहते हैं कि सरकार को असली परिस्थितियों पता नहीं है इसलिये किसानों और मजदूरों का डेपुटेशन लेकर सरकार से मिलना चाहिये। पंडित जी कहते है मेहनताना यही है कि आप लोग मुझे अपना नेता स्वीकार करें, और अपने साथियों को भी ऐसा करने के लिये मजबूर करें।*"।

जय घोष करते हुये सभी का प्रस्थान हो जाता है ।

5.2.2.6 मन्त्रालय के एक कमरे में पहले दृश्य का दूसरा कांग्रेसमैन प्रधान के पद पर प्रतिष्ठित है। प्रथम और तीसरा पास ही बैठे हैं। तीनों आई० सी० एस० अफसर पीछे खड़े-खड़े फाइलों को पेश कर रहे हैं।

सभी मन्त्री और प्रधान यह चाहते हैं कि ऐसी योजनायें जनता के सामने रखी जाये, जिनके स्वर्णजाल में जनता फंसी रहे। और उनको अपने कष्टों के सम्बन्ध मेंसोचने का अवसर न मिले । जहां किसी बात की शिकायत सुनाई पड़े, वहां तुरन्त ही जाकर एक विस्तृत योजना उसके निराकरण के लिये सम्मुख रख दो ।

इतने में चपरासी एक नेता के मिलने की खबर देता है। प्रधान आने की अनुमति दे देते हैं। दोनों एक दूसरे की सेवा का मौका चाहते हैं नेता जी कहते हैं कि मेरे पास पुलिस के अलावा सैकड़ों गुण्डे हैं जो चाहे वैसा करा दें । तीनों मन्त्री बड़ी उत्सुकता पूर्वक उनकी बात पूँछने लगते हैं। नेता जी बताने लग जाते हैं कि हमारे नगर केसेठ के भतीजे की बहु जल जाने से मर गई थी । अब वे अपने भतीजे का विवाह करने जा रहे हैं इसलिये आप लोगों को आमन्त्रित करने आया हूँ । तीनों मन्त्री व प्रधान निमन्त्रण स्वीकार कर लेते हैं। नेता जी चले जाते हैं।

चपरासी के साथ पंडित जी, मुंशी जी, किसान और मजदूर का प्रवेश । - एक मन्त्री पूँछता है कि ये कौन लोग है। प्रधान कहता है किसने लाने को कहा था । पंडित जी कहते हैं कि हम लोग अपना दुख दर्द आपको सुनाने आये हैं। प्रधान कहता है कि मेरे पास समय नहीं है। वल्कि दूसरा अफसर उल्टा पंडित जी पर आरोप लगाता :-

---

1- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 54

"आप पहले अपना और फिर इन किसान मजदूरों का और सबसे अधिक कीमती सरकार का समय नष्ट करते हैं। आप देश के उत्पादन में बाधा पहुँचाते हैं, मुझे कोई कम्युनिष्ट मालूम होते हैं। आपके विरूद्ध रेगूलेशन की कार्यवाही क्यों न की जाय।"[1]

अफसर के इन वचनों को सुनकर मुंशी जी अफसर से कहने लगे :-

"मैं इस डेपुटेशन के साथ नहीं हूँ। पंडित जी मुझे जबरदस्ती ले आये हैं।"[2]

किसान कहता है :-- "अब मैं जाता हूँ। मुझे कुछ नहीं कहना, पंडित जी जानें।"[3]

मजदूर कहता है :- "मुझे भी पंडित जी लोभ देकर लाये थे, कि राजधानी चलने से मिल मालिक बोनस देने के लिये मजबूर हो जायेंगे।"[4]

इन लोगों की बातों को सुनकर अफसर ने पंडित जीसे कहा -- "आप जनता को विद्रोह के लिये उकसाते हैं। आपने किसान को ठगा है। आपके खिलाफ 420 का मुकदमा क्यों न चलाया जाय।"[5]

पंडित जी क्षमा याचना करते हैं लेकिन चपरासी सबको थाने ले जाता है। प्रधान के साथ सब मन्त्री और तीनों अफसर दावत में चले जाते हैं। यहीं पर एकांकी समाप्त हो जाता है।

1- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 58

2- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 59

3- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 59

4- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 59

5- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 60

पहले दृश्य में कांग्रेस जनाके की स्वार्थपरता, दूसरे दृश्य में आई०सी० एस० अफसरों का पैसा कमाना और आगे कमाने की योजना तीसरें दृश्य में कांग्रेस जनों की निन्दा, चौथे दृश्य में सेठ जी का अपने ही भतीजे की बहू के साथ बलात्कार करना, जिससे वह खुदकसी कर लेती है। पुलिस जनों का रिश्वत लेना और नेता जी का भी हिस्सा देना । पांचवा दृश्य पंडित जी चुनाव के लिये लोगों की सेवा करते हैं किन्तु उनकी सेवा भी स्वार्थ लिप्सा से परिपूर्ण है। छठवें अथार्थ अन्तिम दृश्य में अधिकारियों की जनता से उदासीनता एवं नेताओं के कार्यों को करना आदि दर्शाया गया है। अधिकारी वर्ग सच्चे लोगों की बात सुनने के लिये वक्त नही निकाल सकता है किन्तु एक व्यभिचारी, दुराचारी, अय्यासी सेठ के भतीजे की दावत में घण्टों बरबाद कर सकते हैं ।

इस एकांकी की कथावस्तु बड़ी सजीव विचारोतेजक, गतिशील, घटनामयी, मर्मस्पर्शी एवं हास्याप्राद है। संकलन त्रय का भरपूर निर्वाह है। इसका अभिनय भी सफलतापूर्वक हो सकता है।

आज देश में बढ़ते हुये ऐसे स्वार्थपूर्ण आन्दोलनों को इससे समदृष्टि मिल सकती है । अत: स्वराज्य की तस्वीर प्रतापनारायण श्रीवास्तव की अत्यन्त यथार्थ वादी जीवन्त और सशक्त एकांकी है ।

5.2.3 "प्रीतिभोज"[1]

5 ---------

"प्रीतिभोज" प्रतापनारायण श्रीवास्तव का सामाजिक एकांकी है। इसकी कथा इस प्रकार है :-

---

1- प्रीतिभोज - विजय का व्यामोह - एकांकी संग्रह - प्रतापनारायण श्रीवा--स्तव - पृष्ठ - 65

5.2.3.1 समय 11 बजे है। बी0 ए0 प्रथम वर्ष की क्लास लगी हुई है। लड़के शिक्षक की मेज के पास बैठे हैं और लड़कियाँ सबसे पीछे वाली कतार में। मिस्टर राजेन्द्र शर्मा का कक्षा में प्रवेश होता है। सभी लड़के लड़कियाँ उठकर सम्मान प्रदर्शित करते हैं। मिस्टर शर्मा लड़कों/उड़ती हुई दृष्टि से देखकर लड़कियों को घूरने लगते हैं।

मिस्टर शर्मा क्लाश को "सज्जनों जयहिन्द" कह कर सम्बोधन करना चाहते हैं। राजाराम उठकर कहता है - "सज्जन" शब्द पुलिंग है। अतएव आपका "जयहिन्द" हमारे पुरूष वर्ग पर ही लागू होता है। हमारे "कोमल और रूचिर" वर्ग से शायद आप असयोग कर रहे हैं।"[1]

मिस्टर शर्मा अपनी गलती स्वीकार करते हैं और कहते है "अच्छा जेन्टिल मैन और लेडीज, जयहिन्द।"

कृपाशंकर कहता है -- दुनिया की सभ्यता में लेडीज का स्थान पहले है और "जेन्टिलमैन" का बाद में। हमीद कृपाशंकर से कहता है-- किसी बुजुर्ग ने कहा है कि - "मर्द वह है जो जमाने को बदल देते हैं।[2]

मिस्टर शर्मा-- सभी पात्रों से उनका परिचय पूँछते हैं। नरेन्द्रनाथ सुशील कुमार, राजाराम, हमीद, जूलियस, कृपाशँकर सभी अपना पूर्ण परिचय देते हैं। मिस्टर शर्मा सन्तोष व्यक्त करते है। मिस्टर शर्मा लड़कियों को आगे बैठाते हैं और लड़कों को पीछे/लड़कियों से परिचय पूँछते हैं। कामिनी, पुष्पा, सुहासिनी, अमीलिया सभी अपने-अपने बारे में बताती हैं। लड़के आपस में कानाफूसी करने लगते हैं मिस्टर शर्मा उनको डाटते हुये कहते हैं :-

"मैं बहुत वद मिजाज आदमी हूँ, कभी - कभी गुस्सा आने पर x x x x x x x x x x।" लड़के अप्रत्यक्ष कहते हैं नाचने लगता है, भौंकने लगता है, दौड़कर पिंडली पकड़ने लगता है। लड़के हँसने लगते हैं, ठीक इसी समय घन्टा बज जाता है। मिस्टर शर्मा क्लास से बाहर चले जाते हैं लड़के बनावटी ढंग से आक छीं, आक छीं कहकर छींकने लगते हैं।

- -

1- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 66

5.2.3.2 कालेज की लान में एक पेड़ के नीचे कुछ लड़के बैठे हैं, जिनमें जूलियस लड़कों का हाथ देख रहा है। राजाराम और अमीद का प्रवेश होता है। दोनों के विचार से जूलियस फसादी, चलता पुरजा है जो ऐसा जाल फैलाता है कि चिड़िया फंस जाती है। हमीद कहता है कि - मिस जानसन को फांस ही लिया और प्रोफेसर जानसन को भी काफी प्रभावित कर दिया है।

राजाराम कहता है आजकल कृपाशंकर और जूलियस में खूब घुटती है। हमीद बताता है कि वह पुष्पा को चाहता है और पुष्पा मिस जानसन में गहरी दोस्ती है। वह उसके जरिये अपना उल्लू सीधा करना चाहता है। हमीद जो अभी पिछले दो इम्तहानों में हाजिरी की कमी के कारण परीक्षा में बैठने से रोक दिये गये थे वह अब कहता है — "अब यार कालेज छोड़ कर जाने का मन नहीं होता । जी यही चाहता है कि "तितलियों"का फुदकना हमेशा देखा करूँ ।"[1]

राजाराम के विचार से ये लोग वास्तव में तितलियां हैं। यह कालेज नहीं फैशन का घर है। नई-नई सजावट करके आती हैं। हमीद जूलियस के पास जाता है और उसका हाथ पकड़कर उसे घसीटता है। हमीद कहता है मिठाई खिलाओ अभी पांच महीने नहीं हुये इसी बीच मिस जानसन को फांस लिया । हमीद, कृपाशंकर, जूलियस में काफी हास्य व्यंग्य का वार्तालाप चल रहा था, नरेन्द्र और सुशील कुमार का प्रवेश होता है ।

जूलियस कहता है ये ज्यादा पढ़ने वाले बनते है अवश्य ही फेल होंगे। सुशील कहता है :-

"हिम्मत किसकी जो करे हमको फेल ।
सुहासिनी मिले तो हो जाऊँ फेल ।।"[2]

सब हँस देते हैं कृपाशंकर कहते हैं कि इसका नाम यथार्थवाद है राजाराम कहता है नहीं "प्रगतिवाद । क्योंकि पहले जमाने में एक अरसे शिक्षा प्राप्त करने वाली वालिकायें धर्म वहिनों का पद प्राप्त करती थी, और आजकल x x x x x x x x x x x x ।"[3]

1- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 73

2- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 75

3- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 75

जूलयस बताता है हमारी नजरें तो मात्र एक पर स्थिर हैं, लेकिन मिस्टर शर्मा तो सभी तितलियों का रस लेना चाहते हैं। उन्होंने सुहासिनी, पुष्पा, अमीलिया, कामिनी /, अपना प्रेम समर्पण किया और कहते हैं कि मैं सारे पेपर आउट करवा दूँगा × × × × × × × ×। अथार्थ मिस्टर शर्मा एक-एक कर सब पर अपनी पाप वासना प्रकट कर चुके हैं। इसी बीच अमीलिया, कामिनी, सुहासिनी और पुष्पा का प्रवेश और वे सब एक दूसरे से अभिवादन करती हैं।

कृपाशंकर, जूलियस, राजाराम, हमीद सभी जानने को उत्सुक हो उठते हैं। नरेन्द्र कहता है --

"नहीं, आपको बताना होगा। देखिये आप हमारी बहिन हैं, धर्म बहिनें : धर्म बहिन का सम्बन्ध सात्विक है, कभी शिथिल नहीं होता। आप अपनी रक्षा स्वयं कर सकती हैं। × × × × × × × × × × × वह शिक्षक होने योग्य नहीं हैं।"[1]

पुष्पा कहती है आप लोग धीरज रखिये हम लोग उन्हें खुद रास्ते पर लायेंगी। हमीद कहता है -- शाबास मिस पुष्पा। नरेन्द्र हमीद से कहता है -- "

"मिस पुष्पा नहीं कहिये। बहिन पुष्पा। जिसके कहने से मन में पवित्रता का संचार हो। हम भारतीय हैं। हमारा नैतिक पतन नहीं हो सकता। हमको प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि हम लोग उनको अपनी सगी बहिनों से ज्यादा समझें।"[2]

कृपाशंकर कहता है इसीलिये लड़कियों को पास बैठाते हैं। अमीलिया कहती है अपने पैरों से हमरा पैर दवाने के लिये और पुष्पा की सुरभि लेने के लिये। पुष्पा कहती मेरी बारी तो पीछे आयी पहिले तो का--मिनी को प्रेम निमन्त्रण मिला, सुहासिनी कहती है वारी, वारी से तो स-बको मिला वे गुरू हैं सबको एक दृष्टि से देखते हैं। इतने में घंण्टा बज जाता है और सब चले जाते हैं।

1- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ -76-77

2- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 77

5.2.3.3 सभी छात्र छात्रायें क्लास रूम में बैठी हैं। मिस्टर शर्मा आते हैं और कहते हैं रोल काल की कोई आवश्यकता नहीं है मैं सबको प्रेजेन्ट बना दूँगा । राजा राम कहता है --

"आपकी मेहरबानी पर है सबकुछ मुनहस्सर। हम तो हाजिर हैं विद वाडी एण्डसौल टूगेदर ।"[1]

सब हँसते हैं। मिस्टर शर्मा कहते हैं आज कविताओं का नम्म्बर है तो मैं भी कविता सुना दूँ । हमीद कहता गला नहीं है। कृपाशंकर कहता है— गला नहीं है तो नेकटाई कहाँ बाँधी ? जूलियस -- धीरे से कहता है, दुम में सब लड़के हँस पड़ते हैं । मिस्टर शर्मा कहते हैं सुनिये :-

वीणे उन्हें सुना दो,
मेरे मन की मौन व्यथा को,
आहभरी मम करूण कथा को,
निज मूक थिरकते तारों से,
उन तक तो पहुँचा दो ।
वीणे उन्हें सुना दो ।।
ताल स्वरों की लय में मिलकर,
कम्पित स्वर में ठहर-ठहर कर,
मीड़, मूर्छना, कम्पन द्वारा,
मेरी दशा बता दो ।
वीणे उन्हें सुना दो ।।
संभल, संभल कर देखो कहना,
आँसू जैसे मत गिर पड़ना,
गान रूप में निर्मित रोदन,
मेरा उन्हें सुना दो,
वीणे उन्हें सुना दो ।।
अंगुलिका के चुम्बन में ही,
भूल न जाना संदेश कहीं,

1- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 78-79

हृदय खोलकर अंतस्तल का,

भीषण घाव दिखा दो ।

वीणे उन्हें सुना दो ।।" [1]

सभी लोग वाह, वाह करते हैं। जूलियस, राजाराम, कृपाशंकर हास्य परिहास्य और व्यंग्य करने लगते हैं । जूलियस कहता है सर मैंने भी एक अंग्रेजी कविता लिखी है अगर हुक्म हो तो सुना दूँ । सुनिये :-

"Under the Amaltash,
Sit there the bold Badmash.
And tune their merry note
Unto the Donkey's throat.
Come hither, Come hither,
Here shall you see,
Only beauty,
And no class and no Teacher." [2]

वाह, वाह की ध्वनि से क्लास गूँज उठता है। घण्टा बजता है, मिस्टर शर्मा चले जाते हैं।

5.2.3.4 एक कमरे में कामिनी, सुहासिनी, पुष्पा और अमीलिया का प्रवेश । अमीलिया कमरे की सजावट की तारीफ करती है। और मिस्टर शर्मा को बुलाने को कहती है। पुष्पा कहती है कि मैं गई थी वह घर में अकेला था वह मुझपर टूट पड़ा मैं निमन्त्रण मेज पर रखकर चली आयी । मेरे पापा मेरे मामा की शादी में सब को लेकर झांसी चले गये । मैं इम्तहान का बहाना बनाकर नहीं गयी ।

पुष्पा, सुहासिनी, कामिनी, अमीलिया सभी पुरुष वर्ग का विरोध करती हैं --"क्रीम, पाउडर लगाना, मांग भरना, पटिया निकालना, सोलहों श्रृंगार तो करते हैं। xxxxxxxxxअभी भी एक कमी है।अभी तक लिपिस्टक और नाखूनों को रंगने की बारी नहीं आयी है ।" [3]

1- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 81-82
2- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 82
3- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 83

इसी बीच नरेन्द्र, राजाराम, जूलियस, कृपाशंकर और हमीद का प्रवेश । अमी--लिया सबको परदे के पीछे छिपने को कह देती है और कहती है कि जब ताली बजाऊँ तब निकलियेगा । अमीलिया, और सुहासिनी भी छिप जातीहै

पुष्पा बाहर जाती है और थोड़ी देरबाद मिस्टर शर्मा और पुष्पा का प्रवेश होता है, दोनों एक दूसरे का हाथ पकड़े हैं। मिस्टर शर्मा उसको अपनी ओर घसीटता है और पुष्पा दूर भागती है। मिस्टर शर्मा कहते हैं :-

"पुष्पा, मेरी प्यारी पुष्पा, मैं आज धन्य हो गया हूँ। अपने प्रेम का प्रतिदान पाकर कौन प्रेमी सुखी नहीं होता × × × × × × ×गुड़ दिखाकर ईंट क्यों मारती हो पुष्पा । मैं तो तुम्हारे ऊपर जी जान से मु-ग्ध हूँ। मुझे मीरा बनाकर अधरापान करने दो ।"[1]

पुष्पाकहती है - सब्र कीजिये, पेपर तो दिखाइये पहले मा-टर साहब । मिस्टर शर्मा:-

"देखो अकेले में तो इस मनहूस और नीरस सम्बोधन को दूर हटाओ। मुझ से कहो प्रियतम, प्राणाधार या और कुछ । पेपरों के लिये क्यों परेशान हो यह लो ।"[2]

पुष्पा कहती है होली का त्योहार है कुछ पी भी तो लीजिये । भला बिना पिये क्या मजा आयेगा। मिस्टर शर्मा कहते हैं -

"मैं बिल्कुल गधा हूँ, मैं न जान सका कि तुमको भी शौक है, नहीं तो मैं अकेले ही पीकर क्यों आता । अब हम एक ही गिलास में पियेंगे । पुष्पा अलमारी से मदिरा की बोतल जिसमें नारंगी का रस है औ-- र प्याली निकालती है और दोनों सोफे पर बैठ जाते हैं। मिस्टर शर्मा पुष्पा को पिलाने का प्रयत्न करते पुष्पा उनका पूरा गिलास पी जाती है[3] मिस्टर शर्मा कहते कि तुम एक गिलास पी गई तो वह कहती है ---

"क्या करूँ मास्टर साहब, जिस गुरू का स्थान पिता से भी श्रेष्ठ माना गया है, सन्त कवियों ने जिसे ईश्वर से भी अधिक प्रधानता

1-प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 84-85

2- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 85

3- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 85

दी है उसी को अपना स्त्रीत्वसमर्पण करने के लिये पिशाचिनी बनना पड़ेगा × × × × × × × × × और मदिरा के अतिरिक्त दुनिया में कोई वस्तु मनुष्य को पिशाच नहीं बना सकती इसलिये एक गिलास पिया है।"[1]

मिस्टर शर्मा के मतानुसार-"क्लास में टीचर हूँ और यहाँ × × × × × × × × ।"[2]

पुष्पा कहती है मेरा स्त्रीत्व भंग करने वाले आप यह बताइये, मिसेज शर्मा, और मेरी दूसरी साथियाँ कामिनी, सुहासिनी, अमीलिया से प्रेम नहीं करते ।

मिस्टर शर्मा कहते हैं -- मिसेज शर्मा घर की मुर्गी है। कामिनी पूरी चुड़ैल लगती है, सुहासिनी के नाक है ही नहीं, रहगयी अमीलिया मगर उससे क्या मैं तो सिर्फ तुमको चाहता हूँ। वह पुष्पा को आलिंगन करने की चेष्टा करते हैं तब तक परदे के अन्दर से एक हँसी का ठहाका होता है, और अमीलिया और सुहासिनी, कामिनी प्रकट हो जाती हैं, और खूब मजाक उड़ाती हैं।

अमीलिया कहती है आज प्रीतिभोज है, हमारे दूसरे साथी भी आ गये और ताली बजाती है। तभी सब लड़के निकल आते हैं और मिस्टर शर्मा को साष्टांग दण्डवत करते हैं। राजाराम कहता है :-

"गुरू पुष्पा दोनों खड़े काके लागूँ पांय ।
पुष्पा जी की जय कहूँ, जिन गुरू दिया बताय ।"

फिर लड़के साष्टांग दण्डवत करते हैं और लड़कियां हँसने लगती हैं ।

इस एकांकी की कथावस्तु जीवन की वास्तविक यथार्थता से ग्रहण की गई है। श्रीवास्तव जी अपने देखे हुये जीवन के अनुभवों के क्षेत्र से ही एकांकियों के लिये वस्तु का चुनाव करते हैं। "प्रीतिभोज" का कथानक भी इसका अपवाद नहीं । कथानक का निर्वाह, विकास, चरम सीमा और अंत के दृष्टिकोण से पूर्ण संगठित है। अन्त में पुष्पा, कामिनी, सुहासिनी और अमीलिया के चरित्र के जैसा का तैसा हो जाने में नाटकीय सौन्दर्य निखर आया है। संकलन त्रय का भी उचित निर्वाह हुआ है। एकांकी में चार दृश्य हैं, किन्तु कथा संगठन इस कौशल से किया गया है कि अंतराल खटकता नहीं है।

1- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 86
2- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 86

अभिनेता की दृष्टि से यह बहुत ही सफल एकांकी है । इसके संम्वाद अत्य-न्त स्वाभाविक और पात्रानुकूल हैं ।

5.2.4 "विजय का व्यामोह "।

"विजय का व्यामोह" प्रतापनारायण श्रीवास्तव का एक सामाजिक पारिवारिक एंकांकी है। आजकल के बदलते हुये सामाजिक मूल्यों केयुग में घरेलू जीवन की छोटी-छोटी बातें भी बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। मध्यम वर्ग के परिवार में उच्चवर्ग के संस्कारों से अनेक एकसी समस्यायें उत्पन्न हो जाती है जिसमें अनजाने ही पारिवारिक सुख शान्ति नष्ट हो जाती है। कभी-कभी ये संस्कार मन में इतने गहरे बैठ जाते हैं कि चाह कर भी मनुष्य उनमें सुधार नहीं कर पाता है। इस एकांकी में ऐसी ही साधारण समस्या को लेकर पारिवारिक जीवन की झांकी प्रस्तुत की गई है। पति पत्नी की वैचारिक विषमता और भिन्न-भिन्न जीवन दृष्टिकोण को लेकर नाटककार ने एक नाटकीय कथा की सृष्टि की है। सांस्कृतिक नियम के पालने वाले शिष्टाचारी, गरीबों का साथी, एकता का प्रतीक, सज्जनता की मूर्ति, समानता की भावना रखने वाला, स्त्री उत्थान को चाहने की "सनक" रखने वाला व्यक्ति जिन्दगी को पूरी तरह जी नहीं पाता, यही इस एकांकी की कथा है । एकांकी की कथा 12 दृश्यों में विभक्त है ।

5.2.4.1 कथा का आरम्भ यहां से होता है रमेश सीटी बजाते हुये प्रवेश करते हैं। सहसा उनकी दृष्टि घड़ी पर पड़ जाती है। वह कहने लगते हैं 5 बज गया । कान्ति आने वाली है। उनकी पत्नी कहती है । आजकल माया से बहुत स्वर मिलाया जा रहा है। रमेश उसे बहिन समझता है और वह रमेश को भाई । लेकिन माया कहती है कि वह एक वैश्या की लड़की, जिसकी मां चन्दाबाई मेरे मौसा के यहां कई बार नाचने आयी ।

रमेश कहते हैं न तो वह वैश्या की लड़की है और न नाचना ही कोई बुरा है। वह एक कला है। माया कहती है कला की आड़ में तो पाप बड़ी सुन्दरता से होता है तुम्हारी गुप्त अभिसन्धि का पता लगा लिया है ।

1-विजय का व्यामोह-विजय का व्यामोह एकांकी संग्रह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 93

रमेश माया को बहुत समझाते हैं किन्तु माया की समझ में उसके विपरीत (प्रतिकूल) हीआता है वह कहती है कान्ति एक वेश्या की लड़की है, देखने में सुन्दर है, मुझे से कम उम्र है, हँसोड़ है, चंचल है, टेनिस चैम्पि--यन है, और नाचने में भी पारंगत है। इतने में नेपथ्य में "भाई साहब, भाई साहब" का शब्द होता है। माया कहती देखो वह आगयी उसने आकर मा-या के क्रोध को और भड़का दिया जैसे घाव पर नमग छिड़क दिया हो। व-ह कहने लगी:-

"इस पापाचार का भंडा फोड़ करके ही मानूंगी, नहीं तो × × × × × × मैं अपने अधिकारों का उपयोग करूँगी । हिन्दू विधान में "डाईवोर्ड" की धारा पारित हो गई है। × × × × × × × रूपिवादी महिलाओं के सम्मुख अपना ज्वलंत उदाहरण रखूँगी × × × × ×× ।"[1]

इतने में नौकरानी गंगा आ जाती है। माया गंगा को भी बताती है कि कान्ति भाई-भाई कहकर बाबू जी पर डोरे डाल रही है । गंगा भी उसके हां में हां मिलाने लग जाती है। गंगा कहती है कल से मैं उसे घुसने नहीं दूँगी । माया कहती नहीं मैं तुम्हारे बाबू जी को तलाक × × × × × × × × × । गंगा इसे नीच लोगो का कार्य समझती है। दोनों में तलाक को लेकर काफी देर तक बहस चलती रहती है। अन्त में दोनों का प्रस्थान होता है ।

5.2.4.2 हाथ में टेनिस खेलने का रैकट लिये कान्ति और रमेश का प्रवेश । भाई बहिन में खेल को लेकर वात छिड़ जाती है। कान्ति कहती है अब आप टेनिस क्यों नहीं खेलते है। रमेश कहते --

"जब छोटी बहिन ही बड़े-बड़े खिलाड़ियों को हराने लगी है, तव बड़े भाई के खेलने की क्या आवश्यकता है ।"[2]

चलो तुम्हें घर छोड़ आऊँ । रमेश कहते हैं और माता जी के भी बहुत दिनों से दर्शन नहीं हुये हैं वह भी कर आऊँ । रमेश कहते हैं च-लो नरेन्द्र से भी मिलता चलूँ । कान्ति जाने के लिये स्वीकार नहीं होती रमेश कहते हैं नरेन्द्र एक होनहार, बी.ए.और एम.ए. में प्रथम आया । वह आत्माभिमानी है न किसी से कर्ज लेता है और न किसी से दान । वह

1-विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 94

2-विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 99

जाति च्युत है उसकी मां पहले ईसाईन थी फिर हिन्दू हो गई । क्या तुम इसी कारण उससे चिढ़ती हो । कहती है नहीं आज से मैं भी उसके सम्मान की रक्षा करूँगी । इसी बीच कान्ति का बंगला आ जाता है कान्ति की मां चन्दा बंगले के फाटक पर खड़ी प्रतीक्षा कर रही है। रमेश उनके चरण स्पर्श करके प्रणाम करता है । चन्दा उसे आशीर्वाद देती है। चन्दा कान्ति को खाना बनाने के लिये कहती है। कान्ति खाना बनाने चली जाती है । रमेश और चन्दा में कान्ति को लेकर बाते होने लगती हैं ।

चन्दा रमेश से कहती है कि इसके विवाह की फिक्र है या नहीं । रमेश कहते हैं मैंने लड़का ढूंढ लिया है। और वह है नरेन्द्र । मैंने पहले उससे और फिर नरेन्द्र की मां से तय कर लिया । बस नरेन्द्र और उसकी मां से मिलकर मैं तारीख निश्चित कर लूँगा । दस हजार रुपये और एक बंगला हम नरेन्द्र को देंगे और चालीस हजार रुपये कान्ति के नाम बैंक में जमा कर देंगे ।

चन्दा कहती है ऐसा नहीं होगा मैं तुम्हें पथ का भिखारी नहीं बनने दूँगी । जो उसके बाप ने उसके व्याह के लिये सुरक्षित रखे हैं वही उसको दे दो शेष तो तुम्हारा है ही । तुम्हारे बाबू जी कि जितनी तारी--फ करूँ कम है । वह बताती है एक बार बड़ी परेशानी में थी मुझे कई कर्ज अदा करने थे । मैंने तुम्हारे बाबू जी को अपना बकील बनाया और उनको अपनी पूरी कहानी सुनायी । उन्होंने मुझे अपनी संरक्षिका में लेने को कहा मैंने स्वीकार कर लिया । और मैं इस बंगले में महारानी बनकर रहने लगी यहीं कान्ति पैदा हुई । पता नहीं तुम्हारे बाबू ने कैसे इन्तजाम मेरे लिये किये थे कि हर महीने की पहली तारीख को 200 रु0 का मनीआर्डर कहां से आता था कुछ पता नहीं और रोने लग जाती है ।

रमेश कहते हैं कि आप ठीक कहती हैं लेकिन मैं भी क्या करूँ मैं भी अपने पिता के साथ विश्वासघात नहीं कर सकता । पच्चास हजा-र जो सुरक्षित है उसमें आधा कान्ति का है और मैं उसे दूँगा । इसी बीच कान्ति का आगमन होता है। रमेश और चन्दा कान्ति के बुलाने पर चले जाते हैं ।

5.2.4.3 रमेश घर आता है तो वहां कोई नहीं है। सिर्फ एक नौ-कर बुधुवा है। उससे पूछने पर पता लगता है कि वह अपनी नौकरानी गंगा

और मोहन के साथ मैके चली गई । रमेश को बुधवा एक चिट्ठी देता है जिसे उसकी मालकिन जाते समय देकर गयी थी । रमेश पत्र को पढ़ता है।

"मिस्टर रमेशचन्द्र जी, मैं आज कई दिनों से आपकी प्रणय लीला देख रही हूँ। आप कान्ति नामक छात्रा के प्रेम में फंस गये है, और इसलिये आप विश्वासघात के अपराधी हैं । × × × × × × × × अब हमारे नेताओं की कृपासे एक सम्मान पूर्ण रास्ता निकल आया है। वह है तलाक देने का । × × × × × × × × × × चुपचाप उसे स्वीकार कर लीजिये , और आप भी बन्धन मुक्त होकर अपनी मन चाही प्रेमिका कान्ति से प्रेमाभिनय अथवा विवाह, जैसी आपकी इच्छा हो करें।"[1]

रमेश अन्तर्द्वन्द्व में पड़ जाता है। रमेश ने माया को कान्ति के बारे में इसलिये नहीं बताया था कि वह कान्ति को 10 हजार से ज्यादा रुपये देने नहीं देगी । इसके अलावा दिन रात लड़ाई झगड़े होते । इस लिये शादी के वाद बताने के पक्ष में थे । इसी बीच बुधवा का प्रवेश । रमेश उससे पूँछता है अब क्या होगा । दोनों मनाने के पक्ष में नहीं हैं बुधवा कहता है —"हुजूर आराम से सोइए। सारे झगड़े वखेड़े की जड़ औरत होती है। मैंने भी अपनी घरवाली से कह दिया है, तुझे मनाने मैं नहीं आऊँगा । तू आवे चाहे न आवे ।"[2]

बुधुवा का प्रस्थान होता है । पटनिक्षेप हो जाता है।

5.2.4.4 सुरेन्द्र नाथ जी एक साधारण वकील हैं जो माया के सहपाठी भी रहे हैं । वह अपनी असफलताओं के बारे में सोचते हैं। इतने में उन्हें माया दिखाई देती है। दोनों एक दूसरे को नमस्कार करते हैं। सुरेन्द्रनाथ ने माया के पति रमेश जो प्रोफेसर हैं की तारीफ कर डाली। माया बात को काटती है और सुरेन्द्रनाथ से उनकी शादी वगैरह के बारे में पूँछने के बाद कहती है कि मुझे एक वकील की जरूरत है। मैं हिन्दू मैरिज ऐक्ट के अन्तर्गत डाइवोर्स प्राप्त करने के लिये प्रार्थना पत्र अदालत में देना चाहती हूँ। साथ-साथ वह सुरेन्द्र को कान्ति और रमेश के प्रणय सम्बन्धों के बारे में भी बताती है।

- - 5 -

1- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 112

2- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 118

सुरेन्द्र वकालतनामा अदालत में देने को तैयार हो जाते हैं और माया का साथ देने देने के लिये तत्पर हो जाते हैं। वह वकालतनामे पर माया के हस्ताक्षर करा लेता है। माया उसे शाम घर पर आने को कह आती है। सुरेन्द्र इस पर अपने भाग्य की सराहना करते हैं शादी की शादी हो जायेगी और कम से कम एक लाख की सम्पत्ति हाथ लगेगी । "त्रिया चरित्र पुरुषस्य भाग्य, देवो न जानाति कुतो मनुष्यः । सुरेन्द्र का चाणक्य के इसी वाक्यांश को कहते हुये प्रस्थान हो जाता है।

5.2.4.5 माया अपनी किताबें की अलमारी की सफाई कर रही है। गंगा प्रवेश करती है। कहती है लाईये में साफ किये देती हूँ । माया खुद ही करने को कहती ।अलमारी से कागज का एक डिब्बा निकालकर उसे खोलती है उसमें से कई पत्र गिर पड़ते हैं। वह एक पत्र पढ़ने लगती है।

"प्रियतमे, तुम जब से गई हो, तव से अपने जीवन में एक बड़ा शून्य अनुभव कर रहा हूँ। शरीर की सभी शक्ति निश्चेष्ट हो गई है। प्राण चले जाने के वाद जिस भांति शरीर क्रिया हीन हो जाता है, उसी भांति तुम्हारे जाने से मेरी दशा होगई है × × × × × × × ।"

यकायक वह कहने लगती है पुरुष झूठ, छली, प्रपन्च एवं सब का आगार होता है। इसी बीच माया की भाभी गीता आ जाती है। किन्तु माया उसी के हाथ का पानी पीने की इच्छा व्यक्त करती है। गीता पानी लेने चली जाती है। वह पत्रों में आग लगा देती है। गीता पानी लेकर आ जाती है वह कहती है पत्रों के जलने से ननदोई जी का अनिष्ट हो सकता है। निश्चिय ही कोई वात है तव तो आप सरेशाम चली आई । इसका माया पर प्रतिकूल असर होता है वह कहती है घर मेरा है मुझे आने और जाने के लिये किसी की स्वीकृत लेने की आवश्यकता नहीं है। फिर - वह रमेश और कान्ति के सम्बन्धों के बारे में गीता को बताती है । गीता को माया की बातों पर विश्वास नहीं होता । लेकिन जव वह कहती है कि मैंने अपनी आँखों से देखा है तो उसे विश्वास हो जाता है ।

माया प्रतिशोध की बात करती है। गीता के विचार से प्रतिशोध -- "हिन्दू रमणी प्रतिशोध की कामना नहीं करती ।वह पति के अपराध को क्षमा करती है। विश्वासघात के अपमान गरल को वह शंकर

---

*- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ -125

की भांति पी जाती है। किन्तु केवल कण्ठ तक रखती है, उदरस्थ नहीं करती।"[1]

मायां कहती है हम स्वतन्त्र है हम उन्हें तलाक दूँगी :-

"मैं ऐसे विश्वासघाती पुरूष के साथ कैसे रह सकती हूँ। जो शरीर किसी दूसरे के शरीर स्पर्श से अपवित्र हो गया है, उसको मैं कैसे स्पर्श कर सकती हूँ।"[2]

गीता तलाक को घृणित एवं परम्परा विहीन कार्य मानती है। माया पर उसका कुछ भी असर नहीं होता है। वह समानता, स्वतन्त्रता, स्वच्छन्दता, निरंकुशता की समर्थक है। इतने में गंगा गीता को बुला लेती है। वह चली जाती है तब कहती है अब कपड़े वगैरह बदलू सुरेन्द्र का आने का समय हो गया है।

5.2.4.6 कमरे में गंगा बैठी तरकारी काट रही है। गीता आकर पूँछती है किसलिये बुलाया था वह कहती है क्या तरकारी बनेगी। ननंद जी से पूँछ लो। फिर कहती है छोड़ा इन बातों को अपने मालिक और मालकिन में क्यों खटपट होती है।

अपने को कुछ नहीं मालूम पहले बहू जी में और बाबू जी में खूब पटती थी लेकिन अब घर में एक लड़की वैश्या की रोज आने लगी है। वह उन्हें बहिन और भाई कहती है। भैया साहब उसके साथ खेलने कूदने भी जाते हैं। वह कसम खाने लगती है मेरे भैया साहब वैसे नहीं है जैसे बहू जी सोचती हैं। गीता कहती है तुम जाओ पहले कान्ति के घर का पता लगाओ गंगा चली जाती है। यवनिका का पतन हो जाता है।

5.2.4.7 रामू का रमेश के कमरे में खांसते हुये प्रवेश। खांसने के बाद वह कहता है कि मकान, जायदाद, माल, खजाना, कोठी सब रामू का है। भैया सहाब को कोई मतलब ही नहीं। इसी बीच तेजी के साथ गंगा का प्रवेश होता है। गंगा को देखकर वह खूब डाँटता है। वह उसे चली जाने को कहता है। मैने मोहन और महाराजिन सभी को निकाल दिया। कहती है भैया कहां खाना खाते हैं ? कब आते हैं ? कहां गये ? आदि बहुत जिद करने

1- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 129

2- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 129

पर वह कहता है अपनी बहिन के यहाँ ।

गंगा कहती है वह बहिन नहीं है उसने हमारे सोने के संसार को मिट्टी में मिला दिया है। भैया दिन रात उसी के यहां पड़े रहते हैं। गंगा और रामू में थोड़ी देर के शास्त्रार्थ की चर्चा होने लगती है। वह कान्ति का पता पूछती है रामू कहता है मातादीन ड्राइवर को मालूम होगा । कल मैं भैया के साथ जाकर घर देख आऊँगा । वह जाने लगती है वह कहता है पहले रोटी बना दो, दो दिन से खिचड़ी खा रहा हूँ। वह दोनों इस बात की कसम खाते हैं कि बड़े बाबू के घर का कुछ भी अनहित नहीं होने पाये । तू जा मैं रोटी बना लूँगा । वह अब रोटी बनाने को चली जाती है। एक ओर से गंगा और दूसरी ओर से रामू का प्रस्थान ।

5.2.4.8 माया कमरे में बैठी पियानो बजा रही है और पियानो बजाने के बाद गाती है :-

वीणे ! उन्हें सुना दो ,
मेरे मन की मौन व्यथा को,
आह भरी यह करुण कथा को,
निज मूक थिरकते तारों से ।
उन तक पहुँचा दो ।
वीणे ! उन्हें सुना दो ।।
ताल स्वरों की लय में मिलकर,
कम्पित स्वर में ठहर-ठहर कर,
भीड़ मूर्छना कम्पन द्वारा,
मेरी दशा बता दो ।
वीणे उन्हें सुना दो ।।
सम्हल-सम्हल कर देखो कहना,
आँसू जैसे मत गिर पड़ना,
गान रूप में निर्मित रोदन,
मेरा उन्हें सुना दो ।
वीणे ! उन्हें सुना दो ।।
आँगुलिका के चुम्बन में ही,
भूल न जाना सन्देश कहीं,

हृदय खोल कर अन्तरतल का,

भीषण घाव दिखा दो ।

वीणे उन्हें सुना दो ।।"[1]

सुरेन्द्र नाथ का प्रवेश होता है। वह माया की कला और गले की तारीफ करता है। माया कहती है कि मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही थी। वह कहती है त्याग नाम ही नारी हैऔर छल, प्रवन्च, धोखा, विश्वासघात पुरूष का कार्य है वह चाहे आप हों या रमेश। तारीख बढ़ गई है अब 6 नवम्बर होगई ।

बड़े बाबू गंगा द्वारा सुरेन्द्र को चाय के लिये बुलाते हैं। गंगा के साथ सुरेन्द्र का प्रस्थान और गीता का प्रवेश होता है। माया गीता को बुलाती है और कहती है कि कुछ आप सुनाइये, वह कहती है अभी आप प्रेम कहानी सुन रहीं थी अब विरह के गीत सुनाऊँ । दोनों मिलकर सुरेन्द्र की बात करती हैं। गीता माया को तरह-तरह से समझाती, किन्तु वह नहीं मानती, और वह जाने का प्रबन्ध करती है। वेग से प्रस्थान करती है। गीता अब सग कुछ माया के भाई को सुनाने को तैयार हो जाती है। सोचते हुये वह भी प्रस्थान कर जाती है ।

5.2.4.9 कान्ति का अपने घर के एक कमरे में एक गीत के स्वर गुनगुनाते हुये उत्साह के साथ कान्ति का प्रवेश । उसे अपने भाई को निमन्त्रण देने जाना है लेकिन माँ नीली साड़ी पहिन कर नहीं जाने देती वह केसरिया साड़ी को पहिनने के लिये कहती हैं। वहाँ वह उसे ढूँढ रही है किन्तु उसे मिल नहीं रही, माँ उसे लाकर देती है। माँ उसे बुरा भला कहती है, कि तूँ बड़े नवाब की लड़की नहीं है। उसको माँ के यह शब्द बुरे लगते हैं वह कहती है कि पिता के बारे में मुझे कुछ भी पतानहीं है लेकिन नवाब साहब की बहिन अवश्य हूँ। माँ अपनी भूल स्वीकार करती है। रमेश और बहू दोनों को लाने की कहती है। चन्दा की नौकरानी राधा बताती, कि रसोईका सब सामान तैयार हो गया। चन्दा स्वयं खाना बनाने में लग जाती है। उसे बार-बार रमेश के पिता की याद आती है। उसे आज वह स्वयं स्वप्न में भी दिखाई दिये । वह कह रहे थे :-

---

1- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 131-132

"मैंने कभी रमेश को तुम्हें नहीं दिखाया, तुम्हारे पास उसको न कभी लाया और न तुम्हारा भेद ही बताया। इसके लिये तू मुझे क्षमा करना। मैं उसके कन्धों पर तुम्हारा भार नहीं छोड़ना चाहता था, जिससे आगे चलकर उसे समाज में लज्जित होना पड़े। किन्तु जब वह स्वयं तुम्हारे पास चलकर आ गया है, तुम उसकी भी रक्षा करना। xxxxxxxx यदि उसकी अपनी माँ जीवित होती तो क्या वह उनको मुझसे अधिक प्यार कर सकता? शायद नहीं।"[1]

इसके बाद वह काम करने के लिये प्रस्थान करती है।

5.2.4.10 नरेन्द्र और रमेश का नरेन्द्र की बैठक में प्रवेश। नरेन्द्र कहता है रमेश दादा आपके सहयोग से हमने 5 वैश्याओं के विवाह करा दिये हैं। और दो ने अपने पेशे को त्याग दिया है। रमेश इसका श्रेय कान्ति और नरेन्द्र के परिश्रम और लगन को देता है। और नरेन्द्र रमेश को। इसी समय कान्ति आ जाती है और रमेश दादा से कहती है कि मैं अभी आपके घर से आ रही हूँ पता चला कि आप तो घर सिर्फ सोने के लिये जाते हैं आखिर क्या बात है। आप रहते कहाँ हैं? खाते कहाँ हैं? आदि प्रश्न एक सथ करती है रमेश उसको अपना पूरे दिन का कार्यक्रम बता देते हैं। कान्ति रोने लगती है। रमेश उसे तरह-तरह से समझाता है। वह कहती आपकी आज माँ से शिकायत करूँगी। वह कहता है माँ से न कहना। वह उसे भैया दूज की याद दिलाती है। रमेश प्रेमावेश में कान्ति की पीठ पर हाथ फेरने लगते हैं और उसी के साथ कान्ति को साथ लेकर उसके घर चल दिये और नरेन्द्र से सभा विसर्जित कर तुरन्त आने को कहा। सब का प्रस्थान हो जाता है।

5.2.4.11 माया के भाई प्रकाशचन्द्र अपने कमरे में बैठे हुये समाचार पत्र पढ़ रहे हैं। गीता इसी बीच कमरे में आती है। वह कहती है कि तुम तो दिन रात पढ़ते ही रहते हो घर गृहस्थी की ओर तनिक भी ध्यान नहीं देते ज्यादा कहें तो कहेंगे कि घर तुम्हारा गृहस्थी तुम्हारी हालांकि यह सत्य नहीं है पुरुष मात्र कूटनीतिज्ञ होते हैं। गीता के पूँछने पर प्रकाश कहता है कि सुरेन्द्र वकील उस दिन से आये नहीं। इसी बीच सेवक आकर बताता है कि वकील साहब आये। गीता उठकर चली जाती है सुरेन्द्र का प्रवेश होता है,।

1-विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 133

वह रमेश कान्ति और नरेन्द्र के बारे में प्रकाश को बताता है।

प्रकाश सुरेन्द्र से पूँछते हैं कि क्या माया को विवाह विच्छेद केलिये न्यायालय की शरण लेनी पड़ेगी । मेरी तो राय नहीं है अगर यह कानून न होता तो क्या होता । बातों ही बातों के बीच प्रकाश सुरेन्द्र से उत्तेजित होकर पूँछने लगते हैं कि आप क्यों इतने अधिक दिलचस्पी ले रहे है, वकील साहब बताते हैं कि माया मेरी सहपाठी है दूसरा यह कि मैं उसका वकील हूँ इसके अलावा मेरी उससे कोई दुरभि सन्धि नहीं है ।

प्रकाश उसे घर से चले जाने को कहते हैं वरना बंधवाकर जेल भिजवा दूँगा । माया आकर प्रकाश को मना करती है किन्तु प्रकाश माया को अन्दर जाने को कहता है, और सुरेन्द्र उसे घर से तुरन्त बाहर निकल जाने को कहता । सुरेन्द्र चला जाता है। माया भी चली जाती है।

गीता इधर प्रकाश को समझाती हैकि उसे इसतरह उत्तेजित नहीं होना था आप पहले रमेश बाबू से मिलो और उन्हें यहाँ बुला लाओ प्रकाश रमेश को लेने तथा गीता तथा गीता, माया को मनाने के लिये प्रस्थान कर देती है ।

5.2.4.12 कान्ति के यहाँ रमेश और चन्दा बैठे आपस में बाते कर रहे हैं। चर्चा का विषय कान्ति और नरेन्द्र की शादी को लेकर चलरहा है। चन्दा जल्दी विवाह करने के लिये कहती है। रमेश उसको विश्वास दिलाता है कि वह शीघ्रातिशीघ्र ही यह कार्य करने वाला है। इसी बीच नरेन्द्र आ जाता है वह चन्दा को प्रणाम करता है। चन्दा उसे आशीर्वाद देती है।

कान्ति, मीना, रम्भा, प्रभा, कला आदि लड़कियाँ अपने दादाभियारमेश को राखी बांधने और तिलक करने के लिये आती हैं। सभी कहती हैं कि आप सभा में क्यों नहीं आये । मीना कहती है आप हम पापिनियों को बहिन का अधिकार नहीं देना चाहते ।

रम्भा कहती है - देखती नहीं हमारे शरीर पर पाप की छाप लगी हुई है। प्रभा कहती है - हमको अपनी सीमा के अन्दर रहना चाहिये । कला -- दादाभिया के सत्संग से मैं सोना हो गई लेकिन तुम लोगों का नहीं जानती । बारी-बारी सभी रमेश की प्रशंसा करती हैं। सभी राखी बांधती हैं। और सभी प्रसन्न होती हैं। इसी बीच प्रकाश बाबू आते हैं। रमेश बाबू आगे बढ़कर उनका स्वागत करते, उन्हें एक कुर्सी पर बैठाते । रमेश सभी से

प्रकाश, चन्दा और कान्ति का परिचय कराते हैं। प्रकाश नरेन्द्र का परिचय जानकर बहुत खुशी होता है। प्रकाश बताता है हमारी बहिन माया को भ्रम हो गया था कि रमेश और उसके बीच कान्ति आ गयी है इसी लिये उसने विवाह विच्छेद करवाने के लिये न्यायालय में प्रार्थनापत्र दिया है जिसकी आज रमेश पर सम्मन तामील हुआ है। यह सुनकर कान्ति बेहोश होकर गिर पड़ती है। जब उसे होश आया तो वह अपनी बदनामी की वजह से मरना अ-धिक पसन्द करती है। वह कहती है -- अगर भाभी ने विश्वास न किया तो वह सचमुच पागल हो जायेगी या आत्म हत्या कर लेगी । मेरी सगी भाभी मुझे पतित समझे । पतिता को जीवित रहने का अधिकार नहीं है। प्रकाश के यहाँ कान्ति, रमेश, चन्दा, नरेन्द्र सभी चले जाते हैं ।

5.2.4.13 माया के कमरे में गीता और माया का प्रवेश । माया घर छोड़कर जाना चाहती हैगीता उसे रोकती है कि अपने भाई को आ जाने दीजिये । आज भैया दूज है कोई बहिन अपने भाई के घर से इसतरह से नहीं जाती । प्रकाश बाबू आते हैं वह बाहर तांगे पर लदा सामान देखकर पूँछते हैं कि यह किसका है । माया बताती है कि हमारा है। प्रकाश बाबू कहते हैं कि तुम हमेशा क्रोध में अन्धी रहती हो कान्ति सचमुच रमेश बाबू की सौ-तेली माँ चन्दा से उत्पन्न बहिन है। रमेश बाबू निष्कलंक है और तू केवल तिल से ताड़ बनाकर अपनी हँसी करा रही है। वह कहती है आपको धोखा हुआ है। कान्ति, रमेश और चन्दा का प्रवेश । कान्ति कहती है यह झूठ नहीं है बिल्कुल सच है। माया कान्ति को सामने से हटा देती है। रमेश कहते हैं:-

"अपने भ्रम का स्वप्न जाल तोड़ो माया । यदि तुम मेरे साथ अपने विवाह का विच्छेद चाहती हो तो मैं तुम्हारे उस बन्धन को तोड़ने के लिये तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ। किन्तु तुम पाप का सहारा "आश्रय" न लो । कान्ति वास्तव में जैसा मैं कईवार पहले कह चुका हूँ, मेरी सौतेली बहि--न है । कान्ति पूँछती है भाभी अब भी आपको सन्देह है माया कहती नहीं कान्ति मुझे क्षमा करो ।"[1]

1- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 190

प्रकाश चन्दा से कान्ति और नरेन्द्र के विवाह के लिये कहता है। रमेश कहता है आज कान्ति और नरेन्द्र का विवाह होना है और मैने 30,000 हजार रूपया कान्ति को प्रथम रोचना लगवाई में दे दिया है ।

इसी बीच सुरेन्द्र वकील आ जाते है। प्रकाश रमेश से सुरेन्द्र का विवाह अपनी माला से कराने को कहता है । गीता और माया का आपस में हास्य व्यंग्य होता है। दोनों एक दूसरे पर छींटा कसी करती हैं। चन्दा माया को घर ले जाने के लिये कहती , माया और रमेश दोनों मानते हैं पति और पत्नी दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं।माया कहती है :—

"वास्तव में पुरुष और स्त्री के व्यक्तित्व पृथक नहीं है, वरन् संयुक्त हैं,और वे प्राकृति की अन्य वस्तुओं की भांति गोल हैं। सूर्य, चन्द्र,तारे,पृथ्वी सभी गोल हैं ।"[1]

गीता और माया में हास्य परिहास पूर्ण वार्तालाप होता है। और सबका हास्य और पटाक्षेप ।

इस एकांकी की कथावस्तु अत्यन्त सुगठित है। जिज्ञासा, कौतूहल, अन्तर्द्वन्द्व और आकर्षण से पूर्ण कथानक कार्य की चरम सीमा पर तीव्रगति से पहुँचता है। रमेश और माया के वार्तालाप से एकांकी आरम्भ होता है। कान्ति के प्रवेश से कथावस्तु में विकास होता है।माया के अन्तर्द्वन्द्व में चरित्र चित्रण की मनोवैज्ञानिकसुकुमारता के साथ कथानक चरम सीमा की ओर बढ़ता है। कथा संगठन की चारुता, सम्वादों की काव्यात्मक, अभिव्यंजना के कारण नाटक पूर्ण अभिनेय और प्रभावशाली है ।नाटककार ने रमेश के चरित्र से यह वक्त किया है कि समाज के उत्थान के लिये व्यक्तिगत और पारिवारिक हित का वलिदान करना पड़ता है। त्याग से मनुष्य महान और स्वार्थ से लिप्सा से नीच बन जाता है ।

5555555555555555555555555555555555555555555555555555555

1- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 195

5.3 एकांकी कला और प्रतापनारायण श्रीवास्तव

एकांकी नाटक के तत्वों पर हिन्दी विद्वानों और पाश्चात्य विद्वानों ने "उद्भव और विकास " एवं "परिभाषा" के समान ही पर्याप्त विचार किया और उसके नित्य परिवर्तित स्वरूप के अनुसार नवीन - नवीन तत्वों का उसमें समावेश किया गया है। और उससे वे परस्पर उलझ गये हैं। कहीं पर तत्वों को विशेषताओं में गिन लिया है और कहीं विशेषताओं को तत्वों में । सामान्यत: एकांकी के वे ही तत्व माने जाते हैं, जो नाटक के हैं। एकांकी के तत्वों के सम्बन्ध में स्वर्गीय डा० बलदेव प्रसाद सिंह का कहना है :-

"एकांकी के प्राय: वे ही उपकरण हैं, जो नाटकों के हैं । एकांकी के लिये भी वस्तु (कथा) पात्र, कथोपकथन, चरम सीमा की आवश्यकता है। महत्व की दृष्टि से प्रथम स्थान पात्र और उसके मनोविज्ञान का, दूसरा स्थान सम्भाषण या कथोपकथन का, तीसरा स्थान चरम सीमा या क्लाइमेक्स का और चौथा स्थान घटना या वस्तु का है ।"[1]

इस प्रकार एकांकी में पात्र के मनोविज्ञान का सबसे अधिक महत्व है। कथोपकथन या सम्भाषण में तो प्रत्येक नाटक या एकांकी का अनिवार्य तत्व है । एकांकी में चरम सीमा एक बिन्दु पर केन्द्रित रहती है। चरम सीमा पर ही श्रेष्ठएकांकी समाप्त हो जाती है।

एकांकी का सबसे प्रमुख तत्व है - संकलन त्रय घटना, काल और स्थान (Unity of Action, Time and Place') का संकलन आवश्यक है। हिन्दी के अधिकांश एकांकीकार इस संकलन की उपेक्षा करते हैं और एकांकी में भी अप्रधान प्रसंग और अनावश्यक पात्रों को स्थान देते हैं। परिणाम यह होता है कि उनके "एकांकी"नाटक का रूप ले लेते हैं ।

इस प्रकार एकांकी के मूलतत्व सात होते हैं, यथा :-

1- कथावस्तु, 2- पात्र-चरित्र चित्रण, 3- सम्वाद , 4- देश काल और वातावरण , 5- भाषा शैली , 6- उद्देश्य , 7- अभिनेय (रंग संकेत) अभिनयशीलता,

---

1- उद्धृत - हिन्दी एकांकी उद्भव और विकास - डा० रामचरण महेन्द्र - पृष्ठ - 213

इसमें भी तीन तत्व अधिक व्यापक महत्व के हैं -- 1-कथावस्तु 2- पात्र - 3- संवाद । एकांकी कला के इन्हीं तत्वों के आधार पर हम यहां प्रतापनारायण श्रीवास्तव की एकांकियों का अनुशीलन करेंगे --

प्रतापनारयण श्रीवास्तव की एकांकी-कला

आधुनिक हिन्दी एकांकी को पाल्लवित और पुष्पित बनाने में श्रीवास्तव जी का योगदान बड़ा महत्वपूर्ण रहा है। भले ही उन्होंने विपुल नाट्य साहित्य की रचना नहीं की लेकिन उनका साहित्य बड़ा प्राणवान और सतेज है, जैसा कि उनकी एकांकी कला की विशेषताओं से स्पष्ट है ।

5.3.1 ॥ कथानक ॥

5.3.1.1 " सामाजिक जीवन के कथानक "

प्रतापनारायण श्रीवास्तव मूलतः सामाजिक जीवन के कलाकार हैं। इसीलिये उनके कथानकों की विषय सामग्री का चयन वर्तमान सामाजिक जीवन के क्षेत्र से हुआ है। नगरों में बसने वाले मध्यमवर्गीय समाज को उन्होंने अपने नाट्य साहित्य का मूल केन्द्र बनाया है। "अथ से इति" में मानव मन की उस विशेषता पर प्रकाश डाला गया है जो मनुष्य को संस्कारों के बन्धन से मुक्त नहीं होने देती । "प्रीतिभोज" उनका बड़ा ही उत्कृष्ट सामाजिक एकांकी है। इसमें एक शिक्षक के दूषित गुणों को उभारा गया है जो कलुषित, वासनात्मक है ।

"क्या करूँ मास्टर साहब, जिस गुरू का स्थान पिता से भी श्रेष्ठ माना गया है, सन्त कवियों ने जिसे ईश्वर से भी अधिक प्रधानता दी है, उसी को अपना स्त्रीत्व समर्पण करने के लिये मुझको भी तो पिशाचिनी बनना पड़ेगा x x x x x x x और मदिरा के अतिरिक्त दुनियां में कोई वस्तु मनुष्य को पिशाच नहीं बना सकती इसीलिये एक गिलास पिया है ।"[1]

"विजय का व्यामोह" उनका सर्वश्रेष्ठ एकांकी है। जिसमें भारतीय मध्यमवर्गीय पारिवारिक जीवन का सजीव चित्र है पारिवारिक पृष्ठभूमि में दाम्पत्य जीवन की बड़ी ही हृदयग्राही, और यथार्थपूर्ण झांकी है। माया और रमेश का दाम्पत्य जीवन अत्यधिक सुखमय और हास्यप्रद है।

1-प्रीतिभोज-विजय का व्यामोह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृष्ठ - 87

किन्तु रमेश की सौतेली बहिन कान्ति ने उनके जीवन में कलषुता, कटुता, भर दी है। माया कान्ति को उसकी प्रेमिका समझती है जिससे दोनों में दूरी हो जाती है। किन्तु अन्त में वास्तविकता उसके सामने आता है तो वह पश्चाताप करतिा है। इसमें भाई-बहिन के पवित्र बन्धन को दिखाया गया है।

5.3.1.2 कथानक योजना में विविधता

इन कथानको की भाव सामग्री में जैसा कि स्पष्ट है, बड़ी विविधता है। उनके कथानकों में कहीं कांग्रेस जनों का कहीं आई० सी० एस० अफसरों का कहीं किसान, कहीं मजदूर, कहीं चपरासी और कहीं स्वतन्त्रता के पूरे साम्प्रदायिक दंगों का चित्रण है। इन कथानकों में पारिवारिक विभिन्नता भी है।

5.3.1.3 सीधे सरल कथानक

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के सभी कथानक सीधे सरल और सहज हैं। उनमें कोई जटिलता और उलझन नहीं है। श्रीवास्तव जी ने अपने आसपास घूमते हुये सामा--जिक जीवन को जैसा पाया, उसका सही चित्र बिना किसी उलझन के लिये अपने कथानकों में उतार दिया। उन्होंने अपनी ही स्वानुभूतियों से अपने नाटको की सामग्री चुनी, और आपबीती तथा जगबीती को उसमें उभारा है। उनके सभी कथानक चिर-परिचित से प्रतीत होते हैं। उनमें कहीं भी अति मानवीयता, अति नाटकीयता और पाठकों को चमत्कृत करने का प्रयास नहीं है। उन्होंने मध्यमवर्गीय जीवन की उन्हीं समस्याओं को उभारा है जो सरल, स्पष्ट एवं मर्मस्पर्शी हैं। जो स्वयं हमारे सामाजिक जीवन से चिपटी हुई हैं। उनमें विशेष तर्क-वितर्क, मानसिक चिंतन और उलझन नहीं है। हां, चोट, तिलमिलाहट अवश्य है। इसीलिये उनके कथानक हमारे मन में शीघ्र उतरने वाले हैं।

5.3.1.4 जन भावना और स्वर

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी के नाटक जन मानस के अधिक निकट हैं। आप के नाटकों में युग बोध को स्वर मिला है। जन सामान्य के दुःख सुख, आचार-विचार आशा-निराशा को आपके एकांकी नाटकों में अभिव्यक्ति मिली है।

5.3.1.5 आरम्भ, विकास और अन्त

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के कथानकों का आरम्भ उत्सुकता पूर्वक होता है ।

तत्पश्चात घटनाओं और भावनाओं का वेग तीव्रता के साथ प्रवाहित होता है। कौतूहलता रोचकता का साथ कहीं नहीं छोड़ती । दर्शक सांस रोके अंत से अवगत होने के लिये जिज्ञासु बना रहता है। कथानक चरम सीमा पर पहुँचकर सहसा अंत को प्राप्त करता है। दर्शक सहसा कल्पना जगत से उतर कर यथार्थ जगत में आता है।

5.3.1.6 घटनाओं से अधिक नाटकीय स्थितियों पर बल

अपने एकांकियों में श्रीवास्तव जी ने घटनाओं से अधिक नाटकीय स्थितियों पर विशेष बल दिया है। उनके एकांकियों के एक ही अंक में पूरी घटना का समावेश हो जाता है। एक ही मूल कथा होती है। वे अपने आधारभूत विचार या मूल संवेदना अथवा पात्र के चरित्र के अनुकूल घटनाओं में कांट-छांट करते हैं, और उसके सारभूत तत्त्व को अपने वस्तु संविधान की आधारभूमि बनाते हैं।

5.3.1.7 संकलन - त्रय और प्रभावान्विति

संकलन-त्रय और प्रभावान्विति की ओर भी एकांकीकार का आग्रह रहा है। संकलन - त्रय के ऐसे भी अंश अश्क जी की एकांकी कला में पाये जाते हैं। संकलन-त्रय के इस निर्वाह के कारण एकांकी एक निश्चित प्रभाव लेकर समाप्त होते हैं। एकांकियों का मूल केन्द्र जैसा कि पहले स्पष्ट किया जा चुका है । एक आधारभूत विचार, एक आधारभूत दृश्य अथवा कोई संघर्षशील पात्र होता हैं। फलत: एक निश्चित लक्ष्य की धुरी पर घूमता हुआ श्रीवास्तव जी का एकांकी पाठकों के मन पर एक निश्चित प्रभाव को छोड़ने में सर्वथा समर्थ है।

5.3.2 पात्र योजना तथा चरित्र - चित्रण

5.3.2.1 कथानक की भांति श्रीवास्तव जी की पात्र योजना भी वैविध्यपूर्ण है। पात्रों का चुनाव आपने समाज के मध्यमवर्ग से किया है। जो प्रेम और उससे उत्पन्न निराशा से ग्रस्त रहते हैं। ये पात्र विषम परिस्थितियों से संघर्ष करने का साहस भी करते हैं परन्तु सफलता न मिलने पर पूर्णत: निराश होकर जीवन से पलायन करने की सोचने लगते हैं।"[1] इन सबके मूल में पात्रों की शारीरिक अतृप्ति प्रधान रहती है। यही कारण है कि पात्रों के चित्रण का न

1-स्वराज्य की तस्वीर-विजय का व्यामोह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-59

तो समुचित विकास हो पाता है और नही उद्देश्य सुस्पष्ट हो पाता है ।

श्रीवास्तव जी की पात्र योजना का उज्जवल पक्ष भी है। वे पात्रों का चुनाव बहुत सोच समझकर आवश्यकतानुसार करते हैं। पात्रों के मनोभावों की अभिव्यक्ति अत्यन्त संयक भाषा में करते हैं। श्रीवास्तव जी मानवतावादी हैं यही कारण है कि उनके सभी पात्र मानव हृदय के सामैहिक भाव का उद्बोधन करते हैं। तानाशाह, सत्य, धर्म, भारत माता, नेता, पुलिस सब-इन्सपेक्टर, कान्स्टेबिल, आई0 सी0 एस0 अफसर, कवि, लेखक, प्रोफेसर, शिक्षित नारी, वेश्या, वकील, नौकर, शोध छात्र आदि विविध पात्र देखने को मिलते हैं। सभी पात्र मानवीय हैं, और वे जैसे हमारे चिर परिचित समाज के अंग हैं।

5.3.2.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के सभी चरित्रों को दो भागों में बांटा जा सकता है - साधारण और प्रतिनिधि, इनके साधारण चरित्र व्यापक हैं - पति-पत्नी, मजदूर, पूँजीपति, नौकर, कवि, और लेखक, वेश्या, कर्मचारी आदि । इन साधारण चरित्रों द्वारा श्रीवास्तव जी ने सामाजिक जीवन की यथार्थता को बड़ा कुशल निरूपण किया है। इन पात्रों के माध्यम से इन्होंने रूढ़ियों, कुसंस्कारों, आर्थिक विषमताओं और सामाजिक शोषण पर तीखी चोट की है। पात्रों के हृदय में जहाँ, क्रोध, घृणा, स्वार्थ मिलता है वहीं दया, ममता, सेवा, प्रेम आदि भावनाऐं हिलोर लेती हैं। दुहरे व्यक्तित्व के पात्र आदर्श और यथार्थ के द्वन्द्वात्मक संघर्ष को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं।

"अथ से इति" में सत्य, धर्म, भारत माता, और सत्य कैसैनिक, और सेनापति "स्वराज्य की तस्वीर" में तीसरा कांग्रेस मैन, "प्रीतिभोज" में नरेन्द्र, हमीद, पुष्पा, अमीलिया, जूलियस, कृपाशंकर, राजारात, कामिनी, "विजय का व्यामोह" में रमेश, कान्ति, नरेन्द्र, बुधुआ, प्रकाश, चन्दा, गंगा, गीता, रम्भा, मीना, प्रभा, आदि पात्र आदर्शवादी हैं। इसके अलावा प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने कुछ ऐसे पात्रों को भी लिया है जो घमण्डी, मानव रक्त के प्यासे, रिश्वतखोर, स्वार्थी, वासनात्मक प्रेमी, कर्तव्यविमूढ़, सेवा के नाम पर अपने स्वार्थों की पूर्ति करने वाले हैं - यथा "अथ से इति" में तानाशाह, "स्वराज्य की तस्वीर" में प्रथम कांग्रेस मैन, द्वितीय कांग्रेस मैन, चौथा कांग्रेस मैन, तीन आई0सी0एस0 अफसर, एक नेता, पुलिस सब-इन्सपेक्टर, एक हेडकान्स्टेबिल, आगामी चुनाव में विजय होने के लिये वोट मांगने वाले नेता, "प्रीतिभोज" में प्रोफेसर राजेन्द्र शर्मा, "विजय का व्यामोह" में सुरेन्द्र नाथ हैं ।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी का "विजय का व्यामोह" एकांकी चरित्र प्रधान है जिसमें उन्होंने पात्रों के चरित्र-चित्रण के विकास पर अधिक बल दिया है। आपके चरित्र-चित्रण की यह सबसे बड़ी विशेषता है।

5.3.2.3 श्रीवास्तव जी पहले किसी सामाजिक या राजनैतिक समस्या को लेकर चलते है, उस समस्या को अपने पात्र के चरित्र से गूंथ देते हैं, और फिर अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उस पात्र की चरित्रगत विशेषताओं को हमारे सामने रखते हैं। चरित्र-चित्रण में कहींभी अस्वाभिकता नहीं आने पाती है अपनी समस्याओं के लिये परिस्थितियों के बीच पात्रों का चरित्र बड़ी स्पष्टता के साथ उभरता चलता है। यह कुशलता नारी पात्र बड़े संवेदन शील, मर्मस्पर्शी और सजीव बन पड़े हैं। चन्दा, कान्ति, रम्भा, मीना, प्रभा, गीता, गंगा (विजय का व्यामोह) इसके उदाहरण हैं ।

5.3.3 कथोपकथन

कथोपकथन श्रीवास्तव जी की "एकांकी" कला के मुख्य अंग हैं। कथानक और पात्र योजना की भांति वे भी हमारे जीवन के बहुत अधिक निकट हैं। अपनी यथार्थता, सजीवता, स्वाभाविकता, प्रभावोत्पादकता, संक्षिप्तता, रोचकता, मर्मस्पर्शिता से पूर्ण हैं। इनमें पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं को उभारने की उनमें अपूर्व क्षमता है। प्रत्येक विशेषता का एक-एक उदाहरण यथेष्ठ होगा--

5.3.3.1 (सजीवता)

"ठीक है। कल सुबह घर देखकर सीधे बहूजी के यहां चले आना, मैं तुम्हारी राह देखूँगी । अब जाती हूँ ।"

"वाह, क्या लाट साहब की बेगम की तरह चल दी ।चल रोटी बना । आज दो दिन से खिचड़ी बना रहा हूँ ।"[1]

5.3.3.2 (संक्षिप्तता)

"आइये पधारिये । कहिए आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ।"

"आप शायद भूल गये, बरेली जेल में हम दोनों साथ थे ।"

1- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 143-144

"वाह, मेरी स्मरण शक्ति इतनी कमजोर नहीं है। कहिये कैसे कष्ट किया ?"

"आप लोगों को कुछ थोड़ा कष्ट देने आया हूँ ।"

"कष्ट की क्या बात है"

"आप निश्चिन्त रहें, ऐसा कौन है जो आप के खिलाफ कोई कार्यवाही करे ।"[1]

5.3.3.3 ﴾स्वाभाविकता﴿

"अरी बराबरी ही नहीं, ज्यादा बढ़कर बना दिया है। अब तो तुम लोगों को पलंग या हिंडोले पर थोप देना है, और सुबह शाम आरती और दण्डवत करना है, या और कुछ ।"

"बहुत बोल न बोलो । बताओ भैया कहाँ जाते है ?"

"अपनी बहिन के यहाँ, और कहाँ ।"

"कौन बहिन । उसी छोकरी के यहाँ जो नैना नचाती हुई आती थी"

"खबरदार जो हमारी कान्ति बिटिया की शान में कुछ बक-झक की राख लगा के जीभ निकाल लूँगा । जानती है रामू को ?"[2]

5.3.3.4 ﴾सार्थकता﴿

"ये लोग वास्तव में तितिलियाँ हैं। यह कालेज नहीं फैशन का घर है। नई-नई सजावट करके आती है ।"

"बिल्कुल ठीक । अमा, इनसे कोई पूछे कि आप पढ़ने आती हैं या यहाँ पर जाल फैलाने ।"[3]

और देखिये :- "ये ओहदे, पद और पोर्ट फोलियो तुम्हीं को मुबारक हों। अपने राम का रास्ता दूसरा है, वह है त्याग, तपस्या और गरीबी का । आप लोग जिस पेड़ पर बैठे हैं, उसी की डालें काटने जा रहे हैं। आप लोग जिस दिशा में जा रहे हैं, उसमें आपको घृणा, दुत्कार, और तिरस्कार मिलेगा ।

1- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 55-56

2- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 139-140

3- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 73

आपके धवल वस्त्र और टोपी पुलिस की वर्दी और पगड़ी की भांति घृण्य होंगे । × × × × × तब यह स्वराज्य होकर अभिशाप हो जायेगा ।"[1]

5.3.3.5 (रोचकता)

"मैं आप लोगों को बता देना चाहता हूँ कि मैं अपने दर्जे में बेजा हरकतें बरदास्त नहीं कर सकता। मैं बहुत बदमिजाज आदमी हूँ, कभी-कभी गुस्सा आने पर × × × × × × × × × ।"

" (अप्रत्यक्ष) नाचने लगता है ।"

" (अप्रत्यक्ष) अरे नहीं भौंकने लगते हैं ।"

" (अप्रत्यक्ष) लाहौल विलाकूबत, अजी जनाब, दौड़कर पिंडली पकड़ते हैं ।"[2]

और देखिये :- "रोल काल की कोई जरूरत नहीं, मैं सबको प्रेजेन्ट बनादूँगा

"आपकी मेहरबानी पर है सब कुछ मुनहसर । हम तो हाजिर हैं विद बाडी एण्ड सोल टुगेदर ।"

"अच्छा आप कविता भी करते हैं ।"

"तुकों को बांधकर बेतुकी हांकता है ।"

"टेसू बनाकर मतलब निकालता है ।"

"साइलेन्स प्लीज ! आज कविताओं का नम्बर है तो मैं भी आप लोगों को अपनी कविता सुना दूँ ।"

"जरूर कहिये ।"

" लेकिन गला नहीं है ।"

"गला नहीं है तो नेकटाई कहाँ बांधी ?"

" धीरे से ! दुम में ।"

"देखिये आप लोग हँसेंगे तो फिर मैं कविता नहीं सुनाऊँगा । मेरी कविता में दुःख है, दर्द है, तड़पन है, हास्य नहीं है ।"

"खड़े होकर ! मास्टर साहब की कसम है, तुम लोगों को जो हँसो ।"[3]

1-स्वराज्य की तस्वीर- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 28

2- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 71

3- प्रीतिभोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 78-79

अस्तु इन संवादों में संवादगत सभी विशेषताएँ उपलब्ध हैं। ये चरित्र की चारित्रिकता को प्रकट करने, कथासूत्र को विकसित करने और पात्रों के भावों को प्रकट करने में पूर्णतया सक्षम है।

5.3.3.4 देशकाल अथवा वातावरण

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी जिस युग अथवा क्षेत्र से कथानक का चुनाव करते हैं उस युग अथवा उस क्षेत्र के अनुकूल उन सभी बातों का ध्यान रखते हैं, जिनसे अपेक्षित वातावरण की सृष्टि होती है। युगानुकूल घटनायें प्राप्त, वेशभूषा, विचार दर्शन, विश्वास और परम्परायें सभी वातावरण विशेष को सजीवता प्रदान करती हैं। श्रीवास्तव जी के एकांकी नाटक विशेषकर सामाजिक और राजनैतिक नाटक पाठक अथवा दर्शक को उस परिस्थिति विशेष में पहुँचा देते हैं जिसका चित्रण उस नाटक विशेष में वे करते हैं। होना भी यही चाहिये, क्योंकि जब विचार अथवा भाव विशेष को अनुकूल वातावरण प्राप्त हो जाता है तो उनकी प्रभावान्विति असाधारण हो उठती है ।5

5.3.5 भाषा - शैली

5.3.5.1 श्रीवास्तव जी पात्रानुकूल भाषा के समर्थक प्रतीत होते हैं। विषय और पात्रानुकूल भाषा आपके नाटकों में प्रयुक्त हुई है। यथा --

"बहिन तो सदैव भाई की मंगल कामना के अतिरिक्त और क्या कर सकती है। वह तो पराश्रिता, अबला और मूक होती है। अजस्र स्नेह के अतिरिक्त वह दे ही क्यासकती है ।"[1]

"विकार रहित प्रेम का विकास तो इसी सम्बन्ध में होता है। इतिहास साक्षी है कि इस स्नेह की मर्यादा की विदेशियों ने भी रक्षा की है। उदयपुर की रानी की राखी पर ही तो हुमायूँ ने गुजरात के बहादुर शाह से युद्ध किया और उसे परास्त किया था । स्मरण मात्र से मन पवित्र और गौरव से सिर उन्नत हो जाता है ।"[2]

1- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 167

2- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 11

5.3.5.2 पात्रानुकूल भाषा का एक उदाहरण देखिये :-

"मैं चीनी तानाशाह हूँ। मेरे नथुनों से दीप्त अग्नि की लपटें निकलती हैं। आँखे शोले उगलती हैं। मेरे दाँत और जबड़े बज्र से बने हैं जो पत्थर और लोहे को पीसने की शक्ति रखते हैं। मेरी भुजाओं की फड़कन से दिगदिगंत कांपते हैं, सुमेरू डगमगाता है और हिमालय पीपल के पत्ते की भांति कांपता है। मेरी तलवार झुलसती अग्नि-शलाका है, इसके प्रहार से चर अचर टूट कर टुकड़े हो जाते हैं, मेरी एक बक्र दृष्टि से विश्व में भूचाल उठता है और मेरी हुंकार से आकाश गूँजता है ।"[1]

सरलता, सरसता, संक्षिप्तता, सप्राणता तथा भाव संवाहकता आदि विशेषताओं से समन्वित भाषा का प्रयोग "श्रीवास्तव" जी के भाषाधिकार का परिचायक है ।

5.3.5.3 सरल भाषा का उदाहरण :-

"चलो जब आई हूँ तो जल्दी से बना ही दूँ। तुम भी इतने दिनों में सूख कर कांटा हो गये हो । चाहे जैसे हो, दोपहर को आकर तुम्हारे लिये खाना बना जाया करूँगी ।"[2]

5.3.5.4 गम्भीर भाषा का एक उदाहरण देखिये :-

"प्रकृति सत्य है, और प्रकृति का विधाता सत्य है। समय चक्र की गति सत्य है और सत्य है, अहिंसात्मक जीवन, जहाँ बन्धुत्व है, सौहार्द्र है, प्रेम है, शान्ति है और है सत्चित आन्नद । अभिमान दर्प और अहंकार मेरा आहार है, x x x x x x x मैं समय चक्र की गति हूँ। मैं सत्य के संकेत से विधान का निर्माण करता हूँ, मैं शाश्वत हूँ, अजेय हूँ और अडिग हूँ। मेरा अस्त्र न्याय है, विवेक है जो अन्त में सदैव विजयी होते हैं। मैं अपने सत्य चक्र के बल पर ब्रह्मांड को गति शील करता हूँ ।"[3]

5.3.5.5 मुहावरों के प्रयोग के उदाहरण :- पौ बारह है, पांचो घी में, गहरी छनना, रागबेसुरा, चैन की वंशी, बजाने का समय, आया, यारान चोरी, पीरान दगाबाजी, न खुदा ही मिला न विसाले सनम, न घर के रहे न घाट के, नाँक पर मक्खी न बैठने देना, बिल्ली के गले में घन्टी बांधना,

---

1- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 3-4

2- विजय का व्यामोह - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 144

3- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 12

नाको दम होजाना, नयामुल्ला प्याज ज्यादा खाता है, दुम हिलाना, लीक-लीक गाड़ी चले लीके -लीक कपूत , अपना उल्लू सीधा करना, पर उपदेश कुशल बहु तेरे, हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और, सर कढ़ाई में होना, सब धान बाइस पसेरी, येरी छाँड़ि न होउब रानी, झूठे लेना झूठे देना, झूठे भोजन झूँठ चबेना, जिसकी लाठी उसकी भैंस, सांप मरे न लाठी टूटे, शेर और बकरी एक घाट पानी पीते हैं,। मर्द वह है जो जमाने को बदल देते हैं, हीरा कबहूँ न कहे अपना मोल, फेयर सेक्स फर्स्ट, त्रिया चरित्र पुरुषस्य भाग्य, देवो न जानाति कुतो मनुष्य:, दूध का जला हुआ मट्ठे को भी फूँक-फूँक कर पीता है, पारस परसि कुधातु सुहाई, तिल का ताड़ बनाना, आदि इसी प्रकार के मुहावरों का और सूक्तियों का प्रयोग किया है।

5.3.5.6 फारसी व उर्दू शब्द के प्रयोग के उदाहरण :-

हंसी मजाक, सफाई, मौज, बेहद, मुसीबत, रूह, वक्त, वापस, ताज्जुब, फुरसत, फैसला, मुकद्दमा, खारिज, दावा, शायद, दु:ख, कालिख, जरूरत, अदब-आदाब रिवाज, आमादा, फिसाद, तबाही, आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है।

अत: अंग्रेजी, संस्कृत और उर्दू फारसी का श्रीवास्तव जी ने नि:संकोच प्रयोग किया है। आप की भाषा भावानुकूल, सरस, तीखी, और भाव-प्रेषक है। रंगीन कल्पनाओं की अभिव्यक्ति के समय आपकी भाषा बड़ी कवित्वमय तथा मनोहारिणी बन पड़ी है। भाषा वैविध्य स्पष्ठ संकेत करता है कि श्रीवास्तव जी का भाषा-शैली पर पूर्ण अधिकार है।

5.3.6 ॥ उद्देश्य ॥

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के सभी नाटक उद्देश्य मूलक हैं। किसी न किसी आदर्श की स्थापना नाटकों का मूल उद्देश्य रहा है। श्रीवास्तव जी ने अपने जीवन दर्शन के अनुसार पात्रों की सृष्टि की है, घटनाओं का चयन किया है, भावनाओं को जन्म दिया है । परिष्कार अथवा नवनिर्माण आपके एकांकी नाटकों का मूल स्वर है। मानव को प्रेम, अहिंसा, सेवा, सहिष्णुता, त्याग, ममता दया आदि मनोविकारों से समन्वित देखना चाहते हैं। सम्भवत: इसीलिये आपके नाटक मनोरंजक कम मानवता के संदेश वाहक अधिक है। चिरंतन सत्यों का उदघाटन करते हुये आपके नाटक व्यावहारिक संदेश देने में पूर्ण सक्षम हैं।

राजनैतिक नाटकों में आपने कांग्रेस जनों, पुलिस कर्मचारियों एवं आई० सी० एस० , नेता, राजपत्रित अधिकारियों के निर्बोध जनता पर

किये जा रहे अत्याचारों को उद्घोषित किया है। जिनमें स्वार्थ की भावना कूट-कूट कर भरी है वह जनता के नाम पर अपना पेट भरते हैं।

5.3.7 अभिनयात्मकता

- - - - - - - - - - - - -

अभिनय की दृष्टि से सफल एकांकीकारों में आपकी गणना की जाती है। रंगमंच की सादगी, रंगनिर्देश और सजगता अभिनयात्मकता को सफल बनाते हैं। श्रीवास्तव जी ने उन सभी व्यावहारिक बातों का ध्यान रखा है जो रंगमंच की दृष्टि से अपेक्षित है। अभिनय की दृष्टि से आपके एकांकी नाटक सफल रहे हैं। अतः श्रीवास्तव जी ने अपनी परिपक्व कला के द्वारा एकांकी के सभी तत्वों का ऐसा संयोजन किया है कि यह एक सफल अभिनेय एकांकी बन गया है। "विजय का व्यामोह" एकांकी सर्वथा अभिनेय है । आपकी एकांकियों की भाषा - शैली सरल एवं स्वाभाविक है। संवाद संक्षिप्त एवं मार्मिक हैं। कथानक में पर्याप्त गति और रोचकता विद्यमान है।

{ निष्कर्ष }

- - - - - - - - -

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रतापनारायण श्रीवास्तव उत्कृष्ट सामाजिक और राजनैतिक एकांकीकार हैं। उन्होंने अपनी एकांकियों में समसामयिक राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों का विस्तार पूर्वक विवेचन किया हैऔर उन्हीं के परिवेश में कथा का विकास किया गया है। यह कारण है कि कुछ एकांकियों का बाद्याकार दीर्धकाय हो गया है।

श्रीवास्तव जी मूलतः सर्व प्रथम उपन्यासकार, मध्यस्थ कहानीकार और अन्ततः एकांकीकार हैं। अर्थात आपको सर्वाधिक सफलता उपन्यासों में मिली और इसके बाद कहानियों में, तृतीय स्थान आपको नाट्यकार का है । अतः आप उपन्यासकार पहले हैं और एकांकीकार बाद में ।

षष्ठ अध्याय

स्फुट रचनायें और प्रताप नारायण श्रीवास्तव

6.1 कवि रूप में प्रतापनारायण श्रीवास्तव

6.1.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव मूलतः कथाकार हैं। बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार होने केकारण उनकी लेखनी से कहानी एवं उपन्यास के अतिरिक्त निबन्ध, एकांकी नाटक, वार्ता एवं काव्य अनुस्यूत हुआ। भावुक एवं संवेदनशील व्यक्तित्व की प्रधानता के कारण प्रतापनारायण श्रीवास्तव के कथा साहित्य में कहीं-कहीं उनके कवि रूप के दर्शन वैसे ही होते हैं जैसे हिमालय के उत्तुंग शिखर से झाँकता हुआ बालारूण। श्रीवास्तव जी ने न तो महाकाव्य की और न तो खण्ड काव्य की रचना की और न ही स्वतन्त्र रूप से काव्य का प्रणयन किया। भावुकता के परिवेश में कुछ सामयिक कवितायें अवश्य लिखी जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। जिन पत्रिकाओं में इनकी काव्य रचनायें प्रकाशित हुई वे निम्न हैं :- हिन्दी मनोरंजन, कानपुर, इन्दु काशी, मर्यादा प्रयाग, माधुरी लखनऊ, सुधा लखनऊ, प्रभा कानपुर, संसार कानपुर, कर्मयोगी प्रयाग, गुलदस्ता प्रयाग, माया प्रयाग, प्रताप कानपुर, सारथी दिल्ली, चांद प्रयाग, सुमित्रा कानपुर, सविता कानपुर, सहयोगी कानपुर, मनु कानपुर, सारिका बम्बई, आदि में प्रकाशित हुई।

6.1.1.1 इनकी कविताओं की कुछ बानगी प्रस्तुत है:-हिन्दी मनोरंजन में "सुन्दरी श्रृंगार" नामक शीर्षक से प्रकाशित यह कविता देखिये -

"जरी बरी झरसीपरी, मिल्यो सेज सों गात।
बकनि झुकनि अरू सांस सों, कुछ कछु जानी जात।।

(2)

छिनु धोवे अरू छिनु पुछै, एडिन जानि गुलाल।
नहिं छूटयों कौनिउ जनत, हारी परी बेहाल।।

(3)

चलो सखी यहँ से कतौं, नहि पग लेहु छिपाय।
जानि अंगार चकोर कहूँ, चौचन मारे आय।।

(4)

छिनु एड़ी छिनु भुई तकै, छिनु निरखै सखि ओर।
कछू चुचायों परकहैं, बढै न एड़िन कोर।।

§ 5 §

रतनौर कौवा तिरै, नैन जल भर माहि ।

मदिरा प्यालन में भरी, छलकि छलकि ज्यों जाहि ।।"[1]

इस कविता में सजीवता एवं यथार्थता मूर्ति रूप में पाठक के सामने उपस्थित हो जाती है। "अभिलाषा" नामक अति प्रसिद्ध कविता जो आपके कवि रूप को सुदृण सम्वेदनशील एवं भावुक होने का साक्षात प्रमाण प्रस्तुत करतीहै।

6.1.1.2 अभिलाषा थी मेरे मन की, होऊँ तेरी मुरली नाथ

मधुराधर रसपान करूंगी, रह कर निश दिन तेरे साथ ।।

ललित निकुन्जों में विहरूंगी, सदा रहूँगी तेरे हाथ ।

बजा करूंगी तभी प्रभू मैं, जभी बजाओगे ब्रजनाथ ।।

मोहित होकर मेरे स्वर से, भूलेगी राधा अभिमान ।

रमणी गोकुल वृन्दावन की, गावेंगी मेरा ही गान ।।

अथवा मेरे कण्ठ स्थल की, होऊ वह माला अभिराम ।

अश्रुनीर से जो राधा ने, गूंथी तेरे हित है श्याम ।।

अथवा उस सुन्दर माला का, होऊ एक मनोहर फूल ।

लगकर तेरे वृक्षस्थल से, खोऊँ अपने सारे शूल ।।

तभी कामना पूरित होगी, मेरे मन की क्या नटराज ।

अश्रुवारि से कब धोऊंगी, तेरे चरणों को बृजराज ।।"[2]

6.1.1.3 अभिलाषा श्रीवास्तव जी की अत्यन्त सशक्त रचना है। जो उनके पूरे कवि रूप का प्रतिनिधित्व करती है। श्रीवास्तव जी के कवि रूप के दर्शन उनके एकांकी नाटकों कहानियों आदि में भी यत्र-तत्र होते हैं। श्रीवास्तव जी ने अपने एकांकी नाटकों में पात्रों के माध्यम से गीत प्रस्तुत किए हैं। पात्रों के माध्यम से निसृत होने वाले गीत प्रतापनारायण श्रीवास्तव द्वारा प्रणीत हैं। जो कवि व्यक्तित्व को प्रकाशित करते हैं। "अथ से इति" में देखिये :-

---

1- हिन्दी मनोरंजन §नवम्बर 1924§ सम्पादक विश्वनाथ शर्मा - प्रकाशक - - चन्द्रा प्रेन्सी कानपुर

2-प्रभा § 1 सितम्बर 1922§ सम्पादक- साहित्य रत्न श्रीकृष्ण दत्त पालीवाल - पृष्ठ - 192

॥ 1 ॥

"माँ हमें विदा दे जाते हैं, तवजय केतु फहराने आज,
तेरी बलि बेदी पर चढ़कर, माँ निज शीश चढ़ाने आज।
नृत्य करेगी रक्त कुण्ड में, फिर-फिर खंग हमारी,
अरि शिर गिर कर यही कहेंगे, भारत भूमि हमारी आज ॥

॥ 2 ॥

मलिन वेष यह आँसू कैसे, कम्पित होता है क्योंकि अंग।
वीर प्रसू तू रोती क्यों है ! जब तक तीव्र हमारी खंग ॥
तेरे चरणों की रज लेकर जाते हैं, करने रण रंग।
फिर भय किसका है जननी, जब आशीष हमारे संग ॥

॥ 3 ॥

उन्नत शिखर नत हो जायेंगे, टूट पड़ेंगे नभ के तारे।
विश्व कांपता रह जायेगा, माँ जब होगी रण हुंकार।
विजय देवि आकर धोयगी, तव चरणों को सज नव साज ॥"[1]

उपरोक्त काव्य में पवित्र राष्ट्र प्रेम के स्वर मुखरित हुये हैं। कविता में हृदय को छू लेने की अद्भुत शक्ति और अदम्य विद्रोह के स्वर हैं। जिसको पढ़कर हर सरस हृदय में जोश उमड़ पड़ता है। अतः प्रतापनारायण श्रीवास्तव राष्ट्रीय भावनाओं के उन्नायक कवि के रूप में हमारे सामने आते हैं।

6.1.1.4 "स्वराज्य की तस्वीर" में आपकाकवि हृदय फूट पड़ा :-

"स्वराज्य आया स्वराज्य आया,
नवीन छवि का समाज आया,
सदैव हमने विपत्ति झेली,
मिला न रुपया मिली न धेली,
बिताया जेलों में हमने जीवन,
पुलिश के डंडे विचित्र उलझन,
मिटा अंधेरा प्रकाश छाया,
स्वराज्य आया स्वराज्य आया, ॥ 1 ॥
किसी का अधिकार है अब न ऊपर,
हमारे शासन गगन व भू पर,
हुये निरंकुश स्वतन्त्र हब हम,
न मन में चिन्ता न दिल में गम,
कि स्वर्ण अवसर आज आया,
स्वराज्य आया स्वराज्य आया ॥ 2 ॥
मचा है कन्ट्रोल का बवन्डर,
प्रदान परमिट स्वभक्त को कर,
हमारे लाखों करोड़ होंगे,
हमारे साथी हजार होंगे,
न कोई हमसे है जीत पाया,
स्वराज्य आया स्वराज्य आया ॥ 3 ॥[2]

1- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 15-16
2- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 23

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उक्त सहगान के माध्यम से स्वराज्य की तस्वीर प्रस्तुत की । श्रीवास्तव जी की कविताओं में राष्ट्रीयता का धरातल व्यापक है। भारत भूमि की बन्दना, भारतोत्थान, साम्प्रदायिक एवं जाति एकता, भारत दुर्दशा, संघर्ष की प्रेरणा, अतीत-गौरव, महा पुरुषों की प्रेरणा और कांग्रेस जनों की नीतियों का उल्लेख आपने सोत्साहपूर्वक ही नहीं किया अपितु राष्ट्री-य जागरण और देश में सांस्कृतिक दृष्टि से सम्पन्न अतीत के प्रति आस्था उत्पन्न कराना था जिससे देश में सांस्कृतिक पराधीनता न हो । अत: श्रीवास्तव जी ने काव्य और साहित्य दोनों के माध्यम से राष्ट्रीयता के विकास मेंसहयोग दिया ।

6.1.1.5 प्रतापनारायण श्रीवास्तव के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषतायह थी कि जिस विषय पर भी आपने लिखा उसमें आपने जान डाल दी। "विजय का व्यामोह" और "प्रीति भोज" में प्रस्तुत कविता देखिये :-

वीणे उन्हें सुना दो,
मेरे मन की मौन व्यथा को ,
आह भरी यह करुण कथा को,
निज मूक थिरकते तारों से,
उन तक तो पहुँचा दो ।
वीणे ! उन्हें सुना दो ।।
ताल स्वरों की लय में मिलकर ,
कम्पित स्वर में ठहर-ठहर कर,
मींड़ मूर्च्छना कम्पन द्वारा,
मेरी दशा बता दो।
वीणे उन्हें सुना दो ।।
सम्हल -सम्हल कर देखो कहना,
आंसू जैसे मत गिर पड़ना ,
गान रूप में निर्मित रोदन,
मेरा उन्हें सुना दो ।
वीणे उन्हें सुना दो ।।
अंगुलिका के चुम्बन में ही,
भूल न जाना संदेश कहीं,
हृदय खोलकर अन्तस्तल का ,

भीषण घाव दिखा दो ।

वीणे ! उन्हें सुना दो ।।"[1]

आपकी कहानियों में भी कवितायें यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होती हैं। विशेषरूप से "उद्योग" और मीठी मुस्कान उल्लेखनीय हैं।

"कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी ।
बरसों रहा है दुश्मन दौरे जमां हमारा ।।"[2]

"ऊधो प्रेम की का याही रीत ?
पहले प्रेम कियो फिर छिन ही मा भूले सब प्रीत ।
ऊधो प्रेम की का याही रीत ।"[3]

"ऊधो प्रीति किये पछितानी ।
हम जानी ऐसी निबहैगी, उन कछु और ठानी ।
कारे तन को कौन पत्यानों, बोलत माधुरी बानी। ऊधव0 ।
हम को लिखि-लिखि जोग पठावत, आप करत रजधानी ।
सूनी सेज श्याम बिन मोको, तलफत रैन बिहानी। ऊधव0 ।"[4]

6.1.1.6 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने कहीं-कहीं पैरोड़ी भी लिखी है। जो हास्य व्यंग्य से परिपूर्ण है। यथा :-

"हिम्मत किसकी जो करे हमको फेल ।
सुहासिनी मिले तो हो जाऊँ गेल ।।

"अरे गैल क्या मानी है, कुछ मैं नही आता ।
तुम निरे बुद्धू हो यह हेट, बूट, सूट साहित्य सम्मेलन है।
शुद्ध शत प्रतिशत अंग्रेजी । फेल अंग्रेजी तो उसका जबाबी तुक
"गैल" वह भी अंग्रेजी "गैल" मानी हवा, मतलब यह है कि
सुहासिनी देवी मुझे हवा बना देगी ।"[5]

1-विजय का व्यामोह- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 148
"प्रीति भोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 79-80-81
2- उद्योग -नवयुग कहानी संग्रह- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ-53
3-मीठी मुस्कान-आशीर्वाद कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव-पृ0-139
4-मीठी मुस्कान-आशीर्वाद कहानी संग्रह-प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृ0-143
5- प्रीति भोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 75

6.1.1.7 इसके अलावा श्रीवास्तव जी ने शेक्सपियर के "ऐज यू लाइक इट" और "अन्डर दी ग्रीन उड़ ट्री" नामक कविता को आधार बनाकर अपने यह हजल या पैरेडी भी लिखी है :-

Under the Amaltash,
Sit thee the bold Badmash,
And tune their merry note,
Unto the Donkey's throat.
Come hither, Come hither,
Here shall you see,
Only beauty,
And no class and no Teacher.[1]

6.1.1.8 प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने गद्य और पद्य के माध्यान्तर साहित्य अर्थात गद्य काव्य का भी सृजन किया जो इस प्रकार है :-

॥ विलाप ॥

स्वामिन ! मुझे जी भर रोने दो । मुझे रोने में ही सुख है।
तूने मुझे इस अथाह संसार में निराधार छोड़ दिया है, मैं रोकर तुझे अपने पास खींच लाऊँगा । तू रूठा है, मैं रोकर ही तुझे मनाऊंगा । मुझे रोते देखकर तूं हंसता है, किन्तु मैं तुझे अपने में इतना मिला लूंगा कि मेरे साथ तू भी रो पड़ेगा ऐ मेरे करूणामय स्वामी !

× ×

मधुर कोमल कलिका हंसती सी रोती है। जब वह अधिक रो नहीं सकती तब उसका कोमल हृदय दुःख से फट जाता है- कहने वाले कहते हैं, कली खिल गई । मालूम होता है कि वह सारी रात रोती रहती है- मैंने उषा काल में उसकी आंसुओं से भीगी हुई पंखुड़ियों को देखा है और उसके एकान्त रूदन को सुना है। ऐ मेरे कृपालु स्वामी !

× ×

भनभनाते हुये भौंरे उसके पास रस लेने आते हैं। वे अपनी प्रेमिकाओं को रोते देख कर अधीर हो जाते हैं, एक के बाद एक दूसरे पर मंडराने लगते हैं। अन्त में वे सान्त्वना देने के लिये एक फूल पर बैठ जाते हैं, किन्तु वह रोता हुआ फूल उन्हें भी रूला देता है। वे विफल हो रोते हुये वहां से चले जाते हैं ।

1- प्रीति भोज - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 83

× ×

हहर हहर अठखेलियां करती हुई समीरण आती है, किन्तु उन्हें रोते देखकर वह भी रो पड़ती है। उनके सुन्दर कपोलों पर से आंसू पोंछती हुई और सन-सन कर सिसकियां लेती हुई चली जाती है ।

× ×

मुझे रोते देखकर तू आ गया । परन्तु मैं तुझे पाकर भी एक बार और रोऊँगा । किन्तु इस बार दुःख से नहीं रोऊँगा, हर्ष से रोऊँगा । तुझे रोकर ही पाया है इसलिये सारे जीवन भर रोऊँगा, जिस से सदा तू मेरे पास और अन्त में मैं रोते रोते तुझी से मिल जाऊँ - ऐ मेर कल्याणमय जीवन नाथ ।"[1]

अतः प्रतापनारायण श्रीवास्तव द्वारा उपर्युक्त साक्ष्य उन्हें कवि रूप प्रदान करने में पर्याप्त सहायक है। इनकी कवितायें श्रृंगार प्रधान हैं। और वीर रस से युक्त हैं। श्रृंगार प्रधान रचनाओं में आप विहारी एवं रसलीन के अत्यधिक निकट जान पड़ते हैं। कवियों में देव और पद्माकर के करीब दिखाई पड़ते हैं और ओजस्विता में पंडित बालकृष्ण शर्मा "नवीन" के निकट ।

6.1.2 प्रतापनारायण श्रीवास्तव की रचनाओं का शिल्पगत सौंदर्य

कविता अथवा काव्य के दो पक्ष माने गये हैं - कलापक्ष और भाव पक्ष । इन दोनों पक्षों को क्रमशः वाह्यपक्ष और आन्तरिक पक्ष भी कहा जाता है। आन्तरिक पक्ष में भावों और कल्पना का सर्वोपरि महत्व होता है तथा वाह्य पक्ष के अन्तर्गत भाषा, अलंकार, छन्द आदिआते है । कविता अथवा काव्य की पूर्णता इन्हीं पक्षों के आधार पर प्रतापनारायण श्रीवास्तव की कविताओं का अनुशीलन प्रस्तुत है :-

6.1.2.1 (भाव पक्ष)

श्रीवास्तव जी के साहित्य का भाव पक्ष अत्यधिक प्रबल एवं हृदयग्राही है। आप जनवादी चेतना के अत्यन्त सजग कवि रहे है। अपनी व्यक्तिगत जटिलताओं के कारण प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी जटिल भी हैं और सरल भी ।

1-प्रभा (सितम्बर 1922) - सम्पादक-श्री कृष्णदेव पालीवाल- पृष्ठ - 192

6.1.2.1.1

वर्ण्य विषय

श्रीवास्तव जी की रचना का विषय देश प्रेम , राष्ट्रीयता की भावना को पैदा करना, भारत के अतीत का स्वर्णिम इतिहास, उसकी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति तथा आधुनिक चतुर्दिक पतन एवं विश्व कल्याण की भावना रहे हैं।

6.1.2.1.2 गांधीवादी विचारा धारा से प्रभावित राष्ट्रीय चेतना

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जिस युग की देन है, उस युग के अधिकांश हिन्दी काव्य पर गांधीवादी विचार धारा की छाप दिखाई देती है। राष्ट्रीयता की कल्पना भी उसी के अनुरूप प्रतिविम्बित हुई है। इसका एक स्पष्ट कारण यह भी हो सकता है, कि इस समय भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का संचालन इस युग मेंपूर्णतया महात्मा गान्धी के हाथ में था । हिन्दी कवियों ने स्वाधीनता केलिये संघर्ष की प्रेरणा के साथ-साथ सत्य, अहिंसा के आदर्शों की दुहाई दी । प्रतापनारायण श्रीवास्तव का मत है कि जहां प्रेम है, बन्धुत्व है, सौहार्द्य है, शान्ति है वहीं शाश्वत आन्नद है और अमर है प्रकृति सत्य :-

"कांपते थे उनके डंकों से जमीनों-औ आसमा ।
चुप पड़े हैं कब्र में अब हूँ, हां कुछ भी नहीं ।।"[1]

अत: श्रीवास्तव जी की दृष्टि में हिंसा द्वारा व्याप्त स्वाधीनता का कोई मूल्य नहीं था । उनकी "स्वराज्य " की कल्पना देखिये:-

"स्वराज्य आया स्वराज्य आया ।
नवीन छवि का समाज आया ।
x x x x x x x x x x x x x x
x x x x x x x x x x x x x x
मिटा अन्धेरा प्रकाश आया ।
स्वराज्य आया स्वराज्य आया ।"[2]

उनमें पूर्ण स्वराज्य केलक्ष्य की स्पष्टप्रति ध्वनि है और उसकी प्राप्ति के लिये तन, मन, धन सब कुछ अर्पण करने का अह्वान किया गया है। आत्मोत्सर्ग की यह प्रेरणा कवि के अहिंसावादी दृष्टि कोण की परिचायक है । एक अन्य रचना में स्वतन्त्रता प्राप्ति के अहिंसात्मक अभियान की ओर संकेत

1-अथ से इति {एकांकी} - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -पृष्ठ- 12

2- स्वराज्य की तस्वीर {एकांकी}- प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 23

किया गया है :-

"माँ हमें विदा दे जाते हैं, विजय केतु फहराने आज,
तेरी बल बेदी पर चढ़कर, माँ निज शीश चढ़ाने आज ।
नृत्य करेगी रक्त कुण्ड में, फिर-फिर खंग हमारी आज ,
अरि सिर गिर कर यही कहेंगे, भारत भूमि तुम्हारी आज ।"[1]

माँ भारती की अश्रुपूरित करूण दशा को देखकर उनका कवि हृदय भावावेश में और अधिक उत्तेजित हो उठता है :-

"उन्नत सिर नत हो जायेंगे, टूट पड़ेंगे नभ के तारे ,
विश्व कांपता रह जायेगा, माँ जब होगी रण हुंकार ।
विजय देवि आकर धोयेगी, सब चरणों को सज नव साज,
तव पुलकित हो हम गायेंगे, भारत भूमि हमारी आज ।"[2]

6.1.2.1.3 सामाजिक समस्याओं का चित्रण

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने वर्तमान समाज की विषमताओं विसंगतियों का सच्चा चित्रण वैसा ही किया है, जैसा कि एक प्रगतिशील कवि करता है। आपकी कविताओं में व्यक्त सामाजिक भावना स्वस्थ्य सामाजिक चेतना से युक्त है। उनमें मानवतावादी दृष्टिकोण है तथा शोषितों और पीड़ितों के प्रति सहानुभूति है। अथार्त मानवता के प्रति उनकी प्रबल आस्था है। आपकी कविता सामयिक उसका स्वर ओजस्वी और अभिव्यक्ति मार्मिक है:-

"मचा है कन्ट्रोल का बवण्डर ।
प्रदान परमट स्वभक्त को कर ।
हमारे लाखों करोड़ों होंगे ।
हमारे साथी हजार होंगे ।
न कोई हमसे है जीत पाया ।
स्वराज्य आया स्वराज्य आया ।"[3]

1- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 15

2- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 16

3- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ- 23

6.1.2.1.4 रस परिपाक

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने रसों के उद्देश्य से नहीं लिखा है किन्तु फिर भी उनकी रचनाओं में सभी रस पाये जाते हैं। आपको श्रृंगार एवं वीर रस से ही विशेष प्रेम रहा है। श्रृंगार की विभिन्न दशाओं और भावों का सुन्दर चित्रण किया है —

प्रेम और सौन्दर्य का चित्रण करने में भी प्रतापनारायण श्रीवास्तव पीछे नहीं रहे । और ऐसे लगता है कि वे वास्तविकता श्रृंगार के कवि हैं। कुछ अंशों में तो वह विहारी के अधिक निकट लगते हैं। प्रतापनारायण श्रीवास्तव के नायिका के हाव भाव का बड़ा ही सजीव चित्रण किया है जो उन्हें विहारी और रसलीन के

"जरी बरी झरसी परी, मिल्यो सेज सों गात ।
बकनि भकनि अरू सांस सो, कछु कछु जानी जात ।।
× × × × × × × × × × × × × × × × × ×
× × × × × × × × × × × × × × × × × ×
छिनु धोवे अरू छिनु पुछै, एडिन जानि गुलाल ।
नहि छूटयो कोनिह जतन, हारी परी बेहाल ।।
× × × × × × × × × × × × × × × × ×
× × × × × × × × × × × × × × × × ×
चलो सखी यहं से कतों, नहि पग ले छिपाय ।
जानि अंगार चकोर कहूँ, चोचन मारे आय ।।
× × × × × × × × × × × × × × × × ×
× × × × × × × × × × × × × × × × ×
छिनु एड़ी छिनु भुई तके, छिनु निरखै सखि ओर ।
कछु चुचायों वर कहैं, बहै न एडिन कोर ।।
× × × × × × × × × × × × × × × ×
× × × × × × × × × × × × × × × ×
रतनारे कोवा तिरै, नैन जल भर आदि ।
मदिरा प्यालन में भरी , छलकि छलकि ज्यों जाहि ।"[1]

1- श्रृंगार सुन्दरी-हिन्दी मनोरंजन -नवम्बर, 1924 - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 139

शृंगार रस के साथ साथ वीर रस का भी सुन्दर चित्रण आपकी कविताओं व रचनाओं में देखने को मिलता है :-

"उन्नत शिखर नत हो जायेंगे, टूट पड़ेंगे नभ के तारे ।
विश्व कांपता रह जायेगा, मां जब होगी रण हुंकार ।
विजय देवि आकर धोयेगी, तव चरणों को सज नव साज ।
तव पुलकित हो हम गायेंगे, "भारत भूमि हमारी आज" ।"[1]

इन विशेषताओं के अतिरिक्त आपके भाव पक्ष में एक और विशेषता दिखाई देती है – गहन चिंतन । यह स्थिति जब पैदा होती है जब आप अपनी बात कहते कहते किसी गहरे विचार को सहज रूप में पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं—

"अथवा तेरे कण्ठ स्थल की होऊँ वह माला अभिराम ।
अश्रुनीर से राधा ने गूँथी तेरे हित हे श्याम ।।
अथवा उस सुन्दर माला का, होऊँ एक मनोहर फूल ।
लगकर तेरे वृक्षस्थल से, खोऊँ अपने सारे शूल ।।
तभी कामना पूरित होगी, मेरी मन की क्या नटराज।
अश्रुवारि से कब धोऊँगी, तेरे चरणों को बृजराज ।।"[2]

6.1.2.2 कला पक्ष

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के साहित्य का कलापक्ष भी अत्यन्त पुष्ट एवं सशक्त है उसमें कृत्रिमता का नाम भी नहीं है। भाषा-शैली, अलंकार विधान तथा छन्द सभी दृष्टियों से वह उत्कृष्ट बन पड़ा है। इसकी प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार है-

6.1.2.2.1 ﴾ भाषा ﴿

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के काव्य में भाषा के विविध रूप देखने को मिलते हैं। कहीं बृजभाषा और कहीं संस्कृत निष्ठ खड़ी बोली का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त उर्दू मिश्रित चलती हुई खड़ी बोली का रूप देखा जा सकता है। आपके व्यक्तित्व की एक विशिष्टता है कि आप गूढ़ से गूढ़ भावों और दार्शनिक विचारों को बड़ी ही सामान्य बोल चाल की भाषा में व्यक्त करने में सक्षम हैं । बृजभाषा का एक सुन्दर उदाहरण देखिये :-

---

1-अथ से अति – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – पृष्ठ – 15-16

2- अभिलाषा – प्रतापनारायण श्रीवास्तव – प्रभा, 1 सितम्बर 1922 – पृष्ठ – 192

"छिनु एड़ी छिनु भुईतके, छिनु निरखै सखि ओर ।
कछू पुचाओं पर कहै, बैहन एडिन कोर ।"[1]

संस्कृत निष्ठ खड़ी बोली कोदेखिये :-

"मालिन वेष यह आंसू कैसे, कम्पित होता है क्यों अंग,
वीर प्रसू तू रोती क्यों है ? जब तक तीव्र हमारी खंग ।
तेरे चरणों की रज लेकर जाते हैं, करने रण रंग,
फिर भय किसका है जननी, जब आशीष हमारे संग ।"[2]

उर्दू मिश्रित चलती खड़ी बोली का रूप देखिये --

"कांपते थे जिनके डंकों से जमीनो-ओ-आसमां ।
चुप पड़े हैं कब्र में अब हूँ, हाँ कुछ भी नहीं ।।"[3]

6.1.2.2.2 ‖ शैली ‖

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के काव्य में शैली के भी निम्न रूप दिखायी देते है :-

उद्बोधन शैली

श्रीवास्तव जी ने देश प्रेम की कविताओं में इस शैली का प्रयोग किया है। इसकी भाषा सरल और जन साधारण का भाव है -

"सदैव हमने विपत्ति झेली,
मिला न रूपया मिली न धेली,
विताया जेलों में हमने जीवन,
पुलिश के डन्डे विचित्र उलझन,
मिटा अंधेरा प्रकाश छाया,
स्वराज्य आया स्वराज्य आया ।"[4]

1-सुन्दरी श्रृंगार - प्रतापनारायण श्रीवास्तव -हिन्दी मनोरंजन, नबम्बर 1924 -पृष्ठ- 139

2- अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव- " " " -पृष्ठ - 15

3-अथ से इति - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 12

4- स्वराज्य की तस्वीर - प्रतापनारायण श्रीवास्तव - पृष्ठ - 22-23

हास्य व्यंग्यात्मक शैली

समाज सुधार सम्बन्धी कविताओं में व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग किया गया है। इसमें तीखे व्यंग्य कसे गये हैं।

मुहावरेदार शैली

इस शैली में उर्दू के शब्दों तथा मुहावरों का खुलकर प्रयोग किया है। भाषा अति सरल एवं साधारण बोल-चाल की भाषा है।

6.1.2.2.3 अलंकार

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अलंकारों का प्रयोग न प्रदर्शन के लिये और न ही अपनी विद्वता दिखाने के लिये किया, बल्कि कविता के भाव सौन्दर्य को बढ़ाने के लिये किया है। अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक और यमक आदि उनके काव्य में बहुतायत से आये हैं ।

6.1.2.2.4 ﴾ छन्द ﴿

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के छन्दों में भी विविधता है। विशेषकर आपने कवित्त, गीत और दोहे ही लिखे ।

ये तो प्रतापनारायण श्रीवास्तव के काव्य की साधारण विशेषता--यें हुई। सबसे बड़ी विशेषता तो उनके काव्य की यह है कि वह पाठक और श्रोता के भावों को उत्तेजित कर उसे स्वर्गीय आनन्द प्राप्ति के साथ साथ अपने में तादात्य स्थापित कर लेती है। इसीलिये इनको ब्रह्मानन्द सहोदरा कहा गया है।

जीवन के अनुभवों को सरसता के साथ काव्य में व्यक्त कर लेने वाले समर्थ साहित्य सेवियों में आपकी गणना की जाती है। मूलत: आप कथाकार थे और कथा साहित्य में आपको ख्याति भी पर्याप्त मिली । काव्य साहित्य में अपरिपक्वता है। कला पक्ष की पूर्ति भावपक्ष पूर्ण कर देता है। फिर भी जितनी सफलता आपको साहित्य सृजन में मिली उतनी काव्य सृजन में नहीं ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि आपने विविध छन्दों में, विविध प्रकार की भाषा, में विविध विचारों को लेकर विविध शैलियों में काव्य रचना की है। यही आपके साहित्य और शैली की सबसे बड़ी विशेषता है ।

हिन्दी निबन्ध - स्वरूप, परिभाषा, एवं तत्व

साहित्य की अन्य विधाओं की भांति "निबन्ध" आधुनिक हिन्दी साहित्य की सशक्त साहित्यिक विधा है। इस विधा का वास्तविक आरम्भ और विकास आधुनिक काल में ही माना जाता है। निबन्ध क्या है ? निबन्ध शब्द से साहित्य के जिस अंग का बोध होता है, वह उस रूप में संस्कृत-साहित्य का ऋणी न होकर अपने जन्म, रूपग्रहण तथा विशिष्टताओं के लिये अंग्रेजी भाषा का ऋणी है। हिन्दी निबन्ध का वर्तमान रूप अंग्रेजी Essay से प्रभावित है। निबन्ध शब्द का अर्थ है - "बँधा हुआ"। लेखक जहाँ अपने विचारों को बंधे हुये व व्यवस्थित रूप में रखता है, वहीं निबन्ध है। फ्रांसिस बेकन ने "एस्से" को "डि-स्पर्स्ड मैडिटेशन" माना है। अथार्थ उनके अनुसार "एस्से" साहित्यकार के मस्तिष्क में उठने वाले विचारों, उनके विचारों की लिपि-बद्ध रचना है।" जानसन का कहना है कि "नियम-बद्ध एवं व्यवस्थित कृति निबन्ध नहीं है।" जानसन की निबन्ध की यह परिभाषा बेकन के निबन्ध सम्बन्धी विचारों का ही एक प्रकार से रूपान्तरण ही माना जाना चहिये।

कारलाईल ने निबन्ध को जानसन एवं बेकन से भिन्न प्रकार से परिभाषित किया है। उसके अनुसार "मानव की रक्षात्मक भावना को व्यस्त करने वाली माधुर्य गुण से युक्त परन्तु संगीतात्मकता से रहित साहित्य विधा निबन्ध है।"आनल्डि निबन्ध को जीवन की आलोचना मानते हैं। सैन्त व्यव - "निबन्ध साहित्याभिव्यक्ति का अत्यन्त कठिन परन्तु प्रमोदपूर्ण अंग है, क्योंकि, इसमें लेखक की गम्भीरता और उसकी गागर में सागर भरने की शक्ति का संकेत मिलता है।

डा० सैम्यूल जानसन, के अनुसार निबन्ध मन की उच्छ्वल तरंग है जो नियमित कथा तथा कृति मात्र होती है। इसमें न कोई क्रम होता है और न नियमबद्धता इसप्रकार निबन्ध उच्छृंखल भावनाओं की साहित्यिक अभिव्यक्ति है।"[1]

1- "A loose sally of the mind and irregular undigested piece of literature, not a regular and orderly performance of literature."

उद्धृत- साहित्यालोचन -डा० कृष्ण शर्मा - पृष्ठ - 227

औसबर्न्स के अनुसार -"निबन्ध किसी सामयिक विषय पर हल्के औपचारिक लेख को कहतेहैं ।"[1]

प्रिस्टले के मतानुसार- "निबन्ध किसी मौलिक व्यक्तित्व की निश्छल आत्माभि-व्यक्ति को कहते हैं ।"[2]

भारतीय विद्वानों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल निबन्ध को "गद्य की कसौटी" मानते हैं।

बाबू गुलाबराय के अनुसार -"निबन्ध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें सीमित आकर के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छ-न्दता, सौष्ठव, सजीवता, एवं आवश्यक संगति और सम्यता के साथ किया गयाहो"[3]

डा० जयनाथ नलिन ने - "निबन्ध में स्वाधीनता चिन्तन एवं निश्छल अनुभूतियों की सरल, सजीव परन्तु मर्यादित गद्यात्मक अभिव्यक्ति की विशेषता पर बल दिया है ।"[4]

निबन्ध विधा के जन्मदाता मोन्तेन्य का कथन है कि - "निबन्ध विचारों, उद्धा--रणों और कथाओं का मिश्रण है।"[5]

डा० भागीरथ मिश्र के मतानुसार - "निबन्ध वह गद्य रचना है जिसमें लेखक किसी भी विषय पर स्वच्छन्दता पूर्वक परन्तु एक विशेष सौष्ठव, संहिति, सजीवता और वैयक्तिकता के साथ अपने भावों, विचारों और अनुभवों को व्यक्त करता है।"[6]

डा० श्यामसुन्दर दास - "निबन्ध वह लेख है, जिसमें किसी गहन विषय पर पाण्डित्य पूर्ण विचार किया जाता है।"[7]

1- Essay is light gossip article on a topical subject.

उद्धृत - साहित्यिक निबन्ध - डा० अश्वघोष - पृष्ठ -

2- Essay is a genuine expression of an original personality, and artful ending kind of talk.

उद्धृत - साहित्यिक निबन्ध - डा० अश्वघोष - पृष्ठ -

3- काव्य के रूप - गुलाब राय - पृष्ठ - 213

4-हिन्दी निबन्धकार - डा० जयनाथ नलिन - पृष्ठ - 3

5- साहित्यिक निबन्ध - डा० राजनाथ शर्मा - पृष्ठ - 608

6- उद्धृत - साहित्यिक निबन्ध -{प्राक्कथन} डा० अश्वघोष - पृष्ठ -7

7- उद्धृत - साहित्यिक निबन्ध - {प्राक्कथन} डा० अश्वघोष -पृष्ठ - 7

डा० वार्ष्णेय के मतानुसार – "गद्य इतिहास के आरम्भिक काल में प्राय: निबन्ध रचना नहीं हुआ करती । जब गद्य की शक्ति का पूर्ण विकास हो जाता है तभी निबन्धों की रचना सम्भव होती है। निबन्ध गद्य की प्रौढ़ता का प्रतीक है।"[1]

अत: निबन्ध वह गद्य रचना है जिसे लेखक किसी भी विषय पर स्वच्छन्दतापूर्वक अपने विचारों को निर्धारित सीमा के अन्तर्गत बांधता है उसे निबन्ध कहते हैं।

निबन्ध के तत्वों के बारे में पाश्चात्य और भारतीय निबन्धकारों में पर्याप्त मतभेद है। निम्नलिखित गुणों पर क्रमश: सभी सहमत हैं जो प्रत्येक निबन्ध के लिये अत्यावश्यक हैं--

1- संक्षिप्तता 2-व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति 3- बुद्धि तत्व 4- गद्यात्मकता 5- अनौपचारिकता

6.2.2 निबन्धकार प्रतापनारायण श्रीवास्तव

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी मूलत: उपन्यासकार हैं और उसी के सृजन में आपको सर्वाधिक सफलता मिली है। इसके साथ-साथ आपने साहित्य की अन्य विधायें कहानी, एकांकी, अनुवाद और निबन्ध का भी सृजन किया है। उनका यह सृजन ठीक वैसा ही है जैसे – "अंगुली कटा कर शहीदों में नाम लिखाने वाले" केस्थान होते हैं। आपका निबन्ध "पार्ल्यामिन्ट का इतिहास"[2] विशेष उल्लेखनीय है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने निबन्ध का लेखन अत्यधिक नहीं किया जिससे उनका कोई निबन्ध संग्रह प्रकाशित हो सकता । "पार्ल्यामिन्ट का इतिहास" निबन्ध का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :-

6.2.2.1 वैसे तो पार्ल्यामिन्ट के नाम से सभी परिचय हैं लेकिन इसका जन्म कब हुआ कैसे हुआ इसका वास्तविक रूप क्या था इसके हाथों में यह शक्ति कब आई इत्यादि इन्हीं बातों की विवेचना प्रस्तुत लेख में की गयी है।

अंग्रेजी शासन के इतिहासके साथ पार्ल्यामिन्ट का इतिहास जुड़ा हुआ है। अत: पार्लियामेन्ट को जानने के लिये अंग्रेजी इतिहास को जानना अत्यावश्यक है।

1- उद्धृत – साहित्यिक निबन्ध -(प्राक्कथन) – डा० अश्वघोष – पृष्ठ – 7

2- पार्ल्यामिन्ट का इतिहास – श्रीयुत प्रतापनारायण श्रीवास्तव – हिन्दीमनोरंजन, नवम्बर दिसम्बर, फरवरी- 1924, सम्पादक – विश्वनाथ शर्मा, प्रकाशक – चन्द्रा फैन्सी प्रेस कानपुर – पृष्ठ – 127

पहले पार्ल्यमिन्ट का नाम "विटनेजमो" Witenagemo था । जिसका अर्थ है -"बुद्धि मानों की सभा" इसके अस्तित्व का पता दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दी से चलता है। जबकि इग्लैण्ड में सेक्सन राजा राज्य कर रहे थे । उस समय यह सभा "हाउस आफ लाडर्स लार्ड सभा" की तरह थी । इस सभा में तीन श्रेणी के लोग सदस्य हो सकते थे :- 1- धर्माध्यक्ष (Bishops) 2- प्रान्तों के शासक (Ealdormenor Aldermen) 3- राजा के दोस्त और उसके अनुचर गण

राजा इस सभा का अनिवार्य सदस्य था। उस शक्तिशाली सभा के होने वाले सदस्यों के बारे में बड़ा मतभेद है। पहले हर एक गांव में और नगर में एक - एक व्यवस्थापक सभा थी और उसमें प्रत्येक स्वतन्त्र मनुष्य को अधिकार था कि वह सभा में जा सके । लेकिन यही पर मतभेद है कि उसी तरह क्या इस बड़ी सभा में भी प्रत्येक स्वतन्त्र जा सकता था या नहीं ।

6.2.2.1.2 एक मत का यह कहना है कि प्रत्येक स्वतन्त्र मनुष्य को अधिकार था कि वह इस बड़ी व्यवस्थापक जातीय सभा में जा सके । लेकिन यह अधिकार बहुत पहले से काम में नहीं लाया जाता था । उनके मत से "विटने-- जमो" नाम मात्र को लोक सत्ता थी लेकिन कार्य में पूरी राजसत्तात्मक थी

6.2.2.1.3 दूसरे मत से यह सिद्ध होता है कि यह सभा उन गांवों और शहरों की कौन्सिलों का अनुकरण करके नहीं बनी थी और न ही उसमें साधरण स्वतन्त्र मनुष्यों के लिये स्थान था । इसमें सिर्फ उपरोक्त तीनों ही प्रकार के लोग सदस्य हो सकते थे। यों चाहे जिस तरह की यह सभा हो, लेकिन थी यह राजसत्तात्मक । साधारणतया इसके सदस्य राजा, प्रान्त के शासक, राजपुरूष, राजकर्मचारी, मुखय धर्माध्यक्ष, पारसी और कुछ वीर सैनिक । साधारण जनता के लोग चाहे उनको अधिकार प्राप्त हों, लेकिन कभी सभा में उपस्थित नहीं होते थे

6.2.2.1.4 इस तरह से आज कल के अनुसार "विटनेजमों" जनता की प्रतिनिधि नहीं थी, लेकिन समझी जाती थी, और इसकी सम्मति जनता की सम्मति समझी जाती थी। इसके अधिकार आज कल की पार्लियामेन्ट से अधिक थे । लेकिन इनके सदस्यों के अधिकार राजा की निजी शक्ति के ऊपर निर्भर करते थे। अगर राजा कमजोर होता था तो विटनेजमों की तू ती बोलती थी

और अगर राजा काफी शक्तिशाली होता था तो राजाकी इच्छा ही सर्वो-
-परि थी और यह सभा उसके हाथों में सहज कठपुतली के सिवा और कुछ नहीं
थी । 'John Kemble' जान केम्बल उन्नीसवीं सदी के प्रसिद्ध इतिहासकार थे ।
उन्होंने इग्लैण्ड के "सैक्सन काल" को भली भाँति अध्ययन किया और इसीपर
एक बहुत ही सुन्दर पुस्तक {The Angosaxons in England} "इग्लैण्ड में एगंलों
सैक्सन" लिखी । इन्होंने विटन्स {विटनैजमो} के सदस्य विटन्स कहलाते थे के
अधिकारों को इस प्रकार लिखा है :-

1- जनता के हर एक काम के सम्बन्ध में उनकी राय लेना आवश्यक है।

2- ये लोग नये कानून बना सकते थे ।

3- सन्धि और लड़ाई करने का पूरा अधिकार इनको था ।

4- ये लोग नये राजा पदस्थ भी कर सकते थे ।

5- ये लोग राजा पदस्थ भी कर सकते थे ।

6- पादरियों की खाली जगहों पर नये पादरियों का चयन यह लोग कर सकते
थे ।

7- इनको धार्मिक कार्यों का संचालन करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था ।

8- नये टैक्स भी ये लोग लगा सकते थे ।

9- जल और थल सेना की संख्या घटा बढ़ा सकते थे।

10- जनता की जमीन को वे बेच भी सकते थे ।

11- विटन्स दुश्मनों की जमीन को जब्त करसकते थे ।

12- यह सभा न्याय सभा का भी काम करती थी और दोनों तरह के दीवा-
नी और फौजदारी के बड़े - बड़े मुकद्मे यहीं पर फैसले किये जाते थे

6.2.2.1.5 इस प्रकार इस व्यवस्थापक सभा को सभी अधिकार प्राप्त थे
और उसकी सत्ता बड़ी जबरदस्त थी। जो राजा की निजी शक्ति पर निर्भर
करती थी ।

ये सभायें इसी नाम से विलियम प्रथम के शासन काल तक जानी
जाती रहीं । अपने समय में विटनैजमो का नाम बदलकर "बड़ी सभा" रखा
गया । इस नाम के साथ ही इनके अधिकारियों में भी अन्तर आ गया, और
धीरे-धीरे यह सभा जमीदारों, राजकर्मचारियों की हो गयी। जो कुछ अधिकार
साधारण जनता का था वह सब निकाल बाहर कर दिया गया । धीरे-धीरे
इसके राजा के लिये ही यत्न करने लगे और जनता का ध्यान बिल्कुल हटा
दिया गया। जबकि यह अब भी जनता का प्रतिनिधि समझी जाती है ।

6.2.3 निबन्ध के गुणों के आधार पर "पाल्यमिण्ट काइतिहास की समीक्षा

निबन्ध के तत्वों के बारे में पाश्चात्य और आधुनिक हिन्दी निबन्धकारों में पर्याप्त मतभेद है। निम्न गुणों पर क्रमश३ सभी सहमत हैं जो हर निबन्ध के लिये अत्यावश्यक है :- 1-संक्षिप्तता 2- व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति 3- बुद्धि तत्व 4- गद्यात्मकता 5- अनौपचारिकता

इन्हीं तत्वों के आधार पर हम "पाल्यमिन्ट का इतिहास" की समीक्षा कर रहे हैं।

6.2.3.1 प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी का "पाल्यमिन्ट का इतिहास" की विषय वस्तु अपनी दीर्घ कलेवर के कारण के अधिक निकट है। क्योंकि लेख में व्यापक विषय अपनाया जाता है और वह निबन्ध को तुलना से अधिक विस्तृत या लम्बा भी होता है। जबकि निबन्ध की लम्बाई के बारे में कोई नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता है। हर्वर्ट रीड ने निबन्ध की शब्द संख्या 3500 से 5000 तक स्वीकार की है जो लेख से आकारमें छोटा होने का संकेत देती है। अत: अधिक विस्तारण के कारण "पाल्यमिन्ट का इतिहास" निबन्ध में विचारों में शिथिलता एवं अन्विति के अभाव के दोष से मुक्त न हो सका।

6.2.3.2 निबन्ध आत्म प्रकाशन की विधा है। इसमें शास्त्रीय मंत्रों आदि का प्रतिपादन नहीं किया जाता है। इसमें लेखक सिर्फ अपने मत किसी विषय विशेष पर व्यक्त करता है। किसी अंग्रेजी निबन्ध समीक्षक का कथन है -"कि निबन्ध में निबन्धकार का मन और चरित्र दोनों का प्रतिफल होतेरहते हैं।[1]

अत: प्रतापनारायण श्रीवास्तव का व्यक्तित्व एवं शैली दोनों ही माध्यमों से उक्त निबन्ध पाल्यमिन्ट का इतिहास में परिलक्षित होता है। श्रीवास्तव जी ने जनता के ऊपर थोपे गये आंतकों एवं पाल्यमिन्ट का स्पष्ट

1- 'The central fact of the true essay indeed is the direct play of the author's mind and character upon the matter of discourse'.

चित्रण प्रस्तुत किया है। जिसमें लोगों को यह पता चला कि यह हमारी सभा नहीं राजा महाराजाओं एवं धर्मावलम्बियों की सभा अब धनवानों की सभा हो गयी है। जिसमें जनता के नाम पर अपने-अपने कार्य सिद्ध करने या करवाने की क्षमता है। अत: श्रीवास्तव जी ने इसको बड़ी ही बारीकी से यथार्थ चित्रण प्रस्तु-त किया है। जो आपके व्यक्तित्व की विशिष्टता है।

6.2.3.3 निबन्ध एक ओर विषयीगत रचना है तो दूसरी ओर उसमें भाव-तत्व की प्रधानता अत्यावश्यक हुआ करती है क्योंकि निबन्ध में हृदय और मस्तिष्क की अन्वित की विशेषत: अपेक्षा की जाती है। निबन्ध कविता नहीं अत: भाव और बुद्धि तत्व के तालमेल के सम्बन्ध में यह जरूरी है कि उसमें हृदय प्रधानता के स्थान पर बुद्धि के तत्व का साम्राज्य बना रहे । सफल निबन्धकार शुष्कता से बचता है। लेकिन प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी के इस निबन्ध में शुष्कता है जिसके कारण निबन्ध में रोचकता एवं भाव तत्व का अभाव है।

6.2.3.4 "गद्य कवीनाम् निकष वदन्ति" अथार्थ "साहित्यकार की कसौटी गद्य" है के आधार पर निबन्ध की भाषा में वेसभी गुण रहने चाहिये जो भाषा के गद्य रूप में अपेक्षित होते हैं। श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी ने भरसक को-शिश की है कि गद्यात्मक कोई त्रुटि न रह पाये लेकिन आप सफलता को वरण न कर सके ।

6.2.3.5 निबन्धकार ऐसा साहित्यिक प्राणी है कि जिसे संभाषण की पूरी आजादी प्राप्त होती है। जानसन और मरे भी इसका समर्थन करते हैं। अत: श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने इसमें अपने व्यक्तित्व अपने विचारों अपने भावों एवं अपने ज्ञान और शैली का स्वच्छन्दता पूर्वक वर्णन किया है। उन्हें "विटनेजमों" और "विटन्स" के कार्यों एवं उनकी नीतियों का स्पष्ट उल्लेख किया है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्रतापनारायण श्रीवास्तव के निबन्धों की भाषा सरल, सहज एवं बोधगम्य है। भारतेन्दु हरिशचन्द्र की भांति इन्होंने भी हिन्दी की सभी विधाओं को स्पर्श कर के अपने को हिन्दी सेवी होने का परिचय दिया लेकिन निबन्ध क्षेत्र में यह वह सफलता प्राप्त न कर सके जो इन्होंने कहानी, नाटक, एवं उपन्यास साहित्य में प्राप्त की । निसंदेह श्री प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी हिन्दी प्रेमी के रूप में हमेशा याद किये जायेंगे ।

सप्तम अध्याय

उपसंहार

-: उपसंहार :-

प्रतापनारायण श्रीवास्तव बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे।आपका जीवन संघर्षों का एक अटूट सिलसिला रहा है। आपका साहित्य व्यक्तिगत भावनाओं और संघर्ष का साहित्य नहीं क्योंकि आपने अपने संघर्ष को सामा--जिक परिवेश में प्रस्तुत करके उसे एक विस्तृत आयाम देकर उसे मूल्यवान बना दिया है। श्रीवास्तव जी का अध्ययन और अनुभव का जगत बहुत विस्तृत और व्यापक है, जो अपने परिवेश के जीवन से बहुत गहन भाव से जुड़े हुये है।आपने हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी और बंगला के साहित्य का विशेष अध्ययन किया उर्दू और संस्कृत के साहित्य का भी आपको पर्याप्त ज्ञान था। जिसका प्रभाव आपके साहित्य पर स्पष्ट परिलक्षित होता है।

प्रेमचन्द युगीन कथाकारों में सम्भवतः प्रतापनारायण श्रीवास्तव ही ऐसे कलाकार हैं। जिन्हें अपने नाम से नहीं कृतियों के नाम से जाना जाता है। जैसे -- "विदा" वाले प्रतापनारायण, "विजय" वाले प्रताप नारायण,आदि । सच भी है कलाकार की पहचान कला से ही होती है, नाम से नहीं । प्रेमचन्द के समान श्रीवास्तव जी भी कला के लिये कला के सिद्धान्त में विश्वास नहीं करते थे। बल्कि कला को जीवन को सुधारने का एक माध्यम मानते थे। प्रतापनारायण श्रीवास्तव का कलाकार अपने युग और समाज के प्रति सर्वाधिक संवेदनशील रहा है। संवेदनशील होने के कारण ही आपकी कहानियों, एकांकी नाटकों एवं उपन्यासों आदि में कवि रूप झलकता हुआ दिखाई देता है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उपन्यास कहानी एवं नाटकों की कथा इस प्रकार से गढ़ी है कि उसे सामान्य से सामान्य पाठक श्रोता और दृष्टा आसानी से समझ लेते हैं। प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उपन्यास कहानी एकांकी नाटक के माध्यम से मध्यमवर्गीय जीवन की ज्वलंत समस्याओं एवं विभीषिकाओं का करुण और मार्मिक चित्रण किया है। उसी वर्ग से सम्ब--न्धित होने के कारण वे उस जीवन की एक - एक सच्चाई जानते थे। और जिस ईमानदारी से श्रीवास्तव जी ने इसका चित्रण किया है, वह अप्रतिम है।

आपने आज के जीवन की समस्त विद्रूपताओं का यथार्थ चित्रण किया है। आपने अपने साहित्य के माध्यम से समाज में व्याप्त "विधवा-विवाह की समस्या, बाल विवाह की समस्या, अनमेल विवाह की समस्या, जारज सन्तान की समस्या उत्कोच समस्या, पूंजीवाद की समस्या, सफेद नकाब पोशों की समस्या, चल-चित्र जगत की वास्तविकता और उसके दुष्प्रभाव की समस्या, अर्थव्यवस्था की समस्या, नई शिक्षा प्रणाली की समस्या, बेरोजगारी की समस्या, चीन कीछलपूर्ण राजनीति की समस्या, साम्प्रदायिक समस्या एवं धर्म का आवरण ओढ़ने वाले दुराचारियों की समस्या आदि को आपने उभारा है तथा उनका समाधान भी आदर्शोन्मुख ढूंढ निकाला है। आपने राष्ट्र प्रेम, मानव प्रेम, भारतीय सभ्यता और संस्कृति से प्रेम एवं आत्मविश्वास का भाव जागृत किया है। आप भारती--य सभ्यता और संस्कृति के उपासक ही नहीं, व्याखयाता और उपदेशक भी थे। आपने अपने सम्पूर्ण साहित्य में कहीं भी भारतीयता की मर्यादा को ठेस नहीं पहुंचने दी वरन् गौरवान्वित करने का भरसक प्रयत्न ही किया। इसी प्रयत्न में तो आप कहीं-कहीं यथार्थ की भी अवहेलना कर बैठे हैं। जो सम्भव सी प्रती--त होती है।

आर्थिक सामाजिक एवं राजनैतिक अधिकारों से वंचित नारी वर्ग की उपेक्षा करने वाले पुरूष वर्ग के विरूद्ध प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने आवाज उठाई। आप नारी स्वतन्त्रता के समर्थक थे किन्तु वहीं तक जहां तक वह नारीत्व की सीमा का अतिक्रमण न करे।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव आदर्शवादी साहित्यकार थे। आपके उपन्यासों और कहानियों में आदर्शमिश्रित यथार्थवाद पाया जाता है। आपके उपन्यासों की पृष्ठ भूमि यथार्थ पर आधारित होती है। लेकिन उसका पर्यवसान आदर्श में ही होता है। आपको कोरे आदर्श से अरूचि थी और खोखली अर्थवादी दृष्टि से घृणा। सेवा, लगाव, त्याग, सहानुभूति प्रेम एवं सदाचरण आदि मानवीय गुणों (मूल्यों) के समर्थक थे।

उनकी मानवता की परिकल्पना सच्चाई ईमानदारी, स्त्री सम्मान, शोषण के विरूद्ध विद्रोह, समानता आदि भारतीय जीवन मूल्यों से जुड़ी है। जो आपके सम्पूर्ण साहित्य में उभर कर आयी है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने हिन्दी उपन्यास को उस घिसी पिटी परम्परा से हटाकर एक नया मोड़ दिया। आपके अधिकांश

उपन्यास वृहद काय है। जिसके कई कारण हैं। जिनमें प्रमुख कारण यह है कि आपने एक ही उपन्यास में कई समस्याओं को संगुफन करने का प्रयास किया। जिससे आपके उपन्यास वृहदकाय हो गये हैं।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने प्रेम के दोनों रूपों अर्थात वासना जनित प्रेम और आदर्श प्रेम का वर्णन किया है। परन्तु वासना जनित प्रेम की अपेक्षा आदर्श प्रेम अधिक उत्कर्षता को प्राप्त हुआ है।प्रेम आपके साहित्य का मूल स्वर रहा है। प्रेम भाव को केन्द्र विन्दु बनाकर जीवन के अनेक भावों, विचारों, घटनाओं स्थितियों एवं स्वरूपों का निर्धारण किया है। माता पिता का प्रेम, पति पत्नी का प्रेम, भाई बहिन का प्रेम, दो मित्रों अथवा सहेलियों का प्रेम, गुरू-शिष्य का प्रेम आदि। इनके अतिरिक्त आपने राष्ट्र प्रेम, देश प्रेम, देश की सभ्यता और संस्कृति से प्रेम, कर्तव्य प्रेम, ईश्वर प्रेम, मदिराप्रेम, स्वामी और सेवक आदि को प्रेम का भी चित्रण किया है। आपने प्रेम के संगठित एवं मर्यादित रूप को ही चित्रित किया है। उसमें अश्लीलता का समावेश नहीं होने दिया।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने वस्तु-स्तर तक तो प्रेमचन्द की परम्परा को निभाने का प्रयास ही नहीं किया बल्कि बहुत तटस्थ रहे। किन्तु कथाशिल्प और भाषा की दृष्टि से तो वह उनसे ही नहीं उनकी परम्परा से (दूर हो गये हैं) हटे हुये प्रतीत होते हैं। किन्तु यथार्थ की दृष्टि से प्रेमचन्द के समीप आते हैं। आपने अपने साहित्य के माध्यम से भाषा को समृद्ध और सुदृढ़ किया। आपकी इस अप्रतिम सेवा के लिये हिन्दी साहित्य जगत को आपका अभूतपूर्व योगदान रहा है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने उपन्यास, कहानी, एकांकी, नाटक, निबन्ध अनुवाद, हास्यव्यंग्य, वार्तायें लिखकर हिन्दी की जो सेवा की है उसके लिये हिन्दी साहित्य सदैव इनका ऋणी रहेगा। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की भाँति इन्होंने साहित्य की सभी विधाओं को स्पर्श करके अपने बहुआयामी व्यक्तित्व का परिचय दिया। सामाजिक, राजनैतिक चेतना का विकास किया। इनका कथा साहित्य भाव, भाषा एवं कथा की दृष्टि से बेजोड़ है। इनकेसाहित्य के विविध पक्षों पर पृथक रूप से विस्तार से शोध कार्य किया जा सकता है, ऐसा होने पर हिन्दी शोध जगत में नये क्षितिजों का उद्घाटन होगा तथा भावी शोधार्थियों को एक नई दिशा मिलेगी

परिशिष्ट

क – उपजीव्य ग्रन्थ

उपन्यास

1- विदा	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1926
2- विजय	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1936
3- विकास	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1938
4- बयालीस	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1947
5- विसर्जन	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1949
6- बेकसी का मजार	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1957
विषमुखी	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1958
8- वेदना	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1959
9- विश्वास की वेदी पर	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1959
10- वन्दना	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1961
11- वंचना	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1962
12- विनाश के बादल	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1963
13-विपथगा	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1964
14- बन्धन विहीना	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1964
15- व्यावर्तन	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1964
16- वन्दिता	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	19
17- वरदान	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1971
18- विहान	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1971
19-मायादेश का रहस्य	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	19
20- निष्प्रभ देश का रहस्य	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	19
21- अथ से इति	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	अप्रकाशित

कहानी संग्रह

1- निकुंज	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1922
2- आशीर्वाद	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1934
3- दो साथी	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1950
4- नवयुग	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1953
5- विधाता का विधान	प्रतापनारायण श्रीवास्तव	1961

एकांकी नाटक संग्रह

1- विवाह-विभ्राट — प्रतापनारायण श्रीवास्तव — 1948

2- विजय का व्यामोह — प्रतापनारायण श्रीवास्तव — 1965

अनुवाद

1- पाप की ओर — प्रतापनारायण श्रीवास्तव — 1929

ख - सहायक ग्रन्थ

1- सहायक ग्रन्थ हिन्दी

1- अरस्तु का काव्य शास्त्र — अनु0 डा0 नगेन्द्र, महेन्द्र चतुर्वेदी

2- उपन्यासकार प्रेमचन्द — श्याम सुन्दर घोष

3- उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा — शशि भूषण सिंहल

4- इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास — बाल भद्र तिवारी

5- कुछ विचार — प्रेम चन्द्र

6- कथा के तत्व — डा0 देवराज उपाध्याय

7- विचार और वितर्क — हजारी प्रसाद द्विवेदी

8- प्रेमचन्द परवर्ती आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नायक की साहित्य शास्त्रीय विवेचन — चन्द्रकांता जोशी

9- प्रेम चन्द जीवन और कृतित्व — हंसराज रहबर

10- प्रेमचन्द उपन्यास और शिल्प — हर स्वरूप माथुर

11- प्रेमचन्द के उपन्यासों का समाज़ शास्त्रीय अध्ययन — सुधा रानी गोयल

12- प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन — डा0 उर्मिल गम्भीर

13- भगवती चरण वर्मा के उपन्यास उपलब्धि और सीमायें — डा0 सावित्री शर्मा

14- भगवती प्रसाद वाजपेयी व्यक्तित्व और कृतित्व — डा0 बैजनाथ गुप्त

15- भगवती प्रसाद वाजपेयी के उपन्यासों में सामाजिक एवं राजनैतिक चेतना

16- वृन्दावनलाल वर्मा उपन्यास और कला	शिव कुमार मित्र
17-विवेचना	इलाचन्द्र जोशी
18- वृन्दावन लाल वर्मा और वाल्टर स्काट के ऐतिहासिक उपन्यासों की विधि का तुलनात्मक अध्ययन	डा० राम कँवर शर्मा
19- साहित्य श्रेय और प्रेम	जैनेन्द्र कुमार
20- साहित्य का मर्म	डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी
21- साहित्यालोचन	डा० श्याम सुंदर दास
22- साहित्य शोध, समीक्षा	डा० विनय मोहन शर्मा
23- साहित्य संदर्भ और मूल्य	डा० रामदरश मिश्र
24- साहित्य का मनोवैज्ञानिक अध्ययन	डा० देवराज उपाध्याय
25- साहित्य अनुभूति और विवेचन	डा० संसार चन्द्र
26- सियाराम शरण गुप्त	डा० नगेन्द्र
27- शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त भाग - 1 व 2	डा० गोविन्द त्रिगुणायत
28- हिन्दी का आधुनिक साहित्य	डा० स्नातक सत्यप्रकाश शर्मा
29- हिन्दी कथा साहित्य	पदुमलाल मुन्ना लाल बख्शी
30- हिन्दी काव्य और उसका सौन्दर्य	ओम प्रकाश
31- हिन्दी साहित्यानुशीलन	डा० स्नातक सत्यप्रकाश शर्मा
32- हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास	श्री व्यथित हृदय
33- हिन्दी साहित्य का परिचयात्मक इतिहास	श्री यज्ञदत्त शर्मा
34-हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा	डा० रामदरश मिश्र
35- हिन्दी उपन्यास ऐतिहासिक अध्ययन	शिवनारायण श्रीवास्तव
36- हिन्दी उपन्यास	शिवनारायण श्रीवास्तव
37- हिन्दी उपन्यास उपलब्धियाँ	लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय
38- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल सिद्धान्त और साहित्य	डा० जय चन्द्र राय
39- आचार्य चतुरसेन शास्त्रीय	डा० शुभकर कपूर
40- आधुनिक हिन्दी निबन्ध	डा० सुरेशचन्द्र गुप्त, कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

41- हिन्दी निबन्ध तथा रचना — रामसकल शर्मा, अमरनाथ दुबे, महेश प्रेम शंकर

42- साहित्य वार्ता — श्री गिरिजा दत्त शुक्ल

43- कला साहित्य और समीक्षा — डा० भागीरथ मिश्र

44- कहानी का रचना विधान — डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा

45- जैनेन्द्र और उनके उपन्यास — रघुनाथ सरन झालानी

46- हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास — डा० सुरेश सिन्हा

47- भारतीय काव्य शास्त्र की परम्परा — सम्पादक डा० नगेन्द्र

48- ऐतिहासिक उपन्यासकार — डा० रामदरश मिश्र

49- उपन्यास कला एक विवेचन — जालादि विश्वमित्र

50- भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र — डा० कृष्णदेव शर्मा

51- हिन्दी कहानी अंतरंग पहचान — रामदरश मिश्र

52- हिन्दी साहित्य और साहित्य रूप — शेखर शर्मा

53- साहित्य के विविध आयाम — डा० सुधेश

54- काव्य के रूप — गुलाब राय

55- हिन्दी कहानी उद्भव और विकास — डा० सुरेश सिन्हा

56- कलाकार प्रेमचन्द — राम रतन भटनागर

57- कथाकार प्रेमचन्द — जितेन्द्र नाथ पाठक

58- प्रेमचन्द और उनका साहित्य — शीला गुप्त

59- प्रेमचन्द एक अध्ययन — राजेश्वर गुरू

60- प्रेमचन्द साहित्यिक विवेचना — नंद दुलारे बाजपेयी

61- हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास — लक्ष्मी नारायण लाल

62- प्रेमचन्द एक विवेचन — इंद्रनाथ महान

63- आधुनिक कहिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान — डा० देवराज उपाध्याय

64- प्रेमचन्द की कहानियां, प्रेमचन्द और गोर्की — चतुरसेन शास्त्री, केदारनाथ अग्रवाल

65- दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी — चतुरसेन शास्त्री

66- प्रेम चन्द्र कोश — डा० कमल किशोर गोयनक

67- साहित्य की मान्यतायें	भगवती चरण वर्मा
68- हमारे लेखक	राजेन्द्र सिंह गौड़
69- हिन्दी कहानी और कहानीकार	वासुदेवनन्दन प्रसाद
70-कथानिका	कमलेश्वर
71- कथा कुसुमांजिली	राजनाथ शर्मा
72- हिन्दी कहानी स्वरूप और विकास	डा० मोहन लाल
73- गांधी और गांधीवाद	डा० सीता रमैया
74- कर्मपथ	भगवती प्रसाद बाजपेयी
75- नया साहित्य नये प्रश्न	नन्द दुलारे बाजपेयी
76- चित्र लेखा	भगवती चरण वर्मा
77- तीन वर्ष	भगवती चरण वर्मा
78- संस्कार	राधिका रमण प्रसाद सिंह
79- राम-रहीम	" " " "
80- चिन्ता मणि भाग-1 व 2	रामचन्द्र शुक्ल
81- जयवर्धन	जैनेन्द्र
82- प्रेत और छाया	इला चन्द्र जोशी
83- मुक्ति पथ	" " "
84- शेखर एक जीवनी	अज्ञेय
85- नदी के दीप	अज्ञेय
86- दादा कामरेड	यशपाल
87- दिव्या	यशपाल
88- झूठा सच	यशपाल
89- अमिता	यशपाल
90- मनुष्य के रूप	यशपाल
91- आग पानी	रघुवीर शरण मित्र
92- संस्कृत नाटकों के हिन्दी अनुवाद	डा० देवेन्द्र कुमार
93- बीसवीं शताब्दी में हुये अंग्रेजी नाटको और काव्यों के अनुवाद का आलोचनात्मक अध्ययन	डा० रत्नकुमार वार्ष्णेय
94- प्रेमचन्द उर्दू हिन्दी कथाकार	डा० जाफर रजा
95- भगवती चरण वर्मा व्यक्तित्व और कृतित्व	डा० अलीक कुमार सिंन्हा

96- प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना — डा० अमर पाल सिंह

97- नाटक और यथार्थवाद — डा० कमलिनी मेहता

98- कहानी और नई कहानी — डा० नामवर सिंह

99- साहित्य का उद्देश्य — प्रेमचन्द

100- हिन्दी उपन्यास सिद्धान्त और समीक्षा — मक्खन लाल शर्मा

101- हिन्दी उपन्यासों में मध्यमवर्ग — डा० मंजुलता सिंह

102- उपन्यास आलोचना — राम अवध द्विवेदी

103- हिन्दी उपन्यास — डा० सुषमा धवन

104- कविता और कविता — डा० इन्द्रनाथ मदान

2 - संस्कृत के सहायक ग्रन्थ

1- श्रीमद भगवत गीता — गीता प्रेस गोरखपुर

2- दश रूपक — धनजंय

3- नाट्य शास्त्र — भरत मुनि

4- काव्य दर्पण — पंडित राम दहन मिश्र

3- सहायक ग्रन्थ अंग्रेजी

1- A Treatise on the Novel — Robert Liddell

2- Aspects of the Novel (Pocket Ed.) — E.M.Forster

3- Distionary of Word Literary Terms — Edited by de-Joseph T.Shipley

4- Literature and Reality — Howard Fast

5- Some Principles of Fiction — Robert Liddell

6- Structure of the Novel — Edwin Muir

7- The technique of Novel writing — Basil Hogarth

8- The Novel and the People — Ralph Fox

9- The Hindu View of Life — S. Radhakrishnan

10- Hindu Dharma — M.K.Gandhi

11- Middle Classes in India — Nasir Ahmad Khan

12- Women in Modern India — Neera Desai

13- Hindu Widow — Vatsala Mehta

14- The Position of Women in Hindu Civilisation. — A.S.Altekar

15- The Positive Back ground of Hindu Sociology. — B.K. Sarkar

16- The Questfor Literature — G.L.Shipley

17- Women and Society — N.A.Sharma

18- Marriage and Family in India — K.M.Kapadia

19- Gandhism in theory and Practice — Nirpendra Chandra Bandyo Padhyay

20- The Sepoy Muting — R.C.Mazumdar

21- The Middly Classes : Their Growth in Modern Times — B.B.Mishra

22- History of Indian Mutiny of 1857. — G.B.Malleson and Kaye

23- The Theory of Literature — Wellek & Warren

ग – सहायक शब्द – कोष

1– हिन्दी साहित्य कोष	धीरेन्द्र वर्मा
2– ए संस्कृत इंगलिश डिक्शनरी	लेo सर मोनियर विलियम्स, न्यू एडीसन
3– ज्ञान शब्द कोष	मुकुन्दी लाल श्रीवास्तव
4– दी फोकल एन साइक्लोपीडिया आफ फोटोग्राफी एडीटर	फेड्रिक पर्वज
5– ए डिक्शनरी आफ वर्ल्ड लिटरेचर	शिप्ले
6– भाषा शब्द कोष	डाo रामशंकर शुक्ल "रसाल"
7– हिन्दी विश्व कोष	सम्पादक नगेन्द्र वसु
8– हिन्दी संस्कृत शब्द कोष	वामन शिवराम आप्टे
9– हिन्दी शब्द सागर	करूणापति त्रिपाठी

घ – पत्र – पत्रिकायें

साहित्य सन्देश–आधुनिक उपन्यास अंक– जुलाई – अगस्त – 1956, आलोचना (दिल्ली) की फाइल, युग चेतना – जनवरी 1956, कल्पना–जुलाई – नवम्बर 1957, जनवरी 1958, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, हिन्दी मनोरंजन (कानपुर), इन्दु (काशी), मर्यादा (प्रयाग), माधुरी (लखनऊ), सुधा (लखनऊ), प्रभा (कानपुर), संसार (कानपुर), कर्मयोगी (प्रयाग), गुलदस्ता (प्रयाग), माया (प्रयाग), प्रताप (कानपुर), सारथी (दिल्ली), चांद (प्रयाग), सुमित्रा (कानपुर), सविता (कानपुर), सहयोगी (कानपुर), हंस – सम्पादक प्रेमचन्द, मनु (कानपुर), सारिका (बम्बई), कवि श्री,– राष्ट्र भाषा सन्देश – 31 जुलाई 1985 ईस्वी ।